प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड

NDDB DAIRY SERVICES

किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग

रंगीलो

27-28 फरवरी 2026

कृषि स्मारिका 2026

आयोजक :
राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड, आनन्द-गुजरात
एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज, दिल्ली

सहयोग कर्ता :
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
जोबनेर, जयपुर-राजस्थान

प्रकाशित : **फरवरी 2026**

प्रेरणा : **डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान**, कुलगुरू
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

मार्गदर्शक : **डॉ. आर. एन. शर्मा**, निदेशक, प्रसार शिक्षा निदेशालय
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

संयोजक : **डॉ. एन. के. गुप्ता,** निदेशक, प्राथमिकता, निगरानी एवं मूल्यांकन
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

संपादकीय मण्डल

प्रधान संपादक : **डॉ. आई. एम. खान**
आचार्य, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, एस.के.एन. कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, जोबनेर

संपादक : **डॉ. ओ. पी. गढ़वाल**
आचार्य, उद्यान विज्ञान, एस.के.एन. कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, जोबनेर
डॉ. बी. एल. आसीवाल
सहायक आचार्य, कृषि प्रसार शिक्षा, प्रसार शिक्षा निदेशालय, जोबनेर
डॉ. बी. एस. बधाला
सहायक आचार्य, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, एस.के.एन. कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, जोबनेर
डॉ. जितेन्द्र सिंह
सहायक आचार्य, पादप रोग विज्ञान विभाग, एस.के.एन. कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, जोबनेर
सोनू जैन
सहायक आचार्य, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, एस.के.एन. कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, जोबनेर
डॉ. अरूण प्रताप सिंह
सहायक आचार्य, पशुधन उत्पादन एवं प्रबंधन विभाग, डेयरी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, जोबनेर
डॉ. सन्तोष देवी सामोता
सहायक आचार्य, कृषि प्रसार शिक्षा विभाग, एस.के.एन. कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, जोबनेर

प्रकाशक : **प्रसार शिक्षा निदेशालय**
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
जोबनर–जयपुर (राज.)–303329

आयोजक : **राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड,** आनन्द, गुजरात
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

प्रकाशन क्रमांक : **SKNAU/2026/165**
@2026 All rights reserved

हरिभाऊ बागडे
राज्यपाल, राजस्थान

Haribhau Bagde
Governor, Rajasthan

दिनांक २५ फरवरी, 2026

संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा नेशनल डेयरी डेवलपमेंट बोर्ड, आनंद–गुजरात के सहयोग से किसान मेला 'रंगीलों–2026 किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' आयोजित किया जा रहा है। इस अवसर पर आप एक स्मारिका का भी प्रकाशन कर रहे है।

कृषि और पशुपालन भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ है। उनकी समृद्धि से ही राष्ट्र का सर्वांगीण विकास संभव है। यह सुखद है कि इसी आलोक में 'रंगीलो–2026' किसान मेला नवीनतम कृषि प्रौद्योगिकी, जैविक खेती और कृषि से जुड़े शोध नवाचारों पर आयोजित हो रहा है।

मैं प्राकृतिक खेती का आंरभ से ही पक्षधर रहा हूं, चाहता हूं किसानों को इस मेले के अंतर्गत प्राकृतिक खेती के लिए प्रोत्साहित किया जाए। इसी से मिट्टी की उर्वरा शक्ति बनी रहेगी, स्वास्थ्य प्रद पोषण करने वाली फसलें जीवन को खुशहाल बनाए रखेगी। किसान मेले के अंतर्गत कृषि यांत्रिकी, वैज्ञानिक प्रबंधन से फसलों के भण्डारण और उपज के विपणन की बेहतर पद्धतियों से किसानों को अधिक से अधिक जोड़ें, यही मनोकामना है।

किसान मेले और प्रकाश्य स्मारिका के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

(हरिभाऊ बागडे)

लोक भवन, सिविल लाइन्स, जयपुर–302006
Lok Bhavan, Civil Lines, Jaipur-302006
दूरभाष : 0141–2228716–19, 2228611–12, 2228722

भजन लाल शर्मा

सत्यमेव जयते

मुख्य मंत्री
राजस्थान

संदेश

यह प्रसन्नता का विषय है कि राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद, गुजरात तथा श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (जयपुर) के संयुक्त तत्वावधान में विश्वविद्यालय परिसर में ''रंगीलो- किसान मेला 2026'' का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर एक कृषि स्मारिका का प्रकाशन भी किया जा रहा है, जिसमें किसानों के लिए उपयोगी कृषि साहित्य का समावेश किया गया है।

किसान हमारे समाज और अर्थव्यवस्था के आधार स्तंभ हैं। उनके सशक्तीकरण एवं समृद्धि से ही समग्र विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति संभव है। प्रदेश सरकार द्वारा किसानों के कल्याण हेतु किसान सम्मान निधि की राशि में वृद्धि, विद्युत बिलों में अनुदान, सिंचाई सुविधाओं के विस्तार तथा कृषि अधोसंरचना के सुदृढ़ीकरण जैसे अनेक दूरदर्शी एवं प्रभावी कदम उठाए गए हैं।

प्रदेश में कृषि के क्षेत्र में हो रहे नवाचारों, अनुसंधानों एवं उन्नत तकनीकों की जानकारी समयबद्ध रूप से किसानों तक पहुंचना आवश्यक है। मुझे विश्वास है कि "समृद्ध किसान, खुशहाल राजस्थान" के संकल्प के साथ आयोजित यह मेला किसानों को आधुनिक कृषि की नवीन तकनीकों, उन्नत बीज, आधुनिक कृषि यंत्रों तथा कृषि के वैज्ञानिक प्रबंधन की पद्धतियों से अवगत कराएगा।

इस अवसर पर प्रकाशित की जा रही स्मारिका कृषि ज्ञान के प्रसार का एक सशक्त माध्यम बनकर किसानों को आधुनिक एवं लाभकारी कृषि पद्धतियां अपनाने और अपनी आय में वृद्धि करने के लिए प्रेरित करेगी।

मैं इस किसान मेले के आयोजन और कृषि स्मारिका के प्रकाशन की सफलता के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं।

(भजन लाल शर्मा)

दीया कुमारी

सत्यमेव जयते

उप-मुख्यमंत्री
राजस्थान सरकार

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि प्रसार शिक्षा निदेशालय, श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर तथा राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड आनंद (गुजरात) के संयुक्त तत्वावधान में दिनांक 27–28 फरवरी, 2026 को "रंगीलो"- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला 2026) में जोबनेर में आयोजित होने वाले 'कृषि स्मारिका 2026' का प्रकाशन भी किया जा रहा है । इस स्मारिका में संकलित विविध आलेखों के माध्यम से किसानो को कृषि की वैज्ञानिक एवं तकनीकी विधियों की महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त होंगी।

मुझे यह भी अवगत कराया गया है कि इस मेले में डेयरी विकास, पशुपालन, उद्यान विज्ञान एवं शस्य विज्ञान को सम्मिलित करते हुए समन्वित दृष्टिकोण प्रस्तुत होगा | विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार शिक्षा के व्यापक विस्तार तथा कृषि क्षेत्र में नवाचारों के प्रसार हेतु इस प्रकार के प्रकाशनों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है यह हर्ष का विषय है कि कृषि क्षेत्र की नवीनतम जानकारियों से समृद्ध यह स्मारिका राज्य के किसानों के लिए अत्यंत उपयोगी एवं मार्गदर्शक सिद्ध होगी।

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के प्रसार शिक्षा निदेशालय द्वारा इस दिशा में उठाया गया यह कदम सराहनीय एवं प्रशंसनीय है मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि "रंगीलो"- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला 2026) कृषि क्षेत्र के विकास, नवाचारों के प्रसार एवं किसानों की समृद्धि हेतु सकारात्मक वातावरण निर्मित करने में सहायक सिद्ध होगा।

(दीया कुमारी)

डॉ. प्रेम चन्द बैरवा

सत्यमेव जयते

उप-मुख्यमंत्री
राजस्थान सरकार

संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि प्रसार शिक्षा निदेशालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर एवं राष्ट्रीय द्वारा दिनांक 27–28 फरवरी, 2026 को "रंगीलो"- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला - 2026) के अवसर पर 'कृषि स्मारिका 2026' का प्रकाशन किया जा रहा है।

इस स्मारिका में संकलित विविध आलेखों के माध्यम से कृषि की वैज्ञानिक एवं तकनीकी विधियों की महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्रदेश के किसान समुदाय को लाभान्वित करेगी। विश्वविद्यालयों में शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार शिक्षा के व्यापक विस्तार तथा कृषि क्षेत्र में नवाचारों के प्रचार हेतु इस प्रकार के प्रकाशनों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है कृषि क्षेत्र की नवीनतम जानकारियों से समृद्ध यह स्मारिका राज्य के किसानों के लिए अत्यंत उपयोगी एवं मार्गदर्शक सिद्ध होगी।

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा इस दिशा में उठाया गया यह कदम सराहनीय एवं प्रशंसनीय है मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है नवाचार से ओत-प्रोतयह साहित्य किसानों की समृद्धि हेतु सकारात्मक वातावरण निर्मित करने में सहायक सिद्ध होगा।

(प्रेम चन्द बैरवा)

डॉ. किरोड़ी लाल मीणा

सत्यमेव जयते

केबिनेट मंत्री
कृषि एवं उद्यानिकी विभाग
आपदा प्रबंधन सहायता एवं नागरिक सुरक्षा,
जन अभियोग निराकरण विभाग
राजस्थान सरकार

संदेश

कृषि क्षेत्र में उच्च शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार शिक्षा को व्यापक बनाने की दृष्टि से कृषि साहित्य, कृषक–वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ, कृषि नवाचार एवं प्रसार गतिविधियों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर एवं राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद, गुजरात द्वारा 27 से 28 फ़रवरी, 2026 के दौरान आयोजित दो दिवसीय "रंगीलो"- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला - 2026) के शुभ अवसर पर कृषि तकनीकी ज्ञान से ओत-प्रोत 'कृषि स्मारिका–2026 ' का प्रकाशन किया जा रहा है।

यह स्मारिका कृषि के क्षेत्र में नवीनतम तकनीकों, उन्नत शोध परिणामों तथा व्यावहारिक जानकारी को सरल भाषा में प्रस्तुत कर प्रदेश के किसानों, विद्यार्थियों एवं कृषि उद्यमियों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगी। इस प्रकार के आयोजन एवं प्रकाशन कृषि नवाचारों के प्रसार तथा किसानों की आय बढ़ाने में सहायक होते हैं ।

मैं श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा इस दिशा में किए जा रहे सराहनीय प्रयासों की प्रशंसा करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि यह स्मारिका व्यापक रूप से उपयोगी सिद्ध होगी।

(किरोड़ी लाल मीणा)

जोराराम कुमावत

सत्यमेव जयते

केबिनेट मंत्री
देवस्थान गोपालन
पशुपालन एवं डेयरी विभाग
राजस्थान सरकार

संदेश

कृषि एवं पशुपालन क्षेत्र में उच्च शिक्षा, अनुसंधान एवं प्रसार शिक्षा को सुदृढ़ एवं व्यापक बनाने की दृष्टि से कृषि साहित्य, कृषक–वैज्ञानिक संगोष्ठियाँ, कृषि एवं डेयरी नवाचार तथा प्रसार गतिविधियों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। विशेष रूप से पशुपालन, डेयरी विकास, नस्ल सुधार, पशु पोषण एवं पशु स्वास्थ्य प्रबंधन जैसी उन्नत तकनीकों का समय पर प्रसार ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने में अत्यंत सहायक होता है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर एवं राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) द्वारा 27–28 फ़रवरी, 2026 को आयोजित दो दिवसीय "रंगीलो– किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग" (किसान मेला–2026) के शुभ अवसर पर कृषि एवं पशुपालन तकनीकी ज्ञान से समृद्ध 'कृषि स्मारिका–2026' का प्रकाशन किया जा रहा है।

यह साहित्य कृषि एवं पशुपालन के क्षेत्र में नवीनतम तकनीकों, उन्नत शोध परिणामों, डेयरी प्रबंधन, पशुधन संवर्धन तथा व्यावहारिक जानकारी को सरल एवं उपयोगी भाषा में प्रस्तुत कर प्रदेश के किसानों, पशुपालकों, विद्यार्थियों एवं कृषि उद्यमियों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा।

मैं श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर व राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) द्वारा इस दिशा में किए जा रहे सराहनीय प्रयासों की प्रशंसा करता हूँ।

(जोराराम कुमावत)

डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान

कुलगुरु
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर
कुलपति सचिवालय
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर,
जिला-जयपुर (राजस्थान)
फोन: 01425-254039
ई-मेल: vc@sknau.ac.in

संदेश

यह अत्यन्त प्रसन्नता का विषय है कि श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा दिनांक 27-28 फ़रवरी, 2026 को राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद, गुजरात के सयुंक्त तत्वावधान में आयोजित होने जा रहे दो दिवसीय "रंगीलो" किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला 2026) के सुअवसर पर" कृषि स्मारिका" प्रकाशित की जा रही है। इस प्रकाशन में डेयरी, कृषि, उधान विज्ञान एवं पशुपालन सम्बन्धी विभिन्न विद्याओं जैसे जैविक खेती, पशु प्रबंधन, हरी खाद निर्माण, जलवायु समुत्थानशील कृषि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता एवं कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी इत्यादि विभिन्न विद्याओं का संकलन किया गया है। ये सभी महत्वपूर्ण जानकारियाँ हमारे राज्य के कृषकों की आय बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगी।

इस स्मारिका में संकलित सभी आलेख कृषक समुदाय तथा पशुपालन से जुड़े लोगों के लिए लाभकारी रहेंगे इस प्रकाशन स्मारिका समिति के वैज्ञानिकों डॉ. आई. एम. खान, डॉ. ओ. पी. गढ़वाल, डॉ. बी. एल. आसीवाल, डॉ. बलवीर सिंह बधाला, डॉ. जितेन्द्र सिंह, सोनू जैन, डॉ. अरुण प्रताप सिंह ने प्रयासरत रहकर इसे तैयार करवाया है, जिसके लिए ये सभी बधाई के पात्र हैं।

मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह स्मारिका कृषकों, वैज्ञानिकों, किसान समुदाय एवं अन्य पाठकों के ज्ञानवर्धन एवं कृषकों की आमदनी को दुगुनी करने में सहायक सिद्ध होगी।

शुभकामनाओं सहित।

(पुष्पेन्द्र सिंह चौहान)

डॉ. मीनेश शाह

अध्यक्ष
राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड
आनंद, गुजरात

संदेश

यह अत्यन्त हर्ष एवं गर्व का विषय है कि राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड एवं एनडीडीबी डेरी सर्विसेज, नई दिल्ली द्वारा श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय के सहयोग से आयोजित दिनांक 27–28 फ़रवरी, 2026 को दो दिवसीय "रंगीलो" – किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला 2026) के सुअवसर पर "कृषि स्मारिका" का प्रकाशन किया जा रहा है। इस महत्वपूर्ण पहल के लिए मैं विश्वविद्यालय प्रशासन, वैज्ञानिकों एवं आयोजन समिति को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ देता हूँ।

"रंगीलो" जैसे किसान-केंद्रित आयोजनों की विशेषता यह है कि वे प्रयोगशाला से खेत तक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रभावी हस्तांतरण का सशक्त माध्यम बनते हैं। वर्तमान समय में कृषि एवं डेयरी क्षेत्र में उन्नत नस्ल प्रबंधन, संतुलित पशु आहार, जैविक खेती, हरी खाद निर्माण, जलवायु समुत्थानशील कृषि, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल विस्तार सेवाएँ तथा कटाई उपरांत प्रौद्योगिकी जैसी आधुनिक तकनीकों का समावेश अत्यंत आवश्यक है। इस प्रकार के आयोजनों से किसानों को नवीनतम अनुसंधान, सफल नवाचारों एवं व्यवहारिक तकनीकों को समझने और अपनाने का अवसर मिलता है, जिससे उनकी उत्पादकता एवं आय में स्थायी वृद्धि सुनिश्चित होती है।

इस स्मारिका में डेयरी, कृषि, उद्यान विज्ञान एवं पशुपालन की विविध विधाओं पर संकलित लेख निश्चित रूप से कृषक समुदाय के लिए ज्ञानवर्धक एवं प्रेरणादायी सिद्ध होंगे। विशेष रूप से विज्ञान-आधारित तकनीकों के लोकप्रियकरण और उनके व्यापक अंगीकरण में यह प्रकाशन महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि "रंगीलो" आयोजन एवं यह कृषि स्मारिका विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रभावी प्रसार का सशक्त माध्यम बनकर कृषकों, पशुपालकों, वैज्ञानिकों एवं विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी तथा ग्रामीण समृद्धि के लक्ष्य को साकार करने में महत्वपूर्ण योगदान देगी।

शुभकामनाओं सहित,

मीनेश शाह

(मीनेश शाह)

डॉ. आर. एन. शर्मा

निदेशक, प्रसार शिक्षा
प्रसार शिक्षा निदेशालय
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय
जोबनेर, जिला-जयपुर (राजस्थान)
ई-मेल: director.ext@sknau.ac.in

संदेश

राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड एवं प्रसार शिक्षा निदेशालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा दिनांक 27-28 फ़रवरी, 2026 का "रंगीलो"- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला 2026) का आयोजन किया जा रहा है।

इस अवसर पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका में कृषि संबंधी विभिन्न विधाओं तथा उन्नत कृषि तकनीकी, फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, फलोत्पादन, पौध संरक्षण, जैविक खेती, संरक्षित खेती आदि विषयों से संबन्धित आलेखों का संकलन किया गया है। कृषि में प्रशिक्षण, फसल प्रदर्शन, किसान दिवस, कृषक संगोष्ठी एवं प्रदर्शन आदि कार्यक्रम प्रसार शिक्षा निदेशालय के विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों द्वारा समय-समय पर आयोजित किये जा रहे हैं। इन सभी नवीनतम तकनीकों का प्रयोगिक ज्ञान प्राप्त कर राज्य के किसान लाभान्वित हो रहे हैं।

यह स्मारिका कृषकों, कृषक महिलाओं, कृषि में अध्यनरत छात्र-छात्राओं, युवाओं एवं कृषि उधमियो हेतु बहु उपयोगी सिद्ध होने के साथ-साथ उन्हें आत्मनिर्भर बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभायेगी | मैं, इस साहित्य के प्रकाशन से जुड़े सभी वैज्ञानिको को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाऐ प्रेषित करता हूँ|

(आर. एन. शर्मा)

डॉ. एन.के. गुप्ता

निदेशक (PME)
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय,
जोबनेर जिला-जयपुर (राजस्थान)

संदेश

राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद, गुजरात तथा प्रसार शिक्षा निदेशालय, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (जयपुर) द्वारा दिनांक 27-28 फरवरी, 2026 को आयोजित "रंगीलो"-किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग (किसान मेला 2026) के उपलक्ष्य में प्रकाशित इस स्मारिका के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करते हुए मुझे अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है।

किसान मेला केवल एक प्रदर्शनी नहीं, बल्कि वैज्ञानिक ज्ञान, नवाचार, अनुभव और परंपरागत कृषि बुद्धिमत्ता के संगम का सशक्त मंच है। इस आयोजन से किसानों, वैज्ञानिकों, कृषि उद्यमियों, विद्यार्थियों एवं विभिन्न संस्थाओं को एक साझा मंच मिलेगा, जहाँ आधुनिक तकनीकों, जलवायु-स्मार्ट कृषि, उन्नत बीज, कृषि यंत्र, जैविक खेती, पशुपालन एवं मूल्य संवर्धन से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारियों का आदान-प्रदान होगा।

मुझे विश्वास है कि इस प्रकार के आयोजन किसानों की आय में वृद्धि, तकनीकी सशक्तिकरण तथा नवाचार को बढ़ावा देने में सहायक सिद्ध होंगे। मैं इस आयोजन को सफल बनाने में योगदान देने वाले सभी वैज्ञानिकों, अधिकारियों, कर्मचारियों, प्रायोजकों एवं विशेष रुप से किसानों को बधाई एवं धन्यवाद देता हूँ।

मेरा विश्वास है कि यह स्मारिका भविष्य में भी कृषि ज्ञान एवं प्रेरणा का स्रोत बनी रहेगी।

(एन. के. गुप्ता)

विवरणिका

क्र. स.	विषय सूची एवं विवरण	लेखक	पृष्ठ संख्या
1	जल संरक्षण : आज की आवश्यकता	आर. एन. शर्मा	1-2
2	पारंपरिक खेती की अनमोल धरोहरः स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके)	रोशन चौधरी, बी. एल. दुदवाल, हिना सहीवाला एवं संतोष देवी सामोता	3-6
3	ग्वार की फसल के प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण	आनंद कुमार मीणा, शैलेश गोदिका, एस. के. गोयल एवं जितेन्द्र सिंह	6-7
4	राजस्थान में दालों की बीमारियों के प्रबंधन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग	आकांक्षा एवं एस. के. गोयल	7-8
5	जलवायु–स्मार्ट कृषि में तारामीरा एवं सरसों की भूमिका	नितिन डोडा, मनोहर राम एवं करण सचदेवा	9-10
6	सुरक्षित बीज भण्डारण आज की आवश्यकता	जितेन्द्र कुमार गुप्ता, तरुण कुमार जाटवा, बी एल जाट एवं लालाराम	10-12
7	तरबूज की उन्नत उत्पादन तकनीक को अपनाकर कमायें भरपुर लाभ	विनोद प्रजापत, शशि कुमार बैरवा, योगेश कुमार शर्मा एवं अशोक कुमार चौधरी	12-14
8	सब्जियों में पाए जाने वाले सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपयोगिता	आकाश सैनी, राजीव कुमार नारोलिया एवं सागर सैनी	14-15
9	शुष्क क्षैत्रों में स्थायी कृषि की आवश्यकता – औषधीय फसलें	मौहम्मद युनुस, संतोष झाझड़िया, तुलिका आचार्य एवं हितेश मुवाल	15-17
10	जैव–उत्तेजकः सतत कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम	हनुमान प्रसाद परेवा, लक्ष्मी नारायण बैरवा, राम निवास चौधरी एवं गजानंद जाट	17-19
11	सतत् कृषि की प्रथम आवश्यकता मृदा परीक्षण	बी. एल. जाट, जे. के. गुप्ता, किरण यादव एवं मंजु नेटवाल	19-21
12	दुधारू पशुओ का प्रबंधन	प्रवीण पिलानिया, भूपेन्द्र कस्वां एवं अरूण प्रताप सिंह	21-23
13	जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीवः मृदा में जिंक उपलब्धता बढाने की जैविक तकनीक	त्रिलोक चन्द बागड़ी, राकेश सम्मौरिया, प्रतिभा सिंह एवं आर. सी. मीणा	23-26
14	मृदा स्वास्थ्य की अवधारणा एवं आधुनिक कृषि में इसकी उपयोगिता	प्रियदर्शिनी खाम्बलकर एवं मौहम्मद युनुस	26-28
15	कृषि उत्पादक संगठन : किसानों की आर्थिक उन्नति का माध्यम	शिवराज कुमावत, पी.एस. शेखावत, शीला खर्कवाल एवं सुभिता कुमावत	28-29
16	राज्य बजट 2026–27 में कृषि क्षेत्र : किसान कल्याण और विकास की नई दिशा	मृणाल पाण्डेय,शिवराज कुमावत एवं अनुराधा यादव	29-30
17	फसल सुधार के माध्यम से पोषण सुरक्षाः बायोफोर्टिफिकेशन की भूमिका	आशीष शीरा, कैलाश चन्द्र, मनोज कुमार मीणा एवं वर्षा कुमारी	30-31
18	प्रो–ट्रे : आधुनिक नर्सरी प्रबंधन के अचूक मंत्र	जुही आसवानी', उदल सिंह एवं महेन्द्र मीणा	31-34
19	सब्जी बीज उत्पादन के सिद्धांत और अभ्यास	पुष्पा उज्जैनिया, उत्तम शिवरान, कमलेश कुमार यादव एवं एम आर चौधरी	35-36
20	श्री अन्न (मिलेट्स) उत्पादन, टिकाऊ कृषि एवं पोषण सुरक्षा की भविष्य फसल	जनक राज, एस. एस. यादव, राम स्वरुप चौधरी एवं संदीप कुमार	36-38
21	मशरूम की उन्नत खेती कैसी करें	संतोष झाझड़िया, मौहम्मद युनुस, तुलिका आचार्य एवं हितेश मुवाल	38-40
22	कंटोला (ककोड़ा) की खेती से अतिरिक्त आय अर्जित करें किसान	बी. एल. आसीवाल, राजीव कुमार नारोलिया रमेशचन्द एवं ललिता बौचलिया	40-41
23	मूंगफली के कटाई पश्चात प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन से किसानों की आय दोगुनी	बबिता डीगवाल, आर. एस. मीणा, आर. एल. मीणा एवं के. ए. मीणा	41-44
24	परंपरा से प्रगति तकः भू–स्थानिक विश्लेषण आधारित आधुनिक कृषि का नया परिदृश्य	निधि कुंडू	44
25	मूँग के सतत् उत्पादन के लिए उत्परिवर्तन प्रजननः एक उभरती तकनीक	कोमल चौधरी, बी एल कुम्हार एवं मनोहर राम	45-46

26	मूंगफली व बाजरा में सफेद लट का जीवनचक्र एवं समन्वित प्रबन्धन	मुकेश निठारवाल, अनिता जाट, बी.एल. जाखड एवं मंजू कुमारी चौधरी	46-48
27	मशरूम एक लाभकारी फफूंद एवं प्रजातियां	दिनेश कच्छावा, धर्मेन्द्र सिंह भाटी, रमाकान्त शर्मा एवं आशीष कुमार झारोटिया	48-50
28	कृषि प्रसंस्करण : किसानों की आय वृद्धि का आधुनिक आधार	नरेन्द्र यादव, मनोज कुमार शर्मा एवं आकांक्षा पारीक	50-52
29	कैर के अचार की पारम्परिक विधि	ज्ञान प्रकाश शर्मा, मालीराम चौधरी, ओमप्रकाश गढवाल एवं राजीव कुमार नारोलिया	52-53
30	कृषि उत्पादों का प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन	नीरज जोशी, एम. एल. चौधरी, रीना जीतरवाल एवं जितेंद्र खरबास	53-54
31	प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना –किसानों की आर्थिक सुरक्षा का एक कवच	सन्तोष देवी सामोता, आई. एम. खान, बी. एस. बधाला एवं दीक्षा शर्मा	54-56
32	ज्वार के स्वास्थ्य लाभ एवं मूल्य–सवर्धिंत उत्पाद	प्रियंका जोशी एवं नवाब सिंह	56-58
33	सब्जियों की संरक्षित खेतीः किसानों के लिए एक वरदान	रीना जीतरवाल, ओ.पी. गढवाल, नीरज जोशी एवं सुमन	58-59
34	स्वच्छ कृषि उत्पादन और पर्यावरणीय सततता में बायोचार की भूमिका	राहुल कुमार जाट, रोशन चौधरी एवं एस. एस. यादव	59-61
35	जैव विविधता, कृषि जलवायु परिवर्तन मे टिकाऊ खाद्य प्रणाली के लिए एक वरदान	राजवीर सिंह, आकाश तंवर एवं दुष्यंत वर्मा	61-63
36	बीजीय मसाला फसलों में बीज प्रमाणीकरण तकनीक	जोगेन्द्र सिहं, शैलेष मार्कर, डी. के. गोठवाल एवं ए. सी. शिवरान	63-65
37	भारत में डेयरी क्षेत्र का विकास एवं भविष्य की संभावनाएँ	अरूण प्रताप सिंह, अरविन्द कुमावत, भूपेन्द्र कस्वा एवं मनोज कुमार शर्मा	66-68
38	आधुनिक बकरी पालनः कम खर्च में अधिक मुनाफा	भूपेन्द्र कस्वां, प्रवीण पिलानीयाँ एवं अरूण प्रताप सिंह	68-73
39	प्याज में विभिन्न बीज प्राइमिंग विधियों का वृद्धि एवं कंद उपज पर प्रभाव	ममता यादव, राजीव कुमार नारोलिया, दीपक गुप्ता एवं सुनिल कुमार यादव	73-74
40	पशुओ के लिए वर्षभर हरा चारा का उत्पादन	शिव मूरत मीना, जुनेद अख्तर एवं भवानी सिंह मीना	74-75
41	साइलेज से हरे चारे का संरक्षण	सुमित्रा देवी बम्बोरिया, शान्ति देवी बम्बोरिया, जितेंद्र सिंह बम्बोरिया एवं किरण दुदवाल	75-77
42	एक कदम आत्मनिर्भर किसान की ओरः किसान क्रेडिट कार्ड योजना 2026	उदय लाल गुर्जर, सुभिता कुमावत एवं नितिन डोडा	77-78
43	अजवाइनः मानव और पशुओं के लिए वरदान, पोषक तत्व एवं किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका	राम स्वरुप चौधरी, रोशन चौधरी, शिवराज कुमावत एवं जनक राज	79-80
44	पारंपरिक पशुओं से आधुनिक दुग्ध उत्पादः किसानों के लिए अवसर	उर्मिला चौधरी एवं भूपेन्द्र कस्वां	80-81
45	खाद्य तेलों में भारत की आत्मनिर्भरताः आवश्यकता, चुनौतियाँ और समाधान	करण सचदेवा, मनोहर राम, जोगेंद्र सिंह एवं नितिन डोडा	82-83
46	खुशहाल किसान, स्वस्थ धरतीः प्राकृतिक खेती का मंत्र	छत्रपाल बागड़ा, दीपक शर्मा, देवराज गुर्जर एवं उदय लाल गुर्जर	83-84
47	जलवायु परिवर्तन और पौध रोगः किसानों के लिए नई चुनौतियाँ	सरोज ओला, आनंद कुमार मीना एवं मनीषा कुमावत	84-86
48	प्राकृतिक कृषि : आज की आवश्यकता	मीना चौधरी, डी. के. जाजोरिया, रामधन घसवा एवं मुकेश चन्द भटेश्वर	86-88
49	राजस्थान की दलहनी फसलों में खरपतवार प्रबंधनः चुनौतियाँ, प्रभाव एवं एकीकृत रणनीतियाँ	सुनील कुमार यादव, सीमा शर्मा एवं श्वेता गुप्ता	89-90
50	ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा रोगमुक्त पौधों का उत्पादन	वर्षा कुमारी, डी.के गोठवाल, एस. मार्कर एवं आशीष शीरा	90

51	वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन द्वारा रासायनिक उर्वरकों की लागत कम करना	ब्रिजेश कुमार बाजिया, के.के. शर्मा एवं बिन्जा राम	90-92
52	बैंगन के प्रमुख रोग एवं उनका रोकथाम	मेघा आसीवाल	92-94
53	वैज्ञानिक दृष्टि से हड़जोड़ः हड्डी चिकित्सा से समग्र स्वास्थ्य लाभ	कमल कुमार बैरवा, जितेद्र गुर्जर, हरदत कस्वा, रमेश कुमार एवं कपिल	94-96
54	स्वयं सहायता समूह : सशक्तिकरण की सशक्त पहल	कविता लाखराण[1], रेखा बधाला[2] मुकेश कुमावत[1] एवं सुरेश कुमार महला	96-97
55	एकीकृत कीट प्रबंधन में चिपचिपे जाल (स्टिकी ट्रैप) की प्रभावशीलता और उपयोगिता	महाजन उमेश विशाल, वीर सिंह एवं प्रकाश कुमार	98-99
56	बायोचार : किसानों की समृद्धि और टिकाऊ खेती की नई दिशा	राकेश कुमावत, श्याम सुंदर शर्मा, सोनू जैन एवं शोभना विश्नोई	99-101
57	टिकाऊ कृषि के लिए संशोधित जैविक कीटनाशक	मुकेश चन्द भठेश्वर एवं मिना चौधरी	101-102
58	खेत से बाजार तक मजबूती की पहलः प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना	सोनू जैन, पी.एस. शेखावत, शिवराज कुमावत एव शोभना बिश्नोई	102-103
59	राजस्थान में प्राकृतिक खेतीः चुनौतियाँ, अवसर और भविष्य के अनुसंधान दिशा–निर्देश	हेमराज बोदल्या एवं महेन्द्र कुमार	104-105
60	राजस्थान के शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों में कृषि वानिकी से पशुओं के लिए चारा उत्पादन	धर्मेन्द्र त्रिपाठी, सी.एल. खटीक, झूमर लाल एवं हरफूल सिंह	106-107
61	कृषि के आधुनिक उपकरण, शुष्क भूमि प्रबंधन और AI तथा IoT का भविष्य	उपेन्द्र सिंह एवं नवीन कुमार	108-109
62	जड़ वाली सब्जियों में लगने वाले सूत्रकृमि का प्रकोप एंव उनका प्रबंधन	सीमा यादव, हेमराज गुर्जर एवं बी.एस. चंद्रावत	109-111
63	सरसों में माहू का मौसमी प्रकोप एवं प्रबंधनः एक समीक्षात्मक अध्ययन	योगेन्द्र सिंह, सुमन एवं पेरुरी वंदना	111-112
64	जिप्सम का मृदा सुधारक के साथ – साथ फसल उत्पादन में महत्व	इन्दुबाला सेठी, नरेन्द्र कुमार पारीक एवं हरफूल सिंह	112-113
65	जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन	हरफूल सिंह, नरेन्द्र कुमार पारीक, एवं इन्दुबाला सेठी	114-116
66	दूध दूहने की मशीनः एक तकनीकी दृष्टिकोण	अरविन्द कुमावत एवं अरूण प्रताप सिंह	117-118
67	मृदा स्वास्थ्य और उसका प्रबंधन	आशीष कुमार झारोटिया, धर्मेन्द्र सिंह भाटी, रमाकान्त शर्मा एवं सीता राम वर्मा	118-119
68	मोबाइल तकनीक के माध्यम से कृषि सूचना प्रसार	विजय पाराशर, सौरव सिंगला, आई.एम. खान एवं भारती शौकीन	119-122
69	रसोई के मसालों में छिपा सेहत का राज	बरखा शर्मा, रामधन घसवा, शिशराम जाखड एवं सर्वेश त्रिपाठी	122-124
70	फसल संरक्षण में जैव–नियंत्रण कारकों एवं जैव–कीटनाशकों का महत्त्व	अख्तर हुसैन, एस.एल. शर्मा, सुमन चौधरी एवं देवा राम बाज्या	124-127
71	जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव : मृदा में जिंक उपलब्धता बढाने की जैविक तकनीक	त्रिलोक चन्द बागड़ी, राकेश सम्मौरिया, प्रतिभा सिंह एवं आर. सी. मीणा	127-129
72	नैनो उर्वरकः कृषि के लिए एक वरदान	देवराज गुर्जर, महेंद्र मीना एवं ज्योति गुर्जर	130-131
73	खेती में कार्बन अवशोषणः मिट्टी की सेहत और किसानों की आय बढ़ाने का नया तरीका	अजय कुमार यादव एवं एस. एस. शर्मा	131-132
74	किसानों के उत्थान में सूचना स्रोतों की भूमिका	चरत लाल बैरवा एवं अशोक कुमार मीना	132-133
75	एकीकृत कृषि प्रणाली मॉड्यूल .अपशिष्ट पुनः उपयोग द्वारा आय संवर्धन	हरि सिंह	134-135
76	राजस्थान प्रदेश बजट 2026–27ःकृषि समृद्धि और हरित विकास की ओर बढ़ता कदम	प्रेम सिंह शेखावत, नगेन्द्र सिंह खंगारोत एवं धर्मेन्द्र सिंह लाखरान	135-136

77	जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में टिकाऊ कृषि और खाद्य सुरक्षाः रणनीतियाँ एवं प्रबंधन"	भीम पारीक, श्वेता गुप्ता, सीमा शर्मा एवं रामनिवास चौधरी	136-140
	सफलता की कहानियॉ / किसानों के नवाचार		
78	हर दिन एक पेड़ का संकल्प और 2 गायों से 450 गिर गायों तक का प्रेरक सफर	बलवीर सिंह बधाला, सन्तोष देवी सामोता, अरूण प्रताप सिंह एवं सुरेश कुमार महला	141-142
79	पॉलीहाउस, स्ट्रॉबेरी एवं पशुपालन से समृद्धि की ओर बढते कदम	सुरेश कुमार महला, अर्जुन खर्रा, मोहित रोहलन एवं मुध यादव	142-143
80	तालाब निर्माण से किसान परिवार हुआ खुशहाल	सुपर्ण सिंह शेखावत, रामप्रताप एवं रेणु गुप्ता	144
81	समन्वित कृषि प्रणालीः सतत् आय की कुंजी	रामप्रताप, सुपर्ण सिंह शेखावत एवं रेणु गुप्ता	145
82	जल संरक्षण और उन्नत तकनीक से बदली किस्मतः 60 वर्षीय किसान हरवीर सिंह की सफलता की कहानी	नवाब सिंह, प्रियंका जोशी, ममता कुमारी तंवर एवं गोविन्द	146
83	फार्म से मार्केट तकः एक महिला कृषि नवप्रवर्तक की प्रेरणादायक सफलता की कहानी	प्रियंका जोशी, नवाब सिंह, ममता कुमारी तंवर एवं सीमा यादव	147
84	जैविक खेती : उच्च गुणवत्ता अधिक आय	सुनिता चौधरी एवं अक्षय चितौड़ा	148
85	फल प्रसंस्करणः एक रोजगारोन्मुखी व्यवसाय	अक्षय चितौड़ा एवं सुनिता चौधरी	149
86	बकरी पालन से बदली तकदीर के प्रेरकः	आर.के. दूलड़, बी. एल. आसीवाल एवं अरूण प्रताप सिंह	150
87	मुर्गीपालन से आर्थिक समृद्वि की ओर	सुभाष यादव, पूनम एवं हँसराम माली	151
88	स्वरोजगार ने बदली ग्रामीण महिला की किस्मत	हँसराम माली, सुभाष यादव एवं पूनम	152
89	पीएचडी छात्र ने आजमाया वर्मीकम्पोस्ट में हाथ	सोनू जैन, सन्तोष देवी सामोता, रेखा बधाला एवं मनोज कुमार शर्मा	153-154
90	मुर्गी पालन एवं समन्वित कृषि प्रणाली से मासिक आय 15 लाख रूपये	रेखा बधाला, अर्जुन खर्रा, सुरेश कुमार महला एवं कविता लाखरान	155
91	पपीता की खेती से पोषण एवं आर्थिक सुरक्षा	जितेन्द्र कुमार एवं ललिता बौचलिया	156-157
92	गुलाब एवं आंवला प्रसंस्करण से सफल महिला उद्यमी	धर्मेन्द्र सिंह भाटी, रमाकान्त शर्मा, दिनेश कच्छावा एवं आशीष झारोटिया	158
93	उद्यानिकी फसलों में नवाचारों से सँवरा जीवन	रमाकान्त शर्मा, दिनेश कच्छावा, धर्मेन्द्र सिंह भाटी, एवं सीताराम वर्मा	159-160
94	डेयरी नवाचारों का ग्रामीण सुधार में प्रभाव एन डी डी बी की भूमिका		161-168
95	Key Highlights of *"Rangeelo" Kisan Mela* – 2026		169-171
96	Glimpses *"Rangeelo" Kisan Mela* – 2026		172-173
97	Press Highlights *"Rangeelo" Kisan Mela* – 2026		174-177
98	किसान मेले में किसानों द्वारा प्राप्त फीडबैक		178-179

जल संरक्षण : आज की आवश्यकता

आर एन. शर्मा
निदेशक प्रसार शिक्षा, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

जल संरक्षण से हमारा तात्पर्य जल के नुकसान तथा मृदा क्षरण रोकने से है। जल संरक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है क्योंकि वर्षा जल हर समय उपलब्ध नहीं रहता । अतः जल की कमी को पूरा करने के लिए जल का संरक्षण आवश्यक है।

जल संरक्षण की आवश्यकता

- गिरते हुए भू–जल स्तर पर विराम लगाने हेतु ।
- भूमि कटाव रोकने हेतु ।
- मानव व पशुओं को पेयजल उपलब्ध कराने हेतु।
- वनस्पतियों की वद्धि दर में बढ़ोत्तरी कर क्षेत्र की परिस्थिति को सुधारने हेतु।
- खरीफ के मौसम में वर्षा चक्र की अनिश्चतता और रबी के मौसम में समय पर वर्षा न होने के कारण फसलो में जीवनदायनी सिंचाई देने हेतु।
- जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण तथा औद्योगिकीकरण के कारण प्रति व्यक्ति के लिए उपलब्धता सुनिशिचित करने हेतु ।

जल संरक्षण के 4–आर

जल सरंक्षण आज की आवश्यकता बन चुकी हैं। विशेष तौर पर कृषि कार्यकलापों के लिए जल की कमी का सामना न करना पडे, यहीं इस समय सबसे बड़ी चुनौती है इसलिए जल संरक्षण के चार आर निम्नलिखित है

1. घटाना (Reduce): जल का प्रयोग बहुत, सोच–समझ कर सावधानी के साथ करना चाहिए। छोटी–छोटी कुछ सावधानियां अपनाकर हम जल के प्रयोग को घटा सकते हैं।
2. पुनःप्रयोग (Reuse)निम्न गुणवत्ता जल (ग्रे वाटर) कों शौचालयों या बगीचों आदि में पुनः प्रयोग करके हम काफी जल बचा सकते हैं। इसलिए जहॉ संभव हो सके जल को पुनः प्रयोग कर लेना चाहिए।
3. पुनर्भरण (Recharge): पुनर्भरण जल संरक्षण की एक अत्यंत महत्वपूर्ण विधि है। इसके लिए वर्षा जल संरक्षण किया जा सकता है।जिससे भूमिगत जल पुनर्भरित किया जा सकते है।
4. सम्मान (Respect) जल का सम्मान सभी दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। यदि हम जल का सम्मान करते है। तो अपवाह के रूप में बहने भी नहीं देते इसलिए इससे जल स्रोतों की पवित्रता बनाए रखने में और जल के संरक्षण में बहुत सहायता मिलती है। पहले बहते हुए जल में किसी प्रकार का अवशिष्ट पदार्थ डालना, थुकना, मलमूत्र त्याग इत्यादि धार्मिक रूप से वर्जित था।

जल संरक्षण हेतु संरचनाए

भारत के विभिन्न प्रदेशो में विभिन्न प्रकार के जल संचयन प्रविधियां प्रचलित हैं जैसे जल संग्रहण जल कुण्ड, टांका, भंडार, तालाब जोहड़ ताल तलैया झील गडढा, कुआं, भूमि सागर, में जल शोषण संरचनाएं भू–जल पुनर्भरण संरचनाएं आदि।

जल संरक्षण के लिए तालाब संरक्षण

तालाब वर्षा जल संरक्षण की एक परम्परागत संरचना है। हमारे देश के लोग प्राचीन समय में जल जंगल एवं भूमि का महत्व अच्छी तरह समझते थे। इसलिए आशाढ माह के पहले दिन से लेकर भादों के अंतिम दिन तक भारत में तालाब पवित्र जल से भर दिये जाते थे और जेठ तक उनका उपयोग सभी लोग बखूबी करते थे। वर्षा जल को सहज कर ही पेयजल की आवश्यकता पूरी की जाती थी। लोग अपना कल्याण स्वयं करने में विश्वास करते थे। तालाब में वर्षा जल सरंक्षण के हेतु निम्नलिखित कार्य महत्वपर्ण हैं जैसेः

- गर्मियों में तालाब की सफाई करें।
- तालाब की मिट्टी निकाल कर उन्हें गहरा करें।
- किनारे ठीक करें व मजबूत बनाएं।
- तालाब में बरसात का जल आने के रास्तों को साफ करें व अवरोध हटाएं।
- गांव व शहरों का गंदा जल तालाब में न डालें।

बरसात में तालाब के चारो ओर नीम, शीशम, सिरस, अनार, आम, अमरूद, जामुन, शहतूत, अर्जुन, अशोक, आंवला, हरड़, बेहड़ा, कटहल, पीपल, बरगद तथा कीकर आदि पेड स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार लगाएं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

तालाबों का निर्माण एवं उनका प्रयोग

वर्षा के समय जल को एकत्रित करने के लिए गडढ़ा खोदकर अथवा रोक बॉध बना कर जल को एक स्थान पर एकत्रित करने वाली रचना तालाब कहलाती है। तालाब की मिटटी को उसके चारों ओर मेंड के रूप में फैलाने से छोटे बांध की तरह की संरचना का निर्माण हो जाता है। बरसात के जल बहाव क्षेत्र में बांध बनाकर इस जल को रोका जाता है और छोटे तालाब के रूप में एकत्र कर लिया जाता है। ये जोहड प्राचीन समय में सामान्यतः सिंचाई के लिए बनाए जाते थे,

तालाब व जोहड़ में संग्रहीत जल का संरक्षण

तालाबों से जल का ह्रास वाष्पोत्सर्जन एव अन्तःस्यन्दन के कारण हो सकता है। परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि मात्र अन्तःस्यन्दन के कारण ही लगभग 20–30 प्रतिशत संग्रहीत जल बेकार चला जाता है। वाष्पोत्सर्जन में यह हानि तो लगभग 46 प्रतिशत तक आंकी गयी है।

जल संरक्षण तालाब व जोहड़ में प्लास्टिक की लाइनिंग द्वारा अन्तःस्त्रवण की रोकथाम प्लास्टिक की पतली झिल्लियों के प्रयोग द्वारा अन्तःस्त्रण की रोकथाम अति आवश्यक है। खास तौर पर उन इलाकों में जहॉ पर मिटटी के बनावट ऐसी है कि जल की अन्तःस्त्रवण दर अत्यधिक होती है। इसके लिए 250 से 500 माइक्रोन की प्लास्टिक का आच्छादन कर के जल की लगभग 25–30 प्रतिशत तक बचत की जा सकती है।

पुराने तालाबों का उचित रख–रखाव

पुराने तालाबों में गाद जमा होने से उनकी क्षमता कम हो जाती है, साथ ही जिस क्षेत्र से जल बहकर तालाब में आता था, वह छिन्न–भिन्न हो जाता है, इसलिए जल तालाब तक नहीं पहुंच पाता है। तालाबों के पुनःउत्थान के लिए दो बातें अतिआवश्यक हैं

- मिटटी खनन कर क्षमता बढाना
- तालाब के जलग्रहण क्षेत्र में जल कों तालाब की ओर केन्द्रित करना, ताकि वर्षा काल के दौरान तालाब की क्षमतानुसार जल भंडारण हो सके

पारंपरिक जल संग्रहण संरचनाओं का जीर्णोद्वारः

लोक सहाभागिता के द्वारा हमारे देश के विभिन्न भागों में भिन्न–भिन्न प्रकार की जल संग्रहण संरचनाएं पायी जाती है। कुछ छोटी कुछ मझोली और कुछ बहुत बड़ी–बड़ी संरचनाएं पहले राजा महाराजा ऐसी संरचनाएं बनवाते थे। जिससे बहुत से लोगों को रोजगार भी मिलता था। बाद में सामुदायिक रूप से ऐसे जलाशयो को बनाने की परम्परा शुरू हुई आज पुनः आवश्यकता है कि बडी व तलाबों के बनाने से निम्न लाभ होंगे।

1. पूरे गॉव के जल स्तर में सुधार होगा 2. तालाब के चारों ओर लगे पेड़ों पर चिड़ियों का बसेरा होगा, जो हानिकारक कीटों को खाकर नष्ट करेगी । 3. गॉव का पर्यावरण सुधरेगा । 4. सुबह–शाम घूमन व व्यायाम करने का स्थल बनेगा 5. तालाब से सिंचाई करने में खर्च कम आयेंगा। 6. जब बहुत से तालाब बन जायेंगे तो भू–जल के स्तर में आशातीत सुधार होगा 7. एक उतम जल संग्रहण और उसके आस–पास की सुरक्षा तथा मनमोहक वातावरण का सृजन हो । तलाब में समेकित कृषि प्रणाली के तहत मछली पालन और बत्तख पालन कर सकते हैं। 8. मखाना और सिंघाडा भी उगाया जा सकता है। 9. वर्षा का जल नष्ट नहीं होता बल्कि इस सदुपयोंग भी हो जाता है। इससे भू–जल स्तर में भी सुधार होते है।

जल संरक्षण हेतु उपयोगी उपाय कृषि में जल का कार्य बहुत महत्वपर्ण है। विभिन्न पोषक तत्व जल में ही घुल कर पौधों व प्राणियों को प्राप्त होते हैं, और तब कहीं जा कर उनका पोषण हो पाता है। कृषि में जल की महत्ता इस कारण और भी बढ जाती है कि बिना जल के कुछ भी उत्पादित कर पाना संभव नहीं है। आज समग्र संसार में जल की कमी दिखाई देती है। जैसे–जैसे जनसंख्या बढ रहीं है उसकी अन्य आवश्यकताएं भी बढ़ रही हैं। परन्तु प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता लगातार घट रही है। जहॉ सन् 1950 में भारत में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता घन मी. प्रति वर्ष थी वहीं सन् 2011 में प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता घट कर 1539 घन मी. प्रतिवर्ष हो गई थीं। इसी प्रकार खाद्यान्न उत्पादन हेतु सिंचाई जल उपलब्धता घट' कर "1539 घन मी प्रतिवर्ष हो गईं थीं। इसी प्रकार खाद्यान्न उत्पादन हेतु सिंचाई जल उपलब्धता में भी लगातार कमी 'आती जा रही है। जल एक बहुमूल्य प्राकृतिक ससाधन है। परन्तु इसकी मात्रा सीमित है

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पारंपरिक खेती की अनमोल धरोहरः स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आई.टी.के)

रोशन चौधरी, बी. एल. दुदवाल, हिना सहीवाला एवं संतोष देवी सामोता
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

कृषि में स्वदेशी तकनीकी ज्ञान (आईटीके) कृषि का वह अमूल्य खजाना है जो हमारे पूर्वजों ने पीढ़ी–दर–पीढ़ी संरक्षित किया। यह स्थानीय संसाधनों पर आधारित पर्यावरण–अनुकूल प्रथाओं का संग्रह है, जो फसल उत्पादन, मिट्टी संरक्षण, कीट प्रबंधन और जल प्रबंधन में सहायक हैं। यह रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भरता कम करता है तथा जैविक खेती को बढ़ावा देता है। आई. टी. के. आधुनिक रसायनों पर निर्भरता कम कर सतत खेती का आधार बनाता है। पंचगव्य, जीवामृत, बीजामृत, नीमास्त्र स्थानीय जड़ी–बूटियां,जोहड़, ग्रीष्म जुताई जैसी विधियाँ कम लागत में 20–30 प्रतिशत् अधिक उत्पादन देती हैं। यह जलवायु परिवर्तन के दौर में किसानों को आत्मनिर्भर बनाता है।

आई. टी. के. कृषि के विविध आयाम

- **मिट्टी संरक्षण और उर्वरताः** गोबर, पत्तियाँ और जैविक कचरे से बनी खादें मिट्टी की संरचना सुधारती हैं।
- **कीट और रोग प्रबंधनः** नीम, लहसुन और तंबाकू के मिश्रण से प्राकृतिक कीटनाशक बनाए जाते हैं।
- **जल प्रबंधनः** पारंपरिक जल संचयन विधियाँ जैसे खेत तालाब और बाँध जल उपयोग को अनुकूलित करते हैं।
- **फसल उत्पादनः** अंतर–फसल, मिश्रित खेती और देशी बीज चयन से उत्पादकता बढ़ती है।
- **खरपतवार नियंत्रणः** ग्रीष्म जुताई और फसल अवशेष मल्च, रासायनिक खरपतवारनाशक की आवश्यकता 75 प्रतिशत तक घटती है। मिट्टी जीवाणु सक्रियता 2–3 गुना बढ़ती है।
- **जलवायु अनुकूलन आयामः** आई.टी.के जलवायु परिवर्तन से निपटने में सहायक हैं, जैसे मिलेट फसलें जो सूखा–सहिष्णु हैं।

बीज अंकुरण हेतु आई. टी. के.

- बीजशोधन का अर्थ है बीजों को बीजजनित और मृदाजनित रोगों से बचाव हेतु तैयार करना। बीजशोधन से बीजों के अंकुरित होने की क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
- **बीजामृतः** देशी गाय के 5 किलो गोबर को कपड़े में बांधकर गांठ बना लेंवें तथा 20 लीटर पानी में लटकाकर 12 घण्टे तक डुबोकर रखें। प्राप्त घोल में से एक लीटर घोल लेकर इसमें 50 ग्राम चूना मिलायें तथा रातभर के लिए रख दें। इसके बाद सुबह गोबर वाली गांठ को निचोड़कर पानी में इसका पूरा सत निकाल लें। अब इस पानी में 100 से 150 ग्राम खेत के मेड़ की मिट्टी डालकर तेजी से हिलायें। इस घोल में 5 लीटर गौमूत्र मिलायें। आखिरी में इसमें चूना पानी मिलायें और घोल को अच्छी तरह से हिलायें। बुवाई के 24 घंटे पहले बीजशोधन करना चाहिए। बीजामृत तैयार हो जाने के बाद बीजों के जमीन में फैलाकर उसके ऊपर बीजामृत का छिड़काव कर हाथ से बीजों पर बीजामृत की परत चढ़ायें। बीजों को छाया में सुखाएं और इसके बाद में बीज बोएं।
- ताजी नीम की पत्तियों को रात भर पानी में भिगोकर बीजों को 12–18 घंटे डुबोएँ। यह फफूंद जनित रोगों से बचाव करता है तथा अंकुरण दर 20–30 प्रतिशत् बढ़ाता है। धान, गेहूँ और सब्जियों के लिए उपयुक्त। बीजों की जीवन शक्ति बढ़ाने वाली सरल विधि हैं।
- लाल मिट्टी लेपः सूखी लाल मिट्टी को पानी में घोलकर चिकना लेप बनाएँ। बीजों पर पतली परत चढ़ाकर छाया में सुखाएँ। चने–मटर के बीजों हेतु प्रचलित, चूहों से सुरक्षा प्रदान करता है।
- 50 ग्राम अजवाइन को 5 लीटर पानी में उबालकर ठंडा घोल में बीज को 8–10 घंटे भिगोएँ। जड़ गलन रोग नियंत्रण में प्रभावी।
- देशी गाय का गोमूत्र 10 गुना पानी में घोलकर बीज 30 मिनट भिगोएँ। जीवामृत के समान प्रभाव से जड़ विकास तेज होता है। आलू के बीजों में प्रभावी।
- एक किलो चूना, 500 ग्राम लहसुन पीसकर 10 लीटर पानी में मिलाएँ। बीजों को 6–8 घंटे भिगोकर निकालें। नर्सरी में अंकुरण समानता लाता है तथा मिट्टी जनित रोग रोकता है।
- सरसों तेल से बीजों को हल्का रगड़कर सुखाएँ। दीमक और चीटियों से बचाव के लिए उपयोगी। टमाटर, भिंडी के बीजों के लिए आदर्श।

मिट्टी उर्वरता हेतु आई. टी. के.

- जीवामृतः10 किलोग्राम गाय का गोबर व 5 लीटर गो–मूत्र एवं 2 किलो गुड 200 लीटर पानी में मिलाऐं इसके बाद 2 किलो बेसन, 500 ग्राम वट वृक्ष के नीचे की मिट्टी का उपयोग करतें है और डंडे से 10 मिनट तक हिलाऐं। इसके बाद ड्रम को जालीदार कपड़े से बंद कर दें। सुबह शाम डंडे से घोल को 15 मिनट तक हिलाऐं। 48 घंटे बाद जीवामृत तैयार हो जायेगा। इस जीवामृत का प्रयोग केवल सात दिनों तक कर सकते हैं। ड्रम को छाया में रखे जहाँ पर धूप न लगे। प्रति एकड़ 200 लीटर तैयार जीवामृत सिंचाई के बहते पानी पर बूंद–बूंद टपका कर दें। फसलों और पौधों पर जीवामृत के 10 प्रतिशत घोल का छिड़काव कर दें।
- मटका खादः 5 कि.ग्रा. ताजा गोबर, देशी गाय का 5 लीटर गोमूत्र तथा 5 लीटर पानी मिट्टी के घड़े में घोलतें हैं। उसमे 250 ग्राम गुड़ भी मिला दें। घड़े के मुंह को ऊपर से कपड़ा से बांध कर मिटटी में 10 दिन के लिए गाड़ दें तथा प्रयोग में लेंवें। इस घोल में 200 लीटर पानी मिलाकर 1 एकड़ खेत में समान रूप से छिड़क दें। पुनः 7 दिन बाद दूसरा छिड़काव करें।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- भभूतअमृत पानीः भभूत अमृत पानी तैयार करने के लिए देशी गाय के 10 किग्रा ताजे गोबर में 500 ग्राम शहद मिलाकर फेंटें। इस मिश्रण में 250 ग्राम गाय का घी डालकर मिलायें। इसमें ताजा मिश्रण को ही उपयोग में लिया जाता है। 1 कि.ग्रा. मिश्रण को पतला कर बीज पर छिडककर उपचारित/ संस्कारित करें जिससे बीज पर मिश्रण की हल्की सी परत चढ़ जाये। इसे छाया में सुखाकर बुवाई करें।भभूत अमृत पानी के 10 कि.ग्रा. मिश्रण को 200 ली. पानी में घोलकर बुवाई से पूर्व 1 एकड़ खेत में छिड़काव करें।
- नीमास्त्रः नीमास्त्र तैयार करने के लिए सर्वप्रथम प्लास्टिक के बर्तन में 5 किलोग्राम नीम की पत्तियों को कूट कर डालें । अब इसमें 5 लीटर गोमूत्र व 5 किलोग्राम गाय का गोबर डालें । इन सभी सामग्री को डंडे से मिलाकर सूती कपड़े से ढक दें। यह 48 घंटे तैयार हो जाएगा। नीमास्त्र का प्रयोग छः माह तक कर सकते है। 100 लीटर पानी में तैयार नीमास्त्र को छान कर मिलाएं और छिड़काव करें।
- गाय का गोबर, मूत्र, दूध, दही और घी मिलाकर बनाई जाने वाली पंचगव्य खाद मिट्टी की सूक्ष्मजीव गतिविधि बढ़ाती है और फसल की वृद्धि को प्रोत्साहित करती है।
- स्थानीय केंचुओं से बनी वर्मीकम्पोस्ट खाद मिट्टी की संरचना सुधारती है और रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम करती है।
- गोबर, मूत्र और स्थानीय जड़ी–बूटियों से बनी कुमाऊँनी खाद मरुस्थलीय मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती है।

कीट एवं रोग प्रबंधन हेतु आई. टी. के.

- नीम की पत्तियों, फूलों और बीजों को पानी में उबालकर छिड़काव से फसलों पर लगने वाले कीट जैसे तना बेधक और चूसक कीट नियंत्रित होते हैं।
- तीखा सतः 500 ग्राम हरी तीखी मिर्च, 500 ग्राम लहसुन, 1 कि.ग्रा. धतूरा पत्ती तथा 500 ग्राम नीम पत्ती को 10 ली. गौ–मूत्र में मिलाते है। बाद में इसे तब तक उबालें जब तक कि यह घटकर आधा न रह जाये। 7–10 दिन तक सडने के लिए छायादार स्थान पर रख देते है। अब इस सत को निचोड़ कर सूती कपड़े से छाने तथा प्लास्टिक बोतलों में भडांरित करें।कीट नियंत्रण हेतु 5 प्रतिशत् का घोल तैयार कर खेत में समान रूप से छिड़क दें।
- दशपर्णी अर्कः एक प्लास्टिक के ड्रम में 200 लीटर पानी डाले फिर इसमें 2 किलोग्राम गाय का गोबर और 10 लीटर गौ–मूत्र मिला दें। अब इसमें नीम, करंज, सीताफल, धतूरा, बेल, तुलसी, पपीता, करंज, कनेर तथा गेंदा की पत्ती की चटनी डाले (2 किलोग्राम पत्तियाँ प्रत्येक पौधा) और डंडे से हिलायें। दूसरे दिन तम्बाकू, मिर्च, लहसुन, सोंठ तथा हल्दी डालें। फिर डंडे से हिलाकर जालीदार कपड़े से बंद कर दें। प्रतिदिन सुबह शाम डंडे से जरूर हिलाते रहें और 40 दिन छाया में रखा रहने दें। प्रति एकड़ के लिए 200 लीटर पानी में 10 लीटर दशपर्णी अर्क मिलाकर छिड़काव करें। इसको छः माह तक प्रयोग कर सकते हैं।
- ब्रह्मास्त्रः 10 लीटर देसी गोमूत्र, 3 किलो नीम के पत्तों का अर्क, 2 किलो सीताफल के पत्तों का अर्क, 2 किलो करंज के पत्तों का अर्क, 2 किलो बील के पत्तों का अर्क, 2 किलो अरंडी के पत्तों का अर्क, 2 किलो धतूरा के पत्तों का अर्क सर्वप्रथम 10 लीटर देसी गोमूत्र लें। इसमें 3 किलो नीम के पत्तों का अर्क, 2 किलो सीताफल के पत्तों का अर्क, 2 किलो करंज के पत्तों का अर्क, 2 किलो बील के पत्तों का अर्क, 2 किलो अरंडी के पत्तों का अर्क तथा 2 किलो धतूरा के पत्तों का अर्क मिला लें। फिर इस घोल को उबालें, उबलने के बाद घोल को 48 घंटे तक स्थिर रखें। फिर घोल को छान कर स्टोर कर लें। सभी चूसने वाले कीटों, फली छेदक, फल छेदक आदि को नियंत्रित करने के लिए फसलों पर तैयार ब्रह्मास्त्र का छिड़काव करें। छिड़काव के लिए 100 लीटर पानी में 5 लीटर ब्रह्मास्त्र का घोल लें।
- सड़ा हुआ छाछ पानीः छाछ को 5–7 दिन के लिए घड़े में रखकर छोड़ दिया जाता है। सात दिन बाद इसका निथरा हुआ द्रव्य निकाल कर प्रयोग करें। छिड़काव के लिए 10 प्रतिशत सड़ा हुआ छाछ पानी का घोल लें।
- लहसुन, हरी मिर्च और साबुन के मिश्रण से सफेद मक्खी और एफिड्स का प्रबंधन किया जाता है।
- पारंपरिक रूप से, लकड़ी की राख चींटियों, पत्ती भक्षक, तना छेदक, दीमक, कीटों एवं घुन जैसे भंडारण कीटों के विरुद्ध कारगर सिद्ध होती है। राख को सीधे कीटों के समूहों या संक्रमित पौध भागों पर छिड़कें, जो नरम शरीर वाले कीटों को निर्जलीकरण द्वारा नष्ट कर देती है तथा मिट्टी जनित रोगों को भी नियंत्रित करती है। अनाज भंडारण में राख की परत बिछाकर घून प्रतिबंधित किया जाता है।
- फली छेदक कीट के प्रबंधन हेतु खट्टी छाछ, ग्वारपाठा एवं तंबाकू का संयुक्त प्रयोग अत्यंत प्रभावी पारंपरिक विधि है। 200 ग्राम तंबाकू पाउडर, 2 लीटर खट्टी छाछ अर्क, 2–3 ताजे ग्वारपाठा के पत्तों का रस 15 लीटर पानी में अच्छी तरह घोलें। इस मिश्रण को 15 दिनों तक छायादार स्थान पर बिना हिलाए रखें, फिर सुत्ती कपड़े से छानकर 2–3 सप्ताह अंतराल पर संक्रमित फसल पर स्प्रे करें। यह जैविक विषैले गुणों से कीट अंडे एवं लार्वा को नष्ट करता है, फसल नुकसान को न्यूनतम रखता है।
- फफूंदनाशीः 5 लीटर गाय के दूध में 200 ग्राम काली मिर्च का पाउडर मिलायें तथा अच्छी तरह घोल कर छान लें। छने हुए घोल को 200 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें।
- नीम की पत्तियाँ और गोबर के उपलों से धुआँ करके कीटों को दूर किया जाता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

जल प्रबंधन हेतु आई. टी. के.

- वर्षा जल संचयनः जोहड़/खेत के किनारे 1–2 मीटर गहरे छोटे तालाब बनाकर वर्षा जल संचित किया जाता है, जो सूखे में सिंचाई के लिए उपयोगी होता है। शेखावाटी क्षेत्र (सीकर, झुंझुनू, चूरू) में प्रचलित कच्चे/पक्के तालाब, खेत या गोचर के निचले भाग में बनाए जाते हैं।
- फसल अवशेषों, सूखी घास या पत्तियों की 4–6 इंच परत से मिट्टी ढकना नमी संरक्षण करता है और खरपतवार नियंत्रण में मदद करता है। मिट्टी वाष्पीकरण 50–70 प्रतिशत कम होता है। सब्जियों के लिए आदर्श।
- बावड़ीः गाँव स्तर पर सीढ़ीदार संरचनाएँ जो वर्षा जल को भूमिगत रिचार्ज करती हैं।
- कुईः तालाब के निकट 10–15 फीट गहराई गर्त जहाँ रिसाव जल एकत्र होता है। जैसलमेर–बाड़मेर में प्रचलित। शुद्ध पेयजल प्राप्ति।
- टांकाः घरेलू वर्षा जल संचयन कुंड जिसमे छत से नालियाँ जोड़कर जल संग्रह किया जाता हैं। बीकानेर, जैसलमेर के आवासों में प्रचलित। क्षमता 10,000–50,000 लीटर तक होती है। 4–6 माह पेयजल के लिए उपयोगी होता है।
- खड़ीनः जैसलमेर का क्षेत्र–विशेष जल संग्रहण। बाँध बनाकर जल रोकते हैं, निचले भाग में खरीफ फसल। 6–8 माह सिंचाई के लिए उपयोगी होता है।
- मानसून से पूर्व हल या देशी प्लाउ से 20–25 सेमी गहरी जुताई मिट्टी में जल धारण क्षमता बढ़ाती है। गेहूँ–चना में उपयोगी।
- चौड़ी बेडः1.5–2 मीटर चौड़ी बेड पर फसलें उगाएँ। जल निकासी सुधरती है तथा बाढ़ प्रतिरोध बढ़ता है। धान–मक्का में सफल।

खरपतवार नियंत्रण हेतु आई. टी. के.

- घासनाशकः ताजा गन्ने का 5 लीटर रस निकालकर प्लास्टिक ड्रम में डालें। फिर इसमें 1 किलो चूना धीरे–धीरे मिलाते हुए घोलें, गैस निकलना सामान्य है। 2 लीटर गोमूत्र और 10 लीटर पानी डालकर अच्छी तरह हिलाएँ। ढक्कन लगाकर 3 दिन छाया में रखें, रोज सुबह–शाम लकड़ी से हिलाएँ। खट्टी गंध आने पर तैयार। छानकर उपयोग करें। बुआई के 20–25 दिन बाद 200 लीटर पानी में 5 लीटर घोल मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। चना–अरहर में 75 प्रतिशत घास नियंत्रण।
- नीम–लहसुन स्प्रेः एक किलो नीम पत्तियाँ, 500 ग्राम लहसुन और 50 ग्राम मिर्च को बारीक पीसें। दो लीटर पानी में मिलाकर 24 घंटे रखें। कपड़े से छानकर शेष 8 लीटर पानी मिलाएँ। अच्छी तरह हिलाकर तुरंत उपयोग करें। चौड़ी पत्ती खरपतवार (बथुआ, जंगली पालक) के लिए 15–20 दिन बाद छिड़काव। मूंग–उड़द में प्रभावी।
- फसल अवशेष मल्चः गेहूँ कटाई के बाद पराली/आम/नीम/शहतूत की सूखी पत्तियों को 5–7 सेमी मोटी परत खेत में बिछाएँ। बुआई के समय हल्की मिट्टी डालें। 50 प्रतिशत घास नियंत्रण। प्रकाश अवरोध से 60–70 प्रतिशत अंकुरण रोकथाम। मिट्टी तापमान नियंत्रण। पत्तियाँ सड़ने पर जैविक खाद बन जाती हैं। रासायनिक खरपतवारनाशक की आवश्यकता 75 प्रतिशत तक घटती है। मिट्टी जीवाणु सक्रियता 2–3 गुना बढ़ती है।
- ग्रीष्म जुताई खरपतवार प्रबंधन में अत्यंत प्रभावी पारंपरिक कृषि प्रथा है जो रबी फसल कटाई के बाद गर्मी के मौसम में अपनाई जाती है। यह खरपतवारों के जीवन चक्र को तोड़कर उनकी आबादी को 40–60 प्रतिशत तक कम करती है। 15–20 सेमी गहरी जुताई से खरपतवार जड़ें–बीज मिट्टी सतह पर आ जाते हैं। गहरी जुताई खरपतवार बीज बैंक को मिट्टी के गहरे स्तरों में धकेल देती है, जहाँ अंकुरण नहीं होता। काँस, मोथा, दुब की मोटी जड़ें टूटकर सड़ जाती हैं।

जलवायु अनुकूलन हेतु आई. टी. के.

- जलवायु अनुकूलन आयाम में पारंपरिक प्रथाएं जलवायु परिवर्तन जैसे सूखा, अनियमित वर्षा और तापमान वृद्धि से निपटने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। मिलेट फसलें इसका प्रमुख उदाहरण हैं, जो कम पानी वाली और सूखा–सहिष्णु होती हैं। ये प्रथाएं स्थानीय संसाधनों पर आधारित होकर किसानों को आत्मनिर्भर बनाती हैं। मिलेट्स जैसे बाजरा, ज्वार, रागी सूखा प्रतिरोधी हैं और कम उपजाऊ भूमि पर उगाई जा सकती हैं। जनजातीय क्षेत्रों में ये फसलें स्थिर उपज देती हैं, भले ही जलवायु तनाव हो। इसके अतिरिक्त केर, सांगरी, खीप, खेजड़ी, रोहिड़ा, पीलू, बबूल, फोग, बेर और गुग्गल जैसी वनस्पतियाँ मरुभूमि के कठोर परिदृश्य में हरियाली और जीवन बनाए रखती हैं। खेजड़ी को मरुभूमि का राजा और कल्पवृक्ष कहा जाता है। इसकी जड़ें भूमि को बाँधकर कटाव रोकतीं और पत्तियाँ व फलियाँ पशुओं के पोषण का माध्यम बनती हैं। सांगरी और खीप की फलियाँ मानव आहार और पशु अन्न का आधार हैं, जबकि रोहिड़ा और पीलू कठोर मिट्टी में जीवन बनाए रखते है। बबूल रेशे, ईंधन और चारे का स्रोत है, और फोग, बेर व गुग्गल जैव विविधता और भूमि की उर्वरता में सहायक होते है। नीम, तुलसी और अन्य औषधीय पौधे खेतों और बागों में प्राकृतिक रोग नियंत्रण और कीट नियंत्रण का काम करते है, साथ ही पर्यावरण को संतुलित रखते है। सदियों से विकसित यह ज्ञान प्रणाली केवल भौतिक आवश्यकताओं तक सीमित नहीं है। यह किसानों को मौसम, जल, भूमि, वनस्पति, पशु और मानव जीवन के सूक्ष्म संतुलन का अहसास कराती है। फसल चक्र और पशुपालन का तालमेल, जल संचयन की रणनीतियाँ, औषधीय पौधों की खेती और जैव विविधता सब एक–दूसरे से जुड़े है। यह न केवल पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करता है, बल्कि सामाजिक सहयोग और सांस्कृतिक परंपराओं को भी पुष्ट करता है। सामूहिक श्रम, गाँवों के बीच सहयोग, जल–स्रोतों का साझा प्रबंधन और प्राकृतिक संकेतों पर आधारित खेती ने मरुभूमि में जीवन को अक्षय और सुदृढ़ बनाया। राजस्थान की पारंपरिक कृषि केवल अन्नोत्पादन का साधन नहीं, बल्कि मरुभूमि में जीवन, हरियाली, जल संरक्षण, औषधीय ज्ञान, पशुपालन, जैव विविधता, सामाजिक सहयोग और जीवन दर्शन का संदेश है। यह अतीत की धरोहर ही नहीं, बल्कि भविष्य की

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

प्रेरणा भी है, जो सीमित संसाधनों में संतुलित, स्वस्थ और समृद्ध जीवन की संभावना दिखाती है। यहाँ की तपती धरती सिखाती है कि जहाँ प्रकृति, जल, भूमि, औषधि, पशु और मानव जीवन का सामंजस्य हो, वहाँ मरुभूमि भी हरित, जीवंत और समृद्ध बन सकती है। यह ज्ञान केवल कृषि का विज्ञान नहीं, बल्कि जीवन, प्रकृति और समाज के बीच सूक्ष्म संतुलन का सर्वोच्च दर्शन है, जो आने वाली पीढ़ियों को स्थायित्व, स्वास्थ्य और समृद्धि की ओर मार्गदर्शन करता है।

ग्वार की फसल के प्रमुख रोग एवं उनका नियंत्रण

आनंद कुमार मीणा, शैलेश गोदिका, एस. के. गोयल एवं जितेन्द्र सिंह
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

ग्वार देश के उतरी पश्चिमी राज्यों के शुष्क व अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में उगाई जाने वाली खरीफ की मुख्य फसल है। यह फलीदार फसल होने के कारण वायुमंडल से नत्रजन का संचय करती है, जिससे भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है। अतः फसल को बाजरा व मोठ की फसल के साथ अतः फसल के रूप में बोया जाता है। ग्वार मुख्यतयाः दाने, सब्जी, चारे और हरी खाद के लिए उगाया जाता है। ग्वार के बीज में 28–33 प्रतिशत तक गैांद होता है। ग्वार गौंद का औधोगिक महत्व होने के कारण कृषि वैज्ञानिकों, उत्पादकों, उद्योगपतियों तथा योजनाकारों का इसकी नई–नई सुधरी किस्मों में विशेष ध्यान आकर्षित हुआ है। वर्तमान में ग्वार के दानों से गौंद बनाने की फैक्ट्रियों मे वृद्धि हुई है। जंहा गौंद बाहर के देशों जैसे अमेरिका, जापान, फ्रांस, इटली, नीदरलैंण्ड आदि को निर्यात किया जाता है। ग्वार की फसल मे कई रोग लग जाते है। जिससे उत्पादकता में भारी कमी आ जाती है। इसलिए ग्वार की फसल को रोगों से बचाना आवश्यक है। ग्वार के रोग इस प्रकार से हैं –

1. शाकाणु झुलसा (बेक्टीरियल ब्लाइट) –ग्वार की फसल में यह रोग '**जेन्थोमोनास एग्जोनोपोडिस, पी.वी. साइयोपसिडिस**' नामक बेक्टीरिया से होता है। उग्र अवस्था में इस रोग में 45 से 50 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है। इस रोग को जीवाणु रोगी बीज के द्वारा नए क्षेत्र में प्रवेश करता है। यह रोग पौधे की किसी भी अवस्था में लग सकता है। परंतु पौधे की एक माह की अवस्था ज्यादा नाजुक है।

लक्षण– रोग के लक्षण पतियों पर दोनो तरफ शिराओं के मध्य बड़े गोल चिपचिपे धब्बे होते है। जो अनुकूल वातावरण मिलने पर एक दूसरे से मिलकर पतियों को झुलसा देते है। रोगी पतियां समय से पूर्व गिर जाती है। उग्र अवस्था में तने पर लम्बाकर धारियां दिखाई देती है। जिससे तना काला पड़ जाता है। पौधो पर फलियां कम लगती है व इन फलियों में दाने भी कम होते है। रूक – रूक कर वर्षा एवं अधिक नमी व तापमान से यह रोग ज्यादा फैलता है। आंधी व वर्षा के छींटो से रोग एक पौधे से दूसरे पौधे पर तेजी से फैलता है।

रोकथाम

1. बुवाई से पूर्व बीजों की स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (0.025 प्रतिशत) उपचारित करना चाहिए। इसके लिए 10 लीटर पानी में ढाई ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन के घोल में बीजों को 2 घंटे डुबोकर निकालें एवं छाया में सुखाकर बुवाई करें।
2. मौसम अनुकूल होने पर फसल पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही स्ट्रेप्टोसाइक्लीन (0.01 प्रतिशत) 10 लीटर में 1 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन के घोल का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन के अंतराल पर पुनः दोहरावें।
3. रोग रोधी किस्मों की बुवाई करें। इसके लिए आरजीसी 986, एचएफजी 75, आरजीसी 1002, एच जीएस 365 आदि प्रमुख रोग रोधी किस्में है।

2. शुष्क जड़ गलन (ड्राई रूट रोट) ': यह रोग '**मेक्रोफोमिना फेजियोलिना**' नामक कवक से होता है। इसमे बीज एवं भूमि दोनो से बीमारी फैलती है। इसलिए यह रोग बीज एवं भूमि जनित है। शुष्क परिस्थितियों में बीमारी का प्रकोप अधिक होता है। कभी कभी कम वर्षा में या दो वर्षा के बीच लम्बे अंतराल से भी रोग का प्रकोप अधिक होता है। जब रोग उग्र रूप में होता है तो इसमें 40 से 50 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है।

लक्षण– रोगी पौधो की जड़े सड़ जाती है। खेत में मुरझाए हुए पौधे तथा रोगी पौधों के तने का रंग हल्का भूरा हो जाता है। ऐसे रोगी पौधे खेत मे आसानी से उखाड़े जा सकते है। रोग ग्रस्त पौधो पर फलियां नहीं लगती है तथा जड़ों में नत्रजन संचय करने वाली राइजोबियम की ग्रथियां नहीं बनती है।

रोकथाम–

1. फसल चक्र अपनाना चाहिए। फसल चक्र में बाजरा लेने से रोग कम लगता है।
2. बुवाई से पूर्व कार्बेण्डाजिम 50 डब्ल्यूपी 2 ग्राम प्रति किलो बीज से बीजोपचार करना चाहिए। यदि झुलसा की रोकथाम के लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लीन का बीजोपचार करना है तो पहले कर लेना चाहिए फिर फफूंदनाशी से करें।
3. पौधो की कतारों के बीच में खेत में नहीं काम आने वाले पौधो के अवशेषों को डालने से रोग में कमी होती है।
4. जल्दी पकने वाली किस्मों की बुवाई करनी चाहिए इससे रोग कम लगता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

5. सिंचाई की सुविधा वाले क्षेत्रों में जंहा रबी की फसल भी ली जाती है। 2.5 टन सरसों की फलगटी व आधा टन सरसों की खली मिलाकर प्रति हैक्टेर मई में खेत में डालनी चाहिए व तेज गर्मी के समय एक पानी देना चाहिए। तेज गर्मी में सरसों के कचरे के सड़ने पर जो गैसें उत्पन्न होती है वो इस रोग की फफूंद को नष्ट कर देती है।

6. सिंचाई की सुविधा होने पर बुवाई से पहले कम्पोस्ट खाद 4 टन प्रति हैक्टेयर मिलाने से भी रोग कम होता है। कम्पोस्ट विलायती बबूल, खेत में खरपतवार आदि का बनाया जा सकता है।

3. पती धब्बा (आल्टनेरिया लीफ स्पॉट)– यह रोग ग्वार में **आल्टरनेरिया** नामक कवक से होता है। पतो पर छोटे–2 गहरे भूरे रंग के गोल या असमान धब्बे होते है जो गोलाकार छल्लों का रूप ले लेते है। अधिक नमी के मौसम में फैलकर पती के ज्यादातर भाग को झुलसा देते है। रोग की उग्र अवस्था में फलियां कम बनती है व दाने छोटे तथा हल्के हो जाते है तथा उपज में कमी आ जाती है। यह रोग बीज से फैलता है।

रोकथाम –1. रोग रहित क्षेत्रों से बीज प्राप्त करना चाहिए तथा स्वस्थ बीज की बुवाई करनी चाहिए।

2. रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही मेंन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। इससे यदि पती धब्बा रोग, सरकोस्पोरा, मायरोथिसियम, कॉलीटोट्राइकम व कुर्वुलेरिया कवक से होता है व वह भी नियंत्रण हो जाता है।

3. रोग सहनशील किस्मे जैसे एच जी एस 365, आरजीसी 986 आदि को बोना चाहिए।

4. छाछिया (पाउडरी मिल्डयू) –ग्वार की फसल में यह रोग कवक से हेाता है। यदि यह बीमारी फसल पकने पर आती है तो नुकसान कम होता है परंतु कई बार यह बीमारी बहुत पहले आ जाती है तो फसल में काफी नुकसान होता है।

लक्षण – यह रोग पहले पत्तियों पर आक्रमण करता है। पतियों पर गहरे सफेद रंग के धब्बे हो जाते है। जो कि निचली सतह पर अधिक होते है। रोग की उग्र अवस्था में पतियां जल्दी गिर जाती है। पौधे जल्दी पक जाते हैं तथा बीज हल्के एवं छोटे रह जाते है तथा उपज में कमी हो जाती है। उष्ण तापक्रम (30 डिग्री से.) कम आर्द्रता (50 प्रतिशत) व तेज धूप इसके फैलने में सहायक होते है।

रोकथाम– रोग के लक्षण दिखाई देते ही धुलनशील गंधक 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए या गंधक चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर का फसल पर भुरकाव करना चाहिए। इसके नियंत्रण के लिए डिनोकेप या ट्राइडेमोर्फ 0.1 प्रतिशत घोल का छिड़काव भी किया जा सकता है। आवश्यकतानुसार 15 दिन के अंतराल पर भुरकाव या छिड़काव दोहरावें।

राजस्थान में दालों की बीमारियों के प्रबंधन में कृत्रिम बुद्धिमत्ता का उपयोग

आकांक्षा एवं एस. के. गोयल
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

राजस्थान में दालें (दलहन) कृषि, अर्थव्यवस्था और पोषण की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। राजस्थान भारत में दालों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है, जो चना, मूंग और मोठ जैसी रबी–खरीफ फसलों का प्रमुख उत्पादक है। राज्य की शुष्क जलवायु और कम पानी में उगने की क्षमता के कारण, यहाँ दालें मिट्टी की उर्वरता बढ़ाती हैं और किसानों के लिए एक प्रमुख आय का साधन हैं। राजस्थान में दलहन फसलों (जैसे चना, मूंग और काला चना) में रोगों के प्रबंधन के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। इससे उपज में होने वाले नुकसान को कम करने, रसायनों के उपयोग को घटाने और समय पर सटीक निदान प्रदान करने में मदद मिलती है। राज्य की जलवायु परिवर्तनशीलता को देखते हुए, एआई–आधारित समाधान शीघ्र निदान, रोग पूर्वानुमान और सटीक प्रबंधन पर केंद्रित हैं। राजस्थान में, एआई दलहन फसलों (जैसे चना, मूंग और उड़द) के प्रबंधन में मैनुअल निरीक्षण की जगह स्वचालित, डेटा–आधारित निदान प्रणाली अपनाकर क्रांतिकारी बदलाव ला रहा है। यह बदलाव राजस्थान एआई/एमएल नीति 2026 द्वारा समर्थित है, जिसका उद्देश्य उभरती प्रौद्योगिकियों के माध्यम से कृषि का आधुनिकीकरण करना है। राजस्थान में दलहन रोग प्रबंधन में एआई के उपयोग के प्रमुख पहलू इस प्रकार हैं:

1. प्रारंभिक पहचान और रोग निदान

कंप्यूटर विजन और इमेज प्रोसेसिंग: शोधकर्ता दलहन (चना, काला चना, मूंग) में रोग की पहचान के लिए डीप लर्निंग (डीएल) मॉडल, विशेष रूप से कनवोल्यूशनल न्यूरल नेटवर्क (सीएनएन) का उपयोग कर रहे हैं। ये सिस्टम एंथ्रेक्नोज, पाउडरी मिल्ड्यू और येलो मोजेक जैसे रोगों की पहचान कर सकते हैं।

स्मार्टफोन आधारित ऐप्स: एआई–संचालित मोबाइल ऐप्स किसानों को संक्रमित दलहन पत्तियों की वास्तविक समय में तस्वीरें लेने की सुविधा देते हैं, जिससे तत्काल निदान और विशिष्ट उपचारों की अनुशंसा की जा सकती है। किसान संक्रमित दलहन पत्तियों की तस्वीरें अपलोड करने के लिए प्लांटिक्स जैसे स्मार्टफोन ऐप का उपयोग करते हैं। एआई रोगजनक की पहचान करता है और तुरंत उपचार संबंधी सुझाव देता है, जिससे विशेषज्ञों के स्थल पर जाने की आवश्यकता कम हो जाती है। एआई मॉडल को राजस्थान में प्रचलित सामान्य दलहन रोगों पर केंद्रित डेटासेट पर प्रशिक्षित किया जाता है, जैसे कि मूंग में पीला मोजेक वायरस, चने में पाउडरी मिल्ड्यू और एंथ्रेक्नोज।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

उच्च सटीकता: एआई सिस्टम प्रारंभिक चरण में रोगों का पता लगाने में उच्च सटीकता (कुछ अध्ययनों में 95: से अधिक) प्राप्त कर सकते हैं, जो व्यापक फसल क्षति को रोकने के लिए महत्वपूर्ण है।

2. रोग पूर्वानुमान और निगरानी

भविष्यवाणी विश्लेषण: मशीन लर्निंग (एमएल) मॉडल ऐतिहासिक डेटा, वास्तविक समय के मौसम डेटा (तापमान, आर्द्रता) और मिट्टी की स्थितियों का विश्लेषण करके दलहन फसलों में कीटों और रोगों के प्रकोप की भविष्यवाणी करते हैं।

उपग्रह और ड्रोन इमेजरी: ड्रोन और उपग्रहों के माध्यम से प्राप्त रिमोट सेंसिंग डेटा कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) को फसल तनाव या रोग के शुरुआती लक्षणों का पता लगाने में सक्षम बनाता है, जिससे प्रतिक्रियात्मक प्रबंधन के बजाय सक्रिय प्रबंधन संभव हो पाता है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता से संचालित ड्रोन बड़े–बड़े खेतों में उच्च–रिजॉल्यूशन वाली मल्टीस्पेक्ट्रल छवियां कैप्चर करते हैं ताकि लक्षणों को नग्न आंखों से दिखाई देने से पहले ही तनाव के शुरुआती संकेतकों का पता लगाया जा सके।

प्रारंभिक चेतावनी प्रणाली: एआई–संचालित प्लेटफॉर्म किसानों को समय पर अलर्ट प्रदान करते हैं, जिससे वे निवारक उपाय कर सकते हैं और व्यापक–स्पेक्ट्रम कीटनाशकों की आवश्यकता को कम कर सकते हैं। उपग्रह डेटा को वास्तविक समय के मौसम और मिट्टी के स्वास्थ्य मापदंडों के साथ एकीकृत करके, एआई मॉडल संभावित रोग प्रकोपों की भविष्यवाणी करते हैं, जिससे ''प्रतिक्रियात्मक'' प्रबंधन के बजाय ''निवारक'' प्रबंधन संभव हो पाता है। एआई सिस्टम केवल संक्रमित क्षेत्रों को लक्षित करके संसाधनों के उपयोग को अनुकूलित करने में मदद करते हैं, जिससे रासायनिक अपवाह कम होता है और किसानों के लिए इनपुट लागत कम हो जाती है।

3. एकीकृत रोग प्रबंधन (आईडीएम) और नियंत्रण

लक्षित रोग प्रयोग: कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) का उपयोग करके संक्रमित पौधों की सटीक पहचान करके, किसान सटीक कृषि पद्धति अपना सकते हैं और केवल आवश्यकतानुसार रोगनाशकों का प्रयोग कर सकते हैं, जिससे लागत और पर्यावरणीय प्रभाव कम होता है।

क्षेत्रीय विशिष्टता: राजस्थान में, दालों को प्रभावित करने वाले क्षेत्र–विशिष्ट रोगों, जैसे सूखे के तनाव या तापमान में तीव्र परिवर्तन से होने वाले रोगों के प्रबंधन के लिए एआई पहलों को स्थानीय कृषि अनुसंधान के साथ एकीकृत किया जा रहा है।

4. प्रमुख एआई प्रौद्योगिकियाँ और उपकरण

सीएनएन आर्किटेक्चर: मोबाइलनेट वी2, रेसनेट–50 और वीजीजी–16 जैसे मॉडल फीचर एक्सट्रैक्शन में अपनी प्रभावशीलता के कारण अक्सर छवि–आधारित रोग वर्गीकरण के लिए उपयोग किए जाते हैं।

आईओटी सेंसर: इंटरनेट ऑफ थिंग्स (आईओटी) सेंसर का उपयोग वास्तविक समय में पर्यावरणीय स्थितियों की निगरानी के लिए किया जाता है।

सपोर्ट वेक्टर मशीन (एसवीएम): पत्तियों को स्वस्थ या रोगग्रस्त श्रेणियों में वर्गीकृत करने के लिए उपयोग की जाने वाली एक मशीन लर्निंग विधि।

5. राज्य की पहल एवं अवसंरचना

किसानों के लिए एआई केंद्र: राजस्थान ने हाल ही में स्मार्ट खेती को बढ़ावा देने और कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोगों में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए किसानों के लिए एक समर्पित एआई केंद्र का शुभारंभ किया है।

आईसीएआर एवं कृषि विज्ञान केंद्र नेटवर्क: जोधपुर स्थित आईसीएआर–कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान (एटीएआरआई) राजस्थान और हरियाणा के 49 कृषि विज्ञान केंद्रों (केवीके) के साथ समन्वय स्थापित करके दालों के लिए आधुनिक उत्पादन और रोग प्रबंधन प्रौद्योगिकियों का प्रदर्शन करता है।

6. चुनौतियाँ और भविष्य की दिशाएँ

डेटा की कमी: इस क्षेत्र में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के लिए एक बाधा उच्च गुणवत्ता वाले, विविध और क्षेत्र–विशिष्ट डेटासेट की कमी है।

तकनीकी बाधाएँ: राजस्थान के कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों में कम जागरूकता और प्रौद्योगिकी तक सीमित पहुँच।

भविष्य की दिशा: इन तकनीकों की पहुँच बढ़ाने के लिए बहुभाषी, उपयोगकर्ता–अनुकूल और मोबाइल–फर्स्ट ऐप्स का एकीकरण आवश्यक है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) जैसे संगठनों द्वारा एनआईसीआरए (जलवायु–लचीली कृषि में राष्ट्रीय नवाचार) जैसी परियोजनाओं के माध्यम से किए जा रहे अनुसंधान प्रयास इन तकनीकी प्रगति को अपनाने की दिशा में काम कर रहे हैं, जिससे राजस्थान में अधिक टिकाऊ और जलवायु–लचीली दलहन खेती को बढ़ावा मिल रहा है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

जलवायु–स्मार्ट कृषि में तारामीरा एवं सरसों की भूमिका

नितिन डोडा, मनोहर राम एवं करण सचदेवा
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

1. **परिचय** वर्तमान समय में वैश्विक जलवायु परिवर्तन कृषि क्षेत्र के लिए एक गंभीर चुनौती बन चुका है। अनियमित वर्षा, सूखा, उच्च तापमान, पाला, ओलावृष्टि तथा नए रोग–कीटों का प्रकोप फसलों की उत्पादकता और गुणवत्ता दोनों को प्रभावित कर रहा है। जलवायु परिवर्तन के कारण उत्पादन में अस्थिरता बढ़ रही है, जिससे खाद्य एवं पोषण सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन परिस्थितियों में जलवायु–स्मार्ट कृषि की अवधारणा अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है।

जलवायु–स्मार्ट कृषि का उद्देश्य तीन प्रमुख लक्ष्यों को प्राप्त करना है

- कृषि उत्पादकता एवं आय में सतत वृद्धि।
- जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन एवं सहनशीलता में सुधार।
- ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी या नियंत्रण।

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में तिलहन फसलों की विशेष भूमिका है। देश में खाद्य तेलों की मांग निरंतर बढ़ रही है और आयात पर निर्भरता भी एक बड़ी आर्थिक चुनौती है। इस परिप्रेक्ष्य में तारामीरा एवं सरसों जैसी ब्रैसिका फसलें जलवायु–स्मार्ट कृषि के लिए उपयुक्त विकल्प के रूप में उभर रही हैं। ये फसलें कम पानी, सीमित संसाधन तथा प्रतिकूल पर्यावरणीय परिस्थितियों में भी संतोषजनक उत्पादन देने में सक्षम हैं।

2. **भारत में वर्तमान स्थिति**

भारत विश्व के प्रमुख तिलहन उत्पादक देशों में से एक है। सरसों भारत की प्रमुख रबी तिलहन फसल है और देश के कुल तिलहन उत्पादन में इसका महत्वपूर्ण योगदान है। राजस्थान, हरियाणा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं पश्चिम बंगाल इसके प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। हाल के वर्षों में उन्नत किस्मों, हाइब्रिड तकनीक एवं बेहतर प्रबंधन विधियों के कारण उत्पादन एवं उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है।

भारत सरकार द्वारा कई योजनाएँ संचालित की जा रही हैं। राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन ऑयल पाम राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन ऑयल तिलहन के माध्यम से देश में खाद्य तेल उत्पादन दूसरी ओर, तारामीरा अपेक्षाकृत कम प्रचलित लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण सूखा–सहिष्णु तिलहन फसल है। यह मुख्यतः शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में विशेषकर राजस्थान में उगाई जाती है। 150–300 मिमी वर्षा वाले क्षेत्रों में भी इसका सफल उत्पादन संभव है। जलवायु परिवर्तन के कारण सूखे की बढ़ती आवृत्ति ने तारामीरा के महत्व को और अधिक बढ़ा दिया है। यह फसल जोखिम कम करने वाली के रूप में उभर रही है।

3. **जलवायु–स्मार्ट कृषि में महत्व**

3.1 **सूखा एवं ताप सहनशीलता:** तारामीरा और सरसों दोनों में गहरी एवं सशक्त जड़ प्रणाली होती है, जिससे ये मिट्टी की गहराई से नमी अवशोषित कर सकती हैं। तारामीरा विशेष रूप से कम वर्षा एवं सीमित सिंचाई की स्थिति में भी जीवित रहकर उत्पादन देती है। सरसों की उन्नत किस्में उच्च तापमान तथा हल्के पाले को सहन करने में सक्षम हैं।

3.2 **कम इनपुट आधारित खेती:** इन फसलों को अपेक्षाकृत कम उर्वरक एवं कम सिंचाई की आवश्यकता होती है। सीमित संसाधनों वाले किसानों के लिए यह आर्थिक रूप से लाभकारी विकल्प हैं। कम लागत में उत्पादन होने से लाभांश में वृद्धि तथा आय की स्थिरता सुनिश्चित होती है।

3.3 **तेल एवं पोषण सुरक्षा:** भारत में खाद्य तेलों की मांग निरंतर बढ़ रही है। सरसों का तेल घरेलू उपयोग में व्यापक रूप से प्रयुक्त होता है और यह पोषण की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। तारामीरा के बीजों में लगभग 32–37 प्रतिशत तेल पाया जाता है, जिसमें एरुसिक, ओलिक एवं लिनोलिक अम्ल प्रमुख होते हैं। ये दोनों फसलें राष्ट्रीय तेल सुरक्षा एवं आत्मनिर्भरता में योगदान देती हैं।

3.4 **पर्यावरणीय लाभ एवं मृदा स्वास्थ्य:** फसल चक्र में सरसों एवं तारामीरा को शामिल करने से मृदा की संरचना में सुधार होता है, जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है तथा पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है। यह कृषि विविधीकरण को बढ़ावा देती हैं और एकल फसल प्रणाली के जोखिम को कम करती हैं।

3.5 **कार्बन उत्सर्जन में कमी:** कम सिंचाई एवं सीमित रासायनिक इनपुट की आवश्यकता होने से इन फसलों का कार्बन फुटप्रिंट अपेक्षाकृत कम होता है। यह पर्यावरण संरक्षण तथा सतत कृषि प्रणाली के लिए अनुकूल है।

4. **अनुसंधान एवं नवाचार:** आधुनिक जैव–प्रौद्योगिकी, जीनोमिक्स एवं आणविक प्रजनन तकनीकों के माध्यम से इन फसलों में निरंतर सुधार किया जा रहा है।

- सूखा–सहिष्णु एवं हीट–टॉलरेंट सरसों किस्मों का विकास।
- तारामीरा में उच्च तेल प्रतिशत एवं बेहतर गुणवत्ता सुधार पर अनुसंधान।
- रोग–प्रतिरोधी किस्मों का विकास।
- एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन एवं एकीकृत कीट प्रबंधन तकनीकों का उपयोग।
- सूक्ष्म सिंचाई एवं सटीक खेती तकनीकों का समावेश।

ये सभी नवाचार जलवायु–स्मार्ट कृषि प्रणाली को अधिक सुदृढ़ एवं टिकाऊ बनाते हैं।

5. **चुनौतियाँ**

- यद्यपि इन फसलों में अनेक संभावनाएँ हैं, फिर भी कुछ चुनौतियाँ बनी हुई हैं।
- उन्नत एवं प्रमाणित बीजों की सीमित उपलब्धता।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- रोग एवं कीट प्रबंधन की समस्या।
- विपणन एवं मूल्य अस्थिरता।
- किसानों में आधुनिक तकनीकों के प्रति जागरूकता की कमी।
- छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए संसाधन सीमाएँ।

इन चुनौतियों से निपटने के लिए अनुसंधान संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों, विस्तार सेवाओं एवं सरकारी योजनाओं के बीच समन्वित प्रयास आवश्यक हैं।

6. **भविष्य की संभावनाएँ**

- जलवायु परिवर्तन की तीव्रता को देखते हुए तारामीरा एवं सरसों की भूमिका भविष्य में और अधिक महत्वपूर्ण होगी।
- शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में तारामीरा को वैकल्पिक तिलहन फसल के रूप में बढ़ावा।
- सरसों में हाइब्रिड तकनीक एवं जैव–फोर्टिफिकेशन द्वारा पोषण सुधार।
- डिजिटल कृषि, मौसम पूर्वानुमान आधारित प्रबंधन एवं ड्रोन तकनीक का उपयोग।
- जलवायु–अनुकूल बीमा योजनाओं एवं न्यूनतम समर्थन मूल्य की प्रभावी व्यवस्था।
- इन उपायों से उत्पादन, गुणवत्ता एवं किसानों की आय में स्थिर वृद्धि संभव है।

7. **निष्कर्ष**

जलवायु परिवर्तन के इस युग में कृषि को अधिक लचीला, टिकाऊ एवं उत्पादक बनाना अत्यंत आवश्यक है। इस संदर्भ में तारामीरा और सरसों जैसी तिलहन फसलें जलवायु–स्मार्ट कृषि का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। कम पानी में उत्पादन, कम इनपुट लागत, बेहतर तेल गुणवत्ता तथा पर्यावरणीय लाभ इन्हें भविष्य की कृषि प्रणाली के लिए उपयुक्त बनाते हैं।सरकार, वैज्ञानिकों एवं किसानों के संयुक्त प्रयास से इन फसलों का क्षेत्र विस्तार, उन्नत किस्मों का विकास तथा वैज्ञानिक प्रबंधन अपनाकर भारत न केवल तिलहन उत्पादन में आत्मनिर्भर बन सकता है, बल्कि जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का भी प्रभावी एवं सतत समाधान प्रस्तुत कर सकता है।

सुरक्षित बीज भण्डारण आज की आवश्यकता

जितेन्द्र कुमार गुप्ता, तरुण कुमार जाटवा, बी एल जाट एवं लालाराम
कृषि महाविद्यालय लालसोट

यदि अनाज भण्डार में सावधानी नहीं रखी जाए तो लगभग 25 प्रतिशत तक अनाज भण्डारण में कीडों, चूहों, मकड़ी एवं फफूंद आदि से नष्ट हो जाता है। अतः फसल कटाई के बाद बीजों को कम नमी और कम तापमान पर रखने से उनकी गुणवत्ता को काफी समय तक बनाये रखा जा सकता है तथा अनाज को खराब होने से रोका जा सकता है। लेकिन बीजों के भण्डारण के स्थान पर अधिक नमी हो तो, बीज में कई प्रकार के कीट व कवकों का बीज पर आक्रमण हो जाता है। इससे बीजों की गुणवत्ता को भारी नुकसान पहुंचता है। वैज्ञानिक रूप से प्रसंस्कृत (प्रोसेसड) बीज यदि लाते ले जाते समय सही देखभाल एवं भण्डारण नहीं किया जाये तो इसका प्रभाव बीजों के अंकुरण क्षमता पर पड़ता है। देश में अनाज, तिलहन व दलहन के भण्डारण का उचित ज्ञान न होने से इनका उत्पादन का लगभग एक चौथाई हिस्सा कीटों, चूहों तथा फफूंद आदि द्वारा नष्ट हो जाता है या खाने योग्य नहीं रहता है अतः अनाज का वैज्ञानिक भण्डारण अति आवश्यक है। अनाज, दलहन व तिलहन का रख–रखाव भण्डारण में किया जा सकता है।

भण्डार गृह के लिए मुख्य बिन्दु

उपचारित बोरियों में भण्डारण– भण्डारण की बोरियों, जूट, कपड़े व एच.डी.पी.ई. को इमामेक्टिन बैन्जोएट 5 एस.जी. (2–ग्राम) या डेल्टामेथ्रिन 28 ई.सी. (3.5 मि.ली) प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें एवं छाया में सुखाकर, उनमें गेहू के कीट रहित बीज को 9 माह तक साधारण गृह में सुरक्षित रखा जा सकता है। बीज की अंकुरण क्षमता भी बरकरार रहती है।

भण्डारण के लिए स्थान का चुनाव :

- बीजों को भण्डारित करने वाला स्थान आस–पास के स्थान से ऊंचा होना चाहिऐ तथा यहां पानी नहीं भरना चाहिये एवं वर्षा का पानी नहीं रूकना चाहिये। जहां दीमक का प्रकोप हो वहां भण्डार गृह नही होने चाहिये।
- भण्डार गृह की सतह गड़े रहित एवं चिकनी होनी चाहिये ।
- भण्डार गृह की दीवारों में किसी प्रकार की दरारें नहीं हो क्योकि वे कीड़ों के प्रजनन का महत्वपूर्ण स्थान होता है।
- भण्डार गृह छाया वाले स्थान पर होना चाहिये तथा खिड़कियां हमेशा बन्द होनी चाहिये ।
- भण्डार गृह की छत में भी दरारें नहीं होनी चाहिये जिससे छत से आने वाली नमी को रोका जा सके।
- बीज निकालने एवं अन्दर करने में आसानी रहे इसके लिये दरवाजे बड़े होने चाहिये।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

भण्डार गृह की सफाई

भण्डार गृह में खाली स्थान (बोरियों के अलावा) की सप्ताह में एक बार तथा बोरियों की एक माह के अन्तराल पर सफाई करनी चाहिये।
भण्डार गृह की सफाई समय समय पर करते रहना चाहिये।
दीवारों एवं छत की सफाई गंदी दिखने पर करनी चाहिये तथा कचरे को जला देना चाहिये।
उपरोक्त दर्शायी गई विधियों एवं सावधानियों का प्रयोग करने के बाद भी कीट लगने पर विभिन्न प्रकार के रसायनों का उपयोग भी किया जा सकता है ।

गेहू , जौ, बाजरा के बीजों की सुरक्षा के लिऐ कीटनाशक का प्रयोगः

बीजों को 10–11 प्रतिशत आर्द्रता स्थिति में ग्रेन सुपर बैग में एक फसल अवधि तक सुरक्षित भण्डारण किया जा सकता है।
एमामेक्टीन बेन्जोएट 5 एस जी या डेल्टामेथ्रिन 2.5 डब्लू पी (40 मि.ग्रा 1 किलो ग्राम) से उपचारित बीजों को सुखाकर भण्डारण करने पर बीजो को एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता है। इससे बीजों की अंकुरण क्षमता भी बनी रहती है। कीटनाशी की मात्रा को पहले पाँच मि.ली. पानी में घोलकर प्रति कि.ग्रा, बीज को उपचारित कर एवं सुखाकर भण्डारण करना चाहिये। इस बात का विशेष ध्यान रखे की उपचारित बीज खाने में प्रयोग नहीं लेवे।
अखाद्य तेल का प्रयोगः नीम एवं पलास के तेल का पाँच मि.ली, प्रति किलो बीज की दर से उपयोग कर गेंहू के बीज को एक वर्ष तक घुन, ईली से सुरक्षित रखा जा सकता है। इससे अंकुरण भी प्रभावित नहीं होता है।

दलहन बीजों के लिऐ कीटनाशक का प्रयोग

इमामेक्टिन बैन्जोएट 5 एस.जी. 40 मि.ग्राम प्रति किलोग्राम कीटनाशी की मात्रा को पाँच मि.ली. पानी में घोलकर प्रति कि. ग्रा. बीज को उपचारित कर एवं सूखाकर भण्डारण करना चाहिए । मूंग के बीज को इमामेक्टिन बैन्जोएट से उपचारित कर एवं बीज को सूखाकर भण्डारण करने पर बीज एक वर्ष तक सुरक्षित रखा जा सकता है और बीज की अंकुरण क्षमता भी बनी रहती है।। थायरम 2.5 ग्राम प्रति किलो का उपयोग कर बीज को घुन/डौरा से सुरक्षित रखा जा सकता है।
खाद्य तेल का प्रयोगः मूंगफली या सरसों के तेल से 10 मि.ली प्रति किलो की दर से उपचारित कर चने के बीज को घुन/डौरा कीट के प्रकोप से सुरक्षित रखा जा सकता है।
डेल्टामेथ्रिन का बोरियों पर छिड़कावः डेल्टामेथ्रिन 2.5 डब्ल्यू पी (0.0125 प्रतिशत या 125 पी पी एम) का बोरियों पर अच्छी तरह छिड़काव कर सुखा लेना चाहिये फिर इनमें बीज भरकर रखने से बीज को 9 माह तक कीड़ों से सुरक्षित रखा जा सकता है।
थायोमेथोक्सम 70 डब्ल्यू.एस. 2.8 मि.ग्रा. की दर से या डेल्टामेथ्रिन 2. 5 डब्ल्यू.पी. 40 मि. ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से मूंग के बीजों को उपचारित करने पर उनका भण्डारण जूट की बोरियों में 9 माह तक सुरक्षित रखा जा सकता है। बीजों की अंकुरण क्षमता भी बरकरार रहती है।
कपास के बीजों का भण्डारणः बीज में छुपी हुई गुलाबी सूंडी को नष्ट करने के लिये कपास के बीजों को धुम्रित करने हेतु 40 किलो बीज में एल्युमिनियम फॉस्फाइड की 3 ग्राम मात्रा काफी रहती है। बीज में दवा डालकर उसे हवा रोधी बनाकर 24 घंटे तक बन्द रखने के बाद भण्डारण करें अथवा तेज धूप में बीजों को पतली तह के रूप में फैला कर 6 घंटे तक तपने देवें एवं बाद में भण्डारण करें।
भण्डारण के लिए 700 गेज पोलीथीन बैग का प्रयोगः इसमें सब्जी वाली फसलों जैसे मिर्च, प्याज आदि का सुरक्षित भण्डारण किया जा सकता है लेकिन 700 गेज पोलीथीन का ही प्रयोग करें एवं बीज में किसी प्रकार के कीट का प्रकोप नहीं होना चाहिये। बैग में भरने से पूर्व बीज पूरी तरह सूखा होना चाहिये (नमी 5 प्रतिशत या 5 से कम होनी चाहिये)। बीजों को कीटरहित करने के लिए फ्यूमीगेशन पद्धति का प्रयोग करें।
फ्यूमीगेशनः सेल्फास की गोली 3 ग्राम प्रति घन मीटर भण्डारण जगह की दर से हवा बन्द भण्डारण गृहों का फ्यूमीगेशन करना चाहिये। ऐसा करने पर बीज एक सप्ताह में कीट रहित हो जायेगा।

बीज भण्डारण में सावधानियॉ (अन्य बीजों के लिए): खलिहान से बीज को अच्छी तरह से सफाई के बाद ही भण्डारण करना चाहिये। नमी की मात्रा 8 से 9 प्रतिशत होनी चाहिये। काले पोलीथीन के उपर बीजों को 40–50 डिग्री सेल्सियस तापमान पर 8–10 घण्टे सुखाने पर भण्डारण कीटों का प्रकोप नष्ट हो जाता है। उसके बाद बीजों को 700 गेज पोलीथीन में सील करके रख देना चाहिए। इससे भण्डारण में कीटों का प्रकोप नहीं होता तथा अंकुरण क्षमता भी प्रभावित नहीं होती है।भण्डार गृह में विण्डो ट्रेप व ग्रेन प्रोब का इस्तेमाल करके कीड़ो के आगमन का पता लगाकर उनका सही उपचार करना चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

यदि अनाज का भण्डार कच्चे गोदाम में किया जाना हो तो –

भण्डार को एल्यूमिनियम फॉस्फाइड से धुम्रित करें।
यदि पुरानी बोरियों में अनाज रखना हो तो बोरियों को धुम्रित कर प्रयोग में लेवें।
गोदाम को साफ कर लीप लेवें व मेलाथियान का प्रयोग करें।
अनाज से भरी हुई बोरियों को गोदाम में नीचे पट्टों पर दीवार से कुछ दूरी पर रखें।
इन बोरियों पर मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण का हल्का भुरकाव करें।
जिस गोदाम में अनाज रखा जावे वह हवादार हो व नमी आने की संभावना न हो।
भण्डार करने के लिए सीड बिन का प्रयोग करें।

तरबूज की उन्नत उत्पादन तकनीक को अपनाकर कमायें भरपुर लाभ

विनोद प्रजापत, शशि कुमार बैरवा, योगेश कुमार शर्मा एवं अशोक कुमार चौधरी
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा –जयपुर

तरबूज एक महत्वपूर्ण कददूवर्गीय बेल वाली फसल है जिसके फल स्वाद में मीठे एवं गर्मी में तरोताजगी देते है। इसके परिपक्व फल अत्यधिक मीठे, रसीले एवं स्वादिष्ट होन के साथ प्यास को भी शांत करते हैं। भारत में इसकी खेती नदियों के किनारों पर एवं दक्षिण भारत में अधिकतर भाग पर की जाती है। तरबूज के सेवन से गर्मी में लू से भी बचाव होता है एवं शरीर को शीतलता मिलती है। नमक के साथ तरबूज रस का उपयोग मूत्राशय संबंधित रोगों में लाभप्रद है। इसके बीजों को सुखाकर भुनकर भी खाया जाता है। भारत में उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, मध्यप्रदेश एवं कर्नाटक राज्यों में इसे प्रमुख रूप से उगाया जाता है।

जलवायु

तरबूज के लिए गर्म, शुष्क और मध्यम आर्द्र जलवायु उचित होती है। बीजों के शीघ्र अंकुरण के लिए बीजो को बुवाई से पूर्व 4 से 6 घण्टे पूर्व जुट के बोरों में भिगोकर रखना चाहिए। पौधों की अधिकतम वृद्धि के लिए 25 – 32 डिग्री सैल्सियस तापमान अच्छा माना जाता है।

भूमि तथा खेत तैयारी

तरबूज की खेती विभिन्न प्रकार की भूमि में की जा सकती है, परन्तु बलुई या बलुई–दोमट मृदा इसके लिए सबसे उपयुक्त मानी जाती है। मृदा का पी.एच. मान 5–6 के मध्य होना चाहिए। राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा कम पायी जाती है अतः मृदा में कार्बनिक पदार्थ (वर्मीकम्पोस्ट, गोबर की खाद) बुवाई से पूर्व मिला लेना चाहिए। खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा बाद की जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से की जाती है। खेत को समतल करना आवश्यक है ताकि सिंचाई में असुविधा न हो। नदियों के किनारे पर खेती के लिए पानी की उपलब्धता के अनुसार नालियां तथा थाला बनाकर उनमें सड़ी गोबर की खाद और मिट्टी का मिश्रण भरा जाता है।

उन्नत किस्में

क्र.स.	किस्म	लक्षण	उपज एवं विशेषता
1	**दुर्गापुरा केसर**	यह देरी से पकने वाली किस्म है। बेल लगभग 3 मीटर लम्बी होती है। फल का भार 6 से 8 कि.ग्रा., गूदा पीला एवं छीलका हरा धारियों वाला होता है।	औसत पैदावार 350 – 450 कु./हे.
2	**दुर्गापुरा मीठा**	फल गोल, हल्का हरा, औसत भार 6– 8 कि.ग्रा. एवं टी.एस.एस लगभग 11 डिग्री ब्रिक्स होता है।	उपज 400 – 500 कु. /हे.
3	**थार तृप्ती**	फल आकर्षक होते हैं और हरी धारियों एवं गोल आकार के होते हैं। फल का भार 2.3 से 3.4 किग्रा होता है और गूदा हल्का लाल रंग का होता है। टी.एस.एस 11.5 से 12.17 डिग्री ब्रिक्स तक होता है । फलों की पहली तुड़ाई बुवाई के 75–80 दिन बाद होती है।	औसत उपज 400 कु./हे. एवं यह मोजेक रोग के प्रति प्रतिरोधी किस्म हैं ।
4	**थार मानक**	यह अति शीघ्र पकने वाली किस्म है। इसकी प्रथम तुड़ाई 75–80 दिन बाद होती है।	औसत उपज 285.2 कु. /हे.
5	**शुगर बेबी**	इस किस्म की बेलों की लम्बाई मध्यम होती है तथा फलों का भार 2 से 5 कि.ग्रा. तक होता है। फल का उपरी छिलका गहरा हरा तथा धूमिल धारियों वाला होता है। गूदा गहरा लाल, मीठा, टी.एस.एस 11 से 13 डिग्री ब्रिक्स एवं यह जल्दी तैयार होने वाली किस्म जिसकों लगभग 85 दिन लगते हैं।	औसत उपज 400 से 450 कु./हे.
6	**अर्का मानिक**	फल गोल या अण्डाकार होते हैं, छीलको पर गहरी हरी धारियां तथा गूदा गुलाबी रंग का होता है। फल भार लगभग 6 कि.ग्रा. एवं टी.एस.एस 12 से 15 डिग्री ब्रिक्स होती है।	औसत उपज 500 कु./हे. एवं यह किस्म चूर्णिल आसिता, मृदुरोमिल आसिता एवं एन्थ्रेक्नोज रोग के प्रति रोधी है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

7	**काशी पीताम्बर**	फल पीले छीलके वाले, गोल–अण्डाकार एवं गूदा गुलाबी रंग का होता है। फल का औसत भार 2.5 से 3.5 कि.ग्रा. होता है।	पैदावार 400 से 450 कु./हे.
8	**काशी मोहिनी**	शीघ्र पकने वाली किस्म है। इसकी प्रथम तुड़ाई 80 दिन बाद होती है। अत्यधिक मीठा होता है। 13–14 प्रतिशत टी.एस.एस होता है।	गूदा सालमोन नारंगी रंग का और मोटा होता है

बीज बुवाई का समयः तरबूज की खेती राजस्थान में मध्य फरवरी–मार्च में की जाती है जबकि नदी के किनारे पर या लो टनल में अगेती खेती मध्य नवम्बर–जनवरी भी की जाती है। अतः बीजों की बुवाई इसके अनुसार ही करना चाहिए। दक्षिणी पश्चिमी राजस्थान में मतीरा या कलिंगडा जाति के तरबूज की बुवाई जुलाई महीने में तथा दक्षिण भारत में अगस्त से जनवरी महीने में की जाती है।

बीज की मात्राः इसकी खेती के लिए 3–4 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बीजों की आवश्यकता होती है।

बुवाई की विधिः तरबूज की बुवाई मेड़ों पर 2.5–3.0 मीटर की दूरी पर नालियॉ बनाकर की जाती है। नालियों के दोनों ओर 60 से.मी. की दूरी पर बीज बोया जाता है। बीज को बुवाई से पूर्व कैप्टान/थायरम नामक फफूँदनाशी (1.5–2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करके बोना चाहिए। नदी के किनारे पर 60x60x60 से.मी. के गड्ढे बनाकर मिट्टी, गोबर खाद एवं बालू का मिश्रण 1:1:1 में भरकर प्रत्येक थाले में दो बीजों की बुवाई की जाती हैं।

खाद एवं उर्वरक प्रबन्धनः तरबूज की फसल हेतु 80 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा शेष फॉस्फोरस एवं पोटाश नालियॉ तथा थाला बनाते समय देते हैं। शेष नाइट्रोजन को दो भागों में बुआई के 25–30 दिन बाद गुड़ाई के समय एवं 45 दिन बाद देना चाहिए।

सिंचाईः नदियों के किनारे में खेती वाली फसल में सिंचाई की आवश्यकता बहुत कम पड़ती है क्योंकि पौधों की जडें बालू के नीचे उपलब्ध पानी को शोषित करती रहती हैं। सामान्यतः मैदानी भागों में फसल की अच्छी वृद्धि एवं विकास के लिए 7–10 दिन के अंतराल में फल पकने तक करनी चाहिए। जब तरबूज आकार में पूरी तरह से बढ़ जाते हैं तब सिंचाई बन्द कर देते हैं क्योंकि फल पकते समय खेत में पानी अधिक होने से फल में मिठास कम हो जाती है साथ ही फल फटने की समस्या बढ़ जाती है।

खरपतवार नियंत्रणः बीज अंकुरण के 25–30 दिन बाद पहली बार खुरपी के माध्यम से खरपतवार निराई–गुड़ाई करके निकालनी चाहिए। इससे फसल की वृद्धि अच्छी एवं पौधे की बढ़वार बढ़ती है। इसलिए कम से कम दो बार खरपतवार निकालना अति आवश्यक है।

पलवार बिछानाः बीज बोने से पहले या पौध रोपण से पहले बेड पर 25 माइक्रोन मोटाई की चमकीली काली (सिल्वर ब्लेक) प्लास्टिक की पलवार बिछाना चाहिए। जिससे खरपतवार नियंत्रण एवं नमी संरक्षण में फायदा होता है एवं फलों की गुणवत्ता भी बनी रहती हैं।

फलों की तुड़ाई एवं उपजः तरबूज के फल का आकार या डंठल का रंग देखकर पकने की सही पहचान करना कभी–कभी कठिन होता है। पूरी तरह पके हुए तरबूजों की पहचान कुछ विशेष लक्षणों से की जाती है। जमीन से लगा हुआ फल का निचला भाग जब गहरा हरे से परिवर्तन होकर हल्का पीला हो जाये, तो फल पका माना जाता है। साथ ही साथ पके फल को थपथपाने पर भारी धातु के समान आवाज आती है। यदि फल का डंठल सूखकर पतला हो जाये तो यह भी फल के पकने का संकेत है। पके फल को हल्का दबाने पर कुरमुरा या फटने जैसा अनुभव हो तो फल पका हुआ माना जाता है। तुड़ाई के बाद फलों को ठण्डी एवं छायादार जगह पर एकत्र करना चाहिए। दूर के बाजारों में भेजे जाने पर ट्रक में फल को कई सतहों में रखते हैं और हर सतह के बीच धान की पुआल बिछा देते हैं। इससे फल आपस में रगड़कर खराब नहीं होते और ताजगी बनी रहती है। गर्मी के दिनों में सामान्य तापमान पर तरबूज फल लगभग 10 दिनों तक आसानी से रखे जा सकते हैं। सामान्यतः तरबूज की उपज 400–500 कुन्टल प्रति हेक्टेयर होती है।

प्रमुख कीट/रोग एवं उनका नियंत्रण

क्र.स.	प्रमुख कीट/रोग	लक्षण	नियंत्रण
1	**कद्दू का लाल कीट (रेड पम्पकिन बिटिल)**	तरबूज का मुख्य कीट है। इस का वयस्क चमकीली नारंगी रंग का होता है। सूण्डी और वयस्क दोनों पौधों को नुकसान पहुँचाते हैं। यह कीट मुलायम और छोटी पत्तियों को ज्यादा खा जाता है। ग्रब (इल्ली) जमीन में रहकर पौधों की जड़ पर आक्रमण करती है। यह कीट जनवरी से मार्च तक ज्यादा सक्रिय रहता है। अक्टूबर तक खेत में इनका प्रकोप दिखाई देता है। बीज अवस्था एवं 4–5 पत्ती अवस्था में पौधे इस कीट के लिए ज्यादा संवेदनशील होते हैं। अधिक आक्रमण होने पर पौधे लगभग पत्ती रहित हो जाते हैं।	जैविक नियंत्रण के लिए एजेक्टारैक्टिन 300 पीपीएम की 5–10 मिली/लीटर या एजेक्टारैक्टिन 5 प्रतिशत की 0.5 मिली/लीटर की दर से 2–3 छिड़काव लाभदायक होते हैं। यदि कीट का प्रकोप अधिक हो तो क्विनालफोस 50 ईसी. की 1 मिली/लीटर की दर से 10 दिनों के अन्तर पर पत्तीयों पर छिड़काव करना चाहिए।
2.	**फल मक्खी**	मक्खी स्वयं नुकसान न पहुँचा कर इसकी लटें फलों के अन्दर के गुदे को खाकर नुकसान करती हैं जिसके फलस्वरूप फल सड़ने लगते हैं।	इसके नियंत्रण हेतु मादा मक्खियों को आकर्षित करने के लिए विषैला प्रलोभक खाना बनाने के लिए एक लीटर पानी में 1.5 मिलीलीटर मिथाइल यूजीनाल मिलाकर खुले

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

			बर्तनों में फल आने के समय खेत में रखें। हर 5 दिन के अन्तराल पर इसे बदलते रहें। नीम की निम्बोली का 5 प्रतिशत सक्रिय तत्वया ऐसीफेट 72 एस.पी. एक ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करें। प्रकोप अधिक होने पर 8–10 दिन पश्चात एक छिड़काव और करें।
3.	**विषाणु रोग**	यह रोग मुख्य रूप से रस चुषक कीटों जैसे माहु, थ्रिप्स एवं सफेद मक्खी द्वारा फैलता है।	इसके नियंत्रण के लिए रोगग्रस्त पौधे या शाखा को निकाल देना चाहिए। इस रोग को फैलाने वाले कीटों के नियंत्रण हेतु खेत में पीले एवं नीले रंग के चिपचिपे ट्रेप लगाने चाहिए। एवं डाईमिथोएट 30 ई.सी. या ट्राइजोफोस 40 ई.सी. का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करें। फसल की प्रारम्भिक अवस्था में 2–3 छिड़काव करके इस रोग के प्रकोप से फसल को बचाया जा सकता हैं।
3.	**मदुरोमिल आसिता**	जब तापमान 20 – 22 डिग्री से.ग्रे. के बीच रहता है तब यह रोग तेजी से फैलता है। उत्तरी भारत में इस रोग का प्रकोप अधिक देखने को मिलता है। इस रोग का मुख्य लक्षण पत्तियों पर कोणीय धब्बे होना है जो शिराओं द्वारा दिखाई देते हैं। ज्यादा आर्द्रता होने पर पत्ती की निचली सतह पर मदुरोमिल कवक की वृद्धि स्पष्ट दिखाई देती है।	इस रोग की रोकथाम के लिए मैंकोजेब 75प्रतिशत डब्लु.पी. 2.0 ग्राम/लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखते ही तुरन्त छिड़काव करना लाभकारी होता है। यदि बीमारी फैल चुकी हो तो मेटालेक्सिल 8 प्रतिशत़ + मैन्कोजेब 64 प्रतिशत डब्लू.वी.पी. 2.0 ग्राम/लीटर पानी का घोलबनाकर छिड़काव करना चाहिए। प्रकोप अधिक होने पर 3 से 4 बार छिड़काव करना चाहिए।
4.	**तरबूज बड नेक्रोसिस**	यह रोग मुख्य रूप से रस द्रव्य और थ्रिप्स कीट द्वारा फैलता है। रोग ग्रस्त पौधों में क्राउन से ज्यादा कल्ले निकलते हैं। तना सामान्य से कड़ा, मोटा और ऊपर की ओर उठा हुआ दिखाई देता है। पत्तियाँ विकृत हो जाती हैं और उनकी असामान्य वृद्धि हो जाती है। फूल टेढ़े–मेढ़े हो जाते हैं और उनका रंग हरा रहता है।	इस रोग से बचाव के लिए रोग रोधी किस्म की बुवाई करनी चाहिए। रोगी पौधों को उखाड़कर खेत से बाहर निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए। बीज या पौधों को इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल 0.3 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी में घोलकर बुआई या रोपाई से पहले 10 मिनट तक उपचारित करें। पौध जमाव के 10 से 15 दिन के बाद नीम के रस का छिड़काव 3 प्रतिशत की दर से हर 15 दिन के अन्तराल पर करना लाभकारी होता है।

सब्जियों में पाए जाने वाले सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपयोगिता

आकाश सैनी, राजीव कुमार नारोलिया एवं सागर सैनी
राजस्थान कृषि अनुसन्धान संस्थान दुर्गापुरा, जयपुर, राजस्थान

भारत विश्व के प्रमुख सब्जी उत्पादक देशों में से एक है। बढ़ती जनसंख्या, बदलते जलवायु परिदृश्य, घटती मृदा उर्वरता तथा कृषि लागत में निरंतर वृद्धि ने सब्जी उत्पादन को चुनौतीपूर्ण बना दिया है। वर्तमान समय में केवल अधिक उर्वरक प्रयोग करना ही उत्पादन वृद्धि का समाधान नहीं है, बल्कि संतुलित एवं वैज्ञानिक पोषण प्रबंधन ही स्थायी लाभ का आधार है। अक्सर किसान नाइट्रोजन, फॉस्फोरस और पोटाश जैसे प्रमुख पोषक तत्वों पर विशेष ध्यान देते हैं, परंन्तु सूक्ष्म पोषक तत्वों की अनदेखी कर देते हैं। यह वह क्षेत्र है जहाँ "छुपा हुआ मुनाफा" निहित है। सूक्ष्म पोषक तत्व वे खनिज तत्व हैं जिनकी आवश्यकता पौधों को अल्प मात्रा में होती है, किंतु इनके अभाव में महत्वपूर्ण जैव–रासायनिक एवं शारीरिक क्रियाएँ बाधित हो जाती हैं। सामान्य सब्जी वाली फसलों में सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों की वृद्धि, पुष्पन, फलन तथा गुणवत्ता निर्धारण में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विशेषकर कोल वर्ग की फसलें जैसे फूलगोभी, पत्तागोभी एवं ब्रोकली तीव्र वृद्धि तथा उच्च पोषण मांग के कारण इन तत्वों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं।

प्रमुख सूक्ष्म पोषक तत्व और उनकी वैज्ञानिक भूमिका : पौधों के विकास के लिए मुख्य रूप से जिंक, आयरन, बोरॉन, मैंगनीज, कॉपर और मोलिब्डेनम की आवश्यकता होती है। इन तत्वों की वैज्ञानिक भूमिका निम्नलिखित है–

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

जिंक– यह पौधों में ऑक्सिन जैसे वृद्धि हार्मोन के निर्माण के लिए जिम्मेदार है। इसकी कमी से पौधे बौने रह जाते हैं और पत्तियां छोटी होने लगती हैं, जिससे सीधा असर उत्पादन पर पड़ता है।
आयरन– यह क्लोरोफिल निर्माण का आधार है। इसकी कमी होने पर नई पत्तियों की शिराओं के बीच पीलापन आ जाता है, जिससे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया बाधित होती है।
बोरॉन– कोशिका विभाजन, परागण और फल के निर्माण में इसकी भूमिका महत्वपूर्ण है। बोरॉन की कमी से फूल झड़ने लगते हैं
मैंगनीज– यह एंजाइमों को सक्रिय करने और प्रकाश संश्लेषण की दर को बनाए रखने में सहायक है।
कॉपर– सब्जी वाली फसलों में एंजाइम सक्रियता, प्रकाश संश्लेषण तथा लिग्निन निर्माण के माध्यम से पौधों की संरचनात्मक मजबूती और रोग प्रतिरोधक क्षमता को सुदृढ़ बनाता है।
मोलिब्डेनम–यह नाइट्रोजन उपयोग दक्षता के लिए अनिवार्य है। यह नाइट्रेट रिडक्टेज एंजाइम का घटक है, जो नाइट्रोजन को उपयोगी अमोनियम रूप में परिवर्तित करता है, जिसे पौधे आसानी से उपयोग कर सकें। इसकी कमी से पत्तियां विकृत हो जाती हैं
वृद्धि, उपज और गुणवत्ता पर प्रभावः सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग केवल पौधों को जीवित रखने के लिए नहीं, बल्कि व्यावसायिक सफलता के लिए आवश्यक है। इनके प्रभाव को तीन श्रेणियों में समझा जा सकता है–
1 संतुलित वृद्धि और विकासः सूक्ष्म पौषक तत्वों की उचित उपलब्धता से पौधों की वृद्धि एकसमान होती है। जिंक जैसे तत्व हार्मोन संतुलन बनाए रखते हैं, जिससे पौधों का शारीरिक ढांचा मजबूत होता है और वे समय पर फल देने के लिए तैयार होते हैं।
2 उच्च उपज और उत्पादनः जब पौधों को सभी आवश्यक तत्व सही मात्रा में मिलते हैं, तो फूलों और फलों की संख्या में भारी वृद्धि होती है उदाहरण के लिए, बोरॉन और मोलिब्डेनम के सही उपयोग से फूलगोभी और पत्तागोभी के वजन और आकार में सुधार होता है, जो अंततः कुल पैदावार को बढ़ाता है।
3 बेहतर गुणवत्ता और बाजार मूल्यः उपज की गुणवत्ता ही किसान को बाजार में अधिक दाम दिलाती है। सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रयोग से सब्जियों के रंग, आकार, चमक और पोषण स्तर में उल्लेखनीय सुधार होता है। चमकदार और सुडौल सब्जियों को बाजार में बेहतर मूल्य मिलता है, जो किसान के शुद्ध लाभ को बढ़ाता है। इसके अलावा, ये तत्व पौधों को सूखा, तापमान परिवर्तन और रोग–कीटों के आक्रमण से लड़ने की शक्ति प्रदान करते हैं।
सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी के कारण और प्रबंधनः मृदा में इन तत्वों की कमी के कई कारण हो सकते हैं, जैसे लगातार एक ही फसल उगाना, असंतुलित खाद का उपयोग या मिट्टी का गलत पी.एच. स्तर। इसके वैज्ञानिक प्रबंधन के लिए निम्नलिखित रणनीतियाँ अपनानी चाहिए–

(अ) हमेशा मृदा परीक्षण के आधार पर ही उर्वरकों का चयन करें।
(ब) खेत में गोबर की खाद या वर्मीकम्पोस्ट जैसे कार्बनिक पदार्थों का प्रयोग बढ़ाएं।
(स) जरूरत पड़ने पर फोलियर स्प्रे (0.5 से 1.0 प्रतिशत) का उपयोग करें, जो पत्तियों के माध्यम से तुरंत असर दिखाता है। एकीकृत पोषण प्रबंधन प्रणाली अपनाएं।

निष्कर्षः सब्जी उत्पादन में सफलता का रहस्य केवल अधिक मात्रा में उर्वरक डालने में नहीं, बल्कि संतुलित और वैज्ञानिक पोषण प्रबंधन में है। सूक्ष्म पोषक तत्व भले ही अदृश्य या कम मात्रा में उपयोग होते हों, लेकिन ये फसल की गुणवत्ता और मात्रा को निर्धारित करने वाले मुख्य कारक हैं। यदि किसान इन सूक्ष्म तत्वों के महत्व को समझें और वैज्ञानिक पद्धति से इनका उपयोग करें, तो वे न केवल अपनी लागत कम कर सकते हैं, बल्कि उत्पादन और गुणवत्ता बढ़ाकर उस छिपे हुए मुनाफे को प्राप्त कर सकते हैं जो टिकाऊ कृषि के लिए आवश्यक है। संतुलित दृष्टिकोण ही आज के प्रतिस्पर्धी बाजार में कृषि को एक लाभकारी व्यवसाय बना सकता है।

शुष्क क्षैत्रों में स्थायी कृषि की आवश्यकता – औषधीय फसलें

मौहम्मद युनुस, संतोष झाझड़िया, तुलिका आचार्य एवं हितेश मुवाल
कृषि विज्ञान केंद्र, झालावाड़

भारतवर्ष में मानसून वितरण में बड़ी असमानता हैं, कहीं 2000 मिमी, वर्षा तो कहीं 200 मिमी. के लिए भी तरसना पड़ता है। भारत के कुल भू–भाग का 30 प्रतिशत भाग शुष्क है। यह मुख्यतः सात राज्यों राजस्थान, गुजरात, पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, कर्नाटक व आन्ध्रप्रदेश में है, जिनका 60 प्रतिशत तो सिर्फ राजस्थान के ग्यारह उत्तर–पश्चिमी जिलों में ही है। अतः इन शुष्क क्षेत्रों में वर्ष की अनिश्चिता के कारण सूखे या अकाल की संभावनाएँ अक्सर बनी रहती है तथा इन क्षेत्रों की रेतीली भूमि की संतुलन क्षमता (बफर केपिसिटी) भी धीरे–धीरे कम होती जा रही है इसका कारण अविवेकपूर्ण सिंचाई, रासायनिक उर्वरक व कीटनाशक आदि का उपयोग माना जाता है। ऐसी परिस्थितियों में परम्परागत फसलों (बाजरा, गेहूँ, दालें, सरसों, कपास, सोयाबीन) के उत्पादन में भारी अनिश्चितता रहती है वहीं औषधीय पौधे सूखा सहनशील होने से 2–5 गुना ज्यादा लाभकारी नगदी फसल के रूप में शुष्क क्षैत्रों हेतु उपयुक्त है। परिणाम दर्शाते हैं कि गेहूँ तथा सोयाबीन की फसलों से किसान औसत प्रति हैक्टेयर अधिकतम 30–35 हजार रूपये प्रतिवर्ष कमा सकता है तथा सफेद मूसली की खेती से प्रति हैक्टेयर 1.25–2.50 लाख रूपये तक प्रतिवर्ष अर्जित किये जा सकते हैं। इस प्रकार किसानों द्वारा जड़ी बूटियों की खेती अपनाना श्रेयकर है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

शुष्क क्षेत्रों में स्थायी कृषि की आवश्यकता:– निम्न समस्याओं की वजह से कारण सामने आये।

1. इन्दिरा गांधी नहर के सिंचित क्षैत्र का लगभग 45 प्रतिशत भाग जल प्लावन लवणीकरण की समस्या से ग्रसित होना।
2. नलकूपों से सिंचित क्षैत्र में भू–जल स्तर में तेजी से गिरावट होना।
3. मशीनीकरण (ट्रेक्टर) से छोटे–छोटे पौधे उखाड़कर खेत वनस्पति विहीन होते जा रहे हैं।
4. वर्षा कम होती जा रही जलवायुविक कारकों के कारण मरूस्थलीकरण की समस्या बढ़ती जा रही है।

वर्तमान में इस बात की आवश्यकता महसूस की जा रही है कि प्रकृति के साथ तालमेल रखते हुए किस प्रकार खेती में स्थायित्व प्राप्त किया जा सके। इसे स्थायी कृषि आदि नामों से जाना जा रहा है।

भारत में औषधीय पौधों की प्रजातियों में बहुत अधिक भिन्नता है जिससे उनका उत्पादन एवं अनुसंधान में महत्व और भी बढ़ जाता है। यहाँ पर आवागमन साधक अधिक उपज वाली प्रजातियाँ, औद्योगिक संसाधन, नई तकनीक विकसित होने से आने वाले समय में इन पौधों का कार्यक्षैत्र एवं महत्व बढ़ेगा। भारत सरकार के स्वास्थ्य एवँ परिवार कल्याण मंत्रालय के अधीन भारतीय चिकित्सा पद्धति एवँ हाम्योपेथिक विभाग के औषधीय पादप बोर्ड द्वारा देश में औषधीय एवं सुगंधीय फसलों की खेती को बढ़ावा देने के सार्थक एवं कृषक अनुकूल प्रयास किये गये हैं।

औषधीय पौधों की खेती की आवश्यकता:– रोगापचार हेतु औषधि निर्माण में ये पौधे पहले वनों, तालाबों, पर्वतों तथा खुले स्थानों से प्राप्त होते थे परन्तु आबादी बढ़ने से इन वनस्पतियों का उत्पादन तथा कुछ औषधीय पादप तो विलुप्त होने की श्रेणी में आ गये हैं। दूसरी ओर संश्लेशित (कृत्रिम) औषधीयों का कुप्रभाव बढ़ने से पौधों से बनने वाली दवाओं का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। आज भारतीय व विदेशी बाजारों में हर्बल उत्पादों तथा जड़ी बुटियों की मांग तेजी से बढ़ रही है। विश्व स्वास्थ्य संस्थान ने अनुमान लगाया है कि विकासशील देशों की 80 प्रतिशत जनसंख्या परमपरागत औषधियों से जुड़ी हुई हैं जबकि वर्तमान में अंग्रेजी दवाईयों में 25 प्रतिशत भाग औषधीय पौधों का तथा कृत्रिम पदार्थ का होता है। इसी प्रकार से ऐलोपेथी के साईड इफेक्ट होने के कारण लोगों का ध्यान हर्बल उत्पादों की ओर जा रहा है। औषधीय खेती की आवश्यकता इसलिए भी है क्योंकि ये विभिन्न कीट–व्याधियों से सुरक्षित है तथा इन पर प्रतिकूल मौसम का प्रभाव भी नहीं पड़ता। औषधीय पौधों को कोई विशेष खाद की आवश्यकता भी नहीं होती है और इससे खाद व दवाईयों पर होने वाला खर्चा भी बचता है। अन्य पक्ष में औषधीय पौधों की खेती से न केवल इन पौधों का संरक्षण प्राप्त होगा वरन् शुष्क परिस्थितिकी तंत्र का भी संरक्षण होगा व परस्पर संरक्षण का यह एक अनुठा उदाहरण बन सकता है। अतः किसान इनका उत्पादन कर अपनी आर्थिक नींव तो मजबूत करेगा ही साथ में समाज में व्यक्तियों के स्वास्थ्य की भी रक्षा कर सकेगा। औषधीय पौधों की खेती हेतु विभाग द्वारा कृषकों को यथासम्भव सहायता करने का भी प्रावधान है जिसकी विस्तृत जानकारी रेडक्रास रोड़, नई दिल्ली स्थिति बोर्ड के कार्यालय से ली जा सकती है।

राजस्थान परिदृश्य में औषधीय पौधों का विस्तार:–

- ❖ अश्वगंधा (असगंध) – बांरा, झालावाड़, कोटा क्षैत्र।
- ❖ सोनामुखी (सनाय) – राजस्थान का जोधपुर संभाग।
- ❖ ईसबगोल (साटूलिया) – राजस्थान के दक्षिणी भाग के कुछ जिले।
- ❖ सफेद मूसली (क्लोरोफाइटम)– कुंभलगढ़, बांरा जिले में।

कुछ प्रमुख औषधीय पौधों की पहचान व उपयोगिता

क्र. सं	औषधीय पौधों का नाम व विवरण	पहचान	उपयोगिता
1.	**ईसबगोल** साधारण नाम–एस्पागोल ईशबगोल वानस्पितिक नाम– प्लान्टगो ऑवेटा कुल – प्लैण्टेजिनेसी	इसके पौधे में गोल लम्बाकार गुच्द रूप में पुष्प लगते हैं तथा पत्ते लम्बाकार व दंताकार सतह लिये रहते हैं। इसके फूल गुदेदार केप्सूल 8.00 मिमी. लम्बाई तथा ऊपर की हिस्से में भांकू के आकार के होते हैं तथा बीज पीले भूरे रंग के 3.00 मिमी. लम्बे, नाव के आकार के होते हैं।	इसके बीजों पर पाया जाना वाला छिलका ही इसका औषधीय उत्पाद है। इस छिलके में एक लसलसा पदार्थ रहता है। जिसमें अपने वजन से कई गुना पानी सोखने के क्षमता है। इसी को भूसी कहते हैं। जो कि विभिन्न बिमारियों जैसे कब्ज, दस्त, आंत पेचिश, बवासीर आदि में काम आती हैं।
2.	**सनाय** साधारण नाम–सेना, सोनामुखी वानस्पतिक नाम–केसिया एंगुस्टिफोलिया कुल–केसल्यिनिएसी	यह एक बहुवर्षीय पौधा है जिसकी ऊँचाई 60–65 सेमी., बंजर भूमि के लिए उपयुक्त पत्ते 2–5 सेमी. लम्बे, फलियाँ 3–7 सेमी. लम्बी, 2 सेमी. चौड़ी हल्की भूरी से गहरा भूरापन लिये हुए। जिसमें 5–7 अधोमूखी अण्डाकार भूरे रंग के चिकने बीज होते हैं। इस पौधे को पशु नहीं खाते है।	पेट से संबधित बिमारियों के अलावा पीलिया, अस्थमा, मलेरिया, अपच आदि में इसकी पत्तियों का उपयोग आयुर्वेदिक, ऐलोपेथिक, यूनानी व होम्योपेथिक दवाईयों में कर रहें हैं तथा विदेशों में इसकी अच्छी मांग है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

3.	**अश्वगंधा** साधारण नाम–असगंध, असंध वानस्पतिक नाम–विथेनिया सोम्निफेरा कुल–सोलेनेसी	यह एक झाड़ीदार 2–3 फीट ऊँचा पौधा है, पत्तों को मसलकर सुंघने पर घोड़े के मूत्र की सी गंध आती है। छोटे–छोटे चिलम के आकार के हल्के पाले से हरे फूल शाखाओं के अग्र भाग पर आते है, फल का ऊपरी भाग फूले फूग्गे के आकार में, फल के अंदर सफेद पिताभ के लिए छोटे–छोटे बीज होते हैं।	इसकी जड़ कसैली, कड़वी, चरपरी, विषाक्त होती है। यह अत्यंत बलवर्धक, वीर्यवर्धक, पुष्टिकारक तथा वास, क्षय शोध विषकृमि व्रण और वातनाशक है इसका उपयोग निर्बलता, वृद्धावस्था, नपुसंकता, गर्भधारण वार्थ रक्त/ वेत प्रदर (स्त्रियों मे), रक्त विकार संधिपात, खांसी, ज्वर, विश व बवासीर के उपचार में किया जाता है।
4.	**सफेद मूसली** साधारण नाम–रवेरूआ, सुफता मुसली, धौली मुसली वानस्पतिक नाम– क्लोरोफाईटम बोरीविलियनम	यह एक कन्द युक्त पौधा है जिसकी अधिकतम ऊँचाई 45 सेमी. तक होती है। तथा कदिल जड़ें (फिंगर्स) जमीन जमीन में अधिकतम 25 सेमी. तक जाती है।	यह त्रिदोष नाशक, बल एवं पुष्टिकारक, शुक्राणु व काम शक्तिवर्धक, रक्तदोष एवं अतिसार नाशक, दमा, क्षय व मधुमेह में उपयोगी है।

औषधीय पौधों की कुछ उपयुक्त किस्में:–

क्र. सं.	पौधे	किस्में
1.	ईसबगोल	गुजरात ईसबगोल–1, 2 हरियाणा ईसबगोल–5
2.	सोनामुखी	सोना, ALFT-2
3.	अश्वगंधा	जवाहर अश्वगंध

औषधीय पौधों की खेती के लिए कुछ व्यावहारिक सुझाव: औषधीय पौधों की खेती अभी शुरूआती अवस्था में है। इन उत्पादन तकनीक, बाजार आदि भी पारंम्परिक खाद्य फसलों जितनी विकसित नहीं है अतः निम्न सुझावों पर ध्यान देना चाहिये।

1. खाद्य उत्पादन हमारी प्राथमिकता है, अतः जो जमीन खाद्य फसलों के लिए उपयुक्त हैं उन पर औषधीय पौधों की खेती को प्राथमिकता न दी जाये, अनुपयुक्त भूमि पर ही खेती करनी चाहिये।
2. औषधीय पौधों की खेती में उत्पादन लागत ज्यादा आती है। जबकि खेतों से या खुले स्थानों से जो संग्रह होता है उसमें व्यय कम आता है। अतः खेती से उत्पादित फसल के मुकाबले कम मूल्य पर बाजार में बिकती है। अतः किसानों को सहकारी विक्रय का प्रयास करना चाहिए। यदि काफी बड़े क्षैत्र में मिलाकर सहकारी खेती की जाये तो विपणन में कोई कठिनाई नहीं होगी।
3. सभी औषधीय पौधों की उत्पादन तकनीक विकसित करना व विपणन का प्रबंध करना सहकारी प्रयासों से संभव होने में समय लग सकता है।
   अतः किसानों को स्वयं के खेत और परिस्थितियों के अनुकूल व बाजार मांग को देखते हुए और फिर विशेषज्ञों की राय लेकर इन पौधों की खेती करनी चाहिये।

जैव–उत्तेजकः सतत् कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम

हनुमान प्रसाद परेवा, लक्ष्मी नारायण बैरवा, राम निवास चौधरी एवं गजानंद जाट
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर–जयपुर, राजस्थान

वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र अनेक चुनौतियों जैसे मृदा की उर्वरता में कमी, जलवायु परिवर्तन, रासायनिक उर्वरकों पर अत्यधिक निर्भरता, सूखा एवं लवणीयता, फसलों पर कई प्रकार के कीट एवं रोगों के प्रकोप आदि समस्याओं का सामना कर रही है। इन परिस्थितियों में ऐसी तकनीकों की आवश्यकता है जो फसलों की उत्पादकता बढ़ाने के साथ–साथ पर्यावरण की सुरक्षा भी सुनिश्चित करें। इसी संदर्भ में जैव–उत्तेजक (बायोस्टिमुलेंट्स) एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जैव–उत्तेजक वे प्राकृतिक या जैविक पदार्थ होते हैं जो पौधों की वृद्धि, पोषण अवशोषण, तनाव सहनशीलता और गुणवत्ता में सुधार करते हैं। ये पौधों की शारीरिक एवं जैव रासायनिक क्रियाओं को सक्रिय कर उनकी कार्यक्षमता बढ़ाते हैं। जैव–उत्तेजक ऐसे उत्पाद हैं जिनमें सूक्ष्मजीव, जैविक यौगिक या प्राकृतिक अर्क होते हैं, जो पौधों की वृद्धि एवं विकास को प्रोत्साहित करते हैं और पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता बढ़ाते हैं।

जैव–उत्तेजक के प्रमुख प्रकार

1. **समुद्री शैवाल अर्कः–** समुद्री शैवाल से प्राप्त अर्क पौधों में वृद्धि हार्मोन (ऑक्सिन, साइटोकाइनिन, जिबरेलिन) को सक्रिय करते हैं। अंकुरण, जड़ वृद्धि में सुधार करते हैं।
2. **ह्यूमिक एवं फुल्विक अम्लः–**ह्यूमिक और फुल्विक अम्ल प्राकृतिक जैविक पदार्थ हैं जो कार्बनिक अवशेषों (पौधों एवं जीवों के अवशेष, कार्बनिक खादों) के दीर्घकालीन अपघटन से बनते हैं। ये मृदा के ह्यूमस का प्रमुख भाग होते हैं और जैव–उत्तेजक के रूप में कार्य करते हैं।ये सीधे पोषक तत्व नहीं देते, बल्कि पौधों की वृद्धि, पोषक तत्वों के अवशोषण, जड़ विकास और तनाव सहनशीलता को बढ़ाते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

3. **अमीनो अम्ल एवं प्रोटीन हाइड्रोलाइसेटः–**प्राकृतिक या एंजाइम या रासायनिक विधि से अपघटित प्रोटीन से प्राप्त ऐसे यौगिक हैं, जो पौधों की वृद्धि एवं चयापचय क्रियाओं को सक्रिय कर जैव–उत्तेजक के रूप में कार्य करते हैं। ये सीधे पोषक तत्व नहीं देते, बल्कि पौधों की शारीरिक प्रक्रियाओं को प्रोत्साहित करते हैं। अमीनो अम्ल जैसे ग्लाइसिन, प्रोलिन, ग्लूटामिक अम्ल आदि पौधों में क्लोरोफिल निर्माण, एंजाइम सक्रियता, हार्मोन संतुलन तथा प्रोटीन संश्लेषण को बढ़ाते हैं। अमीनो अम्ल प्रोलिन जैसे यौगिक कोशिकाओं में ऑस्मो–प्रोटेक्टेंट के रूप में कार्य कर जल संतुलन बनाए रखते हैं। प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट जड़ों की वृद्धि, फूल–फलन तथा पोषक तत्वों के अवशोषण को सुधारते हैं। इसके अतिरिक्त, ये सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ चेलेट बनाकर उनकी उपलब्धता भी बढ़ाते हैं।
4. **सूक्ष्मजीव आधारित जैव–उत्तेजकः–** सूक्ष्मजीव आधारित जैव–उत्तेजक ऐसे लाभकारी जीवाणु एवं कवक (ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस एवं एजोस्पिरिलम) होते हैं जो पौधों की वृद्धि, पोषक तत्वों की उपलब्धता, जड़ विकास, रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा तनाव सहनशीलता को बढ़ाते हैं। ये मृदा–पौध तंत्र में जैविक गतिविधियों को सक्रिय कर पौधों की कार्यक्षमता बढ़ाते हैं।

जैव–उत्तेजक की कार्यविधि

जैव–उत्तेजक पौधों में विभिन्न जैव–रासायनिक एवं शारीरिक प्रक्रियाओं को सक्रिय करके कार्य करते हैं। ये प्रतिकूल परिस्थितियों जैसे पौधों में सूखा, लवणीयता, उच्च तापमान या रोग आक्रमण में बनने वाले हानिकारक मुक्त कणों रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीशीज जैसे सुपरऑक्साइड, हाइड्रोजन पेरॉक्साइड आदि को निष्क्रिय कर कोशिकाओं को क्षति से बचाते हैं, कोशिका झिल्ली की स्थिरता बनाए रखते हैं तथा प्रोलिन जैसे ऑस्मो–संरक्षक यौगिकों का स्तर बढ़ाकर सूखा और लवणीयता में जल संतुलन बनाए रखने में मदद करते हैं। साथ ही, ये मृदा में पोषक तत्वों को घुलनशील बनाकर उनकी उपलब्धता बढ़ाते हैं, सूक्ष्म तत्वों के साथ चेलेट बनाकर अवशोषण सुधारते हैं, पत्तियों के रंध्रों के विनियमन द्वारा जल हानि कम करते हैं तथा जड़ों में ऑक्सिन और एथिलीन हार्मोन के संतुलन को प्रभावित कर जड़ वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं। इस प्रकार जैव–उत्तेजक पौधों की वृद्धि, पोषण दक्षता और तनाव सहनशीलता को समग्र रूप से बढ़ाते हैं।

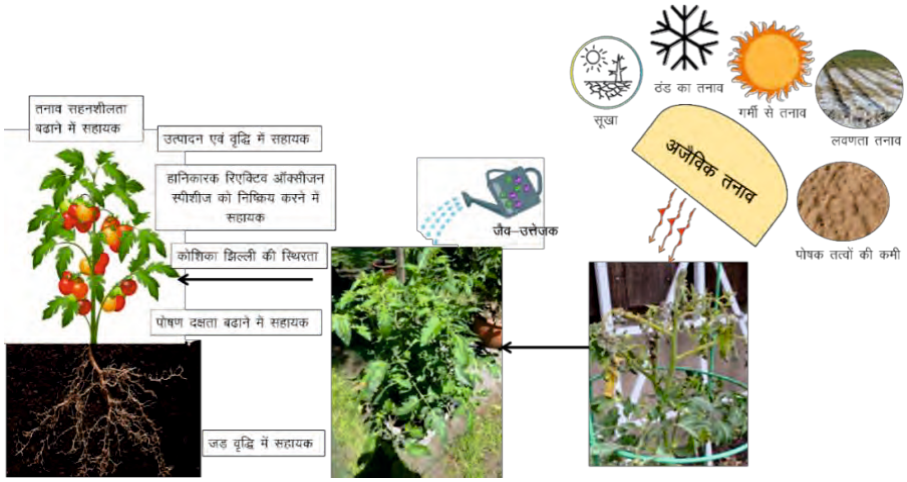

जैव–उत्तेजक के लाभ

1. **पोषक तत्व उपयोग दक्षता में वृद्धिः–** जैव उत्तेजक पौधों की जड़ों की वृद्धि बढ़ाकर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ाते हैं।
2. **एंजाइम सक्रियता में सुधारः–** जैव उत्तेजक पौधों की चयापचय क्रियाओं को सक्रिय कर ऊर्जा उत्पादन में वृद्धि करते हैं।
3. **तनाव सहनशीलता में वृद्धि करने में सहायकः–** जैव उत्तेजक सूखा, लवणीयता, उच्च तापमान आदि परिस्थितियों में एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम की सक्रियता बढ़ाकर पौधों की रक्षा करते हैं।
4. **हार्मोन संतुलनः–** ये वृद्धि हार्मोन के स्तर को संतुलित कर पौधों के समुचित विकास में सहायता करते हैं।
5. **फसल उत्पादन एवं गुणवत्ता बढ़ाने में सहायकः–** जैव उत्तेजक फसल उपज में वृद्धि, प्रोटीन एवं शर्करा की मात्रा में वृद्धि, अवशेष–मुक्त एवं सुरक्षित उत्पादन प्रदान करने में सहायक है।
6. **मृदा स्वास्थ्य में सुधार एवं जैव विविधता संरक्षण में सहायकः–** जैव उत्तेजक मृदा की जैविक गतिविधि को बढ़ाते हैं और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हैं एवं जैव विविधता संरक्षण करने के साथ –साथ मृदा स्वास्थ्य में सुधार करने में भी सहायक है।

जैव–उत्तेजक उत्पाद कहाँ से प्राप्त करें?

जैव–उत्तेजकों के विभिन्न उत्पाद जैसे– अमीनो अम्ल एवं प्रोटीन हाइड्रोलाइसेट, सूक्ष्मजीव आधारित जैव–उत्तेजक (ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस, मेटाराइजियम एनिसोप्ली एवं एजोस्पिरिलम), ह्यूमिक एवं फुल्विक अम्ल के विभिन्न उत्पादों को विभिन्न सरकारी संस्थाओं, कृषि विश्वविद्यालय जो उन्नत जैव–उत्तेजकों का उत्पादन करते हो,

सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, गैर–सरकारी सहकारी संस्थाओं एवं अन्य सहकारी संस्थाओं आदि से प्राप्त कर सकते है। इसके साथ ध्यान रखे की जैव–उत्तेजकों के अनुप्रयोग की विधि को सही से अपनाये।

जैव–उत्तेजक के अनुप्रयोग में चुनौतियाँ

1. **वैज्ञानिक प्रमाणों की कमीः–** कई उत्पादों के दावे पर्याप्त वैज्ञानिक परीक्षणों पर आधारित नहीं होते, जिससे किसानों में भ्रम की स्थिति बनती है।
2. **गुणवत्तायुक्त उत्पादों की उपलब्धता एवं नियंत्रण की समस्याः**– बाजार में उपलब्ध उत्पादों की गुणवत्ता एवं सक्रिय तत्वों की मात्रा में भिन्नता पाई जाती है।
3. **नियामक ढांचाः–** हालांकि भारत में दिशा–निर्देश बने हैं, फिर भी पंजीकरण एवं मानकीकरण की प्रक्रिया को और सुदृढ़ करने की आवश्यकता है।
4. **लागत एवं उपलब्धताः–** कुछ उन्नत जैव–उत्तेजक महंगे होते हैं, जिससे छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए इनका उपयोग कठिन हो सकता है।
5. **किसानों में जागरूकता की कमीः–** किसानों में सही मात्रा, समय एवं विधि की जानकारी का अभाव है, जिसके कारण अपेक्षित परिणाम नहीं मिलते है।
6. **क्षेत्र–विशिष्ट प्रभावः–** जैव–उत्तेजक का प्रभाव मृदा प्रकार, जलवायु एवं फसल के अनुसार बदलता है, इसलिए सार्वभौमिक सिफारिश संभव नहीं।

जैव–उत्तेजक के अनुप्रयोग में चुनौतियों को कम करने के लिए क्या करें?

जैव–उत्तेजक की चुनौतियों को कम करने के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान एवं बहु–स्थल परीक्षणों को मजबूत करना, उत्पादों का सख्त गुणवत्ता नियंत्रण एवं मानकीकरण सुनिश्चित करना, तथा किसानों को सही मात्रा और उपयोग विधि का प्रशिक्षण देना आवश्यक है। सूक्ष्मजीव आधारित उत्पाद जैसे ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, बैसिलस एवं एजोस्पिरिलम के लिए क्षेत्र–विशिष्ट सिफारिशें विकसित की जानी चाहिए। साथ ही, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन के अंतर्गत जैव–उत्तेजक को उर्वरकों और जैव उर्वरकों के साथ संतुलित रूप से अपनाना, छोटे किसानों के लिए सब्सिडी या आर्थिक सहायता प्रदान करना तथा जागरूकता कार्यक्रमों के माध्यम से सही जानकारी पहुँचाना भी अत्यंत महत्वपूर्ण है, जिससे इनके उपयोग की प्रभावशीलता और विश्वसनीयता दोनों बढ़ाई जा सकें।

निष्कर्षः–जैव–उत्तेजक आधुनिक कृषि में एक उभरती हुई एवं पर्यावरण अनुकूल तकनीक हैं। ये पौधों की वृद्धि, उत्पादन एवं गुणवत्ता में सुधार के साथ–साथ मृदा स्वास्थ्य और पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भविष्य में इनके व्यापक उपयोग से कृषि रसायनों पर निर्भरता कम होगी और सतत कृषि को बढ़ावा मिलेगा। इस प्रकार, जैव–उत्तेजक न केवल वर्तमान कृषि समस्याओं का समाधान हो सकते हैं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित एवं टिकाऊ कृषि प्रणाली स्थापित करने में भी सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

सतत् कृषि की प्रथम आवश्यकता मृदा परीक्षण

बी. एल. जाट, जे. के. गुप्ता, किरण यादव एवं मंजु नेटवाल
कृषि महाविद्यालय, लालसोट, दौसा

मृदा परीक्षण के आधार पर न केवल उर्वरक खादों की सही मात्रा की आवश्यकता ज्ञात की जाती है, वरन् सही उर्वरक के चुनाव, सही प्रयोगविधि व सही समय आदि अन्य पहलूओं का भी पता चलता है ताकि प्रति इकाई पोषक तत्व की मात्रा से अधिकतम लाभ प्राप्त किया जा सके। इसके अतिरिक्त मृदा प्रबन्ध, सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता एवं भूमि सुधारक रसायनों के प्रयोग में भी मृदा परीक्षण का विशेष योगदान है। मृदा परीक्षण का मुख्य आधार मृदा नमूना है अतः सही प्रकार से मृदा नमूने लेने पर ही सही मृदा परीक्षण एवं उर्वरकों की सही संस्तुति हो सकती है। सार्थक मृदा परीक्षण के लिए मृदा नमूनों द्वारा परीक्षण किए जाने वाले क्षेत्र का वास्तविक प्रतिनिधित्व होना चाहिए। इसी प्राथमिकता को ध्यान में रखते हुए मृदा परीक्षण का उद्देश्य, नमूने लेने का समय, गहराई, यन्त्र के चुनाव, नमूने लेने की सही विधि के बारे में जानकारी परम आवश्यक है। अतः संक्षेप में मृदा परीक्षण मृदा के भौतिक रसायनिक एवं जैविक गुणों की जांच कर उसके आधार पर गुणवत्तायुक्त उच्च फसलोत्पादन हेतु सलाह देना है।

मृदा परीक्षण के उद्देश्य

- मृदा की उर्वराशक्ति ज्ञात कर उसके आधार पर फसलों की आवश्यकतानुसार उपयुक्त उर्वरक एवं उनकी संतुलित मात्रा में प्रयोग।
- समस्याग्रस्त मृदा के सुधार हेतु मृदा–सुधारक की मात्रा का आकलन करना।
- मृदा के भौतिक, रसायनिक एवं जैविक गुणों को ज्ञात कर मृदा स्वास्थ्य के स्तर के बारे में जानकारी प्राप्त करना।
- किसी क्षेत्र विशेष के लिए मृदा उर्वरता मानचित्र तैयार कर उस क्षेत्र के अनुकूल उपयुक्त फसल एवं फसल चक्र का चयन करना।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

मृदा नमूना लेने की विधि

मृदा परीक्षण के सही परिणाम के लिए संकलित नमूना भी सही होना आवश्यक है अन्यथा परिणाम में त्रुटि आने की सम्भावना रहती है अतः ऐसी दशा में मृदा परीक्षण हेतु नमूना लेते समय निम्न बिन्दूओं का अनुसरण करना चाहिए।

- मिट्टी का नमुना लेने हेतु सबसे उपयुक्त समय मई तथा जून का महीना तथा कम से कम तीन साल में एक बार मिट्टी की जाँच अवश्य करानी चाहिए।
- नमूना लेने से पूर्व चयनित यन्त्र को अच्छी तरह से साफ कर, साफ कपड़े से पोछते हैं।
- सर्वप्रथम मृदा नमूना लेने वाले स्थान पर उपस्थित पुरानी पत्तियों, जड़, अवशेष, कंकड़, पत्थर इत्यादि को हटाकर साफ कर लेते हैं।
- यदि परीक्षण किए जाने वाले क्षेत्र में ली गई फसल, मृदा प्रकार, रंग, संरचना, गठन, ढाल, फसलचक्र एवं फसल प्रबन्धन आदि में समानता न हो तत्पश्चात् क्षेत्र को समानता के आधार पर छोटे–छोटे खण्डों में विभक्त कर प्रत्येक खण्ड का अलग–अलग नमूना लेते हैं।

- समान्यतः प्रत्येक खण्ड से फसल बुवाई से लगभग एक माह पूर्व या उगायी गयी फसल को काटने के उपरान्त खुरपी या फावड़े या ऑगर द्वारा प्रति हेक्टर 5–7 अलग–अलग स्थानों से 'वी' आकार में मृदा की ऊपरी सतह से 6 ईंच (15 से.मी.) गहराई तक गढ्ढा खोदते है फिर 2.5 से.मी. मोटी मृदा की एक समान परत काट कर निकाल लेते हैं। इन प्रारम्भिक नमूनों को तसलें या परात में एकत्र कर अच्छी तरह मिला कर ढेरी बना लेते हैं। तत्पश्चात् ढेरी को चार भागों में विभक्त कर आमने–सामने वाले भाग हटा देते है तथा शेष दो भागों को पुनः मिला लेते है। यह प्रक्रिया तब तक दोहराते हैं जब तक लगभग 500 ग्राम मृदा नमूना शेष रह जाए जो उस खेत के लिए प्रतिनिधि नमूना होगा। हल्के गीले नमूनों को छाया में सूखाकर साफ पॉलीथीन की थैली में भर लेते है।

- बहुवर्षीय वृक्षों जैसे बाग आदि लगाने हेतु मृदा नमूना 2 मीटर की गहराई तक ऑगर की सहायता से मृदा की ऊपरी सतह से 0–30, 30–60, 60–90, 90–120, 120–180 से.मी. की गहराई तर अलग–अलग स्थानों से लेकर समान गहराई प्रतिनिधि नमूना तैयार करें। अलग गहराई से लिए गए नमूनों को आपस में नहीं मिलाना चाहिए।
- मृदा का नमूना वर्ष में किसी भी समय पर लिया जा सकता है। परन्तु खरीफ फसलों की कटाई के पश्चात् नमूना लेना श्रेयस्कर होता है। साथ ही इस बात का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए कि मृदा के नमूने प्रत्येक वर्ष उसी समय पर लिए जाए जैसे पूर्व वर्षों में लिए गए है।
- सामान्यतः खड़ी फसल वाले खेत से मृदा का नमूना नहीं लिया जाता हैं परन्तु यदि आवश्यक हो तो पौधों की पंक्तियों के बीच से नमूना लेते हैं।
- मृदा का नमूना खाद के ढेर, मेढ़ सिंचाई की नाली, क्षेत्र जहाँ जल्दी ही उर्वरक दिया गया हो, पानी का रूकाव, हो, वृक्षों, नालियों, नहरों, कम्पोस्ट में गड्ढों के पास तथा पेड़ के नीचे से भी नमूना नहीं लेना चाहिए।
- मृदा का नमूना लेते समय नमूना लेने की आवृत्ति का भी ध्यान रखना चाहिए। सामान्यतः नमूने तीन वर्ष में एक बार लिए जाते है। परन्तु विशेष परिस्थितियों जैसे सघन कृषि वाले क्षेत्रों या ऐसे क्षेत्र जहां चलायमान पोषक तत्त्वों की जांच करनी हो तो ऐसी दशा में प्रतिवर्ष नमूना लेना लाभप्रद होता है।
- एकत्र किए गए मृदा नमूनों से कंकड़ पत्थर एवं पौधें के अवशेष आदि को निकाल कर इन्हें स्वच्छ प्लास्टिक या कपड़े पर छाया में सूखा लेना चाहिए।
- मृदा का प्रतिनिधि नमूना जांच हेतु अपने जिले के मृदा परीक्षण प्रयोगशाला में अपना सही पता, नमूने, खेत का नम्बर, ऊगाई जाने वाली फसल, प्रयोग किए गए उर्वरक एवं रसायनों के बारे में जानकारी आदि सहित देना चाहिए।

मृदा के नमूने का विश्लेषणः मृदा नमूने के विश्लेषण के लिए प्रयोगशाला में नमूना आने पर सर्वप्रथम उसको प्रयोगशाला द्वारा संख्या देकर पंजीकृत किया जाता है फिर नमूने को छायादार स्थान पर दो–तीन दिन तक सुखाया जाता है। तत्पश्चात् मृदा नमूने में उपस्थित बड़े ढेलों को लकड़ी के बेलन की सहायता से पीसकर नमूने की पूरी मात्रा को 2 मी. मी. छेदों वाली छलनी से छानकर मृदा नमूना ट्रे में रख लेते हैं। यह पूरी प्रक्रिया मृदा विधायन कहलाती है। विधायित नमूनों को स्वच्छ एवं नयी पॉलीथीन की थैलियों में भर कर सूचनापत्र की एक प्रति नमूने के अन्दर तथा एक बाहर लगाकर रख देते हैं। जिसके बाद मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुणों का आवश्यकतानुसार प्रयोगशाला में विश्लेषण किया जाता है।

मृदा पी.एच.:– 100 मिलीलीटर के बीकर में 20 ग्राम मिट्टी तथा 40 मिलीलीटर आसुत जल लेकर 30 मिनट तक काँच की छड से हिलाते रहते हैं। पी.एच. मीटर के इलेक्ट्रोड को ज्ञात पी.एच. वाले बफर घोल में डुबोकर देखते हैं मृदा पी.एच

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

सही आने पर इलेक्ट्रोड को आसुत जल से धोकर मिट्टी के घोल में डुबोकर मृदा पी.एच. ज्ञात कर लेते हैं। मृदा पी.एच मान ज्ञात करने पर मिट्टी के बारे में निम्न सूचनाऐं मिलती हैं।

मृदा की किस्म	**पी.एच. मान**	**सुझाव**
अम्लीय	6.5 से कम	सुधार हेतु चूना मिलावें
सामान्य	6.5–8.7	अधिकतर फसलों हेतु उपयुक्त
लवणीय	8.8–9.3	सुधार हेतु जैविक खाद मिलावें
क्षारीय	9.3 से अधिक	सुधार हेतु जिप्सम मिलावें

मृदा ई.सी. :– 100 मिलीलीटर के बीकर में 20 ग्राम मिट्टी तथा 40 मिलीलीटर आसुत जल लेकर काँच की छड से 30 मिनट तक हिलाते हैं तथा आधा घण्टे तक पानी को निथर जाने के लिए बीकर को रख देते हैं तथा ई.सी. मीटर के इलेक्ट्रोड को निथरे हुए जल में डुबोकर ई.सी. ज्ञात कर लेते हैं। एक बार ई.सी. ज्ञात हो जाने पर हमें निम्न सूचनाएं मिल जाती हैं:–

ई.सी. मान	**सुझाव**
0.8 डेसीसाइमन्स प्रति मीटर से कम	सामान्य
0.8–1.6 डेसीसाइमन्स प्रति मीटर	लवण संवेदनशील फसल न बोयें
1.6–2.5 डेसीसाइमन्स प्रति मीटर	लवण सहिष्णु फसल भी होना मुश्किल
2.5 से अधिक	अधिकतर सभी फसलों हेतु हानिकारक

मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला में मिट्टी की जाँच के पश्चात् प्राप्त मान के लिए सुलभ सारणी

मृदा में उपस्थित पोषक तत्व	**कम**	**मध्यम**	**उच्च**
जैविक कार्बन	< 0.5 प्रतिशत	0.5–0.75 प्रतिशत	> 0.75 प्रतिशत
प्राप्य नत्रजन	< 280 किग्रा प्रति हैक्टेर	280–560 किग्रा प्रति हैक्टेर	> 560 किग्रा प्रति हैक्टेर
प्राप्य फास्फोरस	< 28 किग्रा प्रति हैक्टेर	28–56 किग्रा प्रति हैक्टेर	> 56 किग्रा प्रति हैक्टेर
प्राप्य पोटाश	< 140 किग्रा प्रति हैक्टेर	140–280 किग्रा प्रति हैक्टर	> 280 किग्रा प्रति हैक्टेर
प्राप्य गंधक	< 10 पीपीएम	10–20 पीपीएम	> 20 पीपीएम
लोहा	< 5 पीपीएम	5–10 पीपीएम	> 10 पीपीएम
मैंगनीज	< 5 पीपीएम	5–10 पीपीएम	> 10 पीपीएम
जस्ता	< 0.5 पीपीएम	0.5–1.0 पीपीएम	> 1.0 पीपीएम
ताँबा	< 0.2 पीपीएम	0.2–0.4 पीपीएम	> 0.4 पीपीएम

पीपीएम – दस लाखवाँ भाग

इस प्रकार मृदा प्रयोगशाला से प्राप्त मान को इस सुलभ सारणी के माध्यम से अच्छी तरह समझ सकते हैं कि अमुक पोषक तत्व मेरी मृदा में किस श्रेणी (कम, मध्यम या उच्च) में आता है और उसी के अनुरूप उर्वरकों या रसायनों का प्रयोग कर उत्पादन लागत में कमी कर सकते हैं साथ ही मृदा का स्वास्थ्य में भी सुधार हो सकता है और यही आज की प्रमुख आवश्यकता है। सही समय से किया गया मृदा परीक्षण न केवल संतुलित मात्रा में उर्वरकों की संस्तुति एवं प्रयोग से उच्च फसलोत्पादन में सहायक है, वरन् समस्याग्रस्त भूमि के सुधार में भी लाभदायक है।

दुधारू पशुओ का प्रबंधन

प्रवीण पिलानिया, भूपेन्द्र कस्वां एवं अरूण प्रताप सिंह,
कृषि महाविद्यालय, कोटपुतली एवं डेयरी विज्ञान एवं प्रौधोगिकी महाविद्यालय, जोबनेर

परिचय :– दूध देने वाले पशुओं का प्रबन्धन व दूध उत्पादन के सभी पहलुओं जैसे कि देखभाल, दुग्ध निकालने की प्रक्रिया और दूध की गुणवत्ता सुनिश्चित करने को शामिल किया जाता है। यह प्रबंधन डेयरी फार्म के कामकाज के लिए आवश्यक है। डेयरी व्यवसाय के कुशल प्रबन्धन एवं पशुओं से उपयुक्त मात्रा में दूध प्राप्त करने के लिए दुधारू पशुओं का उचित रख–रखाव व खान पान की व्यवस्था पर्याप्त रूप से करना बहुत जरूरी होता है। अधिक मात्रा में दूध देने वाले देशी एवं विदेशी नस्लों के पशु वातावरण से होने वाले प्रतिकूल प्रभावों के प्रति अति संवेदनशील होते है और इसका विपरीत प्रभाव पशु के चारा ग्रहण करने की मात्रा रख रखाव की आवश्यकताओं, उत्पादन आवश्यकताओं एवं पशु के प्रजनन दर आदि पर पड़ता है। पशुओं की प्रजनन क्षमता चारा रूपान्तरण दर और आवास व्यवस्था के दुष्टिकोण से उपयुक्त देखभाल किए जाने से डेयरी व्यवसाय में अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किए जा सकते है।

दूध देने वाले पशुओं के प्रबंधन के अन्तर्गत विभिन्न महत्वपूर्ण आयामों का उल्लेख किया गया है :–

1. **डेयरी पशु का चुनाव :–**पशुओं की दूध उत्पादन क्षमता मुख्य रूप से पशु की अनुवांशिक क्षमता अथवा नस्ल पर निर्भर करती है। अधिक दूध देने वाली देशी नस्ल की गायों (साहिवाल, गिर, थारपारकर) भैंसो (मुर्रा, मेहसाणा, नीलीरावी) आदि व विदेशी नस्ल की गायों में (जर्सी, होल्सटीन, ब्राउनस्विस, इत्यादि) और इनकी क्रॉस ब्रेड गायों का चुनाव किया जाना चाहिये। देशी व विदेशी नस्लों के पशुओं के प्रजनन (क्रॉसब्रीडिंग) के द्वारा देशी नस्लों के दूध की

मात्रा एवं उत्पादकता और विदेशी नस्लों के पशुओं की रोग प्रतिरोधक क्षमता गर्म प्रदेशो में रहने की अनुकूलन क्षमता व आजीविता को बढ़ाया जा सकता है।

2. **प्रजनन प्रबंधन** :–डेयरी उद्यम के सफल संचालन के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वर्ष पर्यन्त दुधारू पशुओं की अधिकतम संख्या दूध देती रहे। डेयरी पशुओं के उचित प्रजनन प्रबंधन से हम यह सुनिश्चित कर सकते है। प्रजनन गर्भाधान, गर्भधारण और बाद में अधिकतम दूध लेने के लिए डेयरी जानवरों का सकारात्मक ऊर्जा संतुलन में होना बहुत आवश्यक होता है।
3. **पशु आवास व्यवस्था** :–पशु आवास की संरचना भी दुग्ध उत्पादन पर प्रभाव डालती है। उचित पशु आवास की संरचना पशुओं को जलवायु संबंधित परिवर्तन से होने वाले आघात से बचाती है। पशु आवास को बनाते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:–
    - पशु आवास आरामदायक रोशनी, धूप व हवा युक्त होना चाहिए।
    - पशु आवास में दूध दोहने, चारा डालने तथा सफाई करने के लिए उचित प्रबंधन एवं निकास क्षेत्र होना चाहिए।
    - पशु प्रवास की दिशा संरचना गरम प्रदेशो में पशु आवास उत्तर से दक्षिण दिशा की ओर स्थित होने चाहिए जो सौर विकिरण के प्रभावों को कम करते है व ठडे प्रदेशो के पशु आवास का मुख पूर्व से पश्चिम की दिशा की ओर स्थित होना चाहिए। इससे दिन भर पशु आवास में धूप का प्रवाह रहेगा। जो संचित होकर रात्रि में भी पशु आवास को गर्म रखेगा और ठंड के दुष्प्रभावों से पशुओं का बचाव रहेगा।
    - 20 से 30 डिग्री सेल्सियस का तापमान पशु के लिए सबसे आरामदायक होता है और इस सुविधा क्षेत्र (कम्फर्ट जोन) में दुग्ध उत्पादन भी सबसे अधिक होता है। इसलिए कोशिश करनी चाहिए कि पशु आवास का तापमान इसी सीमा के आस पास बना रहे।
    - खुले पशु आवासों में 5.6 फुट की दीवारें बनाए जाने से यह पशुओं को सीधी ठंड, धूप, गर्म हवा व जंगली जानवरों से बचाया जा सकता है।
    - गर्मी के मौसम के दौरान पशु घर में बिजली से रोशनी और पंखे लगाने से दूध उत्पादन में भी बढ़ोतरी होती है और गर्म वातावरण के तनाव को कम किया जा सकता है।
    - गर्मी के मौसम में पशुओं को ठंडा रखने के लिए पशु पर पानी का छिड़काव किया जा सकता है। इसके लिए पानी के फव्वारें, फोगर इत्यादि पशु आवास में लगवाए जा सकते है।
    - पशु घर और इसकी फिटिंग में ऐसी कोई भी नुकीली वस्तु या व्यवस्था न हो जिससे पशु की खाल टांगों या थनों को नुकसान पहुँच सके।
    - पशु घर के फर्श फिसलने वाले नहीं होने चाहिए। अधिकांश यह ठोस व दरदरे पदार्थो के बने होने चाहिए जिससे पशु पैर जमाकर खड़ा हो सके।
    - आवास में हानिकारक जीवाणुओं एवं रोगाणुओं के नियंत्रण हेतु नियमित रूप से चूने व फिनाईल का छिड़काव किया जाना चाहिए।
    - नियमित रूप से पशु आवास से मल मूत्र की सफाई एवं निकास करते रहना चाहिए जिससे होने वाले संक्रमणों से पशुओं को सुरक्षित रखा जा सके।

4. **पर्यावरण तनाव सम्बंधित व्यवस्था :–**पर्यावरण तापक्रम पशुओं की सूखे पदार्थो को ग्रहण करने और पानी पीने की क्षमता को प्रभावित करता है। इससे पशुओं की उत्पादकता और दूध उत्पादन की क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। गर्मियों में पशुओं को दाना या फीड थोड़ी कम मात्रा में खिलाना चाहिए जिससे पशु के शरीर में ऊर्जा का प्रवाह शरीर के तापमान को असहज स्तर तक न बढ़ा सकें।
    - वही सर्दियों के मौसम में पशु का कंसन्ट्रेट फीड (सांद्रित आहार) कुछ बढ़ाया जा सकता है जिससे पशु का शारीरिक तापमान सामान्य बना रहे और ठंड से बचाव हो सके।
    - गर्मियों में पशुओं को खुली मात्रा में ठंडा पानी और सर्दियों में थोड़ा गुनगुना पानी देना चाहिए जिससे पशु के शरीर का तापमान सामान्य रखा जा सके।
    - गर्मियों में पशु–शालाओं को ठंडा रखने के लिए फर्श पर रेत व आवास में पंखे भी लगाए जा सकते है। अत्यधिक गर्मी में पशुओं के नहलाना और उनके ऊपर पानी का छिड़काव भी किया जा सकता है।
    - सर्दियों में ठण्ड के आघात से पशुओं को बचाकर दूध उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए पशु आवासो को गर्म रखने के प्रयास करने चाहिए और ठंडी हवा से सुरक्षित आवास में रखना चाहिए। अधिक ठंड होने पर हीटर का प्रयोग भी किया जा सकता है।
    - अधिकतम देखा गया है कि पशु ठंड के प्रति गर्मी की उपेक्षा कुछ सहिष्णु होते है और बहुत ही कम तापमानों में (मानइस से भी नीचे) लम्बे समय तक खुले रहने पर ही ठंड के विपरीत प्रभावों को प्रत्यक्ष रूप से महसूस व प्रकट कर पाते है।
5. **चारा व्यवस्था :–**चारा घटको की मात्रा और गुणवत्ता दुग्ध संयोजन के लिए जरूरी होती है और रक्त में दूध बनाने वाले कारको की मात्रा को भी प्रभावित करती है। यदि पशु का एक वक्त का चारा भी देने से रह जाए तो यह अगले दोहन पर दूध की मात्रा को कम कर सकता है। सुखा व हरा चारा निश्चित अनुपात में पशु को देना चाहिए।
6. **स्वास्थ्य की निगरानी** :–बीमार पशुओं में शारीरिक असंतुलन आ जाने के कारण पशु की उत्पादन क्षमता पर बहुत ही विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसलिए दूध देने वाले पशुओं का बीमारी मुक्त होना बहुत ही अनिवार्य है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- ❖ समय समय पर पशुओं की जॉच कर किसी भी बीमारी के होने अथवा फैलने की संभावनाओं को दूर करते रहना चाहिए।
- ❖ सभी दूध देने वाले पशुओं को साफ सुथरे व कीड़े, मक्खी व कीटाणु रहित आवास स्थान में रखना चाहिए।
- ❖ उचित टीकाकरण व कृमिनाशन ठीक समय पर रोगों की रोकथाम, पशुओं की प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखते है।
- ❖ इससे मेसटाइटस (स्तन की सूजन) गलघोटू, खुरपका–मुहपका (एफ एम डी) वाहक जनित रोग इत्यादि बीमारियों को कम किया जा सकता है और दूध उत्पादन को भी सामान्य रखा जा सकता है।

7. स्वच्छ दुग्ध उत्पादन :–

1. दूध निकालने का स्थान साफ, सूखा और आरामदायक होना चाहिए।
2. पशु को दोहने से पूर्व उसके अयन को साफ पानी और अधिक गंदा होने पर पोटैशियम परमैगनेट (नीला थोथा दवाई) डेटॉल आदि कीटाणुनाशकों से धोकर साफ करें। और प्रत्येक पशु के लिए अलग तौलिए का प्रयोग करें।
3. स्वस्थ पशुओं को दूध सबसे पहले निकाल कर दूध की पहली धार की गुणवत्ता को चैक करना चाहिए। बीमार रोगग्रस्त और थनैला रोग ग्रस्त पशुओं का दूध अंतिम में निकालना चाहिए।
4. दूध निकालने के आधे घण्टे बाद तक पशु को बैठने नहीं देना चाहिए। दूध निकालने के 25–30 मिनट बाद तक थनों के सुराख खुले रहते है जिसके हानिकारक बैक्टीरिया (जीवाणु) थनों के छिद्रो में प्रवेश कर जाते है और अयन में संक्रमण हो जाता है।

8. दुधारू पशुओं के दूध को सुखाना :–

दुधारू पशुओं की वर्तमान दूध लेने की अवधि से अगली दूध लेने की अवधि में कम से कम 8–10 हफ्ते तक का अंतराल होना आवश्यक है जिससे दुग्ध बनाने वाली ग्रथियों के विकास की बहाली हो सके और वह अगली दूध देने की अवधि (लैक्टेशन) में अधिक दूध बना सकें।

- ✓ पशु के चारे में सांद्र आहार की मात्रा को धीरे धीरे कम कर देना चाहिए जिससे अयन में दूध बनने की क्रिया धीमी पड़ जायें।
- ✓ पशु के दूध को अकस्मात् ही न सुखाकर धीरे धीरे सुखाना चाहिए। शुरू के हफ्ते में दिन एक बार पशु का दूध निकालना चाहिए। फिर एक दिन छोड़ और फिर दो दिन छोड़कर दूध निकालना चाहिए। जब तक पशु का दूध पूरी तरह सूख ना जायें।

सारांश :–डेयरी व्यवसाय गरीब व मध्यम वर्गीय किसानों का लम्बे समय से जीविका अर्जित करने का साधन रहा है। इस बदलते पर्यावरण समावेश में पशुओं की खान–पान और रख रखाव व्यवस्था पर ध्यान देना बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है। इससे न केवल पशुओं की उत्पादकता और डेयरी किसानों की आय पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है बल्कि जानवरों से इंसानों में होने वाले संक्रमणों के रोक थाम की संभावनाएं भी बढ़ जाती है।

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीवः मृदा में जिंक उपलब्धता बढाने की जैविक तकनीक

त्रिलोक चन्द बागड़ी, राकेश सम्मौरिया, प्रतिभा सिंह एवं आर. सी. मीणा
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा (जयपुर), श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

1. जिंक की स्थिति एवं कृषि में महत्वः जिंक पौधों के लिए एक अत्यंत आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है, जिसकी कमी वर्तमान समय में वैश्विक कृषि के लिए एक गंभीर पोषण संबंधी चुनौती बन चुकी है भारत सहित विश्व की लगभग 40–50 प्रतिशत कृषि भूमि जिंक की कमी से प्रभावित पाई गई है राजस्थान में स्थिति अधिक गंभीर है, जहाँ लगभग 41. 7 प्रतिशत मृदाएँ जिंक की कमी से ग्रसित हैं इसका मुख्य कारण उच्च पीएच मान, चूना प्रधान प्रकृति, कम कार्बनिक पदार्थ तथा शुष्क जलवायु है (शुक्ला एवं सहलेखक, 2021). विशेषकर क्षारीय, कैल्शीयम युक्त तथा उच्च अम्ल–क्षार मान (पीएच मान) वाली मिट्टियों में इसकी उपलब्धता कम हो जाती है जिंक पौधों की प्रतिरोधक क्षमता बढाने में भी सहायक होता है तथा सूखा एवं रोग प्रतिरोध में योगदान देता है मानव पोषण की दृष्टि से भी जिंक की पर्याप्त मात्रा अनाज की गुणवत्ता सुधारने में महत्वपूर्ण है जिंक एक आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है, जो पौधों की वृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसकी प्रमुख भूमिकाएँ निम्नलिखित हैं–

- ➢ जिंक 300 से अधिक एंजाइमों को सक्रिय करता है। यह कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन तथा न्यूक्लिक अम्ल के चयापचय में भाग लेता है
- ➢ जिंक पौधों के वृद्धि हार्मोन ऑक्सिन अर्थात इंडोल एसीटिक अम्ल के निर्माण में सहायक होता है। इसकी कमी होने पर तनों के मध्य खंडों की लंबाई कम रह जाती है, जिसके कारण पौधे सामान्य रूप से विकसित नहीं हो पाते और बौने दिखाई देते हैं
- ➢ यह राइबोन्यूक्लिक अम्ल तथा डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल के निर्माण एवं उनकी संरचनात्मक स्थिरता में सहभागिता करता है, जिसके परिणामस्वरूप कोशिकाओं का विभाजन तथा पौधों की वृद्धि–विकास की प्रक्रिया प्रभावित होती है
- ➢ हालांकि जिंक सीधे क्लोरोफिल का भाग नहीं है, लेकिन इसकी कमी से क्लोरोसिस (पत्तियों का पीला होना) होता है क्योंकि यह प्रकाश संश्लेषण से संबंधित एंजाइमों को प्रभावित करता है
- ➢ जिंक स्टार्च के निर्माण तथा शर्करा के रूपांतरण में सहायक है, जिससे दाने की गुणवत्ता बेहतर होती है

- यह कोशिका झिल्ली की संरचना को स्थिर बनाए रखने में मदद करता है और ऑक्सीडेटिव क्षति से सुरक्षा देता है
- जिंक की पर्याप्त मात्रा से पराग की जीवनीयता और बीज निर्माण बेहतर होता है

2. जिंक की कमी के लक्षण

- पौधों में लिटिल लीफ (छोटी पत्तियाँ) तथा रोसेट लक्षण दिखाई देते हैं
- ऑक्सिन के अपर्याप्त संश्लेषण के कारण इंटरनोड की लंबाई कम हो जाती है, जिससे पौधे बौने और झाडीदार बन जाते हैं
- पत्तियों में पीलापन दिखाई देता है
- मक्का में नई निकलने वाली पत्तियाँ सफेद या पीली हो जाती हैं, जिसे "व्हाइट बड" कहा जाता है
- पत्तियाँ क्लोरोसिस (हरितलवक की कमी) तथा नेक्रोसिस (ऊतक मृत्यु) से ग्रसित होकर समय से पहले झड जाती हैं
- धान में जिंक की कमी से खैरा रोग होता है
- प्रायः उच्च पीएच अधिक फास्फोरस युक्त तथा हल्की बनावट वाली मिट्टियों में जिंक की कमी अधिक पाई जाती है

3. जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव का परिचय एवं आवश्यकता

परंपरागत रूप से जिंक की पूर्ति हेतु जिंक सल्फेट जैसे रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है, किंतु मिट्टी में डाला गया जिंक शीघ्र ही अघुलनशील यौगिकों में परिवर्तित होकर पौधों के लिए अनुपलब्ध हो जाता है इसी समस्या के समाधान के रूप में जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव एक प्रभावी जैविक विकल्प के रूप में उभरे हैं जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव ऐसे लाभकारी राइजोबैक्टीरिया हैं जो मृदा में उपस्थित अघुलनशील जिंक यौगिकों को पौधों के लिए उपलब्ध घुलनशील रूप (जिंक द्विसंयोजी धनायन) में परिवर्तित करते हैं सामान्यतः मृदा में जिंक की कुल मात्रा पर्याप्त होती है, किंतु उसका 90 प्रतिशत से अधिक भाग अघुलनशील रूप में बंधा रहता है, जैसे जिंक ऑक्साइड , जिंक फॉस्फेट, जिंक कार्बोनेट आदि। क्षारीय एवं कैल्शियम युक्त मृदाओं में यह समस्या और अधिक गंभीर होती है ऐसी परिस्थितियों में जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव जैव–उर्वरक के रूप में कार्य करते हुए जिंक की जैव उपलब्धता को बढाते हैं जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव का महत्व केवल पोषक तत्व उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं है, बल्कि ये मृदा–वनस्पति–जीवाणु अंतःक्रिया को सक्रिय करते हैं ये राइजोस्पेयर क्षेत्र में सक्रिय होकर जड स्रावों के साथ पारस्परिक क्रिया करते हैं और पोषक तत्व घुलनशीलता को बढाते हैं इससे पौधों की जड वृद्धि, पोषक तत्व अवशोषण क्षमता तथा समग्र विकास में सुधार होता है यह तकनीक सतत कृषि प्रणाली को मजबूत आधार प्रदान करती है

4. जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीवों के प्रकार

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव मुख्यतः जीवाणु (जैसे स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, स्यूडोमोनास ताइवानेंसिस, क्लेब्सिएला प्रजाति, एसीनेटोबैक्टर कैल्कोएसेटिकस, बैसिलस सेरियस, बैसिलस मेगाटेरियम), कवक (जैसे पेनिसिलियम ल्यूटियम, एस्परजिलस नाइजर, एस्परजिलस ओराइजी, ट्राइकोडर्मा हार्जयिनम (रिफाई), एस्परजिलस टेरेयस, ब्यूवेरिया कैलेडोनिका) के रूप में पाए जाते हैं। ये सूक्ष्मजीव मृदा के जड क्षेत्र में सक्रिय होकर जिंक को घुलनशील बनाने का कार्य करते हैं विभिन्न प्रजातियाँ अलग–अलग मिट्टी की परिस्थितियों में अनुकूलन क्षमता रखती हैं इनका चयन मिट्टी की प्रकृति और फसल के अनुसार किया जाना चाहिए ताकि बेहतर परिणाम प्राप्त हो सकें

5. कार्यविधि (घुलनशील बनाने की प्रक्रिया)

- **कार्बनिक अम्ल उत्पादन**– जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव विभिन्न कार्बनिक अम्ल जैसे साइट्रिक अम्ल, ग्लूकोनिक अम्ल, लैक्टिक अम्ल, ऑक्सैलिक अम्ल आदि का स्राव करते हैं ये अम्ल मृदा के पीएच मान को स्थानीय स्तर पर कम कर देते हैं, जिससे अघुलनशील जिंक यौगिक विघटित होकर जिंक द्विसंयोजी धनायन के रूप में उपलब्ध हो जाते हैं अम्लीकरण जिंक घुलनशीलता की मुख्य प्रक्रिया है
- **चिलेशन**– कुछ जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव ऐसे कार्बनिक यौगिक उत्पन्न करते हैं जो धातु आयनों के साथ स्थिर घुलनशील संकुल बनाते हैं यह प्रक्रिया जिंक आयनों को पुनः अवक्षेपित होने से रोकती है और उन्हें पौधों द्वारा अवशोषण योग्य अवस्था में बनाए रखती है
- **साइडरोफोर उत्पादन**– साइडरोफोर मुख्यतः लौह तत्व की उपलब्धता के लिए जाने जाते हैं, किंतु ये जिंक सहित अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ भी संकुल बना सकते हैं। इससे राइजोस्पेयर क्षेत्र में सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढती है
- **प्रोटॉन उत्सर्जन एवं एंजाइम गतिविधि**– कुछ जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव प्रोटॉन (हाइड्रोजन धनायन) उत्सर्जन के माध्यम से मृदा अम्लीकरण करते हैं। साथ ही, वे विभिन्न एंजाइमों का उत्पादन कर पोषक तत्व चक्रण को सक्रिय करते हैं।

क्रम संख्या	सूक्ष्मजीव वर्ग	सूक्ष्मजीव का नाम	अघुलनशील जिंक का रूप	घुलनशीलता का तंत्र	स्थान
1	कवक	पेनिसिलियम ल्यूटियम	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट,	ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन	स्कॉटलैंड, यूनाइटेड किंगडम
2	कवक	एस्परजिलस नाइजर	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट	साइट्रिक एवं ऑक्सैलिक अम्ल का उत्पादन	स्कॉटलैंड, यूनाइटेड किंगडम

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

3	कवक	ट्राइकोडर्मा हार्जियानम (रिफाई)	धात्विक जिंक	जिंक का अवशोषण एवं ऑक्सीकरण घुलन प्रक्रिया में वृद्धि	इटली
4	कवक	ब्यूवेरिया कैलेडोनिका	जिंक फॉस्फेट	अम्लीकरण प्रक्रिया (एसिडोलाइसिस)	स्कॉटलैंड, यूनाइटेड किंगडम
5	कवक	एस्परजिलस टेरेयस	जिंक ऑक्साइड, जिंक कार्बोनेट, जिंक फॉस्फेट	पीएच में कमी द्वारा घुलनशीलता	तिरुपुर जिला, भारत
6	जीवाणु	स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस	जिंक फॉस्फेट	कार्बनिक अम्ल का उत्पादन	यूनाइटेड किंगडम
7	जीवाणु	एसीनेटोबैक्टर कैल्कोएसेटिकस	जिंक ऑक्साइड, जिंक कार्बोनेट	कार्बनिक अम्ल का उत्पादन	तमिलनाडु, भारत
8	जीवाणु	बैसिलस सेरियस	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट	कार्बनिक अम्ल का उत्पादन	केरल, भारत
9	जीवाणु	बैसिलस मेगाटेरियम	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट, जिंक कार्बोनेट	ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन	केरल, भारत
10	जीवाणु	स्यूडोमोनास ताइवानेंसिस	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट, जिंक कार्बोनेट	कीटो–डी–ग्लूटरेट, साइट्रिक, प्रोपियोनिक, ग्लूकोनिक एवं ऑक्सैलिक अम्ल का उत्पादन	ओडिशा, भारत

इस प्रकार जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव पर्यावरण–अनुकूल एवं लागत प्रभावी समाधान प्रदान करते हैं और रासायनिक जिंक उर्वरकों पर निर्भरता को कम करते है।

6. प्रयोग विधि

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीवों का उपयोग बीज उपचार, मृदा में प्रयोग, जड़ उपचार तथा अन्य जैव उर्वरकों के साथ संयुक्त रूप से किया जा सकता है।बीज उपचार में लगभग 5–10 मिलीलीटर जीवाणु संवर्धन प्रति किलोग्राम बीज प्रयोग किया जाता है मृदा में प्रयोग के लिए इसे गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट के साथ मिलाकर खेत में फैलाया जाता है रोपाई वाली फसलों में पौधों की जडों को सूक्ष्मजीव घोल में डुबोकर रोपाई करने से बेहतर परिणाम प्राप्त होते हैं उचित नमी एवं अनुकूल तापमान बनाए रखना इनकी प्रभावशीलता के लिए आवश्यक है समेकित पोषण प्रबंधन के अंतर्गत रासायनिक उर्वरकों के साथ संतुलित प्रयोग करने से अधिक लाभ प्राप्त होता है

7. फसल उत्पादकता पर प्रभाव

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव के प्रयोग से फसलों की उपज, गुणवत्ता एवं पोषण स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है जिंक लगभग 300 से अधिक एंजाइमों की संरचना एवं सक्रियता में भाग लेता है। यह प्रोटीन संश्लेषण, न्यूक्लिक अम्ल निर्माण, क्लोरोफिल संश्लेषण तथा वृद्धि हार्मोन (इंडोल एसीटिक अम्ल) निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है

- गेहूं एवं धान पर किए गए विभिन्न शोधों में यह पाया गया है कि जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव के प्रयोग से पौध ऊँचाई, दाना संख्या, दाना भार तथा कुल उपज में महत्वपूर्ण वृद्धि होती है ।
- मक्का में जिंक की पर्याप्त उपलब्धता से जड़ तंत्र का विकास सुदृढ होता है, जिससे पोषक तत्व एवं जल अवशोषण क्षमता बढ़ती है
- चना, सोयाबीन, मूंगफली एवं सरसों जैसी फसलों में जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव के प्रयोग से प्रोटीन प्रतिशत, तेल प्रतिशत तथा सूक्ष्म पोषक तत्व सांद्रता में वृद्धि देखी गई है जिंक नोड्यूल निर्माण एवं नाइट्रोजन स्थिरीकरण में भी सहायक भूमिका निभाता है
- जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव आधारित तकनीकें अनाजों में जिंक सांद्रता बढ़ाकर कुपोषण की समस्या को कम करने में सहायक हैं यह विशेष रूप से विकासशील देशों में महत्वपूर्ण है, जहाँ जिंक की कमी मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या है

8. मृदा स्वास्थ्य पर प्रभाव

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार करते हैं

- जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव राइजोस्पेयर में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं सक्रियता को बढ़ाते हैं, जिससे मृदा जैव विविधता समृद्ध होती है
- डिहाइड्रोजनेज, फॉस्फेटेज, यूरिएज एवं कैटालेज जैसे एंजाइमों की सक्रियता बढ़ने से पोषक तत्व खनिजीकरण एवं अपघटन प्रक्रिया तीव्र होती है
- कुछ जीवाणु बहिर्कोशिकीय पदार्थ उत्पन्न करते हैं जो मृदा कणों को जोड़कर स्थिर संरचना बनाते हैं। इससे जल धारण क्षमता एवं वायुसंचार में सुधार होता है
- जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थ अपघटन एवं ह्यूमस निर्माण में सहायक होते हैं, जिससे मृदा की दीर्घकालीन उर्वरता एवं स्थिरता बढती ळें

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

9. भविष्य की उन्नत तकनीकें

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव की कार्यक्षमता एवं स्थिरता बढाने के लिए आधुनिक जैव–प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है

- **जीन आधारित अध्ययन**– उन्नत आणविक तकनीकों द्वारा उन जीनों की पहचान की जा रही है जो धातु घुलनशीलता में भूमिका निभाते हैं
- **जीन संपादन**– उच्च दक्षता वाले सूक्ष्मजीव विकसित करने हेतु जीन संपादन तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है
- **नैनो आधारित सूत्रीकरण**– सूक्ष्मजीवों की स्थिरता एवं नियंत्रित क्रियाशीलता सुनिश्चित करने के लिए नैनो–प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जा रहा है
- **सटीक कृषि पद्धति**– आधुनिक सेंसर एवं डिजिटल तकनीकों द्वारा मृदा पोषक स्थिति का आकलन कर स्थान–विशिष्ट अनुप्रयोग संभव हो रहा है

10. सीमाएँ

इन सूक्ष्मजीवों की सक्रियता मिट्टी के अम्ल–क्षार मान, तापमान, नमी तथा जैविक कार्बन की मात्रा पर निर्भर करती है। अत्यधिक क्षारीय या शुष्क परिस्थितियों में इनकी प्रभावशीलता घट सकती है। भंडारण अवधि सीमित होती है तथा गुणवत्ता नियंत्रण की कमी भी एक चुनौती है विभिन्न क्षेत्रों में परिणामों में भिन्नता देखी जा सकती है किसानों को प्रमाणित एवं गुणवत्तायुक्त जैव उर्वरकों का ही उपयोग करना चाहिए ताकि अपेक्षित लाभ प्राप्त हो सके

मृदा स्वास्थ्य की अवधारणा एवं आधुनिक कृषि में इसकी उपयोगिता

प्रियदर्शिनी खाम्बलकर एवं मौहम्मद युनुस
कृषि महाविद्यालय, सिहोर (म.प्र.) एवं कृषि विज्ञान केंद्र, झालावाड़

मृदा स्वास्थ्य कृषि की दीर्घकालिक उत्पादकता, पर्यावरणीय संतुलन तथा खाद्य सुरक्षा का आधार है। यह मिट्टी की वह समग्र क्षमता है जिसके द्वारा वह पौधों को आवश्यक पोषक तत्व उपलब्ध कराती है, जल को संचित रखती है, कार्बनिक पदार्थों का चक्रण करती है तथा जैव विविधता को संरक्षित करती है। आधुनिक कृषि में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा अत्यधिक जुताई के कारण मिट्टी की संरचना, कार्बनिक कार्बन और सूक्ष्मजीव सक्रियता में कमी आई है। मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण न केवल फसल उत्पादन के लिए आवश्यक है, बल्कि जलवायु परिवर्तन शमन, जल संरक्षण और पर्यावरणीय गुणवत्ता सुधार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए आधुनिक कृषि में मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन अत्यंत प्रासंगिक और अनिवार्य है।

मृदा स्वास्थ्य परिचय: मिट्टी पृथ्वी की सतह की वह महत्वपूर्ण परत है जो कृषि उत्पादन और पारिस्थितिक संतुलन की आधारशिला मानी जाती है। यह केवल खनिज कणों का समूह नहीं, बल्कि एक जीवंत एवं गतिशील तंत्र है जिसमें कार्बनिक पदार्थ, जल, वायु तथा असंख्य सूक्ष्मजीव सक्रिय रहते हैं। मृदा स्वास्थ्य की अवधारणा इसी समग्र संतुलन को व्यक्त करती है। स्वस्थ मिट्टी पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है, जल को संचित रखती है, सूक्ष्मजीव विविधता को बनाए रखती है तथा दीर्घकाल तक उत्पादक बनी रहती है। हरित क्रांति के बाद कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का व्यापक उपयोग किया गया। प्रारंभ में इससे उत्पादन बढ़ा, किंतु दीर्घकाल में मृदा की संरचना, कार्बनिक कार्बन तथा जैविक सक्रियता में कमी देखी गई। संयुक्त राष्ट्र की संस्था के अनुसार, सतत कृषि और खाद्य सुरक्षा के लिए मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण अत्यंत आवश्यक है। इसलिए आधुनिक कृषि में मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन को प्राथमिकता देना समय की मांग बन गया है। मृदा स्वास्थ्य की अवधारणा मिट्टी की उस समग्र क्षमता को दर्शाती है, जिसके माध्यम से वह पौधों की वृद्धि को सहारा देती है, पोषक तत्वों का संतुलित चक्रण करती है तथा पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखती है। स्वस्थ मिट्टी में भौतिक, रासायनिक और जैविक तीनों घटक संतुलित अवस्था में होते हैं। भौतिक रूप से यह भुरभुरी और दानेदार होती है, जिससे जल और वायु का संचरण सुचारु रहता है। रासायनिक रूप से आवश्यक पोषक तत्व उचित मात्रा में उपलब्ध रहते हैं तथा पी.एच संतुलित रहता है। जैविक रूप से इसमें सूक्ष्मजीव, केंचुए और एंजाइम सक्रिय रहते हैं, जो कार्बनिक पदार्थों के अपघटन और पोषक तत्वों की उपलब्धता में सहायक होते हैं।

मृदा स्वास्थ्य के घटक: मृदा स्वास्थ्य के घटक मुख्यतः तीन आयामो भौतिक, रासायनिक और जैविक में विभाजित किए जाते हैं। ये तीनों परस्पर जुड़े हुए हैं और मिलकर मिट्टी की समग्र गुणवत्ता, उत्पादकता तथा पारिस्थितिक संतुलन को निर्धारित करते हैं।

(1) भौतिक घटक : मिट्टी की संरचना, बनावट, जलधारण क्षमता और वायु संचरण इसके प्रमुख भौतिक गुण हैं। स्वस्थ मिट्टी सामान्यतः भुरभुरी और दानेदार होती है, जिससे जड़ों का विकास सुचारु रूप से होता है। अच्छी संरचना जल के अवशोषण और निकास को संतुलित करती है, जिससे जलभराव या सूखे की समस्या कम होती है। कार्बनिक पदार्थ की उपस्थिति मिट्टी की जलधारण क्षमता बढ़ाती है तथा मिट्टी को सघन होने से बचाती है।

(2) रासायनिक घटक : मिट्टी का पी.एच. पोषक तत्वों की उपलब्धता और लवणता इसका रासायनिक स्वरूप निर्धारित करते हैं। पी.एच. 6.5 से 7.5 की सीमा अधिकांश फसलों के लिए उपयुक्त मानी जाती है, क्योंकि इस अवस्था में पोषक तत्व अधिक उपलब्ध रहते हैं। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म तत्वों का संतुलित स्तर पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक है। असंतुलित उर्वरक प्रयोग से पोषक तत्वों की कमी या विषाक्तता उत्पन्न हो सकती है।

(3) जैविक घटक : मिट्टी में उपस्थित जीवाणु, कवक, एक्टिनोमाइसीट्स और केंचुए मृदा स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण जैविक घटक हैं। ये कार्बनिक पदार्थों के अपघटन, नाइट्रोजन स्थिरीकरण और पोषक तत्वों के चक्रण में सहायता करते हैं।

सूक्ष्मजीव विविधता जितनी अधिक होगी, मिट्टी की उर्वरता और सक्रियता उतनी ही बेहतर होगी। इस प्रकार, भौतिक, रासायनिक और जैविक घटकों का संतुलित समन्वय ही स्वस्थ और टिकाऊ मृदा का आधार है।

आधुनिक कृषि में मृदा स्वास्थ्य की प्रासंगिकता: आधुनिक कृषि का प्रमुख उद्देश्य बढ़ती जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करना है। पिछले कुछ दशकों में उन्नत बीजों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा सिंचाई तकनीकों के प्रयोग से उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। किंतु इस तीव्र कृषि विकास के परिणामस्वरूप मृदा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ा है। ऐसे परिदृश्य में मृदा स्वास्थ्य की प्रासंगिकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। मृदा स्वास्थ्य से आशय मिट्टी की उस क्षमता से है जिसके द्वारा वह पौधों को संतुलित पोषण प्रदान करती है, जल को संचित रखती है और पारिस्थितिक तंत्र सेवाओं को बनाए रखती है।

1. खाद्य सुरक्षा में योगदान : आधुनिक कृषि में निरंतर और स्थिर उत्पादन आवश्यक है। यदि मिट्टी का स्वास्थ्य कमजोर होगा, तो फसल उत्पादन भी घटेगा। कार्बनिक पदार्थ से समृद्ध और संतुलित पोषक तत्वों वाली मिट्टी दीर्घकाल तक उच्च उत्पादन बनाए रखने में सक्षम होती है। इस प्रकार मृदा स्वास्थ्य सीधे खाद्य सुरक्षा से जुड़ा हुआ है।

2. जलवायु परिवर्तन : मृदा कार्बनिक कार्बन वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड को अवशोषित कर मिट्टी में संग्रहित करता है। इसे कार्बन संचयन कहा जाता है। स्वस्थ मिट्टी ग्रीनहाउस गैसों के स्तर को कम करने में सहायक होती है और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम कर सकती है।

3. जल संरक्षण और प्रबंधन : स्वस्थ मिट्टी अधिक जल धारण करने में सक्षम होती है। इससे सिंचाई की आवश्यकता कम होती है और जल संसाधनों की बचत होती है। जलधारण क्षमता अधिक होने से सूखे की स्थिति में भी फसल को पर्याप्त नमी मिलती रहती है।

4. पोषक तत्वों का संतुलन : आधुनिक कृषि में असंतुलित उर्वरक प्रयोग से मृदा में पोषक तत्वों की कमी या विषाक्तता उत्पन्न हो सकती है। संतुलित मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन से पोषक तत्वों का चक्रण सुचारु रहता है और पौधों को आवश्यक तत्व उपलब्ध होते हैं।

5. पर्यावरण संरक्षण : रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग मिट्टी, जल और वायु को प्रदूषित करता है। स्वस्थ मिट्टी में जैविक सक्रियता अधिक होने से प्राकृतिक रूप से पोषक तत्वों का पुनर्चक्रण होता है और प्रदूषण कम होता है।

6. आर्थिक स्थिरता : यदि मृदा स्वास्थ्य अच्छा होगा, तो किसानों को कम मात्रा में बाहरी उर्वरकों की आवश्यकता होगी, जिससे लागत कम होगी और आय में वृद्धि होगी।

अतः स्पष्ट है कि आधुनिक कृषि की स्थिरता, खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक विकास के लिए मृदा स्वास्थ्य की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। टिकाऊ कृषि पद्धतियों को अपनाकर और वैज्ञानिक प्रबंधन द्वारा मृदा स्वास्थ्य को बनाए रखना समय की अनिवार्य आवश्यकता है।

बदलते जलवायु परिदृश्य में मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण : मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण और संवर्धन सतत एवं उत्पादक कृषि प्रणाली की आधारशिला है। आधुनिक कृषि में रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों तथा अत्यधिक जुताई के कारण मिट्टी की संरचना, कार्बनिक पदार्थ और जैविक सक्रियता में गिरावट आई है। इसलिए वैज्ञानिक और समन्वित प्रबंधन उपायों को अपनाना अत्यंत आवश्यक है।

1. फसल चक्र : एक ही खेत में विभिन्न प्रकार की फसलों को क्रमवार उगाने से पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है। विशेष रूप से दलहनी फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करती हैं, जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है और रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है।

2. जैविक खाद और कम्पोस्ट का उपयोग : गोबर खाद, वर्मी कम्पोस्ट, हरी खाद तथा फसल अवशेष मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाते हैं। कार्बनिक कार्बन मिट्टी की संरचना को भुरभुरी बनाता है और जलधारण क्षमता में वृद्धि करता है। इससे सूखे की स्थिति में भी फसल को नमी मिलती रहती है।

3. न्यूनतम जुताई : अत्यधिक जुताई से मिट्टी की ऊपरी परत कमजोर हो जाती है और कार्बन का ह्रास होता है। न्यूनतम जुताई से मिट्टी की संरचना सुरक्षित रहती है तथा सूक्ष्मजीव समुदाय सक्रिय बना रहता है।

4. संतुलित उर्वरक प्रबंधन : मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। इससे पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है और पर्यावरणीय प्रदूषण कम होता है। भारत में मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजना किसानों को वैज्ञानिक सलाह प्रदान करती है।

5. जैव उर्वरकों का प्रयोग : राइजोबियम, एजोटोबैक्टर और फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु जैसे जैव उर्वरक पोषक तत्वों के चक्रण में सहायता करते हैं और मिट्टी की जैविक सक्रियता बढ़ाते हैं।

6. मल्चिंग एवं अवशेष प्रबंधन : फसल अवशेषों को जलाने के स्थान पर मिट्टी में मिलाना या सतह पर छोड़ना चाहिए। इससे नमी संरक्षण होता है और कार्बनिक पदार्थ बढ़ता है।

इन सभी उपायों के समन्वित प्रयोग से मृदा स्वास्थ्य में दीर्घकालिक सुधार संभव है। स्वस्थ मिट्टी न केवल उच्च उत्पादन सुनिश्चित करती है, बल्कि जलवायु परिवर्तन शमन और पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देती है।

केस अध्ययन 1: भारत में संरक्षण कृषि और मृदा कार्बन

पंजाब और हरियाणा में धान–गेहूं प्रणाली के तहत संरक्षण कृषि अपनाने से मृदा स्वास्थ्य में सुधार देखा गया। न्यूनतम जुताई, फसल अवशेष प्रबंधन और फसल चक्र अपनाने से मृदा कार्बनिक कार्बन में वृद्धि हुई तथा जलधारण क्षमता बेहतर हुई। अध्ययनों में पाया गया कि संरक्षण कृषि से कार्बन संचयन बढ़ा और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमी आई। इससे जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में सहायता मिली और दीर्घकालिक उत्पादकता में स्थिरता आई।

केस अध्ययन 2: अफ्रीका में जलवायु–स्मार्ट मृदा प्रबंधन

उप–सहारा अफ्रीका के कुछ क्षेत्रों में जलवायु–स्मार्ट कृषि पद्धतियाँ अपनाई गईं, जिनमें जैविक खाद, फसल विविधता और मल्चिंग शामिल थे। इन उपायों से मिट्टी की नमी संरक्षण क्षमता बढ़ी और सूखे के प्रभाव कम हुए। मृदा जैविक

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पदार्थ में वृद्धि से उत्पादन स्थिर रहा, भले ही वर्षा अनिश्चित रही। यह दर्शाता है कि मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन जलवायु परिवर्तन के अनुकूलन का प्रभावी साधन है।

भविष्य की संभावनाएँ : वर्तमान जलवायु परिवर्तन और बढ़ती खाद्य मांग के संदर्भ में मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन का महत्व और बढ़ेगा। भविष्य में कार्बन संचयन, जल संरक्षण तथा जैव विविधता संरक्षण आधारित कृषि पद्धतियों को प्राथमिकता दी जाएगी। सटीक पोषण प्रबंधन, डिजिटल मृदा परीक्षण और सतत खेती तकनीकें मृदा गुणवत्ता सुधार में सहायक होंगी। स्वस्थ मिट्टी ही टिकाऊ और जलवायु–सहिष्णु कृषि की आधारशिला बनेगी।

निष्कर्ष : मृदा स्वास्थ्य सतत कृषि विकास, खाद्य सुरक्षा और पर्यावरणीय संतुलन का मूल आधार है। आधुनिक कृषि में बढ़ते रासायनिक उपयोग और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों के बीच मिट्टी की गुणवत्ता को बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। भौतिक, रासायनिक और जैविक घटकों का समन्वित प्रबंधन दीर्घकालिक उत्पादकता सुनिश्चित करता है। कार्बनिक पदार्थों की वृद्धि, संतुलित पोषण और संरक्षण कृषि पद्धतियाँ मृदा स्वास्थ्य सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्वस्थ मिट्टी ही टिकाऊ और जलवायु–सहिष्णु कृषि की मजबूत नींव है।

कृषि उत्पादक संगठन : किसानों की आर्थिक उन्नति का माध्यम

शिवराज कुमावत, पी.एस. शेखावत, शीला खर्कवाल एवं सुभिता कुमावत
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय जोबनेर

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ देश की एक बड़ी आबादी कृषि पर निर्भर है और राष्ट्रीय जीडीपी में इसका योगदान लगभग 18% है। लेकिन आज भी अधिकतर किसान छोटे और सीमांत हैं, जिनके पास सीमित संसाधन होते हैं। इस क्षेत्र को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, जिनमें खेतों का आकार घटना, जलवायु परिवर्तनशीलता, जल संकट और लगातार बनी रहने वाली बाजार संबंधी अक्षमताएं शामिल हैं। किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) कृषि क्षेत्र में परिवर्तनकारी तंत्र के रूप में उभर रहे हैं, विशेषकर भूमि विखंडन और लघु एवं सीमांत किसानों की व्यापकता के बीच।

किसान उत्पादक संगठन क्या है? किसान उत्पादक संगठन छोटे और सीमांत किसानों का एक कानूनी रूप से गठित निकाय है जो उत्पादन, कटाई और विपणन में दक्षता में सुधार के उद्देश्यों के लिए एक समूह बनाने के लिए एक साथ आते हैं। इस अवधारणा में एफपीओ सहकारी मॉडल पर आधारित है लेकिन ग्रामीण और छोटे पैमाने के किसानों के अनुकूल है। एक एफपीओ का मूल उद्देश्य बेहतर मूल्य प्राप्ति, बढ़ी हुई सौदेबाजी शक्ति, पेशेवर प्रबंधन तक पहुंच और लेन–देन की लागत में कमी के माध्यम से कृषि आय में सुधार करना है। यह एकीकृत मॉडल कृषि में अजीबोगरीब जोखिमों को कम करने में योगदान देता है, इस प्रकार अधिक टिकाऊ आजीविका अवसर प्रदान करता है।

एफपीओ के गठन की पृष्ठभूमि: भारत में एफपीओ का गठन सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से किसानों के सशक्तिकरण के संबंध में कुछ क्रमिक नीतिगत पहलों के परिणामस्वरूप हुआ है। इस अवधारणा के आंदोलन को तब गति मिली जब कंपनी अधिनियम, 1956 को शामिल किया गया, जिससे किसानों को खुद को उत्पादक कंपनियों के रूप में पंजीकृत करने की अनुमति मिली। 2002 में, भारत सरकार ने एफपीओ के निर्माण और विस्तार को बढ़ावा देने के उद्देश्य से लघु कृषक कृषि व्यवसाय संघश की शुरुआत की। इसके बाद, वर्ष 2013 में, कंपनी (संशोधन) अधिनियम की शुरूआत ने एक नियामक ढांचे के माध्यम से एफपीओ के लिए संरचित विकास को और सुविधाजनक बनाया। उस प्रक्रिया में, इसका उद्देश्य भूमि जोतों के विखंडन को संबोधित करना, बिचौलियों के शोषण को कम करना और कृषि मूल्य श्रृंखलाओं में दक्षता बढ़ाना भी था। कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय ने 2023 तक भारत में 10,000 से अधिक पंजीकृत एफपीओ की सूचना दी। सटीक रूप से, यह 10,000 एफपीओ के गठन और संवर्धन योजना के अनुसार 2027 तक 10,000 नए एफपीओ के गठन की गणना करता है।

उद्देश्य एवं आवश्यकता: भारत के कृषि क्षेत्र में लघु और सीमांत किसानों का प्रभुत्व है (87 प्रतिशत के पास 2 हेक्टेयर से कम भूमि है), जो ऋतुनिष्ठ और बाजार जोखिमों का सामना करते हैं तथा उचित मूल्य प्राप्त करने के लिये संघर्ष करते हैं। एफपीओ लघु किसानों को थोक इनपुट खरीद की सुविधा, बेहतर सौदाकारी की शक्ति तथा अल्प लागत पर बेहतर मूल्य प्राप्ति सुनिश्चित करके सहायता करते हैं। ये आय को दोगुना करने और वैश्विक बाजारों में प्रवेश करने के लक्ष्य में सहायता प्रदान करते हुए

संरचना

- ग्राम स्तर पर 15 से 20 कृषकों का समूह (कृषक हितैषी समूह)
- 10 से 12 गांव मिलकर क्लस्टर स्तर पर एफपीओ कंपनी

किसान उत्पादक संगठनों के लाभ: किसान उत्पादक संगठन अपने सदस्यों और सामान्य रूप से कृषि को कई लाभ प्रदान करता है। इनमें से कुछ लाभ इस प्रकार हैं:

- **वित्त और इनपुट तक पहुंच:** एफपीओ समूह के रूप में बीज, उर्वरक और अन्य इनपुट के लिए बेहतर कीमतों के लिए सौदेबाजी भी कर सकते हैं जो व्यक्तिगत किसानों के लिए वहनीय या दुर्गम हो सकते हैं। संगठन ऋण, ऋण और सरकारी सब्सिडी हासिल करने में बेहतर स्थिति में है।
- **बेहतर सौदेबाजी की शक्ति:** सदस्य एफपीओ के माध्यम से सामूहिक रूप से अपनी उपज बेचकर अधिक मूल्य प्राप्त करने की स्थिति में हैं। उन्हें किसी बिचौलिए से संपर्क करने की आवश्यकता नहीं है और वे अपनी उपज सीधे खरीदारों को बेचकर उचित पारिश्रमिक प्राप्त कर सकते हैं।
- **तकनीकी सहायता और प्रशिक्षण:** अधिकांश एफपीओ अब अपने सदस्यों को बेहतर खेती के तरीकों और खेती में पैदावार में सुधार के लिए कृषि प्रशिक्षण और तकनीकी सहायता प्रदान करते हैं। वे सदस्यों को आपस में ज्ञान साझा करने में भी मदद करते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- **बेहतर बाजार पहुंचः** चूंकि विपणन प्रयास संयुक्त है, इसलिए एफपीओ को व्यापक और अधिक दूर के बाजारों तक बेहतर पहुंच मिलती है। मात्रा और गुणवत्ता के संदर्भ में बाजार की मांग को पूरा करने की बेहतर स्थिति में होते हैं, इसलिए बेहतर कीमतें प्राप्त होती हैं।
- **जोखिम प्रबंधनः** उत्पादन और विपणन में सामूहिक प्रयास कृषि से जुड़े विभिन्न जोखिमों, जैसे मूल्य अस्थिरता और जलवायु चुनौतियों को दूर करने में मदद करते हैं।
- **बुनियादी ढांचे का विकासः** एफपीओ संयुक्त रूप से भंडारण सुविधाओं, प्रसंस्करण इकाइयों और परिवहन साधनों जैसे बुनियादी ढांचे में निवेश और प्रबंधन कर सकते हैं, जो एक किसान की पहुंच से बाहर हो सकते हैं।

एफपीओ से जुड़ी चुनौतियाँ: यद्यपि एफपीओ के बहुत सारे लाभ हैं, लेकिन इनमें कई चुनौतियां भी हैं:

- **पूंजी तक पहुँचः** व्यक्तिगत किसानों की तुलना में बेहतर स्थिति के बावजूद, एफपीओ को पर्याप्त और समय पर ऋण प्राप्त करने में समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अधिकांश वित्तीय संस्थान जोखिम के कारण एफपीओ को ऋण देने में बहुत सावधान रहते हैं।
- **शासन संबंधी मुद्देः** प्रभावी प्रबंधन और शासन एफपीओ की प्रगति के लिए महत्वपूर्ण घटक तत्व हैं। सदस्यों में नेतृत्व और प्रबंधन कौशल की कमी अप्रभावी निर्णय लेने और परिचालन अक्षमताओं की ओर ले जाती है।
- **बाजार संपर्कः** उचित और व्यवहार्य बाजार संपर्क शायद ही विकसित हो पाते हैं। एफपीओ में आमतौर पर व्यापक बाजारों में प्रतिस्पर्धात्मक रूप से काम करने के लिए बाजार की जानकारी और नेटवर्क की कमी होती है।
- **प्रशिक्षण और क्षमता निर्माणः** सदस्यों में व्यावसायिक प्रबंधन कौशल और तकनीकी विशेषज्ञता की अक्षमता या कमी एफपीओ के भीतर विकास और स्थिरता में बाधा डालती है।
- **नीतिगत एवं विनियामक चुनौतियाँः** विनियामक वातावरण जटिल है, जिसमें अनुपालन आवश्यकताएं और नौकरशाही प्रक्रियाएं शामिल हैं, जिन्हें संभालना कठिन है।
- **बुनियादी ढांचे की बाधाएंः** भंडारण, परिवहन और प्रसंस्करण पर अपर्याप्त बुनियादी ढांचे के कारण कृषि आय में सुधार के लिए एफपीओ की गुंजाइश कम हो जाती है।

एफपीओ को बढ़ावा देने के लिए सरकारी पहल: भारत सरकार ने कृषि क्षेत्र में बदलाव लाने में एफपीओ की भूमिका को ध्यान में रखते हुए एफपीओ के गठन और मजबूती को बढ़ावा देने के लिए कई पहलों का प्रस्ताव दिया है:

- **एसएफएसी (लघु कृषक कृषि व्यवसाय संघ):** लघु कृषक कृषि व्यवसाय संघ एक संघ है जिसे एफपीओ के गठन और समर्थन के समन्वय का कार्य सौंपा गया है। यह देश भर में एफपीओ के लिए वित्तीय और तकनीकी सहायता प्रदान करता है।
- **नाबार्ड (राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक):** नाबार्ड एफपीओ के लिए विभिन्न योजनाओं के तहत वित्त, क्षमता निर्माण के लिए अनुदान और विपणन सहायता प्रदान करता है।
- **एफपीओ के गठन और संवर्धन की योजनाः** इस योजना की घोषणा 2020 में की गई थी जिसका उद्देश्य 2027 तक 10000 नए एफपीओ बनाना और उन्हें बढ़ावा देना है। इस योजना में एफपीओ गठन, बुनियादी ढांचे के विकास और क्षमता निर्माण के लिए वित्तीय सहायता देने का प्रावधान है।
- **ऋण गारंटी निधिः** सरकार ने एफपीओ की ऋण पात्रता बढ़ाने के लिए ऋण गारंटी निधि प्रदान की है, जिससे वित्तीय संस्थानों से ऋण तक पहुंच आसान हो सके।
- **प्रधानमंत्री किसान सम्पदा योजना (पीएमकेएसवाई):** खाद्य प्रसंस्करण इकाइयां स्थापित करने पर पीएमकेएसवाई के तहत सहायता से एफपीओ को मूल्य संवर्धन में सहायता मिल रही है और इस प्रकार उन्हें अपनी उपज के लिए बेहतर मूल्य मिल रहा है।

निष्कर्ष : कृषि को टिकाऊ और आर्थिक रूप से व्यवहार्य बनाकर किसानों की आय को दोगुना करने में एफपीओ की महत्वपूर्ण भूमिका है। चुनौतियों में प्रबंधन, बेहतर प्रशिक्षण के मामले में किसानों के बीच जागरूकता, और निरंतर वित्त पोषण और तकनीकी सहायता शामिल हैं। इसका प्रभाव आय में वृद्धि और लागत में कमी के माध्यम से किसानों की आजीविका में सुधार बाजारों और सेवाओं तक पहुंच शामिल करना हैं। कृषि क्षेत्र को लचीलापन और स्थिरता प्राप्त करता है।

राज्य बजट 2026–27 में कृषि क्षेत्र : किसान कल्याण और विकास की नई दिशा

मृणाल पाण्डेय, शिवराज कुमावत एवं अनुराधा यादव
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविधालय, जोबनेर

भूमिका: कृषि न केवल हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, बल्कि यह करोड़ों किसानों की आजीविका, खाद्य सुरक्षा और ग्रामीण विकास का आधार भी है। राज्य बजट 2026–27 में **"आठवाँ स्तम्भ : कृषि विकास एवं किसानों का कल्याण"** को विशेष प्राथमिकता देते हुए सरकार ने सिंचाई, ऊर्जा, तकनीक, विपणन, भंडारण, ऋण, बागवानी और पशुपालन जैसे विविध क्षेत्रों में व्यापक प्रावधान किए हैं। यह स्तम्भ किसानों की आय बढ़ाने, लागत घटाने और कृषि को टिकाऊ एवं लाभकारी बनाने की दिशा में एक सशक्त पहल है।

1. सिंचाई एवं ऊर्जाः खेती की मजबूत नींव: कृषि विकास के लिए सिंचाई सबसे महत्वपूर्ण आधार है। बजट में सिंचाई सुविधाओं के विस्तार हेतु **11,300 करोड़** रुपये से अधिक के कार्य प्रस्तावित हैं। साथ ही, आगामी वर्ष में **50,000** सोलर पंप संयंत्रों की स्थापना के लिए **1,500** करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इससे डीजल व बिजली पर निर्भरता घटेगी और किसानों की ऊर्जा लागत में कमी आएगी।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

2. कृषि यंत्रीकरणः श्रम की बचत, उत्पादकता में वृद्धिः कृषि यंत्रों जैसे पावर टिलर, डिस्क प्लाउ, कल्टीवेटर, हैरो एवं रीपर पर **160 करोड़** रुपये की अनुदान योजना लागू की गई है, जिससे लगभग **50,000** किसान लाभान्वित होंगे। इसके अतिरिक्त, **500 कस्टम हायरिंग सेंटरों** की स्थापना (96 करोड़ रुपये) से छोटे व सीमांत किसानों को आधुनिक मशीनें किराये पर उपलब्ध होंगी।

3. बीज, इनपुट एवं तकनीकी सहयोगःमुख्यमंत्री बीज स्वावलंबन योजना के अंतर्गत 90 प्रतिशत अनुदान पर **70,000 क्विंटल** बीज वितरण का प्रावधान है, जिससे **3 लाख** किसान लाभान्वित होंगे। इसके साथ ही, **एग्री स्टैक PMU** की स्थापना द्वारा किसानों को डेटा–आधारित परामर्श, प्रिसिजन इनपुट मैनेजमेंट, फसल योजना और बाजार जानकारी उपलब्ध कराई जाएगी।

4. बागवानी एवं उन्नत कृषि पद्धतियाँ : ग्रीनहाउस, पॉलीहाउस, शेडनेट, लो टनल और प्लास्टिक मल्च जैसी संरचनाओं हेतु **200 करोड़** रुपये का प्रावधान कर **4,000 किसानों** को सहायता दी जाएगी। वर्टिकल सपोर्ट सिस्टम आधारित खेती, **500 सोलर क्रॉप ड्रायर**, तथा संरक्षित खेती को बढ़ावा देकर किसानों को उच्च मूल्य वाली फसलों की ओर प्रेरित किया जा रहा है।

5. ऋण, ब्याज अनुदान एवं वित्तीय सशक्तिकरण: अल्पकालीन फसली ऋण योजना के तहत **35 लाख** से अधिक किसानों को **25,000** करोड़ रुपये के ऋण वितरण का लक्ष्य है, जिसमें **800 करोड़** रुपये ब्याज अनुदान पर व्यय होंगे। दीर्घकालीन सहकारी कृषि व गैर–कृषि क्षेत्रों के लिए **590 करोड़** रुपये के ऋण पर 5 प्रतिशत ब्याज अनुदान का प्रावधान भी किया गया है।

6. भंडारण, प्रसंस्करण एवं विपणन सुधार: राज्य में **250 एवं 500 मीट्रिक टन** क्षमता के गोदामों का निर्माण, नवीन कृषि उपज मंडियों की स्थापना, सब्जी मंडियों का विकास तथा जिला सहकारी उपभोक्ता भंडारों को सुदृढ़ किया जाएगा। **राज गिफ्ट मिशन** के माध्यम से विशिष्ट कृषि एवं प्रसंस्कृत उत्पादों को राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पहचान दिलाकर किसानों को बेहतर मूल्य सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखा गया है।

7. ज्ञान, प्रशिक्षण एवं एक्सपोजर विजिट: नॉलेज एन्हांसमेंट प्रोग्राम के अंतर्गत **3,300 किसानों** को राज्य से बाहर एक्सपोजर विजिट पर भेजा जाएगा। साथ ही, किसानों, प्रोसेसर्स, व्यापारियों और निर्यातकों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर कृषि को उद्यम से जोड़ा जाएगा।

8. कृषि एवं हरित विकास के अंतर्गत सेंटर ऑफ एक्सीलेंस

- अलवर में प्याज एवं सब्जियों के लिए **सेंटर ऑफ एक्सीलेंस** की स्थापना
- श्रीगंगानगर में किन्नू फसल के लिए **सेंटर ऑफ एक्सीलेंस**की स्थापना
- बांसवाड़ा में आम फसल के लिए **सेंटर ऑफ एक्सीलेंस** की स्थापना
- प्राकृतिक एवं टिकाऊ कृषि को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से **श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर** जयपुर में **प्राकृतिक खेती सेंटर ऑफ एक्सीलेंस** की स्थापना

ये केन्द्र कृषि अनुसंधान, प्रशिक्षण एवं तकनीकी नवाचार के माध्यम से राज्य की कृषि नीतियों को जमीनी स्तर पर प्रभावी रूप से लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएँगे।

8. पशुपालन एवं डेयरीः आय का वैकल्पिक स्रोत : पशुपालन एवं डेयरी क्षेत्र में ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त करने हेतु पशु चिकित्सालयों का उन्नयन, दुग्ध संग्रह केंद्रों की स्थापना, डेयरी बूथ आवंटन, दुग्ध प्रसंस्करण संयंत्र और पशुपालकों को मूल्य संवर्धित दुग्ध उत्पादों का प्रशिक्षण दिया जाएगा। इससे किसानों की आय में स्थिरता और वृद्धि सुनिश्चित होगी।

निष्कर्ष: "आठवाँ स्तम्भः कृषि विकास एवं किसानों का कल्याण" राज्य की कृषि नीति को आधुनिक, तकनीक–आधारित और किसान–केंद्रित बनाने की दिशा में एक ठोस कदम है। सिंचाई से लेकर विपणन तक, बीज से लेकर बाजार तक और खेत से लेकर फैक्ट्री तक। यह स्तम्भ कृषि के हर पहलू को समग्र रूप से संबोधित करता है। यदि इन योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया गया, तो निश्चित रूप से राज्य की कृषि न केवल समृद्ध होगी, बल्कि किसान आत्मनिर्भर और सशक्त बनेंगे।

फसल सुधार के माध्यम से पोषण सुरक्षाः बायोफोर्टिफिकेशन की भूमिका

आशीष शीरा, कैलाश चन्द्र, मनोज कुमार मीणा एवं वर्षा कुमारी
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर,

परिचय :वैश्विक खाद्य सुरक्षा ने पारंपरिक रूप से कैलोरी सेवन पर ध्यान केंद्रित किया है; यह सुनिश्चित करना कि आबादी के पास जीवित रहने के लिए पर्याप्त भोजन हो। हालांकि, एक अधिक घातक समस्या बनी हुई हैः "छिपी हुई भूख" या सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी। दुनिया भर में लगभग 2 अरब लोग जस्ता और लोहा जैसे आवश्यक खनिजों की कमी से पीड़ित हैं, जिससे विकास में बाधा कमजोर प्रतिरक्षा और एनीमिया जैसे गंभीर स्वास्थ्य परिणाम होते हैं। भारत में स्थिति विशेष रूप से गंभीर है। राष्ट्रीय स्वास्थ्य डेटा बताता है कि 6–59 महीने की आयु के 67.1 प्रतिशत बच्चे और 57 प्रतिशत महिलाएं एनीमिक हैं। इससे निपटने के लिए, कृषि वैज्ञानिक बायोफोर्टिफिकेशन के माध्यम से मात्रा से गुणवत्ता की ओर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं यह पौधों के प्रजनन, कृषि विज्ञान प्रथाओं या जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से खाद्य फसलों के पोषण घनत्व को बढ़ाने की प्रक्रिया है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

कुपोषण की आर्थिक और मानवीय कीमत:कुपोषण की लागत व्यक्तिगत स्वास्थ्य से कहीं आगे तक फैली हुई है, जो राष्ट्रीय और वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं पर भारी बोझ डालती है:

वैश्विक आर्थिक प्रभाव: अनुमान है कि कुपोषण से वैश्विक अर्थव्यवस्था को सालाना US$ 3.5 ट्रिलियन तक का नुकसान होता है।

भारत पर प्रभाव: ग्लोबल हंगर इंडेक्स में भारत 116 देशों में 101वें स्थान पर है, जो भूख के "गंभीर" स्तर को दर्शाता है। विशेष रूप से विटामिन और खनिज की कमी से भारत की जीडीपी को होने वाला आर्थिक नुकसान प्रति वर्ष US$ 12 बिलियन से अधिक अनुमानित है। यह कमियां विशिष्ट और हानिकारक हैं:

आयरन की कमी: एनीमिया, विकास में रुकावट और बिगड़े हुए संज्ञानात्मक विकास का प्रमुख कारण।

जिंक की कमी: विकास में रुकावट, भूख न लगना और संक्रमण के प्रति संवेदनशीलता बढ़ जाती है, क्योंकि जिंक 300 से अधिक एंजाइमों के लिए एक सह–कारक है।

प्रोटीन और लाइसिन की कमी: इससे खराब बौद्धिक विकास और शारीरिक कामकाज में कमी आती है।

बायोफोर्टिफिकेशन की रणनीतियाँ: बायोफोर्टिफिकेशन औद्योगिक फोर्टिफिकेशन (प्रसंस्करण के दौरान पोषक तत्व जोड़ना) या चिकित्सा पूरकता से अलग है। यह एक प्राकृतिक खाद्य मैट्रिक्स में पोषक तत्व प्रदान करता है, जिससे यह ग्रामीण आबादी के लिए एक लागत प्रभावी और टिकाऊ समाधान बन जाता है जो मुख्य फसलों पर बहुत अधिक निर्भर हैं।

1. आनुवंशिक बायोफोर्टिफिकेशन: इसमें प्राकृतिक रूप से सूक्ष्म पोषक तत्वों से भरपूर फसल किस्मों को विकसित करने के लिए पारंपरिक प्रजनन या जैव प्रौद्योगिकी उपकरणों का उपयोग शामिल है।

प्रजनन:वैज्ञानिक नई किस्मों को प्रजनन करने के लिए उच्च पोषक तत्व भिन्नता वाले जर्मप्लाज्म का उपयोग करते हैं। उदाहरण के लिए, जड़ों से अनाज तक आयरन और जिंक के स्थानांतरण को बढ़ाने के लिए गेहूं की किस्में विकसित की गई हैं।

ट्रांसजेनिक दृष्टिकोण: विशिष्ट ट्रांसपोर्टर जीन, जैसे TaVIT2 को ओवरएक्सप्रेस करने से सफेद आटे के अंशों में आयरन की मात्रा दोगुनी हो सकती है।

2. एग्रोनॉमिक बायोफोर्टिफिकेशन : यह रणनीति पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने के लिए उर्वरकों का उपयोग करती है।

पर्णीय अनुप्रयोग: पत्तियों पर सीधे जिंक या आयरन उर्वरक लगाने से अनाज में इनकी सांद्रता काफी बढ़ सकती है।

नाइट्रोजन प्रबंधन: अनाज में आयरन के वितरण में नाइट्रोजन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अध्ययन बताते हैं कि 150 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर नाइट्रोजन का उपयोग करने से कम आवेदन दरों की तुलना में आयरन की सांद्रता अधिक होती है।

सफलता की कहानी: भारत की बायोफोर्टिफाइड किस्में : भारत ने 16 फसलों में 87 बायोफोर्टिफाइड किस्में जारी की हैं, जिनमें शामिल हैं:

गेहूँ **:** WB 02 और HPBW *01* जैसी किस्में उच्च आयरन (40.0 ppm) और जिंक (40.6–42.0 ppm) सामग्री प्रदान करती हैं।

चावल **:** CR Dhan 310 में 10.3 प्रतिशत प्रोटीन होता है, जो मानक 7.8 प्रतिशत से काफी अधिक है।

मक्का **:** Pusa Vivek QPM 9 जैसे संकर प्रोविटामिन–ए, लाइसिन और ट्रिप्टोफैन से भरपूर हैं।

सरसों **:** PM 30 जैसी किस्मों में इरूसिक एसिड कम (<2 प्रतिशत) होता है, जो उन्हें हृदय रोगियों के लिए स्वस्थ बनाता है।

निष्कर्ष : जबकि हरित क्रांति ने लाखों लोगों को भुखमरी से बचाया, चल रही "पोषण क्रांति" उन्हें छिपी हुई भूख की मूक पीड़ा से बचाने का वादा करती है। बायोफोर्टिफिकेशन एक अनूठा लाभ प्रदान करता है: यह उन दैनिक मुख्य भोजन के माध्यम से आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है जो परिवार पहले से ही उपभोग करते हैं, जिसके लिए खान–पान की आदतों में किसी बदलाव की आवश्यकता नहीं होती है। हमारे खेतों में WB 02 और CR Dhan 310 जैसी पोषक तत्वों से भरपूर किस्मों को सामान्य बनाकर, हम केवल कृषि आंकड़ों में सुधार नहीं कर रहे हैं हम मानव क्षमता में निवेश कर रहे हैं। अंततः, हमारी फसलों को स्वास्थ्य के प्राकृतिक स्रोतों में बदलना आने वाली पीढ़ियों के लिए "शून्य भूख" के वादे को हकीकत में बदलने का सबसे टिकाऊ तरीका है।

प्रो–ट्रे : आधुनिक नर्सरी प्रबंधन के अचूक मंत्र

जुही आसवानी', उदल सिंह एवं महेन्द्र मीणा
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर

सब्जी विज्ञान के क्षेत्र में यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि **"पौध ही संपूर्ण फसल चक्र की आधारशिला है।"** जिस प्रकार एक सुदृढ़ भवन के स्थायित्व के लिए उसकी नींव का सशक्त होना अनिवार्य है, ठीक उसी प्रकार किसी भी फसल की उत्पादकता, गुणवत्ता और कीट–प्रतिरोधक क्षमता प्रत्यक्ष रूप से उसकी प्रारंभिक, नर्सरी अवस्था के प्रबंधन पर निर्भर करती है। यदि बीज के अंकुरण से लेकर उसके प्रारंभिक विकास तक की अवस्था वैज्ञानिक मानकों के अनुरूप है, तो पौधे की आनुवंशिक क्षमता का पूर्ण उपयोग संभव हो पाता है।वैश्विक कृषि परिदृश्य में आए क्रांतिकारी परिवर्तनों के

फलस्वरूप सब्जी उत्पादन की प्रणालियों में भी स्पष्ट एवं महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिल रहे हैं। पारंपरिक रूप से कृषक खुली भूमि पर क्यारियां बनाकर नर्सरी तैयार करते रहे हैं, किंतु इस पद्धति में मृदा जनित रोग, अनियंत्रित जलवायु परिस्थितियां और कीटों का प्रकोप एक गंभीर चुनौती बना रहता है। इसके विपरीत, आधुनिक कृषि तकनीकी ने **'हाई–टेक नर्सरी' या 'संरक्षित नर्सरी'** की अवधारणा को जन्म दिया है, जहाँ प्रो–ट्रे और निर्जमीकृत माध्यमों का उपयोग किया जाता है।

प्रो–ट्रे नर्सरी क्या है? प्रो–ट्रे नर्सरी एक आधुनिक एवं वैज्ञानिक पौध उत्पादन पद्धति है, जिसमें बीजों का अंकुरण एवं पौध की प्रारंभिक वृद्धि विशेष रूप से निर्मित प्लास्टिक ट्रे में की जाती है। इन ट्रे में समान आकार के अनेक छोटे–छोटे कक्ष बने होते हैं, जिनमें प्रत्येक कक्ष में एक–एक बीज बोया जाता है। इन कोषिकाओं में सामान्य मिट्टी के स्थान पर कोकोपीट, वर्मीकुलाइट, परलाइट अथवा इनके मिश्रण जैसे हल्के माध्यम का उपयोग किया जाता है, जिससे पौधों को पर्याप्त वायु संचार, जल धारण क्षमता एवं संतुलित पोषण प्राप्त होता है। इस पद्धति में पौधों की जड़ों का विकास स्वतंत्र एवं व्यवस्थित रूप से होता है, क्योंकि प्रत्येक पौधा अपनी अलग–अलग कक्ष में विकसित होती है। परिणामस्वरूप जड़ों का आपसी उलझाव नहीं होता तथा रोपाई के समय पौध को बिना क्षति पहुँचाए सरलता से स्थानांतरित किया जा सकता है।

प्रो–ट्रे नर्सरी का महत्वःसमान एवं उच्च अंकुरण प्रतिशत : प्रो–ट्रे नर्सरी पद्धति का एक प्रमुख लाभ यह है कि इसमें बीजों का अंकुरण सामान्य विधियों की तुलना में अधिक तथा लगभग एक–समान होता है। पौधों के आकार, ऊँचाई एवं जड़ विकास में एकरूपता होने से खेत में रोपाई के पश्चात फसल का विकास भी संतुलित एवं समन्वित रहता है।

रोग एवं कीट प्रकोप में कमी : प्रो–ट्रे नर्सरी पद्धति में पौध तैयार करते समय स्वच्छ एवं कीटाणु–रहित माध्यम का उपयोग किया जाता है, जिसके कारण रोग एवं कीटों के प्रकोप की संभावना सामान्य नर्सरी की तुलना में काफी कम हो जाती है। प्रत्येक पौध अलग– अलग कक्ष में विकसित होती है, इसलिए यदि किसी एक पौधे में संक्रमण हो भी जाए तो उसके अन्य पौधों तक फैलने की आशंका न्यून रहती है। साथ ही इस विधि में जलभराव की समस्या कम होती है, जिससे फफूंद जनित रोग जैसे डैम्पिंग ऑफ आदि की संभावना भी घट जाती है।

संसाधनों का दक्ष प्रबंधन : प्रो–ट्रे नर्सरी पद्धति संसाधनों के संतुलित एवं सुव्यवस्थित उपयोग का एक श्रेष्ठ माध्यम मानी जाती है। इस विधि में सीमित स्थान में अधिक संख्या में पौध तैयार की जा सकती है, जिससे भूमि का अपव्यय नहीं होता। जल प्रबंधन की दृष्टि से भी यह प्रणाली अत्यंत उपयोगी सिद्ध होती है, क्योंकि ट्रे में दिया गया पानी आवश्यकतानुसार ही पौध तक पहुँचता है और अनावश्यक जलभराव की स्थिति उत्पन्न नहीं होती। इसी प्रकार उर्वरकों एवं पोषक तत्वों का प्रयोग भी सीमित एवं सटीक मात्रा में किया जाता है, जिससे लागत में कमी आती है और पौध को संतुलित पोषण प्राप्त होता है। इस प्रकार प्रो–ट्रे नर्सरी आधुनिक कृषि में उन्नत तकनीक, उच्च गुणवत्ता एवं आर्थिक लाभ का सशक्त समन्वय प्रस्तुत करती है ।

प्रो–ट्रे का चयन : प्रो–ट्रे नर्सरी तकनीक की सफलता में सही ट्रे का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सामान्यतः कृषक केवल बीज की गुणवत्ता एवं माध्यम की तैयारी पर ध्यान देते हैं, परंतु यदि ट्रे का आकार एवं कक्ष संख्या फसल के अनुरूप न हो, तो पौध की वृद्धि प्रभावित हो सकती है। प्रत्येक सब्जी फसल के बीज का आकार, जड़ विस्तार की क्षमता, वृद्धि की गति तथा नर्सरी अवधि भिन्न–भिन्न होती है, अतः सभी फसलों के लिए एक ही प्रकार की प्रो–ट्रे उपयुक्त नहीं मानी जाती। उचित ट्रे चयन पौध की समान वृद्धि, सुदृढ़ जड़ विकास तथा उच्च जीवित रहने की दर सुनिश्चित करता है।

सामान्यतः बाजार में 50, 72, 98, 104, 128, 162 तथा 200 कक्षों वाली विभिन्न आकार की प्रो–ट्रे उपलब्ध होती हैं। कम कक्ष वाली ट्रे के प्रत्येक कक्ष का आकार बड़ा होता है, जबकि अधिक कक्ष वाली ट्रे में प्रत्येक कक्ष अपेक्षाकृत छोटा होता है। बड़े बीज एवं तीव्र जड़ विस्तार वाली फसलें जैसे कद्दूवर्गीय सब्जियाँ (खीरा, लौकी, तोरई तथा कद्दू आदि) के लिए 50 अथवा 72 कक्ष वाली ट्रे अधिक उपयुक्त रहती हैं, क्योंकि इन फसलों की जड़ों को प्रारंभिक अवस्था में अधिक स्थान की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत छोटे बीज वाली फसलें जैसे टमाटर, मिर्च, पत्तागोभी तथा फूलगोभी आदि के लिए 98, 104 या 128 कक्ष वाली ट्रे उपयुक्त मानी जाती हैं, जहाँ सीमित स्थान में अधिक पौध तैयार की जा सकती है।

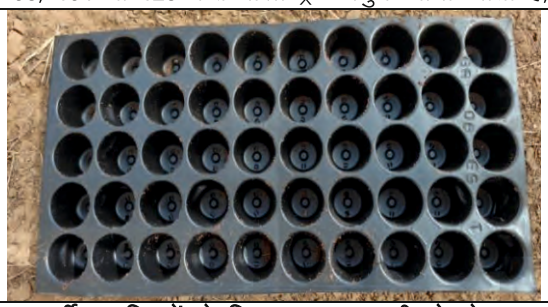	
कद्दू वर्गीय सब्जियों के लिए 50 कक्ष वाली प्रो–ट्रे	**छोटे बीज वाली सब्जियों के लिए 98 कक्ष वाली प्रो–ट्रे**

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

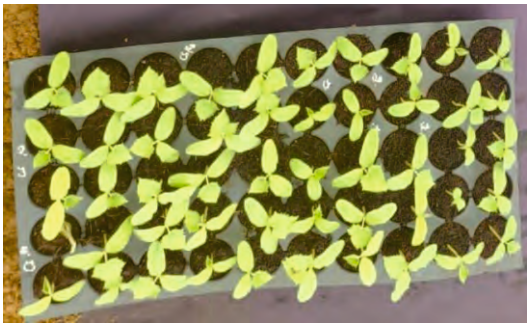	
खीरे की पौध	टमाटर की पौध

ट्रे चयन करते समय केवल कक्ष संख्या ही नहीं, बल्कि कक्ष की गहराई तथा निकास छिद्र पर भी ध्यान देना आवश्यक है। पर्याप्त गहराई वाली ट्रे में जड़ों का विकास नीचे की ओर संतुलित रूप से होता है, जिससे पौध मजबूत बनती है। वहीं उचित निकास छिद्र जलभराव को रोकते हैं, जो डैम्पिंग–ऑफ जैसे रोगों से बचाव में सहायक होते हैं। प्रो–ट्रे नर्सरी को शेडनेट हाउस अथवा पॉलीहाउस के अंदर स्थापित करना अधिक लाभकारी माना जाता है। इन संरचनाओं के माध्यम से तापमान, आर्द्रता एवं प्रकाश की तीव्रता को नियंत्रित किया जा सकता है। तेज धूप, अत्यधिक वर्षा, ठंडी हवाएँ अथवा पाला जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों से पौध की सुरक्षा सुनिश्चित होती है, जिससे अंकुरण बेहतर होता है और पौधें स्वस्थ विकसित होती हैं। पौधों की प्रारंभिक अवस्था में अत्यधिक तेज धूप हानिकारक सिद्ध हो सकती है, जबकि पूर्ण छाया में भी उनकी वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है। अतः ऐसा स्थान उपयुक्त होता है जहाँ लगभग 50 प्रतिशत छाया उपलब्ध हो। संतुलित प्रकाश से पौधों की पत्तियाँ कोमल, हरी एवं स्वस्थ रहती हैं तथा उनका विकास समान रूप से होता है।

पौध विकास हेतु मिश्रण की तैयारी : प्रो–ट्रे नर्सरी में स्वस्थ एवं समान पौध तैयार करने के लिए उपयुक्त पौध विकास मिश्रण का चयन अत्यंत आवश्यक होता है। सामान्य खेत की मिट्टी के स्थान पर हल्की, भुरभुरी एवं स्वच्छ वर्धन सामग्री का उपयोग किया जाता है, जिससे बीज अंकुरण सुगम होता है तथा जड़ों का विकास संतुलित रूप से हो पाता है। प्रायः कोकोपीट, वर्मीकुलाइट एवं परलाइट का मिश्रण सर्वोत्तम माना जाता है। इन तीनों का संतुलित संयोजन पौध को नमी, वायु संचार एवं पोषक तत्व प्रदान करता है।

सामान्य अनुशंसित अनुपात– कोकोपीट : वर्मीकुलाइट : परलाइट = 3 : 1 : 1 अर्थात यदि 5 भाग मिश्रण तैयार करना हो तो 3 भाग कोकोपीट, 1 भाग वर्मीकुलाइट तथा 1 भाग परलाइट मिलाया जाता है।

कोकोपीट का महत्व– कोकोपीट नारियल के रेशों से तैयार किया गया एक प्राकृतिक एवं हल्का माध्यम है, जो प्रो–ट्रे नर्सरी में सर्वाधिक उपयोग में लाया जाता है। इसकी जल धारण क्षमता अत्यधिक होती है, जिससे बीजों को अंकुरण के समय निरंतर नमी उपलब्ध रहती है। साथ ही यह भुरभुरा एवं छिद्रयुक्त होने के कारण जड़ों को पर्याप्त वायु संचार भी प्रदान करता है। बीज अंकुरण की प्रक्रिया अत्यंत संवेदनशील होती है, अतः माध्यम का हल्का एवं भुरभुरा होना आवश्यक है, ताकि अंकुर को ऊपर आने में कोई बाधा न हो। भारी या सख्त माध्यम अंकुरण को धीमा कर सकता है और जड़ों के विकास को भी प्रभावित करता है। कोकोपीट का एक अन्य प्रमुख लाभ यह है कि यह सामान्यतः रोगजनकों से मुक्त होता है, जिससे पौधों में प्रारंभिक रोगों की संभावना कम हो जाती है।

वर्मीकुलाइट एवं परलाइट का उपयोग– वर्मीकुलाइट एवं परलाइट दोनों ही हल्के खनिज पदार्थ हैं, जिन्हें कोकोपीट के साथ मिलाकर माध्यम की गुणवत्ता और बेहतर की जाती है। वर्मीकुलाइट पौध को सूक्ष्म पोषक तत्व उपलब्ध कराने में भी उपयोगी सिद्ध होता है। दूसरी ओर परलाइट माध्यम को अधिक छिद्रयुक्त बनाता है, जिससे अतिरिक्त जल का निकास सरलता से हो जाता है और जड़ों तक ऑक्सीजन की पर्याप्त आपूर्ति बनी रहती है। इन दोनों के संतुलित मिश्रण से माध्यम में न तो अत्यधिक नमी रहती है और न ही अत्यधिक सूखापन उत्पन्न होता है।

सिंचाई एवं पोषण प्रबंधन : प्रो–ट्रे नर्सरी में सिंचाई सदैव हल्की फुहार के रूप में करनी चाहिए। तीव्र जलधारा से बीज अपनी जगह से हट सकते हैं तथा कोमल अंकुर क्षतिग्रस्त हो सकते हैं। सामान्य परिस्थितियों में दिन में एक बार हल्की सिंचाई पर्याप्त रहती है, किंतु यदि वातावरण में तापमान अधिक हो या गर्मी अधिक पड़ रही हो, तो आवश्यकता अनुसार दिन में दो बार हल्की सिंचाई करना उचित रहता है। उद्देश्य यह होना चाहिए कि पौध विकास मिश्रण में नमी बनी रहे, परंतु जलभराव न हो। कोकोपीट को कभी भी पूर्ण रूप से सूखने नहीं देना चाहिए, क्योंकि अत्यधिक सूखापन जड़ों के लिए हानिकारक सिद्ध हो सकता है और पौध की कोमल जड़ें क्षतिग्रस्त अथवा नष्ट भी हो सकती हैं। इसलिए मिश्रण की ऊपरी सतह हल्की नम बनी रहना ही आदर्श स्थिति मानी जाती है। मिस्टिंग या स्प्रे बोतल का प्रयोग सिंचाई की सर्वाधिक उपयुक्त विधि मानी जाती है। इससे जल की महीन बूंदें पौधों पर समान रूप से गिरती हैं और माध्यम में नमी संतुलित रहती है। विशेषकर अंकुरण के प्रथम 7–10 दिनों में स्प्रे सिंचाई पौधों को सुरक्षित एवं स्थिर रखने में सहायक होती है।

प्रो–ट्रे नर्सरी में प्रारंभिक 10–12 दिनों के पश्चात हल्के घुलनशील उर्वरकों का प्रयोग किया जा सकता है। सामान्यतः नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटाश युक्त संतुलित उर्वरक की बहुत ही कम मात्रा जल में घोलकर स्प्रे के माध्यम से देना उपयुक्त रहता है। साथ ही जिंक, आयरन, बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व पौध की हरितिमा, जड़ विकास एवं रोग

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

प्रतिरोधक क्षमता को सुदृढ़ करने में सहायक होते हैं। उर्वरकों का प्रयोग सदैव अनुशंसित मात्रा में ही करना चाहिए, क्योंकि अधिक मात्रा पौध को हानि पहुँचा सकती है।

हार्डनिंग : प्रो–ट्रे नर्सरी में तैयार पौध को सीधे खेत में रोप देना उचित नहीं माना जाता, क्योंकि नर्सरी का वातावरण अपेक्षाकृत नियंत्रित एवं अनुकूल होता है, जबकि खेत की परिस्थितियाँ अधिक कठोर एवं परिवर्तनशील होती हैं। ऐसी स्थिति में पौध को रोपाई से पूर्व बाहरी वातावरण के अनुकूल बनाने की प्रक्रिया को हार्डनिंग कहा जाता है। यह पौध को मजबूत, सहनशील एवं जीवित रहने योग्य बनाने की एक आवश्यक वैज्ञानिक अवस्था है।

विभिन्न फसलों में रोपाई की अवधि– फसल के अनुसार पौध तैयार होने एवं हार्डनिंग की अवधि में अंतर पाया जाता है।

- टमाटर एवं मिर्च की पौध सामान्यतः 25–30 दिनों में रोपाई योग्य हो जाती है।
- बैंगन की पौध को अपेक्षाकृत अधिक समय लगता है और यह प्रायः 30–35 दिनों में रोपण योग्य होती है।
- कद्दूवर्गीय फसलें (खीरा, लौकी, तोरई आदि) शीघ्र वृद्धि वाली होती हैं, अतः इनकी पौध प्रायः 20–25 दिनों में ही रोपाई के लिए तैयार हो जाती है।

इस प्रकार हार्डनिंग की शुरुआत फसल की परिपक्वता अवधि को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।

हार्डनिंग की प्रमुख विधियाँ

सिंचाई का क्रमिक नियमन– हार्डनिंग प्रक्रिया के दौरान सिंचाई प्रबंधन अत्यंत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। इस अवस्था में पौध को पूर्ण रूप से पानी देना अचानक बंद नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से पौध पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। जल की अचानक कमी से पौध में तनाव उत्पन्न हो जाता है, जिससे पत्तियाँ मुरझा सकती हैं, जड़ों की क्रियाशीलता प्रभावित हो सकती है तथा अत्यधिक स्थिति में पौध नष्ट भी हो सकती है।

अतः सिंचाई को एकदम बंद करने के स्थान पर उसकी मात्रा एवं आवृत्ति को धीरे–धीरे नियंत्रित किया जाना चाहिए। प्रारंभ में पानी देने के अंतराल को थोड़ा बढ़ाया जाता है और आवश्यकता अनुसार हल्की सिंचाई की जाती है, जिससे पौध को कम नमी की स्थिति के प्रति सहनशील बनने का अवसर मिलता है। इस क्रमिक प्रक्रिया से पौध की जड़ें अधिक सुदृढ़ होती हैं, तना मजबूत बनता है तथा खेत में रोपाई के पश्चात पौध को लगने वाला झटका न्यूनतम हो जाता है।

सूर्य प्रकाश के प्रति क्रमिक अनुकूलन – नर्सरी में तैयार पौध सामान्यतः छायादार एवं नियंत्रित वातावरण में विकसित होती है, जहाँ उस पर तीव्र धूप का सीधा प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसी स्थिति में यदि पौध को अचानक तेज धूप में रख दिया जाए तो उसकी कोमल पत्तियाँ झुलस सकती हैं, पौध मुरझा सकती है तथा वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। अतः हार्डनिंग प्रक्रिया के दौरान पौध को प्रत्यक्ष सूर्य प्रकाश में धीरे–धीरे एवं सीमित अवधि के लिए रखा जाता है। प्रारंभ में प्रतिदिन कुछ मिनटों के लिए धूप में रखा जाता है और फिर समयावधि को क्रमशः बढ़ाया जाता है। इस क्रमिक अनुकूलन से पत्तियाँ सुदृढ़ होती हैं, पौध की सहनशीलता बढ़ती है तथा जल हास को सहन करने की क्षमता विकसित होती है।

तापमान एवं वातावरणीय परिस्थितियों के प्रति क्रमिक अनुकूलन– हार्डनिंग प्रक्रिया के दौरान पौध को धीरे–धीरे दिन एवं रात्रि के सामान्य तापमान उतार–चढ़ाव के संपर्क में लाया जाता है, जिससे वह बाहरी वातावरण के प्रति अपनी सहनशीलता विकसित कर सके। नर्सरी के नियंत्रित वातावरण में पली–बढ़ी पौध अचानक खुले खेत की गर्मी, ठंडी हवा, तेज धूप अथवा नमी के परिवर्तन को तुरंत सहन नहीं कर पाती, इसलिए उसे क्रमिक रूप से इन परिस्थितियों से परिचित कराना आवश्यक होता है।

प्रो–ट्रे नर्सरी की सफलता के मूल मंत्र –

- एक कक्ष–एक बीज का सिद्धांत अपनाएँ
- स्वच्छ ट्रे का उपयोग करें
- नमी का संतुलन बनाए रखें
- पौधों की नियमित निगरानी करें
- नियंत्रित वातावरण प्रदान करें

प्रो–ट्रे नर्सरी के आर्थिक लाभ : प्रो–ट्रे नर्सरी तकनीक आर्थिक दृष्टि से अत्यंत लाभप्रद पद्धति मानी जाती है, क्योंकि इसमें प्रारंभ से ही संसाधनों का संतुलित एवं नियोजित उपयोग संभव हो पाता है। प्रत्येक कक्ष में एक–एक बीज बोने की व्यवस्था होने से महंगे बीजों की अनावश्यक बर्बादी नहीं होती तथा अंकुरण प्रतिशत भी अधिक रहता है। नियंत्रित वातावरण में पौध तैयार होने के कारण पौधों की जीवित रहने की दर बढ़ जाती है, जिससे पुनः बुवाई या अतिरिक्त पौध खरीदने की आवश्यकता कम हो जाती है। परिणामस्वरूप उत्पादन लागत घटती है और किसान को बेहतर आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त, इस पद्धति में जल, उर्वरक एवं श्रम का उपयोग भी सीमित और योजनाबद्ध ढंग से होता है। पौध को जड़ सहित सरलता से प्रतिरोपित किया जा सकता है, जिससे मजदूरी खर्च कम होता है तथा समय की बचत होती है। स्वस्थ, समान एवं गुणवत्तापूर्ण पौध खेत में एकरूप वृद्धि करती है, जिससे फसल की गुणवत्ता सुधरती है और बाजार में अधिक मूल्य प्राप्त होने की संभावना बढ़ जाती है। इस प्रकार प्रो–ट्रे नर्सरी न केवल लागत को नियंत्रित करती है, बल्कि उत्पादन एवं आय दोनों में संतुलित वृद्धि सुनिश्चित करती है।

निष्कर्ष : प्रो–ट्रे नर्सरी तकनीक केवल पौध उत्पादन की एक आधुनिक विधि नहीं, बल्कि एक समग्र कृषि–दृष्टिकोण है जो गुणवत्ता, बचत और लाभ तीनों को संतुलित रूप से सुनिश्चित करती है। यदि किसान इस पद्धति को वैज्ञानिक तरीके से अपनाता है, तो वह कम जोखिम में अधिक उत्पादन और बेहतर आर्थिक प्रतिफल प्राप्त कर सकता है। **"सशक्त पौध उत्पादन ही सफल खेती का मूल आधार है।"**

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

सब्जी बीज उत्पादन के सिद्धांत और अभ्यास

पुष्पा उज्जैनिया, उत्तम शिवरान, कमलेश कुमार यादव एवं एम आर चौधरी
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय जोबनेर

बीज उत्पादन कार्यक्रम तभी सफल माने जाते हैं जब आनुवंशिक रूप से शुद्ध बीजों की उच्च मात्रा प्राप्त हो। इस कार्य को प्राप्त करने के लिए किसी भी फसल के बीज उत्पादन के दौरान आनुवंशिक और कृषि संबंधी सिद्धांतों का पालन किया जाना चाहिए।

1. आनुवंशिक सिद्धांत : ये सिद्धांत बीज के आनुवंशिक गुणों पर अत्यधिक निर्भर करते हैं जो उत्पादन कार्यक्रम में इसके प्रदर्शन को संशोधित कर सकते हैं। बीज उत्पादन में आनुवंशिक गुणों का मूल्यांकन आनुवंशिक शुद्धता के माध्यम से किया जाता है। इसलिए, सही प्रकार के बीज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित सिद्धांतों पर विचार किया जाना चाहिए।

क. अपनाए गए क्षेत्र में बीज उत्पादन

ख. अनुमोदित बीज स्रोत और बीज गुणन की उत्पादन प्रणाली

बीज स्रोत प्रमाणित और अनुमोदित सार्वजनिक या निजी क्षेत्र की एजेंसियों से होना चाहिए। बीज उत्पादन के लिए हमेशा उच्च श्रेणी के बीजों का उपयोग करें। (उदाहरण के लिए, आधार के लिए प्रजनक और प्रमाणित बीज के लिए आधार)

बीज गुणन की उत्पादन प्रणाली: बीज गुणन की उत्पादन प्रणाली और कुछ नहीं, बल्कि एक विशिष्ट श्रेणी के बीज से प्रमाणित बीज अवस्था तक एक विशेष श्रेणी के बीज का उत्पादन है। एक उचित बीज गुणन मॉडल का चुनाव किसी बीज कार्यक्रम की आगे की सफलता की कुंजी है।

- आनुवंशिक ह्रास की दर
- बीज गुणन अनुपात और
- कुल बीज माँग

इन कारकों के आधार पर, प्रत्येक फसल के लिए अलग–अलग बीज गुणन मॉडल तैयार किए जा सकते हैं और बीज गुणन एजेंसी को यह तय करना चाहिए कि संबंधित एजेंसी को मूल बीज भंडार सौंपे जाने के बाद, किसानों को नई किस्मों के बीज कितनी जल्दी उपलब्ध कराए जा सकते हैं, ताकि वे पुरानी किस्मों का स्थान ले सकें। मूल कारकों को ध्यान में रखते हुए, बीज गुणन मॉडल की श्रृंखला इस प्रकार हो सकती है,

- तीन पीढ़ी मॉडल – प्रजनक बीज – आधार बीज – प्रमाणित बीज
- चार पीढ़ी मॉडल – प्रजनक बीज – आधार बीज (।) आधार बीज (।।) – प्रमाणित बीज
- पाँच पीढ़ी मॉडल –1, प्रजनक बीज–2, आधार बीज–3, आधार बीज–4, प्रमाणित बीज–5

बीज गुणन और गुणवत्ता नियंत्रण की पीढ़ी प्रणाली (संकर)

एजेंसी बीज	वर्ग	गुणवत्ता नियंत्रण प्रणाली
संबंधित प्रजनक या प्रायोजक संस्था प्रजनक स्वयं (कोईनिर्दिष्ट टैग नहीं)	नाभिक बीज	रखरखाव
संबंधित प्रजनक या प्रायोजक संस्था	प्रजनक बीज (सुनहरा पीला टैग)	प्रजनक बीज
राज्य कृषि विभाग	आधारभूत बीज	राज्य बीज, राष्ट्रीय बीज निगम सहकारी और निजी क्षेत्रों के प्रमाणन बीज (श्वेत टैग), आनुवंशिक और भौतिक शुद्धता के न्यूनतम आवश्यक मानकों की जाँच हेतु क्षेत्रीय निरीक्षण और केंद्रीय एवं राज्य बीज परीक्षण। अंकुरण
किसान	प्रमाणित बीज सत्य लेबल वाला बीज	(नीला टैग) (ओपल हरा)

तीन पीढ़ी का मॉडल – (बीएस–एफएस–सीएस) – पर–परागण वाली फसलों के लिए
चार पीढ़ी का मॉडल – (बीएस–एफएस।– एफएस।। –सीएस) – स्व–परागण वाली फसलों के लिए

ग. पिछली फसल की आवश्यकता : स्वेच्छा से उगने वाले पौधों से बचने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है जो आनुवंशिक शुद्धता में बाधा डाल सकते हैं। इसलिए, चयनित भूमि पर अन्य किस्मों की समान फसल नहीं उगाई जानी चाहिए।

घ. प्राकृतिक संकरण की रोकथाम : लैंगिक रूप से प्रवर्धित फसलों में प्राकृतिक संकरण आनुवंशिक संदूषण का एक अन्य सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। यह अवांछनीय पौधों, रोगग्रस्त पौधों और अन्य प्रजातियों के साथ संकरण के कारण होता है। यह घटना बार–बार और पर–परागण वाली फसलों पर अत्यधिक लागू होती है। प्राकृतिक संकरण के कारण बीज क्षेत्रों में आनुवंशिक संदूषण का विस्तार प्रजनन प्रणाली, पृथक्करण दूरी, किस्मों का द्रव्यमान, परागण कारक, कीट गतिविधि, वायु वेग, आर्द्रता और तापमान पर निर्भर करता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

तालिका 1: विभिन्न फसलों के आधार और प्रमाणित बीजों के उत्पादन के लिए आवश्यक पृथक्करण दूरी

क्रम	समूह का नाम (फसलें)	पृथक्करण मीटर में		क्रम	समूह का नाम (फसलें)	पृथक्करण मीटर में	
		फाउंडेशन	प्रमाणित			फाउंडेशन	प्रमाणित
1	गोभी की फसलें			5	कंद वाली सब्जियाँ		
	पत्तागोभी	1600	1000		शकरकंद	10	5
	फूलगोभी	1600	1000		आलू	10	5
	चीनी गोभी	1600	1000	6	प्रकंद वाली सब्जियाँ		
	नोल–खोल	1600	1000		अदरक	10	5
2	फलदार सब्जियाँ				हल्दी	10	5
	बैंगन	200	100	7	फलियां		
	शिमला मिर्च	400	200		ग्वार बीन	50	25
	टमाटर	50	25		लोबिया	50	25
	भिंडी	400	200		फ्रेंच बीन	50	25
3	बल्बनुमा सब्जियाँ				भारतीय बीन	50	25
	लहसुन	10	5		लीमा बीन	50	25
	प्याज	1000	500		मटर	10	5
4	जड़ वाली सब्जियाँ			8	पत्तेदार सब्जियां		
	चुकंदर	1600	800		ऐमारेंथम	400	200
	गजर	1000	800		चुकंदर का पत्ता	1600	1000
	मूली	1600	1000		धनिया	800	400
	शलजम	1600	1000		मेथी	50	25
					सलाद पत्ता	.	.
					पालक	1600	1000
				9	ककड़ी सब्जियां (सभी फसलें)	1000	500

यांत्रिक मिश्रण : बीज भौतिक रूप से शुद्ध होने चाहिए, अर्थात, अन्य फसलों के बीजों या उसी फसल की अन्य किस्मों से मुक्त होने चाहिए। यह अक्सर बुवाई के समय हो सकता है यदि एक ही बीज ड्रिल से एक से अधिक किस्मों की बुवाई की जाती है और कटाई के बाद बीजों के प्रबंधन के दौरान भी। रोकथाम पर ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि इससे आनुवंशिक शुद्धता और जनसंख्या रखरखाव प्रभावित होगा।

ज़ोरदार रफिंग : बीज क्षेत्र से अवांछित, अपनी प्रजाति के अनुरूप न होने वाले और रोगग्रस्त पौधों को हटाने को रफिंग कहा जाता है। यह पूरे जीवन चक्र के दौरान किया जाना चाहिए, लेकिन उस अवस्था से पहले बहुत सावधानी बरतनी चाहिए जब वे बीज फसल को दूषित कर सकते हैं।

गुणवत्ता नियंत्रण प्रणाली को अपनाना : आनुवंशिक गिरावट से बचने के लिए बीज अधिनियम 1966 द्वारा अनुशंसित उत्पादन प्रणाली को अपनाकर ही बीज का उत्पादन किया जाना चाहिए।

2. सस्य विज्ञान संबंधी सिद्धांत : बीज उत्पादन की सफलता बुवाई से लेकर कटाई तक फसल प्रबंधन तकनीकों पर निर्भर करती है। बीज की गुणवत्ता सहित प्रत्येक सस्य विज्ञान संबंधी कारक बीज उत्पादन कार्यक्रम को प्रभावित करते हैं। प्रमुख सस्य विज्ञान संबंधी सिद्धांत है।

- बीज उत्पादन स्थल का चयन, भूमि की तैयारी, बीज उपचार, रोपण का समय, रोपण विधि, बीज दर और बुवाई की गहराइ, पोषण, सिंचाइ, खरपतवार नियंत्रण, पौध संरक्षण कटाई की स्थितियाँ।

श्री अन्न (मिलेट्स) उत्पादन, टिकाऊ कृषि एवं पोषण सुरक्षा की भविष्य फसल

जनक राज, एस. एस. यादव, राम स्वरुप चौधरी एवं संदीप कुमार
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर,

मिलेट्स (श्री अन्न) छोटे बीज वाले घास वर्ग के अनाज हैं, जिन्हें विश्वभर में मानव भोजन तथा पशु चारे के रूप में उगाया जाता है। मिलेट्स कई देशों में स्वाभाविक रूप से उगते हैं या खेती करके उत्पादन किया जाता है। ये मनुष्यों के लिए मुख्य खाद्यान्न तथा पशुओं के लिए चारा दोनों का कार्य करते हैं। इनके दाने प्रजाति एवं किस्म के अनुसार क्रीम, लाल, भूरे और काले रंग के होते हैं। मिलेट्स का उत्पादन प्राचीन काल से विश्व की अनेक सभ्यताओं द्वारा किया जा रहा है। पूर्वी एशिया में इनकी खेती का इतिहास लगभग 10,000 वर्ष पुराना है। एशिया और अफ्रीका के अर्ध–शुष्क क्षेत्रों, विशेषकर भारत और नाइजीरिया में, ये अत्यंत महत्वपूर्ण फसलें हैं। विश्व के लगभग 97 मिलेट्स का उत्पादन विकासशील देशों में होता है। मिलेट्स को इसलिए पसंद किया जाता है क्योंकि ये कम वर्षा और अधिक तापमान की स्थिति में भी अच्छी उपज देते हैं तथा इनकी फसल अवधि कम होती है। मिलेट्स की उत्पत्ति उष्णकटिबंधीय पश्चिमी अफ्रीका मानी जाती है, जहाँ इनके जंगली और उन्नत रूपों की सर्वाधिक विविधता पाई जाती है। आज भी मिलेट्स उन क्षेत्रों में रहने वाले गरीब लोगों के लिए ऊर्जा, प्रोटीन, विटामिन और खनिजों के प्रमुख स्रोत हैं। ये

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

कठोर परिस्थितियों में भी उग सकते हैं, जहाँ अन्य फसलों की उपज कम होती है। मिलेट्स सामान्यतः सीमित जल संसाधन और कम उर्वरकों के उपयोग के साथ छोटे किसानों द्वारा उगाए जाते हैं। इसलिए इन्हें प्रायः निम्न–आय वर्ग के लोग ही अधिक उपयोग करते हैं और इन्हें **"मोटा अनाज"** या **"गरीबों का अन्न"** भी कहा जाता है। कई देशों में मिलेट्स का व्यापार कम होता है, जिससे अधिक उत्पादन होने पर किसानों को उचित बाजार नहीं मिल पाता।

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार के अनुसार वर्ष 2024–25 में भारत में मिलेट्स (श्री अन्न) का कुल उत्पादन लगभग 180.15 लाख टन आंका गया है, जो पिछले वर्ष की तुलना में अधिक है। भारत विश्व में मिलेट्स का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। हाल के वर्षों में देश में मिलेट्स का कुल क्षेत्रफल लगभग 121.9 लाख हेक्टेयर तथा उत्पादन लगभग 153–180 लाख टन के बीच दर्ज किया गया है। राजस्थान भारत का प्रमुख मिलेट्स उत्पादक राज्य है और देश के कुल मिलेट्स उत्पादन में इसका योगदान लगभग 27–30 प्रतिशत है। राज्य में मिलेट्स का क्षेत्रफल लगभग 46 लाख हेक्टेयर तथा उत्पादन लगभग 28 लाख टन के आसपास है। राजस्थान में मुख्यतः बाजरा और ज्वार का उत्पादन अधिक होता है, जिसमें बाजरा का प्रमुख स्थान है।

ज्वारः ज्वार एक महत्वपूर्ण मोटा अनाज है। यह महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक तथा राजस्थान के कुछ भागों में व्यापक रूप से उगाया जाता है। ज्वार शुष्क क्षेत्रों का पारंपरिक मुख्य भोजन है। यह गर्म मौसम की फसल है, जो कीट–रोगों के प्रति अपेक्षाकृत सहनशील होती है। यह पौष्टिक तथा जलवायु–अनुकूल फसल है। विश्व में ज्वार का उत्पादन अनाजों में पाँचवें तथा भारत में चौथे स्थान पर है। ज्वार के दाने अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के करोड़ों लोगों के लिए प्रोटीन, विटामिन, ऊर्जा और खनिजों का महत्वपूर्ण स्रोत हैं और खाद्य सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- ज्वार का मुख्य प्रोटीन प्रोलेमिन है, जो पकाने के बाद कम पाच्य हो जाता है, जो कुछ आहार समूहों के लिए लाभकारी हो सकता है।
- ज्वार का प्रोटीन अन्य अनाजों की तुलना में कम पचने वाला होता है।
- यह प्रोटीन, रेशा, थायमिन, राइबोफ्लेविन, फोलिक अम्ल और कैरोटीन से समृद्ध है।
- इसमें पोटैशियम, फॉस्फोरस और कैल्शियम पर्याप्त मात्रा में तथा आयरन, जिंक और सोडियम भी पाए जाते हैं।
- ज्वार का सेवन हृदय रोग, मोटापा और गठिया के जोखिम को कम करने में सहायक माना जाता है।

बाजरा : बाजरा सबसे अधिक उगाए जाने वाले मिलेट्स में से एक है। इसे प्राचीन काल से अफ्रीका और भारतीय उपमहाद्वीप में उगाया जाता रहा है। भारत में यह मुख्यतः राजस्थान, गुजरात और हरियाणा में उगाया जाता है, क्योंकि यह कम वर्षा और कम उर्वरता वाली रेतीली मिट्टी में भी अच्छी तरह बढ़ता है। इसका पौधा लंबा और सीधा होता है तथा घना बालीनुमा पुष्पक्रम बनाता है।

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- उच्च प्रोटीन (12–16 प्रतिशत) और वसा (4–6 प्रतिशत) युक्त।
- लगभग 11.5 प्रतिशत आहार रेशा, जो पाचन में सहायक है।
- अन्य अनाजों की तुलना में अधिक नियासिन।
- उच्च ऊर्जा प्रदान करता है।
- कैल्शियम और असंतृप्त वसा का अच्छा स्रोत।
- फोलेट, मैग्नीशियम, आयरन, कॉपर, जिंक तथा विटामिन से भरपूर।

रागीः रागी एक छोटा पौधा है, जिसकी बालियाँ उँगली के समान दिखाई देती हैं और लाल रंग के छोटे दाने देती हैं।

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- कैल्शियम का अत्यंत समृद्ध स्रोत (300–350 मि.ग्रा./100 ग्राम)।
- खनिज पदार्थों से भरपूर।
- मध्यम प्रोटीन (6–8 प्रतिशत) तथा कम वसा (1.5–2 प्रतिशत)।
- सल्फर युक्त अमीनो अम्लों वाले प्रोटीन।
- माल्ट बनाने तथा शिशु आहार में उपयोगी।
- उच्च एंटीऑक्सीडेंट क्षमता।

कंगनी–कंगनी एक ग्लूटेन–मुक्त तथा प्राचीन मिलेट है। यह कम जल वाले अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में अच्छी तरह उगता है और लगभग 65–70 दिनों में पक जाता है।

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- कार्बोहाइड्रेट से भरपूर।
- चावल की तुलना में लगभग दुगुना प्रोटीन।
- आयरन और कॉपर का अच्छा स्रोत।
- आसानी से पचने वाला, गैर–एलर्जिक और स्वादिष्ट।

कोदोः कोदो का घरेलू करण भारत में लगभग 3000 वर्ष पूर्व हुआ। इसके दाने कठोर भूसी से ढके होते हैं और रंग हल्के लाल से गहरे भूरे तक होता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- उच्च प्रोटीन (11 प्रतिशत), कम वसा (4.2 प्रतिशत) और बहुत अधिक रेशा (14.3 प्रतिशत)।
- नियासिन, पाइरिडॉक्सिन और फोलिक अम्ल सहित विटामिन–बी से भरपूर।
- कैल्शियम, आयरन, पोटैशियम, मैग्नीशियम और जिंक का अच्छा स्रोत।
- लेसिथिन युक्त, जो तंत्रिका तंत्र के लिए लाभकारी है।

संवाः सांवा उच्च पाच्य प्रोटीन और अधिक रेशा वाला पौष्टिक अनाज है। इसमें कार्बोहाइड्रेट कम और धीरे पचने वाले होते हैं, इसलिए यह मधुमेह और कम शारीरिक श्रम करने वाले लोगों के लिए उपयुक्त है।

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- रेशा और आयरन का समृद्ध स्रोत।
- प्रमुख वसीय अम्ल लिनोलिक अम्ल।
- गामा और बीटा–ग्लूकान जैसे जैव सक्रिय तत्व, जो एंटीऑक्सीडेंट तथा रक्त वसा कम करने में सहायक हैं।

कुटकी : कुटकी भारत में व्यापक रूप से उगाई जाती है और कर्नाटक की पारंपरिक फसल है। इसे प्रायः दालों और तिलहनों के साथ मिश्रित खेती में उगाया जाता है तथा चावल के विकल्प के रूप में उपयोग किया जाता है।

पोषण संबंधी विशेषताएँः

- छोटे दाने, आयरन से भरपूर।
- उच्च एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि।
- लगभग 38प्रतिशत आहार रेशा।

चेना : कम वर्षा वाले क्षेत्रों की अल्प अवधि की फसल है। इसके दानों पर कठोर आवरण होता है, जिससे इसमें रेशा अधिक होता है और ऊर्जा धीरे–धीरे मिलती है।

पोषण संबंधी विशेषताएँ :

- उच्च प्रोटीन (12.5 प्रतिशत), रेशा, खनिज और कैल्शियम।
- कार्बोहाइड्रेट और लाभकारी वसीय अम्लों का अच्छा स्रोत।
- मैंगनीज से भरपूर।
- हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए उपयोगी।
- कोलेस्ट्रॉल और हृदय रोग जोखिम कम करने में सहायक।

निष्कर्षः श्री अन्न (मिलेट्स) पोषण सुरक्षा, जलवायु–सहिष्णु कृषि तथा खाद्य स्थिरता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण अनाज हैं। ये प्रोटीन, आहार रेशा, कैल्शियम, आयरन तथा एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होते हैं, जो कुपोषण और जीवनशैली जनित रोगों की रोकथाम में सहायक हैं। मिलेट्स कम वर्षा, उच्च तापमान तथा अल्प उर्वरता वाली भूमि में भी सफलतापूर्वक उगाए जा सकते हैं, इसलिए ये सूखा–प्रवण क्षेत्रों के किसानों के लिए उपयुक्त फसल हैं। सस्ते और पौष्टिक खाद्यान्न के रूप में ये करोड़ों लोगों की पोषण आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। अतः श्री अन्न का संवर्धन पोषण, टिकाऊ कृषि और भविष्य की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने में अत्यंत आवश्यक है।

मशरूम की उन्नत खेती कैसी करें

संतोष झाझड़िया, मौहम्मद युनुस, तुलिका आचार्य एवं हितेश मुवाल
कृषि विज्ञान केंद्र, झालावाड़

मशरूम एक अपराम्परागत फसल होने की वजह से इसे क्रम मे उगाना प्रचलन में नहीं आ पाया है। किसान केवल इसे एक ही जलवायु में उगाते आ रहें हैं। जबकि हमारे देश की जलवायु भिन्न–भिन्न प्रकार की मशरूमों के लिए उपयुक्त है। इस प्रकार ऋतुओं पर आधारित विभिन्न प्रकार के मशरूम की खेती हम कर सकतें हैं जैसे शीत ऋतु में बटन मशरूम, ग्रीष्म ऋतु में दूध छाता एवँ ढींगरी मशरूम की खेती कर सकते हैं, वर्षा ऋतु में ढींगरी मशरूम की खेती आसानी से की जा सकती है। मशरूम उत्पादन करना एक लाभदायक व्यवसाय है क्योंकि यह एक नकदी फसल है जिससे अल्प अवधि में कम पानी, कम जगह एवँ बिना भूमि के इसे उगाया जा सकता है। राजस्थान प्रदेश में हम तीन प्रकार के मशरूम की खेती कर सकते हैं।

1. बटन मशरूम
2. ढींगरी मशरूम
3. दूध छाता मशरूम

बटन मशरूमः–बटन मशरूम विश्व की सर्वाधिक लोकप्रिय मशरूम है। भारत में मशरूम की खपत वैसे बहुत कम है जबकि जी–6 के देशों में विश्व के कुल उत्पादन का 85 प्रतिशत खपत होती है। बटन मशरूम उगाने के लिए हमें तीन चीजों की आवश्यकता होती है–

1- कम्पोस्ट खाद
2- मशरूम उत्पादन कक्ष
3- मशरूम के बीज

1. कम्पोस्ट खादः– कम्पोस्ट खाद दो विधियों द्वारा तैयार की जाती है।

(अ) लघु विधि द्वारा कम्पोस्ट खाद तैयार करना।
(ब) दीर्घ विधि द्वारा कम्पोस्ट खाद तैयार करना।

(अ) लघु विधि द्वाराः लघु विधि द्वारा तैयार किया गया कम्पोस्ट खाद अच्छा होता है एवँ मशरूम की उपज भी ज्यादा होती है व समय कम लगता है। परन्तु साथ ही इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने में लागत ज्यादा आती है साथ ही कुछ यंत्रों की आवश्यकता भी होती है जैसे – बल्क पाश्च्यूराईजेशन कमरा या टनल एवँ पीक हीटिंग कमरा इत्यादि।

(ब) दीर्घ विधि द्वाराः इस विधि द्वारा कम्पोस्ट तैयार करने में 28 दिन लगते हैं। इसमें प्राप्त कम्पोस्ट की उपज लघु विधि द्वारा तैयार कम्पोस्ट से कम मिलती है। कम्पोस्ट बनाने के लिए काम में ली जाने वाले सामग्रीः–

गेहूँ का भूसा	1000 किलाग्राम
गेहूँ का चौकर	150 किलोग्राम
जिप्सम	35 किलोग्राम
यूरिया	18 किलोग्राम

सबसे पहले साफ फर्श पर भूसे को दो दिन तक पानी डालकर गीला किया जाता है। तीसरे दिन भूसे में गेहूँ का चौकर एवँ यूरिया अच्छे से मिलाते हैं। इस बात को ध्यान में रखें कि उसमें उससे पानी बहकर नहीं निकले एवँ लकड़ी के चौकोर बोर्ड की सहायता से 1x3 x 1.5 मीटर चौकोर ढेर बनाते हैं। चार से पांच घण्टे बाद लकड़ी के बोर्ड को हटाते हैं एवँ ढेर को दो दिन तक ऐसे ही पड़ा रखते हैं। दो दिन बाद ढेर को तोड़कर वापस चौकोर ढेर बना लें एवँ ध्यान रखें कि ढेर का अंदर का हिस्सा बाहर एवँ बाहर का हिस्सा अंदर आ जाये। इस तरह से कुल 7–8 पलटाई करते जायें एवँ तीसरी पलटाई पर जिप्सम की पूरी मात्रा डाल दें। पानी की मात्रा यदि कम हो तो उस पानी छिड़क दें एवँ चौकोर ढेर बना लें। करीब 28 दिन में कम्पोस्ट तैयार हो जाता है इस समय इसका रंग गहरा भूरा होना चाहिए एवँ अमोनिया की गंध नहीं होनी चाहिए। इसमें अच्छी खुशबू आनी चाहिए एवँ हाथ पर नहीं चिपकना चाहिए।

मशरूम की बीजाई करनाः–मशरूम का बीज ताजा पूरी बढ़वार लिये हुए एवँ अन्य फफूंद से मुक्त होना चाहिए। बीज की मात्रा 0.75 प्रतिशत से एक प्रतिशत के बीच में होनी चाहिए। यदि हम 1000 किलोग्राम गेहूँ की भूसे की खाद बनाते हैं तो इससे हमें 1700 किलोग्राम खाद प्राप्त होती है तो इसमें 17 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बीजाई से दूर कम्पोस्ट के ढेर को तोड़कर ठण्डा करना चाहिये। इसके पश्चात इसमें बीज मिलाने चाहिये । बीज एवँ कम्पोस्ट खाद को अच्छी तरह मिलाकर उन्हें या तो पॉलीथिन की थैलियों या शेल्फ में 8 इंच ऊँचे तक भर देना चाहिए। पॉलिथिन की थैलियों को ऊपर से मोड़कर बंद कर देना चाहिए। जबकि शेल्फ पर अखबार ढक देना चाहिए। इस समय कमरे का तापमान 25^0 सेंटीग्रेट से कम एवँ नमी 70 प्रतिशत रखनी चाहिये। करीब 15 दिन बाद इसमें बीज बढ़वार हो जाती है। इसके बाद इस पर कैसिंग की आवश्यकता नहीं होती है। कैसिंग मिट्टी के लिए बगीचे की खाद एवँ दो वर्ष पुरानी गोबर की सड़ी हुई खाद को बराबर भागों में मिलाकर फॉर्मलीन के 2 प्रतिशत के घोल से उपचार करके 48 घण्टे तक बंद रखना चाहिए। 48 घण्टे बाद उसे खोलकर धूप में फैला देते हैं जिससे फॉर्मलीन की गंध उसमें से निकल जाती है। बीजाई किए गए कम्पोस्ट पर इस मिट्टी की 1.50 इंच मोटी सतह लगानी चाहिए एवँ पानी छिड़ककर गीला कर देना चाहिए एवँ इस बात का ध्यान रखना चाहिये की सिर्फ कैसिंग मिट्टी ही गीली होनी चाहिये। इस समय कमरे का तापमान 20^0 सेंटीग्रेट के आसपास रखना चाहिए एवँ कमरे में ताजा हवा का आवागमन होना चाहिये। कैसिंग करने के लगभग 10 से 12 दिन पश्चात इसमें छोटी–छोटी मशरूम निकलना प्रारम्भ हो जाती है। जो कि अगले 5 से 7 दिनों में बढ़कर पूरा आकार ले लेती है।

ढींगरी मशरूम का उत्पादनः–उत्पादन के लिए आवश्यक सामग्री–

1. गेहूँ व चावल का भूसा जो ताजा फसल से लिया हुआ हो।
2. प्लास्टिक का ड्रम ढक्कन वाला 200 लीटर क्षमता।
3. पॉलिथिन शीट 8 से 10 मीटर लम्बी तथा 3 से 4 मीटर चौड़ी पॉलिथिन थैलियाँ।
4. रबर बैण्ड
5. अच्छी उपज हेतु स्पॉन।
6. मशरूम उत्पादन कक्ष 18/20 10–12 मीटर तथा ऊँचाई 4–5 मीटर। उत्पादन कक्ष हवादार व रोशनीयुक्त होना चाहिये।

भूसे का उपचारः भूसे में अवांछित फफूंद के बीजाणु, कीटाणु, जीवाणु से बचाने के लिए इसे गर्म पानी से उपचारित किया जाता है। भूसे से 14–16 घण्टे तक साफ पानी में गलाना चाहिये। इसके बाद उसमें से ठण्डा पानी निकालकर उसमें उबलता हुआ पानी डाल देना चाहिए एवँ दो घण्टे तक रखना चाहिये जिससे भूसे में उपस्थित अवांछनिय जीवाणु, कीटाणु, कीटों के अण्डे एवँ फफूंद के बीजाणु गर्म पानी से नष्ट हो जाते हैं फिर इसे निकालकर साफ ढलान वाली जगह या जालीदार स्टैण्ड पर अधिक पानी निकलने के लिए छोड़ दिया जाता है।

गेहूँ के भूसे में नमी की मात्रा पता करनाः सफल मशरूम उत्पादन के लिए भूसे में नमी की मात्रा का उचित होना अनिवार्य है। यदि नमी अधिक होगी तो भूसा एवँ स्पॉन सड़ जायेगें एवँ कवक जाल ठीक से नहीं फैल पायेगा। अतः नमी की उचित मात्रा का पता करने के लिए भूसे को हाथ में लेकर दबायें यदि उसमें से पानी की बूंदे गिरने लगे तो समझना चाहिए कि पानी की मात्रा ज्यादा है पर यदि भूसे को हाथ से दबाने पर पानी न निकले एवँ केवल हाथ गीला रह जाये तो पानी की मात्रा उचित है।

बीजाई करनाः भूसे में नमी की मात्रा को उचित रखने के पश्चात् बीजाई का कार्य किया जाता है। जिस स्थान पर बीजाई करनी हो वहाँ अच्छी तरह से सफाई कर लेनी चाहिए एवँ उस स्थान पर बीजाई के 24 घण्टे पहले 2 प्रतिशत फॉर्मलीन के घोल से छिड़काव कर देना चाहिये।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

बीज की दरः बीज की दर वातावरण के तापक्रम पर निर्भर करती है। यदि तापमान 25^0 सेंटीग्रेड कम हो तो बीज की दर 3 प्रतिशत और यदि 30^0 डिग्री सेंटीग्रेड या उससे अधिक हो तो बीज की दर 2 प्रतिशत गीले भूसे के वजन के हिसाब से रखनी चाहिये।

भूसे में बीज मिलाने का तरीकाः सबसे पहले भूसे को पॉलिथिन शीट पर फैला देते हैं फिर भूसे के वजन के हिसाब से बीज को उसमें मिला देते हैं। फिर छेद की गयी पॉलिथिन की थैलियों में भर दिया जाता है। बीजाई के बाद पॉलिथिन की थैलियों को ऊपर से बंद करके उत्पादन कक्ष में रखा जाता है। वहाँ का तापमान 25 ± 2^0 सेंटीग्रेट से ज्यादा न बढ़ें इसके लिए कमरे में हवा का आवागमन होना चाहिये। कमरे में नमी की मात्रा 70 प्रतिशत के आसपास होनी चाहिये। बीजाई करने के 15–20 दिन बाद भूसे में कवक जाल की बढ़वार हो जायेगी उस समय हल्के हाथ से पॉलिथिन की थैली को हटा देंगें। इस समय भूसा सफेद बंडल के रूप में बन जाता है। इन बण्डलों को उत्पादन कक्ष में रख दिया जाता है। दूसरे दिन से बण्डलों पर स्प्रेयर पम्प द्वारा हल्का पानी दिन में 2–3 बार आवश्यकतानुसार दिया जाता है। अधिक पानी देने से भूसा एवँ कवक जाल के सड़ने का अंदेशा रहता है जिससे उत्पादन नहीं होता है। बीज बढ़वार पूर्ण होने पर उत्पादन कक्ष का तापमान 20^0–30^0 सेंडीग्रेड तथा नमी 80–90 प्रतिशत बनाये रखनी चाहिए। करीब 6–7 दिनों के पश्चात् इन बण्डलों से छोटे–छोटे सफेद रंग के मशरूम निकलने लगते हैं जो 3–4 दिन में तोड़ने योग्य हो जाते हैं। इन्हें हल्के से मोड़कर तोड़ लेना चाहिये। 7–10 दिनों के अन्तर पर मशरूम की दूसरी फसल लगनी शुरू हो जायेगी। इस तरह से 60 दिनों में 4–5 बार मशरूम निकलती है। यदि हम 100 किलोग्राम सूखा भूसा मशरूम उत्पादन में काम में लेगें तो उससे 60–70 किलोग्राम ताजा मशरूम प्राप्त होगा जिसका बाजार मूल्य 3500 रूपये होगा जबकि खर्चा 1000 रूपये आयेगा। यदि ताजा मशरूम को बेचने की सुविधा ग्रामीण क्षैत्रों में नहीं हो तो इसे धूप में सूखाकर लम्बे समय (2 वर्ष) तक भी रखा जा सकता है। इस मशरूम की बाजार कीमत 50 से 60 रूपये प्रति किलोग्राम होती है।

कंटोला (ककोड़ा) की खेती से अतिरिक्त आय अर्जित करें किसान

बी. एल. आसीवाल, राजीव कुमार नारोलिया, रमेशचन्द आसीवाल एवं ललिता बौचलिया
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

✓ **बिना खाद बीज के पैदा होती है ये जंगली सब्जी, स्वाद में नॉनवेज पर भी भारी, कई बीमारियों का रामबाण इलाज है।**

- बारिश के मौसम में आने वाली एक खास सब्जी के बारे में बताने जा रहे हैं, जो बाजार में मुश्किल से 15 दिन ही टिक पाती है।
- आकार में गोल, ऊपर से कांटेदार और अजीब सी दिखने वाली यह सब्जी **ककोड़ा** के नाम से जानी जाती है, जिसे करौली वासी **ककोरा, सीकर वासी बाड़–करेला** के नाम से पुकारते हैं।
- इससे कम लागत में ज्यादा आमदनी मिल रही है।

ककोड़ा, जिसे कई जगहों पर कंटोला, ककोरडा, ककोरा, मीठा करेला और **स्पाइन गार्ड** तक कहा जाता है, एक बहुवर्षीय बेलदार फसल है। यह ककड़ी–कुल का पौधा है। यह सब्ज़ी स्वाद और औषधीय गुणों के कारण किसानों और उपभोक्ताओं दोनों के बीच लोकप्रिय है। इसका फल छोटे करेले से मिलता–जुलता होता है जिस पर छोटे–छोटे कांटेदार रेशे होते हैं। राजस्थान में इसे **किंकोड़ा** भी कहते हैं। जिसे करौली वासी ककोरा तथा सीकर वासीबाड़–करेला के नाम से पुकारते हैं। ककोड़ा की बेल होती है जो अपने आप जंगलों–झड़ियों में उग आती है और फैल जाती है। इसके 'नर' और 'मादा' बेल अलग–अलग होते हैं। जमीन के नीचे ककोड़ा के जड़ में आधी फुट लम्बी गांठ होती है जिसका उपयोग औषधि के रूप में किया जाता है। यह सब्जी मानसून में उगती है और मानसून खत्म होने तक इसका सीजन रहता है। यह सब्जी बाजार में 160 से 200 रुपए किलो बेची जा रही है। यह सब्जी करेला का ही दूसरा रूप है, हालांकि, यह थोड़ी कड़वी होती है। इसके नर्म ककोड़ा साग बहुत ही अच्छा व अधिक स्वादिष्ट होता है जिसे लोग अधिक पसन्द करते हैं। गर्म मसालों या लहसुन के साथ ककोड़ा का साग बनाकर खाने से वात पैदा नहीं होता है।

ककोड़ा की खासियतें :

- बहुवर्षीय फसलः एक बार लगाने पर 3 से 4 साल तक उत्पादन देती है।
- कम देखरेख वाली फसलः बहुत कम सिंचाई और खाद की आवश्यकता।
- स्वास्थ्यवर्धक सब्ज़ीः डायबिटीज़ नियंत्रित करने और पाचन शक्ति बढ़ाने में सहायक।
- बाजार में उच्च मूल्यः सीज़न और ऑफ–सीज़न दोनों में अच्छी कीमत मिलती है।

उपयुक्त जलवायु : ककोड़ा सब्जी अधिकतर पहाड़ी जमीन में पैदा होता है। ककोड़ा गर्म और आर्द्र जलवायु में अच्छी तरह उगता है। लेकिन अब किसान ककोड़ा की खेती कर रहे हैं। ककोड़ा की खेती करने से अब किसानों को लाखों रुपए की आमदनी हो रही है। इसकी बुवाई का उचित समय जून से जुलाई (बरसात की शुरुआत)। ठंडी जलवायु में इसकी वृद्धि रुक जाती है।

भूमि और तैयारी : ककोड़ा के बुवाई के लिए हल्की दोमट या बलुई दोमट मिट्टी उपयुक्त है जिसका पी.एच. मानः 6.0 से 7.0 हो। खेत की अच्छी तरह जुताई करके उसमें गोबर की खाद डालनी चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

रोपाई और बीज दर : यह सामान्यतः कंद/जड़ (टयूबर) से लगाया जाता है। एक एकड़ में लगभग 2500 से 3000 कंद की आवश्यकता होती है।

खाद और उर्वरक : गोबर की सड़ी हुई खादः 8 से 10 टन/एकड़।

रासायनिक खादः नत्रजन 40 से 50 किलो, फास्फोरस 20 से 25 किलो , पोटाश 20 से 25 किलो

सिंचाई : बरसात के मौसम में सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती। गर्मी/सूखे मौसम में 10 से 15 दिन के अंतराल पर हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

फसल की देखभाल : ककोडा की बेल को चढ़ाने के लिए मचान (मंडप पद्वति) बनाना ज़रूरी है। समय–समय पर निराई–गुड़ाई करें। फूल आने के समय हल्की खाद देना लाभकारी होता है।

कीट और रोग प्रबंधन : मुख्य कीटः पत्ती खाने वाले कीड़े और फल मक्खी।

जैविक नियंत्रणः नीम तेल 5 मिलिलीटर प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

रासायनिक नियंत्रणः इमिडाक्लोप्रिड या मेलाथियान का छिड़काव।

कटाई : रोपाई के 70 से 80 दिन बाद फल मिलना शुरू हो जाते हैं। ककोड़ा के फल हरे और मुलायम अवस्था में तोड़े जाते हैं। हर 3 से 4 दिन में तुड़ाई करनी चाहिए।

उत्पादन : एक बेल से लगभग 2 से 3 किलो फल प्रति सीज़न मिलता है। एक एकड़ से औसतन 40 से 50 क्विंटल उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

ककोड़ा की खेती किसानों के लिए कम लागत और उच्च लाभ वाला विकल्प है। यह फसल लंबे समय तक उत्पादन देती है और इसकी बाजार में हमेशा मांग रहती है। यदि किसान उचित तकनीक और देखभाल के साथ **इसकी खेती करें तो इससे अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं।** सब्जी व्यापारीयों का कहना है कि यह सब्जी हर साल महंगी रहती है। इसका भाव ₹100 से लेकर 150 रुपये तक चला जाता है। वहां के किसानों के लिए कंटोला की खेती लाभदायक साबित हो रही है। अतः अब इसके औषधीय गुणों और बढ़ती माँग के अनुसार राजस्थान के किसान भी इसकी खेती अपने खेत की बाड़ के आस–पास करके अच्छी अतिरिक्त आमदनी अर्जित कर सकते है।

मूंगफली के कटाई पश्चात प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन से किसानों की आय दोगुनी

बबिता डीगवाल, आर. एस. मीणा, आर. एल. मीणा एवं के. ए. मीणा
कृषि महाविद्यालय झिलाय, (निवाई) टोंक

मूंगफली की खेती में कटाई के बाद के नुकसान को कम करके और सही प्रसंस्करण व मूल्य संवर्धन अपनाकर किसान अपनी आय को दोगुना या उससे भी अधिक कर सकते हैं। यह केवल कच्चा माल बेचने के बजाय तैयार उत्पाद बेचने का एक व्यावसायिक दृष्टिकोण है। मूंगफली के कटाई पश्चात प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन से आय दोगुनी करने के प्रमुख आयाम निम्नलिखित हैं–

1. **प्राथमिक प्रसंस्करण**– नुकसान कम करना

उचित सुखाना– (कटाई के बाद मूंगफली में 25–30 प्रतिशत नमी होती है, जिसे सुखाकर 8–10 प्रतिशत लाना जरूरी है। सही तरीके से सुखाने से फंगस नहीं लगती, जिससे मूंगफली की गुणवत्ता बनी रहती है और मंडी में बेहतर दाम मिलते हैं।

ग्रेडिंग और सॉर्टिंग– बड़ी और अच्छी क्वालिटी की मूंगफली को अलग करें। ग्रेडिंग के बाद, मध्यम और छोटे दानों को अलग–अलग बेचने पर ज्यादा मुनाफा मिलता है।

पैकेजिंग– खराब बोरियों के बजाय जूट के बोरों या गनी बैग्स में पैकेजिंग करें ताकि हवा का संचार हो और मूंगफली खराब न हो।

2. **द्वितीयक प्रसंस्करण–** मूल्य संवर्धन कच्ची मूंगफली (पॉड्स) को सीधे बेचने के बजाय उससे उत्पाद बनाकर बेचना सबसे ज्यादा लाभदायक है।

भुनी हुई मूंगफली– नमकीन या मूंगफली को भूनकर और अच्छी पैकिंग में बेचने पर 1.5 से 2 गुना ज्यादा मुनाफा मिलता है।

मूंगफली की चिक्की– गुड़ और मूंगफली से बनी चिक्की का ग्रामीण और शहरी दोनों बाजारों में बहुत मांग है।

मूंगफली का मक्खन– शहरी क्षेत्रों में मूंगफली के मक्खन की भारी मांग है। छोटे स्तर पर मशीन लगाकर इसका उत्पादन किया जा सकता है।

मूंगफली का तेल– कोल्ड प्रेस्ड या पारंपरिक तरीके से निकला तेल स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों में काफी लोकप्रिय है। मूंगफली का मक्खन मसाला मूंगफली, पीनट बटर, या चटनी पाउडर बनाकर बेचना।

3. **उप–उत्पादों का उपयोग** : मूंगफली के छिलके– छिलकों का उपयोग बायोमास ईंधन, खाद या पशु आहार के रूप में किया जा सकता है, जो अतिरिक्त आय का जरिया है।

खली– तेल निकालने के बाद बची हुई खली उच्च प्रोटीन पशु आहार है।

4. **तकनीकी और संरचनात्मक आयाम** : एफपीओ का गठन– किसान उत्पादक संगठनों के माध्यम से किसान मिल–जुलकर प्रसंस्करण इकाइयां लगा सकते हैं।

कस्टम हायरिंग सेंटर– मशीनरी की मदद से छिलका उतारने की प्रक्रिया को तेज करें।

ब्रांडिंग– उत्पाद की पैकेजिंग पर अपना ब्रांड नाम और गुणवत्ता अंकित करके बेचने से अधिक दाम मिलते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

5. आय वृद्धि के लिए सरकारी सहायता : प्रधानमंत्री सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना– इस योजना के तहत मूंगफली प्रसंस्करण इकाइयों के लिए 35% तक सब्सिडी मिलती है।
कृषि अवसंरचना निधि – भंडारण और प्रसंस्करण इकाइयों के लिए कम ब्याज पर ऋण।
मूंगफली की कटाई के बाद प्रसंस्करण में गुणवत्ता बनाए रखने और फफूंद (एफ्लाटॉक्सिन) से बचाने के लिए खुदाई, 2–3 दिन की धूप में सुखाना (नमी 8–10 प्रतिशत तक), सफाई, ग्रेडिंग और उचित भंडारण शामिल है। सूखे पौधों से फली को अलग करने के लिए थ्रेशर का उपयोग किया जाता है, जिसके बाद फलियों को हवादार स्थानों पर, अधिमानतः लकड़ी के चबूतरे पर रखा जाता है।
मूंगफली का कटाई पश्चात प्रसंस्करण चरण–
खुदाई 140–150 दिनों में जब पौधे के पत्ते पीले पड़ जाएं, तब डिगर मशीन या कुदाल से कटाई करें।
सुखानाः कटाई के बाद फली में 40–50 प्रतिशत नमी होती है, जिसे 2–3 दिनों तक धूप में सुखाकर 8–10% तक लाया जाना चाहिए। इसे पतली परत में फैलाकर सुखाएं और नियमित रूप से पलटें।
पॉड स्ट्रिपिंग – सूखे पौधों से थ्रेशर या हाथों द्वारा फलियों को अलग किया जाता है।
सफाई और ग्रेडिंग– प्री–क्लीनिंग, स्क्रीन ग्रेडर, और डिस्टोनर मशीनों का उपयोग करके मिट्टी, पत्थर, और खाली–टूटी फलियों को अलग किया जाता है।
भंडारण – सूखी फली को नमी और कीड़ों से बचाने के लिए अच्छी तरह हवादार गोदामों में, नमी–रोधी बैग में संग्रहित करें।
मूल्यवर्धन– छिलका उतारना, भूनना, और मूंगफली का मक्खन बनाना प्रमुख प्रक्रियाएं हैं।
मूल्य संवर्धन के माध्यम से किसानों की आय दोगुनी करने के लिए उत्पादन के बाद की प्रक्रिया, प्रसंस्करण और विपणन को मजबूत करना आवश्यक है। इसके प्रमुख आयामों में कृषि–प्रसंस्करण इकाइयां, कोल्ड स्टोरेज, एफपीओ का गठन, ब्रांडिंग, पैकेजिंग, और कृषि–विविधीकरण शामिल हैं, जो सीधे तौर पर उत्पाद का मूल्य बढ़ाते हैं।

मूल्य संवर्धन से किसानों की आय दोगुनी करने के प्रमुख आयाम

कृषि–प्रसंस्करण– फसल को सीधे न बेचकर, उसे प्रसंस्कृत उत्पादों (जैसे– आलू से चिप्स, टमाटर से सॉस, फल से जैम) में बदलने से अधिक मूल्य प्राप्त होता है।
कोल्ड स्टोरेज और गोदाम– खराब होने वाली फसलों को सुरक्षित रखने के लिए कोल्ड स्टोरेज और गोदामों की स्थापना, जो नुकसान कम करते हैं और फसल का बेहतर दाम दिलाते हैं।
किसान उत्पादक संगठन का गठन– 10,000 नए के माध्यम से छोटे किसानों को सामूहिक रूप से विपणन और प्रसंस्करण करने की शक्ति मिलती है, जिससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है।
पैकेजिंग और ग्रेडिंग– उत्पादों की ग्रेडिंग (गुणवत्ता के अनुसार अलग करना) और आकर्षक पैकेजिंग से बाजार में उच्च मूल्य प्राप्त होता है।
ब्रांडिंग और ई–नाम– उत्पादों की ब्रांडिंग करना और जैसे ई–नेम डिजिटल मंचों का उपयोग करना, जो पारदर्शी मूल्य खोज में मदद करते हैं।
कृषि का विविधीकरण– केवल पारंपरिक फसलों के बजाय उच्च मूल्य वाली फसलों (जैसे– औषधीय, सुगंधित फसलें) और संबद्ध क्षेत्रों (पशुपालन, मधुमक्खी पालन) को अपनाना।
मूल्य संवर्धन की रणनीतियाँ –
वर्षा सिंचित क्षेत्र विकास– जोखिम कम करने के लिए कृषि वानिकी को अपनाना।
जैविक खेती – जैविक उत्पादों की बाजार में अधिक मांग और बेहतर कीमत है।
नमो ड्रोन दीदी– आधुनिक तकनीक से उर्वरक छिड़काव और फसल निगरानी में कमी लाना।
मूल्य संवर्धन के माध्यम से न केवल कृषि की लागत कम होती है, बल्कि उत्पाद की गुणवत्ता और बाजार में उसकी पहुंच भी बढ़ती है, जिससे अंततः किसान की आय दोगुनी हो सकती है।
मूंगफली की खेती के बाद कटाई, सुखाने और प्रबंधन– के सही तरीकों को अपनाकर किसान अपनी आय को दोगुना कर सकते हैं। वैज्ञानिक तरीकों से कटाई और उसके बाद की प्रक्रिया न केवल नुकसान को कम करती है, बल्कि उत्पाद की गुणवत्ता बढ़ाकर बाजार में बेहतर दाम दिलाती है।

मूंगफली की कटाई से आय दोगुनी करने के प्रमुख आयाम निम्नलिखित हैं–

1. सही समय पर कटाई और प्रबंधन : परिपक्वता की पहचान– जब पौधे के पत्ते पीले पड़ने लगें और फलियों को तोड़ने पर अंदर का छिलका गहरा भूरा या काला दिखाई दे, तब कटाई करनी चाहिए। सही समय पर कटाई से फलियां खाली नहीं रहतीं और वजनदार होती हैं।
सही नमी– कटाई के बाद फलियों में नमी 8–10 प्रतिशत से कम होनी चाहिए।
सुखाने की प्रक्रिया कटी हुई फलियों को कुछ दिनों तक खेत में ही सुखाना चाहिए जिससे नमी कम हो और दाने का वजन बेहतर हो।
2. कटाई के बाद के नुकसान में कमी : फफूंद से सुरक्षा– गलत सुखाने के कारण फलियों में फफूंद लग जाती है, जो अफ्लोटॉक्सिन पैदा करती है और गुणवत्ता कम कर देती है। सही सुखाने से इसे रोककर 35% तक का नुकसान बचाया जा सकता है।
वैज्ञानिक भंडारण– सुखाने के बाद फलियों को जूट के बोरों या हवादार गोदामों में संग्रहित करना चाहिए।
3. मूल्यवर्धन – सबसे महत्वपूर्ण :ग्रेडिंग और सॉर्टिंग– मूंगफली को आकार (बड़ा–छोटा) और गुणवत्ता के आधार पर अलग–अलग करने से उच्च मूल्य मिलता है।
छिलका उतारना– सीधे छिलका उतारी हुई मूंगफली बेचने से साबुत मूंगफली की तुलना में ज्यादा दाम मिल सकता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

प्रसंस्करण– मूंगफली का तेल, मूंगफली चिक्की, या भुनी हुई मूंगफली बनाकर बेचने से सीधे तौर पर आमदनी दोगुनी हो सकती है।

4. विपणन रणनीति : सीधे बेचना– बिचौलियों को हटाने के लिए सीधे तेल मिलों या खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों को उत्पाद बेचें।

उत्पादक समूह– छोटे किसान सामूहिक रूप से अपनी फसल बेचकर बेहतर मोलभाव कर सकते हैं।सही समय पर बिक्री– कटाई के तुरंत बाद जब दाम कम हों, तब न बेचें। सूखे गोदामों में फसल को कुछ समय रोककर बेहतर कीमत पर बेचें।

5. फसल के अवशेष का उपयोग : भूसा बेचना– मूंगफली के पौधे का भूसा (चारा) पशुओं के लिए पौष्टिक होता है। इसे सही ढंग से सुखाकर बेचने से अतिरिक्त आय होती है।

कटाई के बाद यदि किसान 5–10 प्रतिशत के नुकसान को भी बचा लेते हैं और सही ग्रेडिंग या प्रोसेसिंग अपनाते हैं, तो उनकी आय में उल्लेखनीय वृद्धि (30–50 प्रतिशत से अधिक) हो सकती है।

मूंगफली काटने वाला उच्च मूंगफली की कटाई 120–150 दिनों (किस्म के अनुसार) में की जाती है, जब पत्तियां पीली पड़कर गिरने लगें और 75–80 प्रतिशत फलियों का रंग अंदर से काला/भूरा हो जाए। यह मुख्य रूप से दो चरणों में होती है। मिट्टी से पौधों को खोदना और फिर फलियों को अलग करना, जिसे 10% से कम नमी तक सुखाया जाता है।

मूंगफली कटाई के मुख्य आयाम–

समय और परिपक्वता– रोपण के 110–130 दिन बाद (उबालने वाली) या 130–150 दिन बाद (भूनने वाली)। पत्तियां पीली पड़ना सबसे प्रमुख संकेत है।

कटाई की विधि –

पारंपरिक हाथों से या फावड़े से खोदकर (छोटे पैमाने पर)।

आधुनिक– डिगर या मूंगफली खोदने वाली मशीन का उपयोग करके पौधों को उखाड़ा और उलटा किया जाता है।

सुखाना – उखाड़ने के बाद, पौधों को खेत में ही 2–3 दिनों के लिए उल्टा करके सुखाया जाता है ताकि नमी 10–15 प्रतिशत से कम हो जाए, जिससे फफूंद न लगे।

गहाई या थ्रेशिंग – सूखे पौधों से पिकर या थ्रेशर का उपयोग करके फलियों को अलग किया जाता है।

मिट्टी का प्रकार – भारी मिट्टी में कटाई के लिए अधिक ताकत की आवश्यकता होती है, जबकि रेतीली मिट्टी में यह आसान होती है।

उचित नमी – कटाई के समय मिट्टी में मध्यम नमी होनी चाहिए ताकि जड़ें न टूटें और फलियां जमीन में न रह जाएं।

महत्वपूर्ण टिप्सः कटाई के बाद फलियों को 1–2 सप्ताह तक अच्छी हवादार जगह पर सुखाएं।

भंडारण से पहले फली की नमी 10 प्रतिशत से कम करें, अन्यथा फफूंद लगने का खतरा रहता है।

उत्पादकता बढ़ाने के लिए, रोपण के 60–110 दिनों के बीच, जब फलियां बन रही हों, तब नमी बनाए रखना आवश्यक है।

मूंगफली की खेती भारतीय किसानों के लिए, विशेष रूप से कम उपजाऊ या रेतीली जमीनों में, आय बढ़ाने का एक शानदार जरिया है। सही तकनीकों और रणनीतियों को अपनाकर मूंगफली से किसानों की आय दोगुनी या उससे भी अधिक की जा सकती है।

यहाँ मूंगफली के माध्यम से आय दोगुनी करने के प्रमुख आयाम दिए गए हैं–

1. आधुनिक खेती तकनीक और उत्पादकता में वृद्धि : उन्नत बीजों का चयन– कम समय में पकने वाली और उच्च उपज देने वाली उन्नत किस्मों (जैसे–आर.जी.638, जो 120–125 दिनों में तैयार होती है) का उपयोग करें।

ड्रिप इरिगेशन (टपक सिंचाई)– ड्रिप सिंचाई अपनाने से पानी की बचत होती है और पैदावार ढाई से तीन गुना तक बढ़ सकती है, क्योंकि इससे (मूंगफली की सुइयां) जमीन में आसानी से प्रवेश करती हैं।

मृदा परीक्षण आधारित खाद– मिट्टी की जांच के अनुसार पोषक तत्वों (कैल्शियम, फास्फोरस) का उपयोग करने से मूंगफली का दाना बड़ा, चमकदार और मजबूत बनता है।

कीट व रोग प्रबंधन– 60–80 दिनों की फसल में इल्लियों और पीलापन (टीका रोग) की निगरानी करें। सही समय पर छिड़काव से फसल का उत्पादन दोगुना हो सकता है।

2. फसल विविधीकरण– जायद में मूंगफली– पारंपरिक खेती (आलू–मक्का) के बाद, जायद (गर्मियों) के सीजन में मूंगफली उगाकर किसान साल में दो बार आय प्राप्त कर सकते हैं।

अंतरवर्तीय खेती– मूंगफली के साथ अरहर, सूरजमुखी या अन्य फसलों को मिलाकर बोने से जोखिम कम होता है और अतिरिक्त आय होती है।

3. मूल्य संवर्धन– सबसे महत्वपूर्ण है सीधे बिक्री के बजाय प्रसंस्कृत उत्पाद– कच्ची मूंगफली बेचने के बजाय, मूंगफली से पीनट बटर, भुनी हुई मूंगफली, मूंगफली का तेल, चिक्की, या नमकीन बनाकर बेचने से 2–3 गुना अधिक मुनाफा हो सकता है।

ग्रामीण स्तर पर प्रोसेसिंग यूनिट– छोटे स्तर पर प्रोसेसिंग मशीनें लगाकर उत्पाद की ब्रांडिंग करने से बेहतर मूल्य मिलता है।

4. विपणन और बुनियादी ढांचा, ई–नाम का उपयोग राष्ट्रीय कृषि बाजार के माध्यम से अपनी फसल को सीधे मंडियों में बेचने से बिचौलियों से मुक्ति मिलती है और सही दाम मिलते हैं।

भंडारण की सुविधा– पीआईसीएस बैग जैसी कम लागत वाली भंडारण तकनीक का उपयोग करें ताकि बीज की गुणवत्ता बनी रहे और फसल को बाद में ऊंचे दाम पर बेचा जा सके।

किसान उत्पादक संगठन – छोटे किसान समूह बनाकर बीज खरीद और उत्पाद की बिक्री करें, इससे लागत कम और लाभ ज्यादा होता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

5. सरकारी सहायता और प्रशिक्षण सब्सिडी योजनाएं– सरकार द्वारा प्रदान की जाने वाली उन्नत बीज, ड्रिप सिंचाई और कृषि यंत्रों पर मिलने वाली सब्सिडी का लाभ उठाएं।
प्रशिक्षण– कृषि विज्ञान केंद्रों पर और मूंगफली अनुसंधान संस्थानों से प्रशिक्षण लेकर नई तकनीकों को अपनाएं। मात्र 15,000–20,000 रुपये की लागत में, सही प्रबंधन के साथ 50,000 रुपये प्रति एकड़ से अधिक की आय ली जा सकती है।

परंपरा से प्रगति तकः भू–स्थानिक विश्लेषण आधारित आधुनिक कृषि का नया परिदृश्य

निधि कुंडू
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

भारतीय कृषि सदियों से स्थानीय अनुभव, पारंपरिक ज्ञान तथा प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित रही है। किंतु वर्तमान युग में कृषि को केवल उत्पादन प्रणाली के रूप में नहीं, बल्कि डेटा–संचालित तथा स्थान–विशिष्ट प्रबंधन प्रणाली के रूप में देखा जा रहा है। इस परिवर्तन के केंद्र में Geospatial Analytics अथवा जीआईएस आधारित खेत विश्लेषण एक महत्वपूर्ण तकनीकी उपकरण के रूप में उभर रहा है।
Geospatial Analytics कृषि क्षेत्र में स्थान, समय और संसाधनों के मध्य संबंधों का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। यह तकनीक उपग्रह चित्रों, ड्रोन सर्वेक्षण, डेटा तथा रिमोट सेंसिंग के माध्यम से खेत की वास्तविक स्थिति का बहुआयामी अध्ययन करती है। इससे कृषि प्रबंधन अनुमान–आधारित पद्धति से साक्ष्य–आधारित निर्णय प्रणाली की ओर अग्रसर होता है।
जीआईएस आधारित मृदा एवं संसाधन मानचित्रण : पारंपरिक रूप से पूरे खेत में समान मात्रा में उर्वरक एवं जल का उपयोग किया जाता था, जबकि वास्तविकता में खेत के विभिन्न भागों में मृदा संरचना, नमी तथा पोषक तत्वों में भिन्नता पाई जाती है। GIS तकनीक के माध्यम ls Soil Variability डंच तैयार किया जाता है, जिसमें pH, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा कार्बनिक कार्बन का स्थान–विशिष्ट वितरण प्रदर्शित होता है।
जिस भाग में जितनी आवश्यकता हो, उतना ही इनपुट दिया जाए। इससे उर्वरक लागत में कमी, उत्पादन दक्षता में वृद्धि तथा पर्यावरणीय संतुलन सुनिश्चित होता है।
रिमोट सेंसिंग एवं फसल स्वास्थ्य विश्लेषण : उपग्रह एवं ड्रोन आधारित NDVI (Normalized Difference Vegetation Index) जैसे सूचकांक फसल के हरित द्रव्यमान एवं स्वास्थ्य का आकलन करते हैं। इनके माध्यम से जल तनाव, रोग संक्रमण या पोषक तत्वों की कमी का प्रारंभिक स्तर पर पता लगाया जा सकता है। यह प्रणाली Early Warning System तरह कार्य करती है, जिससे समय पर हस्तक्षेप कर संभावित नुकसान को कम किया जा सकता है।
जल संसाधन प्रबंधन : GIS आधारित स्थलाकृतिक विश्लेषण से ढाल, जल प्रवाह दिशा तथा जल संचयन क्षेत्रों की पहचान की जाती है। इसके आधार पर खेत तालाब, सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली तथा जल संरक्षण संरचनाओं की वैज्ञानिक योजना बनाई जा सकती है। जल उपयोग दक्षता में वृद्धि की अवधारणा को व्यावहारिक स्वरूप दिया जा सकता है।
जलवायु अनुकूलन एवं जोखिम प्रबंधन : ऐतिहासिक वर्षा, तापमान एवं आर्द्रता के भू–स्थानिक विश्लेषण से Climate Risk Zonation Map तैयार किए जा सकते हैं। यह जानकारी फसल चयन, बुवाई समय निर्धारण एवं उत्पादन अनुमान में सहायक होती है। इस प्रकार कृषि प्रबंधन प्रतिक्रियात्मक दृष्टिकोण से हटकर सक्रिय मॉडल की ओर अग्रसर होता है।
कृषि मूल्य श्रृंखला एवं डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र : GIS & Geo-Tagging से उत्पादन क्षेत्रों की विशिष्टताओं को चिह्नित कर क्षेत्रीय ब्रांड विकसित किए जा सकते हैं। जब भू–स्थानिक डेटा को मौसम पूर्वानुमान, कृत्रिम बुद्धिमत्ता मॉडल एवं बाजार सूचना प्रणाली से जोड़ा जाता है, तब एक समेकित Decision Support System (DSS) विकसित होता है।यह प्रणाली किसान को फसल चयन, इनपुट मात्रा, सिंचाई समय तथा संभावित उत्पादन का वैज्ञानिक अनुमान प्रदान करती है। इस प्रकार किसान डेटा–सक्षम प्रबंधक एवं कृषि–उद्यमी के रूप में विकसित होता है।
समस्याएँ एवं संभावित समाधान : Geospatial Analytics आधारित कृषि प्रणाली के क्रियान्वयन में कुछ व्यावहारिक चुनौतियाँ भी सामने आती हैं। उच्च प्रारंभिक निवेश तथा तकनीकी अवसंरचना छोटे किसानों के लिए बाधा बन सकती है। इसका समाधान सामूहिक मॉडल कस्टम हायरिंग सेंटर तथा ओपन–सोर्स GISS प्लेटफॉर्म के उपयोग में निहित है। तकनीकी ज्ञान एवं डेटा व्याख्या की कमी भी एक प्रमुख समस्या है। कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केंद्रों एवं डिजिटल प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से किसान क्षमता निर्माण आवश्यक है। सैटेलाइट डेटा की सटीकता, इंटरनेट कनेक्टिविटी एवं रीयल–टाइम अपडेट की सीमाएँ भी प्रभाव डाल सकती हैं। इसके लिए सैटेलाइट, ड्रोन एवं फील्ड डेटा के एकीकृत मॉडल तथा क्लाउड आधारित डेटा प्रबंधन प्रणाली विकसित की जानी चाहिए। साथ ही, डेटा सुरक्षा एवं गोपनीयता सुनिश्चित करने हेतु एक सुव्यवस्थित डिजिटल कृषि डेटा नीति आवश्यक है। इन चुनौतियों के समाधान के लिए "तकनीक, प्रशिक्षण, नीति समर्थन, संस्थागत सहयोग" का समेकित ढांचा अपनाना अनिवार्य है।
निष्कर्ष : "परंपरा से प्रगति" का अर्थ परंपरागत ज्ञान को त्यागना नहीं, बल्कि उसे आधुनिक भू–स्थानिक प्रौद्योगिकी के साथ एकीकृत करना है। Geospatial Analytic आधारित कृषि प्रणाली संसाधन दक्षता, जोखिम न्यूनीकरण तथा सतत उत्पादन की दिशा में एक महत्वपूर्ण तकनीकी पहल है। यदि किसान, अनुसंधान संस्थान तथा नीति–निर्माता मिलकर आधारित खेत विश्लेषण को व्यापक स्तर पर अपनाएँ, तो भारतीय कृषि अधिक सटीक, पारदर्शी एवं प्रतिस्पर्धी बन सकती है। आधुनिक कृषि का नया परिदृश्य वही जहाँ परंपरा की जड़ें सुदृढ़ हों और प्रगति की दिशा वैज्ञानिक, डेटा–आधारित एवं सतत् विकास पर आधारित हो।

मूँग के सतत् उत्पादन के लिए उत्परिवर्तन प्रजननः एक उभरती तकनीक

कोमल चौधरी, बी एल कुम्हार एवं मनोहर राम
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

मूँग भारत की प्रमुख दलहनी फसल है, जो अल्प अवधि (60–70 दिन) में तैयार होकर उच्च गुणवत्ता वाला प्रोटीन (20–25%) प्रदान करती है। यह शाकाहारी जनसंख्या के लिए सस्ती एवं सुलभ प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्रोत है। मूँग में आयरन, कैल्शियम, फास्फोरस, फोलिक एसिड तथा विटामिन बी–समूह प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। भारत में मूँग का उत्पादन मुख्यतः राजस्थान, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश एवं कर्नाटक में होता है। बदलती जलवायु, सीमित कृषि संसाधन, वर्षा की अनिश्चिता तथा कीट–रोगों के प्रकोप के कारण मूँग की उत्पादकता अपेक्षाकृत कम है। इन चुनौतियों के समाधान हेतु पारंपरिक प्रजनन विधियों के साथ–साथ आधुनिक तकनीकों की आवश्यकता है। उत्परिवर्तन प्रजनन एक ऐसी उभरती तकनीक है, जो आनुवंशिक विविधता उत्पन्न कर मूँग में उच्च उपज, रोग–प्रतिरोध, सूखा–सहनशिलता तथा पोषण गुणवत्ता सुधार में सहायक सिद्ध हो रही है।

2. सतत् उत्पादन की अवधारणा

सतत् उत्पादन का अर्थ है– ऐसी कृषि प्रणाली जो वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करते हुए भविष्य की पीढ़ियों के संसाधनों को प्रभावित न करे।

मूँग के संदर्भ में सतत् उत्पादन के प्रमुख उद्देश्यः

उच्च एवं स्थिर उपज
कम अवधि में पकने वाली किस्में
कीट एवं रोग प्रतिरोधी किस्में
कम पानी में उत्पादन

मृदा उर्वरता में सुधार (नाइट्रोजन स्थिरीकरण)– मूँग एक दलहनी फसल होने के कारण वायुमंडलीय नाइट्रोजन को स्थिर कर भूमि की उर्वरता बढ़ाती है, जिससे यह फसल चक्र में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

4- उत्परिवर्तन प्रजनन की संकल्पना

उत्परिवर्तन जीन या गुणसूत्रों में अचानक होने वाला स्थायी परिवर्तन है। जब इन परिवर्तनों को कृत्रिम रूप से प्रेरित कर उपयोगी गुण प्राप्त किए जाते हैं, तो इसे उत्परिवर्तन प्रजनन कहा जाता है। उत्परिवर्तन दो प्रकार के होते हैं–

1. प्राकृतिक उत्परिवर्तन
2. प्रेरित उत्परिवर्तन

प्रेरित उत्परिवर्तन में भौतिक एवं रासायनिक उत्परिवर्तकों का प्रयोग किया जाता है।

4. उत्परिवर्तकों के प्रकार

(क) भौतिक उत्परिवर्तक

गामा किरणें, एक्स–किरणें, न्यूट्रॉन

भारत में गामा किरणों का व्यापक प्रयोग किया जाता है,

(ख) रासायनिक उत्परिवर्तक

एथाइल मीथेन सल्फोनेट (ईएमएस)
सोडियम एजाइड
कोल्चिसीन

इन रसायनों द्वारा डीएनए में सूक्ष्म परिवर्तन उत्पन्न कर नई आनुवंशिक विविधता विकसित की जाती है।

5. मूँग में उत्परिवर्तन प्रजनन की प्रक्रिया

1. उपयुक्त किस्म का चयन
2. बीजों को निर्धारित मात्रा में विकिरण या रसायन से उपचार
3. पीढ़ी का उत्पादन
4. पीढ़ी में चयन (यहाँ अधिक विविधता दिखाई देती है)
5. श्रेष्ठ उत्परिवर्ती पौधों का चयन एवं स्थिरीकरण
6. बहु–स्थान परीक्षण एवं किस्म विरोचन

इस प्रक्रिया द्वारा कम समय में नई किस्में विकसित की जा सकती हैं।

6. मूँग में उत्परिवर्तन द्वारा प्राप्त प्रमुख सुधार

6.1 उच्च उपज क्षमता : उत्परिवर्तन द्वारा अधिक शाखाओं वाले, बड़े दानों वाले एवं अधिक फली संख्या वाले पौधे विकसित किए गए हैं।

6.2 रोग प्रतिरोध : पीला मोजेक वायरस, पाउड्री मिल्डयू

इन रोगों के प्रति सहनशिल उत्परिवर्ती लाइनों का विकास हुआ है।

6.3 शीघ्र पकने वाली किस्में : कम अवधि वाली किस्में रबी एवं जायद मौसम के लिए उपयुक्त हैं।

6.4 सूखा एवं ताप सहनशिलता : राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्रों के लिए सूखा–सहनशिल किस्में अत्यंत आवश्यक हैं।

6.5 पोषण गुणवत्ता सुधार : प्रोटीन प्रतिशत एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ाने में भी उत्परिवर्तन सहायक रहा है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

7. उत्परिवर्तन प्रजनन के लाभ

नई आनुवंशिक विविधता का सृजन
कम समय में सुधार
विशिष्ट गुणों का विकास
फसल सुधार में प्रभावी
जैव विविधता संरक्षण में सहायक

8. आधुनिक तकनीकों के साथ एकीकरण

उत्परिवर्तन प्रजनन को आण्विक मार्कर, जीनोमिक चयन एवं टिशू कल्चर तकनीकों के साथ जोड़कर अधिक सटीक परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं।

9. राजस्थान में संभावनाएं

राजस्थान की शुष्क जलवायु, सीमित वर्षा एवं उच्च तापमान की परिस्थितियों में मूँग की उत्पादकता बढ़ाने हेतु सूखा–सहनशिल एवं शीघ्र पकने वाली उत्परिवर्ती किस्में अत्यंत उपयोगी हो सकती हैं।

10. भविष्य की दिशा

जीनोमिक आधारित उत्परिवर्तन चयन
पोषण संवर्धन मूँग किस्मों का विकास
जलवायु परिवर्तन अनुकूल किस्में
जैव कृषि हेतु उपयुक्त किस्में

11. निष्कर्ष : मूँग के सतत् उत्पादन के लिए उत्परिवर्तन प्रजनन एक प्रभावी एवं उभरती हुई तकनीक है। यह तकनीक सीमित आनुवंशिक विविधता की समस्या को दूर कर नई उच्च उपज एवं तनाव–सहनशिल किस्मों के विकास में सहायक है। बढ़ती जनसंख्या, पोषण सुरक्षा एवं जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए उत्परिवर्तन प्रजनन मूँग के आनुवंशिक सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

मूंगफली व बाजरा में सफेद लट का जीवनचक्र एवं समन्वित प्रबन्धन

मुकेश निठारवाल, अनिता जाट, बी.एल. जाखड एवं मंजू कुमारी चौधरी
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर

मुख्यतः इस कीट का प्रौढ़ (भृंग) व लट दोनों ही अवस्थाऐं हानि पहुँचाती हैं। प्रौढ़ अवस्था में पेड़ों की पत्तियों को खाती है। जबकि लट अवस्था जमीन में रहकर जीवित पौधों की जड़ों को खाकर हानि पहुँचाती है। सफेद लट सफेद रंग की होती है। इसका सिर भुरा तथा जबड़े काफी शक्तिशाली होते हैं। यह लट बहुभक्षी होती है। प्रायः खरीफ की फसलों, बाजरा, मूंगफली, मूंग, मोठ, सब्जियाँ इत्यादि पौधों की जड़ों को काटकर हानि पहुँचाती है। परन्तु मूंगफली जैसी मूसला जड़ों वाली फसलों में, बाजरा जैसी झकड़ा जड़ वाली फसलों की अपेक्षा अधिक नुकसान करती है। वैसे तो भृंगों की कई प्रजातीया पाई जाती है तथा सभी भृंगों की लटें सफेद होती हैं, किन्तु राजस्थान के हल्के बालू मिट्टी वाले क्षेत्रों में *होलोट्राईकिया कन्सेनगिनिया* नामक प्रजाती के भृंगों की सफेद लटें अत्यधिक हानि पहुँचाती हैं। मूंगफली के पौधों में एक ही मुख्य जड़ होने के कारण इस फसल में अत्यधिक नुकसान होता है। लट द्वारा जड़ को काट देने से पौधे पीले पड़कर सूखने लगते हैं और ऐसे लट ग्रसित पौधों को खींचने पर वे आसानी से मिट्टी से बाहर आ जाते हैं। खेत में सूखे पौधे दिखाई देने पर सफेद लट के प्रकोप का आभास होता है एवं पौधों के जड़ों के पास की मिट्टी खोदने पर सफेद लट दिखाई देती है। लटों के अधिक प्रकोप की अवस्था में सम्पूर्ण फसल नष्ट हो जाती है। सफेद लट का नियन्त्रण तभी कर सकते हैं जब इस लट के जीवन चक्र के बारे में जानकारी हो इसलिए नियन्त्रण के उपाय से पहले इसके जीवन चक्र को जानना किसान भाईयों के लिये अति आवश्यक है।

सफेद लट का जीवन चक्र : राजस्थान के हल्के बालू मिट्टी वाले क्षेत्रों में *होलोट्राईकिया कन्सेनगिनिया* प्रजाति के भृंगों की सफेद लट एक वर्ष में केवल एक ही पीढ़ी पूर्ण करती है। मानसून अथवा मानसून पूर्व की पहली अच्छी वर्षा के पश्चात् इस कीट के भृंग सायं काल गोधूली वेला (लगभग सायं 7:30 बजे से 7:45 बजे के बीच) के समय प्रतिदिन भूमि से बाहर निकलते हैं। भृंगों के पोषी वृक्ष खेजड़ी, नीम, बेर, गूलर, सेंजना,गुलमोहर आदि हैं। पहले मादा भृंग जमीन से निकलकर वृक्षों पर बैठती है तथा अपने शरीर से एक विशेष प्रकार का रसायन (फेरोमोन) वायु में विसर्जित करती है। नर भृंग भूमि से बाहर निकलकर इस रसायन से आकर्षित होकर वृक्षों पर बैठी मादा भृंगों की ओर जाते है। यह रसायन उन्हीं मादा भृंगों द्वारा छोडा जाता है जो समागम करना चाहती हैं। समागम के पश्चात् भृंग यदि पोषी वृक्षों पर नहीं होते हैं तो पोषी वृक्षों पर चले जाते हैं तथा पत्तियां खाना प्रारम्भ कर देते हैं। भृंग रात भर वृक्षों पर रहते हैं तथा प्रातः सूर्योदय से पहले पुनः भूमि में चले जाते हैं और अगले दिन सायंकाल फिर निश्चित समय (गोधूली वेला) पर भूमि से निकलकर वृक्षों पर जाते हैं। यह क्रम लगभग 4–5 सप्ताह अथवा 28 – 35 दिन तक चलता है। मादा भृंग समागम के 3–4 दिन पश्चात् गीली मिट्टी में लगभग 8 –10 सेमी गहराई पर अण्डें देना शुरूकर देती है परन्तु यह सारे अण्डे एक साथ न देकर किश्तों में 4–5 सप्ताह अर्थात लगभग 1 महीने तक अण्डे देती रहती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

भृंग

अण्डें

लट

शंकु

सफेद लट *होलोट्राईकिया कन्सेनगिनिया* की अवस्था

अण्डों में से 7–13 दिन (2 सप्ताह) पश्चात् छोटी लटें निकलती हैं जिन्हें प्रथम अवस्था की लट कहा जाता है। इसकी लम्बाई करीब 15 मिलीमीटर होती है, यह लटें पौधों की सूक्ष्म जड़ों को खाती है। लटों की प्रथम अवस्था करीब दो सप्ताह तक रहती है, तत्पश्चात् यह द्वितीय अवस्था में परिवर्तित हो जाती है, जिसकी औसतन लम्बाई 35 मिलीमीटर होती है। करीब 4–5 सप्ताह तक द्वितीय अवस्था में रहने के पश्चात् यह लट तृतीय व अन्तिम अवस्था में परिवर्तित हो जाती है जो औसतन 41 मिलीमीटर लम्बाई की होती है। लट की यह तृतीय व अन्तिम अवस्था करीब 6–8 सप्ताह (करीब 2 महीने) तक रहती है। यही द्वितीय व तृतीय अवस्थाएं पौधें की बडी जड़ों को काटती है और यही अवस्थाएं अधिक नुकसान करती है। इस प्रकार लट का पूर्ण समय काल करीब 12–15 सप्ताह का (करीब 3 – 4 महीने) होता है जिसके अन्तर्गत यह जुलाई से मध्य अक्टूबर तक पौधें की जड़ों को खाती रहती हैं। इसके पश्चात् यह लटें भूमि में गहराई में चली जाती हैं और करीब 40–70 से.मी. गहराई पर शंकु में परिवर्तित हो जाती है। शंकु से लगभग 2 सप्ताह प्रौढ़ भृंग निकल आते हैं। जो अगली वर्षा आने तक भूमि की गहराई में 70 से 100 से.मी. (लगभग 1 मीटर) तक चले जाते हैं। इस समय यह भृंग निष्क्रिय होकर भूमि में पडे रहते हैं और इनके जननांग अपरिपक्व होते हैं। इसी निष्क्रियता की अवस्था में यह भृंग अगली वर्षा तक भूमि में रहते हैं। इन भृंगों के जननांग मई माह के अन्त तक परिपक्व होते हैं और इस समय मानसून पूर्व वाली भारी वर्षा के बाद भूमि से बाहर निकल कर अपना अगला जीवन चक्र आरम्भ कर देते हैं। इस प्रकार एक वर्ष में इस कीट की एक ही पीढ़ी पाई जाती है। वयस्क भृंग की औसतन लम्बाई 21 मि.मी. और औसतन चौड़ाई 12 मि.मी.होती है।

सफेदलट का समन्वित प्रबन्धन : इस विनाशकारी कीट के प्रकोप से खरीफ की फसलों की रक्षा के उपाय केवल दो तरह से किये जा सकते है। पहली जब यह कीट वयस्क (भृंग) अवस्था में पोषी वृक्षों पर हो और दूसरी जब यह लट की प्रथम अवस्था में हो। इस कीट के अनोखे जीवन चक्र (साल में एक ही पीढ़ी) के कारण यह दोनों ही अवस्थाऐ साल में केवल एक बार ही आती हैं वह भी बहुत कम समय के लिए, इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसी समय पर कीट नियन्त्रण के उपयुक्त उपाय किये जायें। सफेद लट के कारगर उपाय हेतु निम्न बिन्दुओं का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है:

अ) भृंग (वयस्क) का नियन्त्रण

1) शष्य क्रियाऐ एवं भूमि उपचार द्वारा नियन्त्रण 2) सही पोषी वृक्षों का चयन एवं कीटनाशी रसायन का छिड़काव 3) फेरोमोन ट्रेप द्वारा भृंग नियन्त्रण 4) कीटनाशी रसायनों द्वारा बीजोपचार 5) खड़ी फसलों में कीटनाशी के द्वारा नियन्त्रण

ब) लट की प्रथम अवस्था का नियन्त्रण

1) **शष्य क्रियाऐ एवं भूमि उपचार द्वारा नियन्त्रण** : जुलाई के अन्त से अगस्त के मध्य तक चरी एवं खाली खेतों को मिट्टी पलटने वाले हल से अच्छी जुताई करें ताकि भूमि से सफेदलट बाहर निकल आए व पक्षियों द्वारा खाली जाए। यदि लट भक्षी पक्षी उपलब्ध न हो तो मनुष्य द्वारा इन लटों को बाल्टी में इकट्ठा करके मारने से संख्या कम हो जाएगी तथा आने वाली फसलों पर नुकसान कम हो सकेगा। सफेद लट के प्रबंधन के लिए 250 किलोग्राम नीम केक प्रति हैक्टर की दर के साथ आखरी जुताई के साथ देवें एवं भूमि में 0.5 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से बिवेरिया बैसीयाना देवें।

2) **सही पोषी वृक्षों का चयन एवं कीटनाशी रसायन का छिड़काव** : पोषी वृक्षों खेजड़ी, नीम, बेर, गूलर, सेंजना, गुलमोहर आदि पर छिड़काव के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. 1.5 मिली. प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें अर्थात छिड़काव के लिए एक पीपे पानी (18 लीटर पानी) का घोल तैयार करने के लिए 27 मिली. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. की आवश्यकता होगी। भृंग नियन्त्रण, पोषी वृक्षों पर कीटनाशी रसायन के छिड़काव के अतिरिक्त भृंग संकलन द्वारा भी किया जा सकता है। जहां पर छिड़काव की सुविधा नहीं हो वहां रात्रि में करीब नौ बजे पोषी वृक्षों को बांस से हिलाकर नीचे चादर, प्लास्टिक शीट या त्रिपाल बिछाकर भृंग एकत्रित किये जा सकते हैं, एकत्रित भृंग मिट्टी के तेल मिले पानी (एक भाग मिट्टी का तेल एवं 20 भाग पानी) में डालकर नष्ट करें। सामूहिक रुप से किया गया भृंग नियन्त्रण अत्यन्त प्रभावी रहता है। परन्तु कई बार समूहिक प्रयत्न संभव नहीं हो तो ऐसी परिस्थिति में किसान व्यक्तिगत रुप से अपने स्वयं के क्षेत्र में भृंग नियन्त्रण का काम करे तो भी इसका प्रभाव काफी लाभदायक होता है। भृंग नियन्त्रण खरीफ की सभी फसलों की सफेद लट से सुरक्षा करता है चाहे वह असिंचित क्षेत्र में वर्षा के आगमन पर बोई गई हो अथवा सिंचित क्षेत्र में अगेती बोई गई हो।

3) **फेरोमोन ट्रेप द्वारा भृंग नियन्त्रण** : सफेद लट से फसलों को बचाने के लिए, भृंग नियन्त्रण सबसे सस्ता, कारगर ओर दूरगामी प्रभाव वाला उपाय है। साथ ही इससे पर्यावरण प्रदूषण भी न के बराबर होता है मानसून या मानसून पूर्व की पहली अच्छी वर्षा के बाद भृंग प्रति दिन संध्या के समय निश्चित समय भूमि से बाहर निकलकर पोषी वृक्षों (बेर, खेजड़ी,

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

नीम, गूलर, सेंजना, अमरूद आदि) पर जाकर बैठते हैं। यही समय होता है जब भृंगों का नियन्त्रण किया जाना चाहिए। इसके लिए मई के बाद पहली अच्छी वर्षा के तुरन्त बाद उसी दिन में पोषी वृक्षों पर नेनोजैल फिरोमोन ट्रेप लगाकर भृगों का नियंत्रण किया जा सकता है। इसके लिए एक हैक्टयर में लगभग 12 से 16 ट्रैप 20X20 मीटर की दूरी पर लगाकर भृंगों को ट्रैप में एकत्रित किया जा सकता है। इस ट्रैप को लगाने के बाद एक महीने तक बदलने की आवश्यकता नहीं होती है।

पौधों पर फेरोमोन लगाने की विधि

4) सही कीटनाशी रसायन से बीजोपचार : वर्षा के साथ बोई जाने वाली मूंगफली को सफेद लट से बचाने के लिए 100 किलो गुली को इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ एस (6.5 मिली. प्रति किलोग्राम गुली) या क्लोथियानिडिन 50 डब्लू.डी.जी 200 मिलीग्राम (2 ग्राम प्रति किलोग्राम गुली) से उपचारित करें। बीज उपचार करने के लिए निश्चित मात्रा में बीज को बीजोपचार ड्रम अथवा मटके अथवा प्लास्टिक की थैली में डालकर उसमें आवश्यकतानुसार कीटनाशी रसायन डालकर हिलाएं जिससे बीज पर कीटनाशी की परत जम जायें। उपचारित बीज को छाया में प्लास्टिक या सीमेन्ट फर्श पर 2–3 घन्टे तक सुखाना चाहिए। सुखाने के बाद उसी दिन बुवाई कर दें। उपचारित बीज को अधिक समय बाद बुवाई करने से अंकुरण पर विपरीत प्रभाव पड़ता है इसलिए यह आवश्यक है कि प्रतिदिन जितनी बुवाई करनी हो उतना ही बीज उपचारित करें। बाजरे में इमिडाक्लोप्रिड 600 एफ एस को 8.75 मिली प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोंपचार करें या क्लोथियानिडिन 50 डब्लू.डी.जी 7.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें।

5) खड़ी फसलों में कीटनाशी के द्वारा नियन्त्रण : मानसून पूर्व अगेती बोई जाने वाली फसलों में बीजोपचार या बुवाई के समय किया गया भूमि उपचार के साथ इन खड़ी फसलों में कीटनाशियों के द्वारा उपचार करना अधिक कारगर होता है। अच्छी वर्षा के पश्चात् भृंगों के अत्यधिक मात्रा में जमीन से निकलने के तीन सप्ताह पश्चात् या मानसून के 21 दिन बाद ही खड़ी फसल में सिंचाई के साथ इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस. एल. 500 मिली. प्रति हैक्टेर की दर से दें। खड़ी फसल में उपचार का तरीका यह है कि कीटनाशी रसायन को सूखी बजरी या खेत की साफ मिट्टी (लगभग 80–100 किलोग्राम प्रति हैक्टर) में अच्छी तरह मिलाकर पौधों की जड़ों के आस पास डाल दें और फिर फव्वारे से सिंचाई कर दें, जिससे कीटनाशी रसायन पौधों की जड़ों तक पहुॅच जाये। सफेद लट जब तक छोटी अवस्था (प्रथम अवस्था लगभग 14 दिन की) में होती है उस समय ही कीटनाशी रसायन द्वारा आसानी से नियन्त्रण की जा सकती है, बडी हो जाने पर लटों का नियन्त्रण सम्भव नहीं होता है। अतः खड़ी फसल में उपचार समय पर करना अत्यन्त आवश्यक होता है, इसका सही तरीका यह है कि कृषक वर्षा के समय से ही सचेत रहें। वर्षा के बाद जब भृंग अधिक मात्रा में वृक्षों पर आते हैं उस तारीख के 20–21 दिन बाद ही खड़ी फसल में रसायन डाल देवे। इस समय अधिकांश लटें छोटी होने के कारण पौधों का सूखना या मरना प्रारम्भ नहीं होता है और मिट्टी खोदने पर भी लटें आसानी से नजर नहीं आती हैं। बाजरे की खड़ी फसल में मानसून की प्रथम अच्छी वर्षा के 21 दिन पश्चात् इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल का 60 ग्रामं ए.आई. प्रति हैक्टर की दर से देवें।

मशरूम एक लाभकारी फफूंद एवं प्रजातियां

दिनेश कच्छावा, धर्मेन्द्र सिंह भाटी, रमाकान्त शर्मा एवं आशीष कुमार झारोटिया
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

लगातार पारम्परिक खेती करने से किसानो की आय मे वर्ष दर वर्ष कमी आयी है । किसानों को प्रत्येक वर्ष एक सुनिश्चित आय प्राप्त होती रहे, इसके लिए कृषि में विवधीकरण, अर्थात् अलग–अलग तरह की फसलों की खेती किए जाने की आवश्यकता है। ऐसा ही एक विकल्प है मशरूम की खेती करना, जिसे भूसे और अन्य कृषि कचरे पर भी उगाया जा सकता है। मशरूम एक प्रकार का कवक (फफूँद) होता है जो मृत कार्बनिक पदार्थो पर उगता है वर्षा ऋतु में प्राकृतिक रूप से सड़क के किनारे, घास के मैदान में, बागों एवं जंगलों में सूखे एवं हरे पेड़ों पर छतरीनुमा सफेद, भूरे, लाल, पीले और नीले रंगों के फफूँद निकलते दिखाई देते हैं, इन्ही को मशरूम कहते हैं। पोष्टिकता, स्वाद व सुगन्ध के कारण मशरूम सदैव ही विश्व मे विशिष्ट खाद्य के रूप में अपनाया गया है। प्राकृतिक रूप से उगने के अतिरिक्त मशरूम की खेती कृत्रिम रूप मे किए जाने से अधिक क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। विश्व मे अधिकांश हिस्सो मे ं मशरूम पैदा किया जाता है। लगभग 2000 खाने योग्य मशरूम (फफूंदो) मे से 200 के करीब भारत वर्ष में पायी जाती है। जिसमें से अधिकांश आदिवासी एवं पहाड़ी क्षेत्रों मे प्राकृतिक रूप से उगती है। हमारे पूर्वज आदिकाल से ही मशरूम को जंगलों से एकत्रित करके, इसे खाने व बेचने एवं दवा के रूप में उपयोग करता आ रहा है। मशरूम तकनीकी रूप से वनस्पति कुल में रखा गया है तथा इसे कवक श्रेणी में वर्गीकृत किया गया है। सड़ रहे पदार्थ में से अपना भोजन कुछ महीन धागो जैसे रचना (कवक जाल) द्वारा सोखते है यह कवकजाल अधिकतर पदार्थ को ऊपरी सतह पर नजर नही आते। इनमें प्रजनन बीजाणुओं द्वारा होता है और यह बीजाणु इनके फलनकार्प में बनता है। जिसका हम खाने में उपयोग करते है,

इसे ही मशरूम नाम दिया गया है। मशरूम को अलग–अलग क्षेत्रों में विभिन्न नामों से जाना जाता है जैसे छत्रक, खुम्ब, खुम्बी, भुईफोड़, धरती का फूल भमोड़ी व फुटू आदि। पर्वतीय क्षेत्रों मे ं इसे कुरैड़, रागुड़ी गुच्छी, चाऊ या च्यों के नाम से जाना जाता है।वर्तमान में विश्व में मशरूम उत्पादन प्रतिवर्ष 110 लाख टन है और इसमें 10 प्रतिशत प्रति वर्ष की दर से वृद्धि हो रही है। चीन विश्व का अकेले लगभग 65–70 प्रतिशत मशरूम उत्पादन कर रहा है। पिछले कुछ सालों मे विशष्ठ मशरूम उत्पादन (आपस्टर मशरूम, मिल्की मशरूम, शिटाके मशरूम तथा कनपचड़ा मशरूम) में वृद्धि के कारण बटन मशरूम का उत्पादन पूरे विश्व में बढ़ा है। इसके अतिरिक्त औषधीय मशरूम जैसे गैनोडरमा (रिशी), मशरूम के उत्पादन में भी चीन अग्रणी देश है। भारत में श्वेत बटन मशरूम को परीक्षण के तौर पर मशरूम अनुसंधान प्रयोगशाला सोलन में 1961–62 में किया गया परन्तु इसे सही दिशा 1990 के दशक में मिली क्योंकि यहां पर विदेशी कम्पनियों के माध्यम से बड़ी–बड़ी योजनाएं आई। इन योजनाओं के आने से मशरूम उत्पादन 1985–86 में 4000 टन से बढ़कर 1995–96 में 75000 टन प्रतिवर्ष हो गया था। इस समय भारत में मशरूम उत्पादन 125000 टन प्रतिवर्ष के आस पास है।

मशरूम उत्पादन के लाभः प्रति इकाई क्षेत्रफल / समय में सस्ती एवं सर्वाधिक उपज देने वाली फसल। कमरे के अन्दर उगने वाली, भूमिहीन किसानों के लिए उपयुक्त फसल। कृषि अवशेषों का उपयोग कर पर्यावरण सुधार क्षमता। उच्चकोटि की प्रोटीन का उत्तम स्रोत और विटामिन, खनिज लवणों से भरपूर। पुराने घरों व शीत–गृहों का सही इस्तेमाल । फसल प्रतियोगिता का अभाव। रोजगार का साधन । विदेशी मुद्रा अर्जित करने का आधार।

मशरूम के पौष्टिक गुणः मशरूम को हमारे पूर्वज इसे सब्जी के रूप में तथा हमारे ऋषि–मुनि इसे दवाइयों के रूप में पहले से ही प्रयोग करते आ रहे है। लेकिन सही मायने में इसकी पौष्टिकता का पता अनुसंधान द्वारा पता चला है कि इसमें उच्चकोटि के प्रोटीन, विटामिन्स, लवण तथा प्रचुर मात्रा में खनिज तत्व विद्यमान है। उच्चकोटि के प्रोटीन का मतलब है, कि इसमें सभी प्रकार के आवश्यक एमिनो एसिड उपलब्ध है। मशरूम में प्रोटीन की मात्रा लगभग 30 से 35 प्रतिशत पायी जाती है। इसमें विशेष रूप से प्रोटीन की पाचन शक्ति 60–70 प्रतिशत तक होती है जो वनस्पति से प्राप्त प्रोटीन से भी अधिक ज्यादा है। मशरूम उत्पादको के भविष्य के हित के लिए यह जानना अति आवश्यक है कि उचित माध्यम एवं तरीके से लोगों को जानकारी दे ताकि इसकी प्रति व्यक्ति बढ़े। विदेशो की अपेक्षा भारत में प्रति व्यक्ति मशरूम की खपत 35 ग्राम प्रति व्यक्ति है जिसे और बढ़ाया जा सकता है। परिणामतः किसानों की विपणन की समस्या का समाधान हो सके। भारत में खेती योग्य मशरूम विश्व के अधिकांश देशों में 80–90 के दशक में मशरूम के बारे में काफी कुछ जान लेने के कारण उनमें चेतना जागृत हुई कि मशरूम पर अनुसंधान व विकास की कई योजनाएं भारत वर्ष में चलायी जाय, जिससे लोगों मे ं मशरूम के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानकारी हो। इसी प्रकार इनकी उत्पादन क्षमता, बाजार मूल्य व मांग भी भिन्न–भिन्न है।

संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है :–

श्वेत बटन मशरूम : हमारे भारत में श्वेत बटन मशरूम का उत्पादन अन्य मशरूमों की अपेक्षा अधिक होता है और यह हमारे स्वदेशी एवं विदेशी बाजारों में भी सर्वाधिक लोकप्रिय है। इस मशरूम की छोटी एंव मध्यम इकाइयो हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, पंजाब तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश, दिल्ली में स्थित है जिससे उत्पादित मशरूम का विक्रय दिल्ली, लुधियाना, चंडीगढ़ एवं अन्य कई बड़े शहरों में नियमित रूप से हो रहा है। श्वेत बटन मशरूम की खेती कम्पोस्ट (माध्यम) पर नियत्रिंत वातावरण या प्राकृतिक समय अक्टूबर से फरवरी तक की जा सकती है।

ढ़िगरी मशरूम : भारत में यह मशरूम उत्पादन की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है यह मशरूम उगाने में सरल एवं वर्ष के दो महीने (मई–जून) छोड़कर बाकी दस महीनों में आसानी से उत्पादन किया जा सकता है। इसके लिए 20–30 डिग्री सेल्सियस तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है। जो इन महीनों में आसानी से उपलब्ध हो जाती है। इस मशरूम की Biological Efficiency 50–10 प्रतिशत (भोज्य पदार्थ का) तक है। इस मशरूम को उगाने में कम समय, कम लागत एवं आसानी से उगायी जा सकती है, यह मशरूम ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों मे ं आसानी से उगायी जा सकती है व बेरोजगार युवाओं के लिए रोजगार का साधन बन सकती है।

दुग्ध छत्ता मशरूम : यह मशरूम गेहूँ का भूसा (तूड़ी), धान का पैरा पर ढ़िगरी मशरूम की तरह पॉलीथीन की थैलियों में या रेक्स पर आसानी से उत्पादित किया जा सकता है। इसके लिए 30–35 डिग्री सेल्सियस तापक्रम की जरूरत पड़ती है। इसकी खेती आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु एवं कर्नाटक में अधिक लोकप्रिय है। इस मशरूम का रंग दुधिया सफेद एवं स्ट्राइप लम्बी तथा रेशा से युक्त होता है। इस मशरूम की विशेषता यह है कि अच्छी गुणवत्ता में अधिक समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है।

रिशी मशरूम (गैनोडमी ल्यूसीडम) : यह मशरूम पूरे विश्व में औषधीय मशरूम के नाम से प्रसिद्ध है। इसे हमारे ऋषि–मुनि प्राचीन काल से दवा के रूप में प्रयोग करते आ रहे है। इसीलिए इसका नाम रिशी मशरूम पड़ा। इस मशरूम को अब लकड़ी के बुरादे पर उगाने की तकनीक विकसित कर ली गई है। इसके लिए 30–35 डिग्री सेल्सियस तापक्रम एवं 90 प्रतिशत से ज्यादा आर्द्रता की आवश्यकता पड़ती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

ब्लैक इयर (आरकुलेरिया) : इस मशरूम को कनकचड़ा मशरूम भी बोलते है। यह चीन में चीनी सम्प्रदाय द्वारा बहुत पसन्द किया जाता है। यह एक समशीतोष्ण मशरूम है। यह लकड़ी के बुरादे पर एवं गेहूँ के भूसे पर आसानी से उगाई जा सकती है। इसके लिए तापक्रम 22–28 डिग्री सेन्टीग्रेट तथा 90 प्रतिशत से ज्यादा आर्द्रता की जरूरत पड़ती है।

शिटाक (लेंटीनूला एडोडस) : शिटाके (लेंटीनूला एडोडस) इस समय पूरे विश्व में उत्पादन की दृष्टि से पहले स्थान पर है। इसे मुख्यतः पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना ;चीन, जापान, ताइवान, दक्षिण कोरिया और संयुक्त राज्य अमेरिका में उगाया जाता है और इसका स्वाद व महक अनूठी है। यह चिकित्सकीय विशेषताओं के लिए भी जाना जाता है। आमतौर पर यह 20 सें. से कम के तापमान पर उगाया जाता है।

जहरीले एवं न खाने योग्य मशरूम के गुण एवं लक्षण : मशरूम उच्चकोटि के पौष्टिक तत्वों से भरपूर होता है। परन्तु उनमें से कुछ मशरूम जहरीले व कुछ न खाने योग्य भी होते है। प्राकृतिक रूप से ये मशरूम वनो में, नम मिट्टी के स्थलों पर छतरीनुमा आकार मे तथा विभिन्न रंगो में अपने आप निकलते हुए दिखते है। इस मशरूम की मात्रा जंगली क्षेत्रों में बहुत अधिक होती है। आदिवासी इसे एकत्र कर बाजार–हाट में बेचते है या सुखाकर घरों में रखते है । इन मशरूमों में कुछ जहरीली तथा न खाने योग्य होते है। ऐसे जहरीली मशरूम को ''टोड स्टूल'' मशरूम कहते है। इस मशरूम के सेवन से गैस्ट्रोइन्ट्राइटिस रोग लक्षण उत्पन्न होते है। जिससे मृत्यु भी हो सकती है। लेकिन जिस मशरूम की खेती होती है या खेती द्वारा उत्पादित मशरूम पुरी तरह से सुरक्षित होता है, क्योंकि खेती की विधि द्वारा स्वास्थ्यवर्धक प्रोटीन युक्त तथा किसी भी प्रकार से रोगमुक्त मशरूम ही उत्पादित किये जाते है। जहरीले मशरूम केवल प्रकृति में ही उगते है। वैज्ञानिको के अनुसार जहरीले मशरूमों को पहचानने के लिए कोई निश्चित विधि नही है। केवल अनुभव से ही ज्ञात किया जा सकता है कि कौन सा मशरूम खाने योग्य है और कौन सा नही।

लक्षण :

1. प्रकृति में जहरीले मशरूम जहाँ निकलते है वही नष्ट भी हो जाते है। इनको कोई भी कीड़ा या जीव नही खाते है। ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि इसके आसपास चींटी, दीमक या अन्य किसी जीवधारी की उपस्थिति दिखाई नही देती है।
2. जहरीले मशरूम का बीजाणु छाप पीलापन या हरे रंग का होता है।
3. इस मशरूम को तोड़ने पर हल्का पीला दूध सा द्रव निकलता है।
4. जहरीले मशरूम आकर्षक, लाल–पीले, हरे चमकदार, भूरे रंग के एवं खुबसूरत आकार के होते है।
5. मशरूम का जहर मस्केरिन पदार्थ के कारण होता है जिसका एटीडोज एट्रोपिन है।
6. मशरूम जहर से प्रभावित व्यक्ति को तुरन्त अस्पताल ले जाना चाहिए और डॉक्टर को मशरूम सेवन की जानकारी भी देनी चाहिए।

उपयुक्त पहचान के बाद यह समझा जा सकता है कि इन लक्षणों वाले मशरूम जहरीले है। जो मशरूम खाद्य पदार्थो में नही आने चाहिए जैसे अधिक रेशोयुक्त, छरहरे, सड़े एवं खराब दिखना, अनचाही गंध आना आदि। ये सभी न खाने वाले मशरूम होते है, जिसे नही खाया जाता है। खाने योग्य मशरूम कृत्रिम खेती द्वारा उगाया जाता है इनमें कोई अवगुण नही होते है। अतः यह भ्रांति हमेशा के लिए दूर कर लेना चाहिए कि खेती द्वारा प्राप्त मशरूम स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते है अनुसंधान द्वारा ज्ञात कर लिया गया है कि मशरूम की खेती पूर्ण रूप से एक वैज्ञानिक विधि है जिसमें अन्य हानिकारक मशरूम उत्पन्न ही नही हो सकते है। खेती द्वारा उत्पादित बाजार में उपलब्ध मशरूम सुरक्षित एवं स्वच्छ वातावरण में तैयार किये जाते है। इसलिए ध्यान रहे कि मशरूम कुकुरमुत्ता नही बल्कि खेती द्वारा प्राप्त मशरूम मे उच्च कोटि के पोषण तत्व होते है, ये कभी भी जहरीले नही होते तथा इनके सेवन से स्वास्थ्य पर कोई भी विपरीत प्रभाव नही पड़ता है। अतः खेती से प्राप्त मशरूम को उपयोग निर्भय होकर किया जा सकता है।

कृषि प्रसंस्करण : किसानों की आय वृद्धि का आधुनिक आधार

नरेन्द्र यादव[1], मनोज कुमार शर्मा[2] एवं आकांक्षा पारीक[2]
[1]महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय–उदयपुर एवं [2]श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ लगभग 46% से अधिक आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। इसके बावजूद, किसानों की औसत आय अपेक्षाकृत कम है। इसका प्रमुख कारण यह है कि अधिकांश किसान अपने उत्पादों को कच्चे रूप में ही बाजार में बेच देते हैं, जिससे उन्हें न्यूनतम मूल्य प्राप्त होता है। इस स्थिति में कृषि प्रसंस्करण किसानों की आय वृद्धि का एक आधुनिक, प्रभावी और सतत् समाधान बनकर उभर रहा है।कृषि प्रसंस्करण वह प्रक्रिया है, जिसमें कृषि उपज को वैज्ञानिक तकनीकों द्वारा परिष्कृत, सुरक्षित एवं मूल्यवर्धित उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

कृषि प्रसंस्करण का अर्थ एवं महत्व

कृषि प्रसंस्करण का अर्थ प्राथमिक कृषि उत्पादों (जैसे अनाज, फल, सब्जियां, दूध आदि) को वैज्ञानिक तकनीकों के माध्यम से उपयोग करने योग्य, मूल्यवर्धित और अधिक समय तक टिकने वाले उत्पादों में बदलना है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कृषि उपज को साफ करना, ग्रेडिंग करना, पैकेजिंग, कैनिंग, डिहाइड्रेशन, या रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा संसाधित कर परिष्कृत रूप दिया जाता है, ताकि उसे सीधे उपभोग या औद्योगिक उपयोग के लिए बेचा जा सके।

कृषि प्रसंस्करण का महत्त्व बहुआयामी है। सबसे पहले, यह कृषि उत्पादों के मूल्य में वृद्धि करता है, जिससे किसानों को उनके उत्पाद का बेहतर दाम मिलता है और उनकी आय बढ़ती है। दूसरा, यह भोजन की बर्बादी को कम करता है क्योंकि जल्दी खराब होने वाली फसलों (जैसे फल, सब्जियां) को प्रोसेस करके लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। तीसरा, यह रोजगार के अवसर पैदा करता है और ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगिक विकास को बढ़ावा देता है। साथ ही, यह प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग को पूरा करता है और निर्यात क्षमता को बढ़ाकर विदेशी मुद्रा अर्जित करने में भी मदद करता है। अंततः, यह खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने और उपभोग की विविधता बढ़ाने में सहायक है।

उदाहरण :

- गेहूं ⟶ आटा, सूजी, पास्ता, बिस्किट
- दूध ⟶ घी, पनीर, दही, चीज
- फल–सब्जियाँ ⟶ जैम, जूस, अचार, ड्राइड फूड
- दलहन–तिलहन ⟶ दाल, खाद्य तेल, स्नैक्स

प्रसंस्करण से उत्पादों का शेल्फ लाइफ बढ़ता है, अपव्यय कम होता है तथा बाजार मूल्य 2 से 5 गुना तक बढ़ सकता है।

भारत में कृषि प्रसंस्करण की वर्तमान स्थिति

भारत विश्व में फल एवं सब्जी उत्पादन में दूसरे स्थान पर है, परंतु केवल 10–12 प्रतिशत उपज का ही प्रसंस्करण हो पाता है। विकसित देशों में यह आँकड़ा 60–70 प्रतिशत तक है। भारत में कटाई पश्चात हानि 6–18 प्रतिशत के बीच होती है, जिससे हर वर्ष लगभग ₹92,000 करोड़ का नुकसान होता है।

खाद्य प्रसंस्करण उद्योग का योगदान कृषि सकल मूल्य वर्धन में लगभग 10–11 प्रतिशत है। यह क्षेत्र 2.5 करोड़ से अधिक लोगों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रोजगार प्रदान करता है।

किसानों की आय वृद्धि में कृषि प्रसंस्करण की भूमिका

- **मूल्य संवर्धन :** उदाहरण कच्चे टमाटर की कीमत ₹5–10/kg होती है, जबकि उससे बना सॉस ₹80–120/kg तक बिकता है। इससे किसानों को 3–6 गुना अधिक लाभ मिल सकता है।
- **बाजार जोखिम में कमी :** प्रसंस्करण द्वारा उत्पाद लंबे समय तक सुरक्षित रहते हैं, जिससे मौसमी कीमत गिरावट से बचाव होता है।
- **स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजन :** लघु प्रसंस्करण इकाइयों से ग्रामीण युवाओं और महिलाओं को रोजगार मिलता है।
- **निर्यात की संभावनाएँ :** भारत से प्रसंस्कृत खाद्य उत्पादों का निर्यात वर्ष 2023–24 में ₹55,000 करोड़ से अधिक रहा, जिससे किसानों को बेहतर बाजार मिला।
- **सरकारी योजनाएँ एवं पहल :** भारत सरकार कृषि प्रसंस्करण को बढ़ावा देने हेतु अनेक योजनाएँ संचालित कर रही हैं।
- **प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना**

- मेगा फूड पार्क योजना – देश में अब तक 40 से अधिक मेगा फूड पार्क स्वीकृत
- माइक्रो फूड प्रोसेसिंग एंटरप्राइज योजना – 10 लाख सूक्ष्म इकाइयों को सहयोग का लक्ष्य
- ऑपरेशन ग्रीन्स – टमाटर, प्याज एवं आलू फसलों में मूल्य स्थिरता हेतु

चुनौतियाँ

- ग्रामीण क्षेत्रों में कोल्ड स्टोरेज एवं भंडारण की कमी
- तकनीकी ज्ञान का अभाव

- पूंजी निवेश एवं वित्तीय संसाधनों की सीमाएँ
- बाजार संपर्क और ब्रांडिंग की कमजोरी

भविष्य की दिशा

- यदि भारत में कृषि प्रसंस्करण का स्तर वर्तमान 10–12 प्रतिशत से बढ़ाकर 25–30 प्रतिशत कर दिया जाए, तो किसानों की आय में 30–50 प्रतिशत तक वृद्धि संभव है।
- कटाई पश्चात हानि में 50 प्रतिशत तक कमी लाई जा सकती है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में लाखों नए रोजगार सृजित हो सकते हैं।

सफल उदाहरण

राजस्थान में मसाला प्रसंस्करण

इकाई की स्थापनाः राजस्थान के जयपुर और अजमेर जिलों में 2015–16 के दौरान मसाला प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना की गई।

हस्तक्षेपः किसानों से सीधे कच्चा मसाला खरीदकर उन्हें अत्याधुनिक मशीनों से पीसकर तैयार किए गए।

परिणामः प्रसंस्करण के कारण किसानों की आय में 35% तक की वृद्धि दर्ज की गई क्योंकि उन्हें बिचौलियों के बजाय सीधे उचित मूल्य मिला। इन इकाइयों ने स्थानीय स्तर पर 200 से अधिक महिलाओं को रोजगार प्रदान किया। वैज्ञानिक भंडारण और प्रसंस्करण से फसल की बर्बादी में भारी कमी आई।

अन्य सफल उदाहरण

गया (बिहार) – सुमर्थरू इंजीनियर प्रभात कुमार ने किसानों को प्याज भंडारण और मशरूम उत्पादन से जोड़ा। इससे किसानों का मुनाफा कई मामलों में दोगुना हो गया और 25,000 किसानों की सामूहिक आय 100 करोड़ रुपये को पार कर गई।

उत्तराखंड– मशरूम फार्मिंग दो भाइयों ने मशरूम की खेती और उसके प्रसंस्करण को अपनाया, जिससे वे सालाना 25 लाख रुपये कमा रहे हैं।

बिहार – आधुनिक तकनीक बिहार में उन्नत बीज और सिंचाई मशीनों के उपयोग से किसानों की उत्पादन लागत कम हुई और जीवन स्तर में सुधार हुआ।

निष्कर्षः कृषि प्रसंस्करण केवल एक औद्योगिक गतिविधि नहीं, बल्कि किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में एक ठोस रणनीति है। यह कृषि को लाभकारी, टिकाऊ एवं आधुनिक बनाने का सशक्त माध्यम है। अतः आवश्यक है कि किसान, वैज्ञानिक, उद्यमी एवं नीति निर्माता मिलकर कृषि प्रसंस्करण आधारित कृषि विकास मॉडल को व्यापक स्तर पर अपनाएँ, जिससे समृद्ध किसान–सशक्त भारत का लक्ष्य साकार हो सके।

कैर के अचार की पारम्परिक विधि

ज्ञान प्रकाश शर्मा, मालीराम चौधरी, ओमप्रकाश गढवाल एवं राजीव कुमार नारोलिया
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर (राज.)

प्रस्तावना : कैर एक सूखा प्रतिरोधी पौधा है जो मुख्य रूप से राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में पाया जाता है। इसका अचार एवं सब्जी बड़े ही चाव से खायी जाती है। राजस्थान में कैर का अचार बहुत ही लोकप्रिय है। राजस्थान से बाहर रहने वाले अप्रवासियों में तो यह बहुत ही ज्यादा पसंद किया जाता है। यह एक ऐसा फल है जिसमें कैल्शियम, आयरन, विटामिन ए और कार्बोहाइड्रेट्स प्रचुर मात्रा में होते है। कैर की सब्जी एंटीऑक्सीडेंट युक्त होती है और बहुत से रोगों से बचाती है। कैर को संस्कृत में करिरा, गुजराती में केराडा, हिंदी में करेर या कुरेल, कन्नड़ में निस्पतिगे, मराठी में नेपाती, पंजाबी में कैर, तमिल में शेंगन, तेलुगु में एनुगदंता कहते है।

कैर की वानस्पतिक जानकारी : कैर का वानस्पतिक नाम –*कैपरिस डेसीडुआ,* कुल – कैपरिऐसी, प्राप्यता क्षेत्र – राजस्थान, प्रवर्धन – इसका प्रवर्धन बीजों या कलमों के माध्यम से होता है

जीवनकाल एवं तापमानः जीवनकाल 40–50 वर्ष यह पौधा शुष्क एवं गर्म जलवायु (18–48 डिग्री सेल्सियस) के अनुकूल है।

पुष्पनकाल एवं पुष्परंग – छोटे, सुगंधित, गुलाबी–लाल से नारंगी रंग के फूल, जिनमें अक्सर प्रमुख लाल नसें और कई पुंकेसर होते हैं, जो शुष्क मौसम (मार्च–अप्रैल और अगस्त–सितंबर) के दौरान पत्ती रहित, कांटेदार शाखाओं पर गुच्छों में या अकेले दिखाई देते हैं। इसमें एक वर्ष में 2 बार फूल आते हैं। फल का आकार गोल एवं पौधे की ऊंचाई 4–5 मीटर होती है। राजस्थान मे इसके फलो को टीण्ट या डेल्हा भी बोला जाता है।

कैर के औषधीय उपयोग : कैर एक ऐसा फल है जिसके सेवन से कई तरह की बीमारियां ठीक होती है। इसका कई तरह से उपयोग किया जा सकता है जैसे सब्जी, अचार इत्यादि। कैर को सुखाकर उसको पीसकर इसका चूर्ण बनाकर सुबह खाली पेट लेने से मधुमेह रोग में आराम मिलता है। कैर के डंठल से बने चूर्ण से कफ और खांसी में आराम मिलता है। कैर की छाल के चूर्ण से पेट साफ रहता है और कब्ज की समस्या दूर होती है। यह पेट संबंधी, जोड़ों के दर्द, दांत दर्द, गठिया, दमा, खांसी, सूजन, बार–बार बुखार होना, मलेरिया, डायबिटीज, बदहजमी, एसिडिटी, दस्त और कब्ज में काफी लाभदायक होता है। इस झाड़दार, कांटेदार वृक्ष के कच्चे फलों का स्वाद कसैला और कड़वा होता है, लेकिन इसके फायदे चमत्कारी हैं! आयुर्वेद के अनुसार, कैर भूख बढ़ाता है, व्रण, अल्सर और घाव भरने में मदद करता है, पाइल्स की समस्या को कम करता है, और अस्थमा, सर्दी–जुकाम में राहत देता है।

कैर का अचार बनाने के लिए सामग्रीः कैर – 250 ग्राम, नमक – 1 छोटी चम्मच, हल्दी पाउडर – 1 छोटी चम्मच, लाल मिर्च – 1–4 छोटी चम्मच, राई (पीली सरसों) – 2 छोटी चम्मच, सरसों का तेल – 350 मि.ली., सिरका – 1 छोटी चम्मच, कलोंजी – 1 छोटी चम्मच, सौंफ – 1 छोटी चम्मच, जीरा – 1 छोटी चम्मच

फलों का चयन : फलों को उनके आकार और रंग के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है। सभी रोगग्रस्त, विकृत, चोटिल और कच्चे फलों को अलग कर दिया जाता है। तोड़े गए फलों को तेज धूप में न छोड़े। फल तोड़ने के लिए थैलियों का उपयोग कर सकते है। जिससे लकड़ी या धातु से फल तोड़ने वाले डिब्बों पर घर्षण के कारण होने वाली क्षति कम हो जाती है और फलों को धीरे से नीचे उतारा जाता है। फल डंठल हटाकर तैयार किये जाते है।

कैर के फलो को भिगोना क्यो जरूरी है : कैर फल (कैपरिस डेसीडुआ) में कसैलापन मुख्य रूप से टैनिन और फेनोलिक के साथ–साथ फ्लेवोनोइड्स, ग्लाइकोसाइड्स और टेरपेनोइड्स प्राकृतिक यौगिकों की उपस्थिति के कारण होता है। ये टैनिन मुंह की लार मे मौजूद प्रोटीन कें साथ क्रिया करके मुंह मे सूखापन व सिकुडन की अनुभूति पैदा करते है। यौगिक विशेष रूप से कच्चे हरे फलों में अधिक मात्रा में पाए जाते हैं, जिससे इनका स्वाद कड़वा और कसैला हो जाता है, इसलिए इन्हें खाने से पहले उपचारित करना आवश्यक होता है। इसके लिए फलों को नमक के घोल में या छाछ के पानी में 5–7 दिनों तक भिगोकर रखा जाता है।

कैर का अचार बनाने की पारम्परिक विधि : कैर के डण्ठल तोड़कर उन्हें साफ पानी से धो लीजिये। इन फलो को एक चीनी मिट्टी या मिट्टी के मटके में भर कर इतना छाछ व पानी भर दें कि कैर डूब जाये और थोडा नमक भी मिला दीजिये। अब इस मटके को एक सूती कपड़े से ढककर धूप में रख दीजिये। मटके की छाछ व पानी हर दो दिन बाद बदलते रहें। कैर मे पाये जाने वाला कसैला पदार्थ कम से कम पांच–छह दिनों में कम होता है जिससे कैर का हरा रंग, पीले रंग में बदल जाता है और खाने पर कैर का स्वाद हल्का खट्टा–मिठा हो जाता है। जो अचार बनाने के लिए तैयार है।

कैर के फलों को संरक्षित करने के लिए इन्हें लगभग 100 डिग्री सेल्सियस तापमान वाले उबलते पानी में 2 से 5 मिनट तक रखना एक महत्वपूर्ण पूर्व–उपचार प्रक्रिया है। जो फल के हरे, प्राकृतिक रंग को बनाए रखने में मदद करता है। अब इन फलो को दो बार साफ पानी से धो कर छलनी में रख कर धूप में रख दीजिये। जिससे इनका पानी सूखने पर अचार बनाया जा सके। सरसों के तेल को पैन या कढाई में डालकर अच्छे से गरम कीजिये तत्पश्चात् कढ़ाई को चूल्हे से उतार कर नीचे रख कर तेल को हल्का ठण्डा कर लीजिये। अब एक बर्तन में कैर, हल्दी पाउदर, नमक स्वाद अनुसार, राई, कलोंजी, सोंफ, जीरा और लाल मिर्च डालकर अच्छी तरहा मिला लिजिये। अब कैर का बना मिश्रण हल्के ठंडे तेल में डालकर मिला लिजिये, अचार में थोडा सिरका डाल कर भी मिश्रित कर दीजिये। अचार को पूरी तरह ठण्डा होने के बाद, कांच या प्लास्टिक के कण्टेनर में भर कर रख लीजिये। एवं कैर के पात्र मे हल्का ठण्डा तेल इतना डालिये की कैर पूरी तरह डूब जाये जिससे अचार कभी खराब न हो सके। हर दो–तीन दिन में अचार को चम्मच से चलाते रहिये। 8–10 दिन में अचार खट्टा और स्वादिष्ट होने लगता हैं। जो खाने के लिए तैयार है।

कैर का अचार बनाते समय ध्यान रखें ये बातें

1. जिस डब्बे में आप अचार भर कर रखेंगे उसे उबलते पानी से धोकर धूप में सुखाकर तैयार कर लीजिये।
2. अचार खाने के लिये जब भी निकालें सूखी और साफ चम्मच का इस्तेमाल कीजिये, अचार निकालते समय, हाथ भी सूखे होने चाहिये।
3. अचार निकालने के बाद अचार को उसी चम्मच से ऊपर नीचे कर दीजिये, अचार का जीवनकाल बढ़ जाता है।
4. हमेशा ध्यान रखे की अचार के ऊपर इतना तेल रहे कि अचार दिखाई ना दे, इस से अचार में फंगस नहीं लगेगी।
5. नमक की सही मात्रा बहुत जरूरी है क्योंकि यह एक संरक्षक का काम करता है।
6. जार के मुंह को साफ रखना, फफून्द बार–बार जहां से शुरू होता है।
7. अचार को तैयार करने के बाद कुछ दिनों तक नियमित रूप से धूप में रखें। इसका संस्करण समाप्त हो गया है और स्वाद बढ़ गया है।
8. कांच या चीनी मिट्टी (चीनी मिट्टी बर्तन) के जार सबसे अच्छे होते हैं।

कृषि उत्पादों का प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन

नीरज जोशी, एम. एल. चौधरी, रीना जीतरवाल एवं जितेंद्र खरबास
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय जोबनेर

2026 के आधुनिक कृषि परिदृश्य में, केवल फसल उगाना और उसे मंडी में बेचना पर्याप्त नहीं रह गया है। आज का किसान केवल उत्पादक नहीं, बल्कि एक उद्यमी है। मूल्यसंवर्धन वह प्रक्रिया है जिसमें कच्चे कृषि उत्पादों को प्रसंस्करण पैकेजिंग या ग्रेडिंग के माध्यम से एक नए और अधिक मूल्यवान उत्पाद में बदला जाता है। उदाहरण के तौर पर, यदि एक किसान ₹20 प्रति किलो टमाटर बेचता है, तो उसे सीमित लाभ होता है।

मूल्यवर्धन क्यों आवश्यक है?

आय में वृद्धि मूल्यसवर्धित उत्पाद कच्चे माल की तुलना में बहुत अधिक कीमत पर बिकते हैं। भारत में लगभग 20-30% फल और सब्जियां खराब हो जाती हैं। प्रसंस्करण के माध्यम से इन्हें लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है। जिससे मौसम खत्म होने के बाद भी किसान प्रसंस्कृत उत्पादों (जैसे अचार, पापड़, जैम) को पूरे साल बेचकर कमाई कर सकते हैं। आधुनिक उपभोक्ता अब साफ–सुथरे, पैक किए हुए और ''रेडी–टू–ईट'' उत्पादों को प्राथमिकता देते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

किसानों के लिए मूल्यसंवर्धन के सरल और प्रभावी तरीके दिए गए हैं जिन्हें अपनाकर किसान अपनी उपज का मूल्य बढ़ा सकते हैं :

1. **सुखाना और निर्जलीकरण**

यह सबसे पुरानी और सस्ती तकनीक है। नमी को हटाकर उत्पादों की शेल्फ–लाइफ बढ़ाई जाती है।
उदाहरणः मिर्च को सुखाकर उसका पाउडर बनाना, अदरक से सोंठ बनाना, या अंगूर से किशमिश बनाना।
आधुनिक तकनीक सोलर ड्रायर का उपयोग करने से उत्पाद का रंग और पोषक तत्व बरकरार रहते हैं।

2. ग्रेडिंग और छंटाई

बिना किसी मशीन के भी मूल्यसंवर्धन किया जा सकता है। फसल को उसके आकार, रंग और गुणवत्ता के आधार पर अलग–अलग करना ''ग्रेडिंग'' कहलाता है।
लाभरू प्रीमियम गुणवत्ता वाले फल/सब्जियां ऊंची कीमतों पर बिकते हैं, जबकि औसत दर्जे के माल को स्थानीय बाजार में बेचा जा सकता है।

3. पैकेजिंग और ब्रांडिंग

उत्पाद को एक आकर्षक पैकेट में भरकर और अपना एक ब्रांड नाम देकर उसे बाजार में अलग पहचान दी जा सकती है।
टिपः जैविक प्रमाणन का लोगो होने से उत्पाद की कीमत 40 प्रतिशत तक बढ़ सकती है।

4. तेल निष्कर्षण

सरसों, मूंगफली या तिल को सीधे बेचने के बजाय, छोटे स्पेलर की मदद से तेल निकालकर बेचना अधिक फायदेमंद है।
फायदा तेल के साथ–साथ खली भी बचती है जिसे पशु आहार के रूप में ऊंचे दामों पर बेचा जा सकता है।

5. किण्वन और अचार बनाना

सब्जियों को मसालों और तेल के साथ संरक्षित करना। उदाहरण : आम, नींबू, आंवला और गाजर का अचार। यह ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के लिए आय का बेहतरीन स्रोत है।
किसानों के लिए सरकारी सहायता और योजनाएं
भारत सरकार और राज्य सरकारें मूल्यसंवर्धन के लिए कई प्रोत्साहन दे रही हैं :
पीएम सूक्ष्म खाद्य उद्योग उन्नयन योजना इसके तहत छोटी प्रोसेसिंग यूनिट लगाने के लिए 35 प्रतिशत तक की सब्सिडी दी जाती है।
किसान उत्पादक संगठनःछोटे किसान मिलकर एक समूह बना सकते हैं, जिससे मशीनरी खरीदना और मार्केटिंग करना आसान हो जाता है।
नाबार्ड ऋण प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना के लिए आसान किस्तों पर ऋण उपलब्ध है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना –किसानों की आर्थिक सुरक्षा का एक कवच

सन्तोष देवी सामोता, आई. एम. खान, बी. एस. बधाला एवं दीक्षा शर्मा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

किसानों की फसल से जुड़े जोखिम की वजह से हो सकने वाले नुकसान से रक्षा करने का माध्यम है फसल बीमा इससे किसानों की अचानक आए जोखिम या खराब मौसम से फसल को हुए नुकसान की भरपाई की जाती है "राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना" एवं "संशोधित राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना को रबी 2015–16 के बाद बंद कर किसानों को अधिक सुरक्षा देने के लिए और किसानों को छोटे प्रीमीयम पर बड़ा बीमा कराने के उद्देश्य से अब खरीफ 2016 से कृषक हितेशी "प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना" शुरू की गई है। यह योजना के तहत किसानों के हित को ध्यान में रख कर बनाई गई है। इसमें प्राकृतिक आपदाओं के कारण खराब हुई फसल के खिलाफ किसानों द्वारा भुगतान की जाने वाली बीमा की किस्तों को बहुत कम रखा गया है, जिससे प्रत्येक स्तर से किसान आसानी से भुगतान कर सके। ये योजना न केवल खरीफ और रबी की फसलों को बल्कि वाणिज्यिक और बागवानी फसलों के लिए भी सुरक्षा प्रदान करती है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के अन्तर्गत आने वाले 3 सालों के अन्तर्गत सरकार द्वारा 8,800/– करोड़ खर्च करने के साथ ही 50 प्रतिशत किसानों को कवर करने का लक्ष्य रखा गया है।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का उद्देश्यः–प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के उद्देश्य निम्नलिखित है।

1. प्राकृतिक आपदाओं, कीट और रोगो के परिणामस्वरूप अधिसूचित फसलों में से किसी भी विफलता की स्थिति में किसानों को बीमा कवरेज और वित्तीय सहायता प्रदान करना।
2. कृषि में किसानों की सतत् प्रक्रिया सुनिश्चित करने के लिए उनकी आय को स्थायित्व देना।
3. किसानों को कृषि में नवाचार एवं आधुनिक तकनीकी को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।
4. कृषि क्षैत्रों मे ऋण के प्रवाह को सुनिश्चित करना।
5. किसानों को अदृष्ट घटनाओं के कारण हुए फसलों के नुकसान होने पर आर्थिक सहायता प्रदान करना।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना को शुरु करने का कारणः भारतीय अर्थव्यवस्था को कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था कहा जाता है क्योंकि भारत की लगभग 65–70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों से अपना जीवन यापन करती है।

भारत दूसरा सबसे बड़ा कृषि उत्पादक देश है जो सकल घरेलू उत्पादन का लगभग 17.2 प्रतिशत आय का भाग रखता है। जिससे देश की अर्थव्यवस्था को एक मजबूत आधार मिलता है। अपने देश में कृषि के विकास के लिए अनेक योजनाएं चल रही है, किन्तु वो पुरी तरह से किसानों को कृषि सम्बंधित जोखिमों और अनिश्चिताओं को कम नहीं करती है। प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना बहुत हद तक प्राकृतिक आपदाओं (जैसे–सूखा, बाढ़, तुफान, तुफानी बरसात इत्यादि) से किसानों को सुरक्षा प्रदान करती है। ये पुरानी योजनाओं में व्याप्त कमीयों को दूर करके बीमा प्रदान करने वाले क्षेत्रों और बीमा के अन्तर्गत आने वाली सभी फसलों का सही–सही उल्लेख/व्याख्या किया गया है।

इस योजना के तहत कौन–कौन से किसान अपनी फसलों का बीमा कर सकते है? राज्य सरकारों/संघ क्षैत्रों द्वारा तय किए गये इलाकों में तय की गई फसल जो कि खाद्यान्न, तिलहन, दलहन एवं वाणिज्यिक और बागवानी फसल है जिन्हे उगाने वाले किसान बीमा करा सकते है। नई बीमा योजना तय किए गये क्षैत्रों में किसान क्रेडिट कार्ड खाता धारक किसानों के लिए अनिवार्य आधार पर एवं अन्य सभी किसान अगर चाहें तो बीमा का लाभ ले सकते है।

इस योजना द्वारा वहन किये जाने वाली प्रीमीयम दरे :–प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के अर्न्तगत फसल के अनुसार किसानों द्वारा प्रीमीयम राशि बहुत कम कर दी गई ह जो निम्नलिखित है।

क्र.स.	फसल	किसानों द्वारा देय अधिकतम बीमा प्रभार (बीमीत राशि का प्रतिशत)
1	खरीफ	2.0 प्रतिशत
2	रबी	1.5 प्रतिशत
3	वार्षिक वाणिज्यिक एवं बागवानी फसलें	5 प्रतिशत

किसान भाईयों द्वारा देय प्रीमीयम कुल बीमीत राशि का खरीफ की फसलों में अधिकतम 2 प्रतिशत प्रीमीयम होगा जिससे धान, मक्का, ज्वार, बाजरा, मुंग, एवं मूंगफली आदि आती है। और रबी की फसलों में अधिकतम 1.5 प्रतिशत प्रीमीयम होगा जिनमें गेहूं, चना, जौ, मसूर एवं सरसों आदि आती है। वाणिज्यिक और बागवानी फसलों हेतु अधिकतम 5 प्रतिशत ही कृषक द्वारा वहन किया जायेगा शेष राशि 50:50 प्रतिशत के अनुसार केन्द्र और राज्य सरकार द्वारा वहन की जायेगी।

बीमीत राशि – 100000 रू.
प्रीमीयम दर – 10 प्रतिशत यानी 10000 रूपये
केन्द्र सरकार देगी – 4 प्रतिशत यानी 4000 रूपये
राज्य सरकार देगी – 4 प्रतिशत यानी 4000 रूपये
किसान को देय राशि है – 2 प्रतिशत यानी 2000 रूपये

योजना के तहत कवर किये जाने वाले जोखिम

फसल के निन्नलिखित चरण और फसल नुकसान के लिए जिम्मेदार जोखिम योजना के अन्तर्गत कवर किये जाते है।

1. **बुवाई/रोपण मे रोक संबंधित जोखिम** :– बीमीत क्षैत्र में कम बारिश या प्रतिकूल मौसमी परिस्थितियों के कारण बुवाई रोपण में उत्पन्न रोक।
2. **खड़ी फसल (बुवाई से कटाई तक):–** नही रोके जा सकने वाले जोखिम जैसे सूखा, अकाल, बाढ़, सैलाब, कीट व रोग, प्राकृतिक आग और बिजली, तुफान, ओले, चक्रवात, आंधी, तुफान आदि के कारण उपज नुकसान को कवर करने के लिए व्यापक जोखिम बीमा प्रदान की जाती है।
3. **कटाई के उपरान्त नुकसान :–** फसल कटने के 14 दिन तक यदि फसल खेत में है और उस दौरान कोई आपदा (चक्रवात, चक्रवाती बारिश, और बिना मौसम बारिश) आपदा आ जाती है तो किसानों को दावा राशि प्राप्त हो सकेगी।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना का महत्व और लाभः यह योजना अपने आप में बहुत महत्वपूर्ण योजना है क्योकि ये भारतीय अर्थव्यवस्था के मुख्य आधार पर कृषि से जुड़ी हुई है प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना ऐसे समय में अस्तित्व में आई जब भारत में दीर्घकालीन ग्रामीण संकटो का सामना कर रहा है। इस योजना के कुछ प्रमुख महत्व और लाभ निम्न है।

1. प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना की प्रीमीयम की दर बहुत कम है जिससे किसान इसकी किस्तों का भुगतान आसानी से कर सकंगें।
2. ये योजना में सभी प्रकार की फसलों को बीमा क्षैत्रों शामिल करती है, जिससे सभी किसान किसी भी फसल के उत्पादन के समय अनिश्चिताओं से मुक्त होकर जोखिम वाली फसलों का भी उत्पादन करे।
3. यह योजना किसानों को मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ बनाये रखती है।
4. इस योजना के क्रियान्वयन के साथ ही भविष्य में सकल घरेलू उत्पादकता को बढ़ायेगी।
5. इस योजना के क्रियान्वयन से किसानों में सकारात्मक उर्जा का विकास होगा जिससे किसानों की कार्यक्षमता में सुधार होगा।
6. सुखे और बाढ़ के कारण आत्महत्या करने वाले किसनों की संख्या में कमी होगी।
7. स्मार्टफोन के माध्यम से कोई भी किसान असानी से अपने नुकसान का अनुमान लगा सकता है।
8. इस योजना में सरकारी सब्सिडी पर कोई ऊपरी सीमा नही है यदि बचा हुआ प्रीमीयम 90 प्रतिशत होता है, तो ये सरकार द्वारा वहन किया जायेगा।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

9. बीमीत किसान यदि प्राकृतिक आपदा या घटनाओं के कारण बुआई नही कर पाता तो यह जोखिम भी उसके दावा राशि में मिलेगें।

इस योजना के तहत फसल बीमा कैसे करायेः इस योजना के तहत बीमा करवाने के लिए किसान अपने निकटतम बैंक शाखा कृषि सहकारी समिति या तय की गई बीमा कम्पनी या उसके स्थानीय एजेंट को प्रीमीयम का भुगतान करके फसल बीमा करवा सकते है या अपने निकटतम कृषि विभाग कार्यालय में सम्पर्क करें या किसान कॉल सेन्टर के निःशुल्क टेलिफोन नम्बर 18001801551 पर बात कर सकते है। अधिक जानकारी के लिए www.agri.isurance.gov.in देखे।

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के तहत पालिसी अमाउंट कैसे क्लेम करें:इस स्कीम के अंतर्गत किसान अपनी बीमा राशि या तो बैंक से अथवा उन बीमा कंपनी जिन्हें सरकार ने इस योजना के लिये चुना है, वहाँ से प्राप्त कर सकते हैं. यदि बीमा कवर बैंक से प्राप्त किया जाये तो, बैंक खुद व खुद अलग अलग किसानों के लिए अलग अलग अकाउंट में पैसे जमा कर देगा. एक बार बैंक अकाउंट में पैसा जमा हो जाने के बाद लाभार्थियों का नाम और उनके डिटेल बैंक द्वारा संपादित किये जायेंगे.किसी बीमा पालिसी कंपनियों के अंतर्गत लाभ प्राप्त होने पर ये बीमा कम्पनियों द्वारा किसान के बैंक अकाउंट में बीमा की राशि ऑनलाइन ट्रान्सफर कर दी जाती हैं.

प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना के अंतर्गत फसल का नाम कैसे बदलें: किसान अपने खेत की मिट्टी के गुणों और तात्कालिक वातावरण के अनुसार फसल उगाने की योजना बनाता है, और अपने चयनित फसल पर बीमा की सुविधा अर्जित करता है. किन्तु कभी कभी परिस्थितिवश किसानों को अपनी योजना में परिवर्तन लाना होता है और तय किये गये अनाज की जगह अन्य अनाज की खेती करनी होती है. ऐसे में नए फसल पर बीमा का लाभ प्राप्त करने के लिए किसानों को नए फसल की बीमा करानी होती है. प्रधानमत्री फसल बीमा योजना ऐसी परिस्थिति से निपटने में खूब सहायता करती है. अतः इस योजना के अन्तर्गत किसान बीजरोपण के 30 दिन पहले तक अपने फसल का नाम बदल सकते हैं.

यदि नए फसल का प्रीमियम पुरानी फसल के प्रीमियम से अधिक है, तो किसान को बाकी बची राशियाँ जमा करनी होती हैं. इसी तरह यदि नयी फसल की प्रीमियम पुरानी फसल की प्रीमियम से कम है तो बाकी बची राशि किसान के बैंक अकाउंट में रिफंड कर दी जाती है.

ज्वार के स्वास्थ्य लाभ एवं मूल्य–संवर्धन उत्पाद

प्रियंका जोशी एवं नवाब सिंह
कृषि विज्ञान केन्द्र, कुम्हेर, भरतपुर, राजस्थान

ज्वार भारत में उपयोग में लाये जाने वाले पारम्परिक अनाजों में से एक हैं। यह मूल रूप से अफ्रीका का मुख्य अनाज है। भारत में ज्वार का उत्पादन राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश, उत्तरप्रदेश, हरियाणा, तमिलनाडू में किया जाता है। यह गर्म जलवायु सूखे की स्थिति व कम पानी वाले स्थानों पर आसानी से उगाया जा सकता हैं। ज्वार की कई किस्में होती है जिनमें प्रमुख है सफेद एवं लाल। ज्वार में चुपड़ी ज्वार, गुन्दगी ज्वार एवं कमलपरू नामक अन्य किस्म भी होती हैं। गुन्दगी ज्वार में प्रचुर मात्रा में पोषक तत्व पायें जाते हैं। कमलपरू ज्वार कुछ लालिमा लिए हुए होता है। ज्वार ग्लूटेन व कोलेस्ट्रॉल मुक्त अनाज हैं, जिसमें उच्च गुणवत्ता का प्रोटीन, विटामिन ई, लौह तत्व, मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, रेशा एवं एंटीऑक्सीडेंट पाये जाते हैं। इससें गेहूँ व चावल की तुलना में ऊर्जा अधिक मात्रा में मिलती हैं। जिससे व्यक्ति हष्ट पुष्ट और स्फूर्तिमान बना रहता है। ज्वार शीतल और रूक्ष होने के कारण वायुकारक हैं।

स्वास्थ्य लाभ

1. ज्वार में गेहूँ, चावल की तुलना में उच्च मात्रा में रेशा पाया जाता है जो कि मोटापा, स्ट्रोक, उच्च रक्तचाप, मधुमेह आदि बीमारियों की रोकथाम व बचाव में सहायक हैं।
2. ज्वार में पाये जाने वाला एन्थोसाइनिन पिगमेन्ट शरीर को फ्री रेडिकल्स (मुक्त मूलक) से होने वाले दुष्प्रभावों से बचाता है एवं रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को नियंत्रित करता हैं।
3. ज्वार का नियमित सेवन हृदय रोगों के होने की सम्भावना को कम करता हैं।
4. ज्वार में उपस्थित रासायनिक तत्व (फाइटोकेमिकल्स) विभिन्न प्रकार के कैंसर जैसे पेट, स्तन व अन्य प्रकार के कैंसर के रोकथाम में सहायक हैं।
5. ज्वार में कैल्शियम, फॉस्फोरस व पोटेशियम प्रचुर मात्रा में उपस्थित होता हैं। कैल्शियम हड्डियों की मजबूती एवं पोटेशियम मांसपेशियों के अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।
6. ज्वार में लौह तत्व की प्रचुरता होती है जो रक्ताल्पता की स्थिति से दूर रखने में सहायक हैं।
7. ज्वार बवासीर और घावों की रोकथाम में लाभदायक हैं।
8. ज्वार के दानों की राख बनाकर मंजन करने से दांतों का हिलना, उनमें दर्द होना बंद हो जाता हैं एवं मसूड़ों की सूजन भी समाप्त हो जाती हैं।

9. भुनी ज्वार बताशों के साथ खाने से पेट की जलन एवं अधिक प्यास लगना बंद हो जाता हैं।
10. ज्वार के आटे को पानी में घोलकर शरीर पर लेप लगाने से गर्मी से हो रही जलन में राहत मिलती है।

ज्वार के उपयोग :मुख्यतः ज्वार का उपयोग खाद्य पदार्थों में (जैसे रोटी, भाकरी, बाटी, साजा, गुड़ पपड़ी, राब, हलवा इत्यादि) एवं एल्कोहोलिक पेय पदार्थों के निर्माण में किया जाता हैं।

ज्वार हलवा

सामग्री	मात्रा
1. ज्वार का आटा	100 ग्राम
2. पका हुआ केला	1
3. शक्कर	80 ग्राम
4. घी	50 ग्राम
5. पानी	आवश्यकतानुसार
6. इलायची	1

विधि :–

1. कडाई में घी गर्म करें।
2. ज्वार के आटे को कडाई में डालकर अच्छी तरह सेकें।
3. केले को अच्छी तरह मसलकर सेंके हुए आटे में डालें।
4. पानी को गरम करके आटे में डालें व शक्कर को डालकर अच्छी तरह मिलाएं और गाढ़ा होने तक पकाएं।
5. इलायची का पाउडर डालकर गरम–गरम परोसे।

ज्वार–बाजरा–लहसुन रोटी

समग्री	
मात्रा	
1. ज्वार व बाजरा का आटा	100 ग्राम
2. लहसुन व हरी मिर्च पेस्ट	एक चम्मच
3. तिल	1 चम्मच
4. नमक	स्वादानुसार
5. घी	10 ग्राम

विधि :–

1. परात में ज्वार व बाजरे का आटा, लहसुन, हरी मिर्च का पेस्ट, तिल व नमक डालें।
2. आवश्यकतानुसार पानी की सहायता से नरम आटा गूंथ लें।
3. आटे की लोई बनाकर गोल बेल लें।
4. नॉन–स्टिक तवे पर रोटी को दोनों ओर से सेकें और गैस पर फूला लें।
5. रोटी पर घी लगाकर गरम–गरम परोसें।

ज्वार भाकरी

समग्री	मात्रा
1. ज्वार का आटा	100 ग्राम
2. नमक	स्वादानुसार

विधि :–

1. परात में ज्वार का आटा व नमक लें व गरम पानी से ठोस आटा गूंथ लें।
2. आटे की लोई बनाकर गोलाई में बेल लें।
3. नॉन–स्टिक तवे को गर्म करें व भाकरी को एक तरफ से 1 मिनट के लिए सेकें।
4. फिर दूसरी तरफ पलटें व एक मिनट के लिए सेकें एवं सीधी आंच पर दोनों ओर से फूला लें। गरम–गरम परोसें।

ज्वार डोसा

समग्री	मात्रा
1. ज्वार का आटा	75 ग्राम
2. गेहूँ का आटा	25 ग्राम
3. चावल	20 ग्राम
4. उड़द दाल	50 ग्राम
5. मेंथी दाना	आधा चम्मच
6. नमक	स्वादानुसार

विधि :–

1. एक कटोरी में उड़द की दाल, चावल व मेथी दाने को पानी में 2 घण्टे के लिए भिगोएं।
2. भिगी हुई दाल, चावल व मेथी दाना को मिक्सर में पीस लें।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

3. भगोने में पीसी हुई दाल, चावल का पेस्ट, ज्वार व गेहूँ का आटा एवं आवश्यकतानुसार पानी मिलाकर गाढ़ा घोल बना लें।
4. इस घोल को 8 घण्टे के लिए खमीरीकरण के लिए रखें।
5. घोल में नमक मिलाकर नॉन–स्टिक तवे पर दो बड़े चम्मच डालें व फैलायें।
6. डोसा को दोनों ओर से सुनहरा होने तक सेकें व गरम–गरम सांभर के साथ परोसें।

ज्वार उपमा

समग्री	मात्रा
1. ज्वार का आटा	100 ग्राम
2. प्याज	50 ग्राम
3. टमाटर	50 ग्राम
4. हरी मिर्च	1 चम्मच
5. हरा धनिया व करी पत्ता	कुछ पत्तियां
6. उड़द दाल व चना दाल	आधा चम्मच
7. नमक	स्वादानुसार
8. नींबू का रस	आधा चम्मच
9. तेल	15 मि.ली.
10. पानी	आवश्यकतानुसार

विधि :–

1. कडाई में थोड़ा तेल डालकर कर गर्म करें व उसमें ज्वार का आटा डालें। हल्का भूरा होने तक सेकें।
2. दूसरी कडाई में तेल डालकर गर्म करें एवं राई, जीरे का तड़का लगायें।
3. अब उसमें उड़द दाल, चना दाल डालें व सुनहरा होने तक सेकें।
4. फिर करीपत्ता, प्याज, टमाटर, हरी मिर्च व नमक डालें तथा पकने पर पानी डालकर उबालें।

ज्वार गुड़ पपड़ी

समग्री	मात्रा
1. ज्वार आटा	100 ग्राम
2. घी	50 ग्राम
3. गुड़	75 ग्राम

विधि :–

1. कडाई में घी गर्म करें व उसमें ज्वार का आटा डालकर अच्छी तरह मिलाएं।
2. ज्वार के आटे को थोड़ी–थोड़ी देर में हिलाते हुए 3 मिनट के लिए पकाएं।
3. अब उसमें बारीक कटा हुआ गुड़ डालें व अच्छी तरह मिलाएं।
4. अब इसे घी लगी हुई थाली में डालें व जमाएं।
5. चाकू की सहायता से चौकोर काट लें व ठण्डा होने पर परोसें अथवा हवाबंद में रखें।
6. अब उसमें सिका हुआ ज्वार का आटा डालकर अच्छी तरह मिलाएं एवं 5 मिनट तक पकाएं।
7. नींबू या गुड़ डालकर गरम–गरम परोसें।

सब्जियों की संरक्षित खेतीः किसानों के लिए एक वरदान

रीना जीतरवाल, ओ.पी. गढवाल, नीरज जोशी एवं सुमन
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय जोबनेर

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ अधिकांश जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है। वर्तमान परिदृश्य में, सब्जियों की पैदावार, गुणवत्ता और उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषि में नई संरक्षित तकनीकों का उपयोग एक महत्वपूर्ण विषय बन गया है। अधिकांश किसान खुले खेतों में खेती की तकनीक अपनाते हैं, लेकिन ये तकनीकें अंततः भूमि मूल्य, जल उपलब्धता और किसान की आय में कमी लाती हैं क्योंकि इनमें उचित तापमान, आर्द्रता और अन्य मानदंड उपलब्ध नहीं होते हैं। इसलिए, कृषि उपज, मृदा उर्वरता, लाभप्रदता और स्थिरता आदि कारकों में सुधार के मामले में संरक्षित संरचनाएं आधारित खेती (संरक्षित खेती) तकनीक खुले खेतों में खेती की तुलना में बेहतर है।

संरक्षित खेती की अवधारणा

संरक्षित खेती के अंतर्गत पॉलीहाउस, ग्रीनहाउस, शेडनेट हाउस तथा लो–टनल जैसी संरचनाओं का उपयोग किया जाता है। इन संरचनाओं में तापमान, आर्द्रता, प्रकाश तथा कार्बन डाइऑक्साइड के स्तर को नियंत्रित कर पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ बनाई जाती हैं। ग्रीनहाउस में प्रकाश नियंत्रण से कार्बन डाइऑक्साइड का स्तर भी नियंत्रित किया जा सकता है, जिससे प्रकाश संश्लेषण की दर बढ़ती है और फसलें अधिक स्वस्थ रहती हैं। इसी प्रकार, शेड नेट हाउस में तापमान और प्रकाश की संरचित मात्रा की वजह से कीट नियंत्रण और रोगों से बचाव आसान हो जाता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

इस तरह, संरक्षित खेती न केवल उत्पादन बढ़ाती है, बल्कि वैज्ञानिक दृष्टि से भी अधिक स्थिर और टिकाऊ खेती को संभव बनाती है।

संरक्षित प्रणाली में उत्पादित प्रमुख सब्जिया

टमाटर, चेरी टमाटर, खीरा, शिमला ,पालक, बैंगन

संरक्षित संरचनाओं के प्रकार

1.ग्रीनहाउस . इसमें पारदर्शी शीशा या प्लास्टिक का इस्तेमाल होता है, जिससे सूर्य की रोशनी अंदर आती है, और फसलों को नियंत्रित वातावरण मिलता है।

2.पॉलीहाउस .यह एक पारदर्शी प्लास्टिक की संरचना होती है, जिसमें तापमान और आर्द्रता नियंत्रित की जाती है।

3.शेड नेट हाउस . यह एक छायादार जाल होता है, जो सूरज की रोशनी और हवा को नियंत्रित है, ताकि फसलों को उपयुक्त छाया मिले।

4.टनल खेती . इसमें प्लास्टिक या अन्य हल्की सामग्री से बनी छोटी–छोटी सुरंगें बनाई जाती हैं, जो तापमान और बारिश से सुरक्षा प्रदान करती हैं।

उत्पादन तकनीक

(क) उन्नत किस्मों का चयन

हाइब्रिड एवं रोग–रोधी किस्मों का चयन किया जाता है, जिससे अधिक उत्पादन प्राप्त हो सके।

(ख) नर्सरी प्रबंधन

कोकोपीट एवं ट्रे विधि द्वारा स्वस्थ पौध तैयार की जाती है।

(ग) ड्रिप सिंचाई एवं फर्टिगेशन

ड्रिप प्रणाली द्वारा जल की बचत होती है तथा फर्टिगेशन के माध्यम से घुलनशील उर्वरकों का संतुलित उपयोग किया जाता है।

(घ) कटाई एवं छंटाई

पौधों को सहारा देकर एवं अनावश्यक शाखाओं को हटाकर बेहतर फलन सुनिश्चित किया जाता है।

(ङ) एकीकृत कीट एवं रोग प्रबंधन

पीली एवं नीली चिपचिपी ट्रैप, जैविक कीटनाशक एवं न्यूनतम रासायनिक दवाओं का प्रयोग किया जाता है।

संरक्षित खेती के प्रमुख लाभ

1. अधिक उत्पादकता
2. वर्षभर उत्पादन संभव
3. कीट और रोगों से सुरक्षा
4. बेहतर गुणवत्ता वाली फसलें
5. मौसम से प्रभावितता कम

चुनौतियाँ

- प्रारंभिक लागत अधिक
- तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता
- ऊर्जा एवं रखरखाव खर्च
- बाजार पर निर्भरता

निष्कर्ष: संरक्षित खेती उच्च मूल्य वाली सब्जियों के उत्पादन के लिए एक आधुनिक एवं लाभकारी तकनीक है। यह तकनीक किसानों को जलवायु जोखिम से सुरक्षा प्रदान करती है तथा गुणवत्तापूर्ण उत्पादन के माध्यम से आय में वृद्धि करती है। उचित प्रशिक्षण, सरकारी अनुदान एवं बाजार संपर्क के माध्यम से इसे व्यापक स्तर पर अपनाया जा सकता है।

स्वच्छ कृषि उत्पादन और पर्यावरणीय सततता में बायोचार की भूमिका

राहुल कुमार जाट, रोशन चौधरी एवं एस. एस. यादव
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

वर्तमान समय में बायोचार मृदा सुधारक के रूप में विशेष महत्व प्राप्त कर रहा है। यह भूमि उर्वरता बढ़ाता है, फसल उत्पादन में सुधार लाता है, तथा रासायनिक उर्वरकों के साथ प्रयोग से उपज में उल्लेखनीय वृद्धि करता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

बायोचार एक कार्बन–समृद्ध, सूक्ष्म रंध्रयुक्त पदार्थ है जो शीघ्र अपघटित नहीं होता। पौधों के अवशेषों को वायुहीन अवस्था में 350–600 C तापमान पर तापित (पायरोलिसिस) कर तैयार किया जाता है। इस प्रक्रिया से वाष्पशील तत्व निकलकर जैव–तेल, ज्वलनशील गैस और ठोस काला बायोचार प्राप्त होता है। बायोचार सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ाता है, पोषक तत्वों की हानि रोकता है तथा फास्फोरस जैसे आवश्यक तत्वों की उपलब्धता व अवशोषण में सहायक होता है। इसकी उच्च सतह क्षेत्र व रंध्र संरचना जल–धारण क्षमता बढ़ाती है तथा लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए आदर्श वातावरण बनाती है। प्रभाव भूमि प्रकार, बायोचार प्रकृति एवं स्थानीय सूक्ष्मजीवों पर निर्भर करता है।बायोचार मृदा स्वास्थ्य को दीर्घकालिक रूप से मजबूत बनाता है, रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता घटाता है। यह पर्यावरणीय स्थिरता सुनिश्चित करते हुए स्वच्छ, उत्पादक कृषि का आधार प्रदान करता है।

बायोचार का निर्माण एवं गुणधर्मः–बायोचार एक कार्बन–समृद्ध पदार्थ है, जिसे जैव पदार्थों को सीमित ऑक्सीजन (O_2) की उपस्थिति में ताप–विघटन प्रक्रिया द्वारा तैयार किया जाता है। इसके निर्माण में फसल अवशेष, वन अपशिष्ट, पशु अपशिष्ट तथा अन्य जैविक उप–उत्पादों का उपयोग किया जाता है। बायोचार के गुण मुख्यतः प्रयुक्त कच्चे पदार्थ तथा ताप– विघटन के दौरान अपनाए गए तापमान पर निर्भर करते हैं। धीमी ताप–विघटन से तैयार किया गया बायोचार उच्च कार्बन स्थिरता तथा अधिक रंध्रता वाला होता है, जबकि अधिक तापमान पर तैयार बायोचार में सतही क्षेत्रफल, पीएच तथा विशेष चक्रीय कार्बन की मात्रा बढ़ जाती है, परंतु वाष्पशील यौगिकों और पोषक तत्वों की मात्रा कम हो जाती है। सामान्यतः बायोचार का पीएच क्षारीय होता है तथा इसकी संरचना अत्यधिक रंध्रयुक्त होती है, जिससे इसका सतही क्षेत्रफल बहुत अधिक होता है और इसमें उच्च धनायन विनिमय क्षमता पाई जाती है। इन गुणों के कारण बायोचार मृदा में जल एवं पोषक तत्वों को प्रभावी रूप से धारण करने में सक्षम होता है।अपनी स्थिर चक्रीय कार्बन संरचना के कारण बायोचार मृदा में लंबे समय तक बना रहता है और दीर्घकालीन कार्बन स्रोत के रूप में कार्य करता है।

स्वच्छ कृषि उत्पादन में बायोचार की भूमिकाः–स्वच्छ कृषि उत्पादन का उद्देश्य फसल उत्पादकता में वृद्धि करते हुए पर्यावरणीय प्रदूषण को न्यूनतम करना, प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करना तथा हरितगृह गैस उत्सर्जन को कम करना है। बायोचार एक प्रमुख पारिस्थितिक कृषि इनपुट के रूप में उभर कर सामने आया है, जो पोषक तत्व उपयोग दक्षता में सुधार, कृषि–रसायनों की हानि में कमी, क्षतिग्रस्त मृदाओं का पुनर्स्थापन तथा फसल उत्पादन की पर्यावरणीय छाप को कम करके स्वच्छ उत्पादन के सिद्धांतों के साथ पूर्णतः सामंजस्य स्थापित करता है।

- **पोषक तत्व उपयोग दक्षता में वृद्धिः–**तीव्र कृषि प्रणाली की प्रमुख समस्याओं में से एक उर्वरकों की कम उपयोग दक्षता है, विशेष रूप से नत्रजन एवं फास्फोरस के संदर्भ में। बायोचार में उच्च धनायन विनिमय क्षमता तथा रंध्रयुक्त संरचना होती है, जिसके कारण यह अमोनियम, पोटैशियम कैल्शियम, मैग्नीशियम तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों को अवशोषित कर धारण कर सकता है। इससे पोषक तत्वों का अपक्षालन एवं वाष्पीकरण द्वारा होने वाला नुकसान कम हो जाता है। विभिन्न अध्ययनों में यह बताया गया है कि बायोचार के प्रयोग से मृदा में नत्रजन धारण क्षमता में उल्लेखनीय वृद्धि होती है तथा नाइट्रोजन उपयोग दक्षता में सुधार आता है, जिससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है। इस प्रकार, बायोचार उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ाकर स्वच्छ एवं सतत कृषि प्रणाली को प्रोत्साहित करता है।
- **मृदा एवं जल प्रदूषण में कमीः–** उर्वरकों एवं कीटनाशकों का अत्यधिक प्रयोग नाइट्रेट के अपक्षालन, जलाशयों के अतिपोषण तथा भूजल प्रदूषण का प्रमुख कारण है। बायोचार कृषि–रसायनों एवं भारी धातुओं के लिए एक प्रभावी अवशोषक के रूप में कार्य करता है, जो विषैले तत्वों को स्थिर कर उनके जल स्रोतों में प्रवेश को रोकता है।बायोचार की उच्च अवशोषण क्षमता नाइट्रेट, फॉस्फेट तथा कीटनाशकों के बहाव को कम करने में सहायक होती है, जिससे मृदा एवं जल की गुणवत्ता में सुधार होता है और पर्यावरण–संवेदनशील एवं उत्तरदायी कृषि प्रणालियों को बढ़ावा मिलता है।
- **मृदा के भौतिक पर्यावरण में सुधारः–** बायोचार मृदा के घनत्व को कम करके तथा रंध्रता, वायुसंचार और जल–धारण क्षमता बढ़ाकर मृदा संरचना में सुधार करता है। इसके परिणामस्वरूप जड़ों का प्रवेश सरल होता है, मृदा में नमी अधिक समय तक बनी रहती है तथा सूक्ष्मजीव गतिविधि में वृद्धि होती है। बायोचार से उपचारित मृदाओं में समुच्चय स्थिरता अधिक पाई जाती है तथा अपरदन में कमी आती है, जिससे सतत भूमि प्रबंधन एवं स्वच्छ कृषि परिदृश्य को बढ़ावा मिलता है।
- **लाभकारी मृदा सूक्ष्मजीव गतिविधि का प्रोत्साहनः–**बायोचार की अत्यधिक रंध्रयुक्त सतह लाभकारी सूक्ष्मजीवों जैसे नत्रजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु, फास्फेट घुलनशील बनाने वाले जीवाणु तथा माइकोराइज़ल कवकों के लिए अनुकूल आवास प्रदान करती है। ये सूक्ष्मजीव समुदाय पोषक तत्व चक्रण, जैविक पदार्थों के अपघटन तथा रोग–दमन प्रक्रियाओं को सुदृढ़ बनाते हैं, जिससे रासायनिक स्रोतो की आवश्यकता में कमी आती है।
- **ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन में कमीः–** बायोचार का प्रयोग कृषि मृदाओं से नाइट्रस ऑक्साइड , तथा मीथेन के उत्सर्जन को उल्लेखनीय रूप से कम करता है। यह मृदा में कार्बन को स्थिर करता है तथा कार्बन संचयन की

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

क्षमता को बढ़ाता है, जिससे जलवायु–स्मार्ट कृषि को प्रोत्साहन मिलता है। इस प्रकार, बायोचार स्वच्छ एवं कम–उत्सर्जन वाली कृषि प्रणालियों को प्राप्त करने के लिए एक महत्वपूर्ण साधन सिद्ध होता है।

बायोचार द्वारा नियंत्रित पौध वृद्धि एवं शारीरिक क्रियाएँ

- **जड़ वृद्धि एवं मूल परिवेश विकासः–** बायोचार मृदा की रंध्रता बढ़ाकर तथा घनत्व को कम करके जड़ों के गहराई तक प्रवेश एवं अधिक सतही क्षेत्र के विकास को प्रोत्साहित करता है। इसकी रंध्रयुक्त संरचना लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए सूक्ष्म आवास प्रदान करती है, जिससे जड़–सूक्ष्मजीव अंतःक्रिया सुदृढ़ होती है और पोषक तत्वों का अवशोषण बढ़ता है।
- **प्रकाश संश्लेषण दक्षताः–** बायोचार नत्रजन, मैग्नीशियम तथा लौह जैसे आवश्यक पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाकर पत्तियों में पर्णहरित की मात्रा, रंध्र चालकता तथा शुद्ध प्रकाश संश्लेषण दर में वृद्धि करता है। इसके परिणामस्वरूप पत्ती क्षेत्रफल एवं प्रकाश अवशोषण में सुधार होता है, जिससे अधिक जैवभार उत्पादन संभव होता है।
- **पोषक तत्वों का अवशोषण एवं समावेशनः–** बायोचार की उच्च धनायन विनिमय क्षमता पोषक तत्वों के अपक्षालन को कम करती है तथा नत्रजन, फास्फोरस, पोटैशियम एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाती है। इससे पौधों में पोषक तत्व उपयोग दक्षता तथा चयापचय गतिविधि में सुधार होता है।
- **जल संबंध एवं तनाव सहनशीलताः–** बायोचार मृदा की जल–धारण क्षमता बढ़ाकर पौधों की जल स्थिति में सुधार करता है। यह कोशिकीय स्फीति दाब को बनाए रखने, परासरण संतुलन को नियंत्रित करने तथा प्रतिऑक्सीकारी रक्षा तंत्र को सुदृढ़ करने के माध्यम से सूखा एवं लवणीयता तनाव को कम करता है।
- **हार्मोनिक एवं चयापचयी विनियमनः–** बायोचार पौध हार्मोन संकेत प्रणाली (औक्सिन, साइटोकिनिन तथा जिबरेलिन) को प्रभावित करता है तथा कार्बोहाइड्रेट चयापचय को सुदृढ़ बनाता है, जिसके परिणामस्वरूप पौधों की वृद्धि में सुधार, पत्तियों का विलंबित वृद्धावस्था तथा अधिक उपज क्षमता प्राप्त होती है।

पर्यावरणीय स्थिरता एवं जलवायु परिवर्तन शमनः–

- **कार्बन संचयनः–**बायोचार मृदाओं में सैकड़ों वर्षों तक स्थिर रहता है और दीर्घकालीन कार्बन स्रोत के रूप में कार्य करता है।
- **हरितगृह गैस शमनः–**बायोचार सूक्ष्मजीव प्रक्रियाओं को संशोधित करके नाइट्रस ऑक्साइड और मीथेन के उत्सर्जन को कम करता है।
- **अपशिष्ट जैविक पदार्थ का मूल्यवर्धनः–**बायोचार अवशेषों को मूल्यवान मृदा संशोधकों में परिवर्तित करके परिपत्र जैव–आर्थिक प्रणाली को प्रोत्साहित करता है।

चुनौतियाँ

- **उच्च उत्पादन लागतः–**बायोचार उत्पादन तकनीकों की पूंजी एवं ऊर्जा–प्रधान प्रकृति संचालन लागत को बढ़ाती है, जिससे बड़े पैमाने पर अपनाने में सीमाएँ उत्पन्न होती हैं।
- **गुणवत्ता में असमानताः–**फीडस्टॉक के स्रोतों और तापीय अपघटन स्थितियों में अंतर के कारण बायोचार के गुण असमान होते हैं, जो इसके कृषि प्रदर्शन को प्रभावित कर सकते हैं।
- **सीमित जागरूकता और अपनानाः–**किसानों में तकनीकी ज्ञान और जागरूकता की कमी बायोचार के व्यावहारिक उपयोग को सीमित करती है।
- **मानकीकरण और क्षेत्रीय सत्यापन की आवश्यकताः–**मानक गुणवत्ता प्रोटोकॉल की अनुपस्थिति और सीमित दीर्घकालीन, बहु–स्थानिक क्षेत्रीय परीक्षण बायोचार के विश्वसनीय मूल्यांकन और व्यापक क्रियान्वयन में बाधक हैं।

जैव विविधता, कृषि जलवायु परिवर्तन मे टिकाऊ खाद्य प्रणाली के लिए एक वरदान

राजवीर सिंह, आकाश तंवर एवं दुष्यंत वर्मा
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

परिचयः जैव विविधता से तात्पर्य पृथ्वी पर जीवन की विविधता से है जिसके अंतर्गत जीवित जीवों के बीच परिवर्तनशीलता के रूप, जिसमें प्रजातियों के भीतर, प्रजातियों के बीच और पारिस्थितिक तंत्र की विविधता शामिल है। इस प्रकार जैव विविधता के अंतर्गत न केवल पृथ्वी पर लाखों विभिन्न प्रजातियाँ शामिल हैं, बल्कि इसमें प्रजातियों के भीतर विशिष्ट आनुवंशिक विविधताएँ और लक्षण भी शामिल हैं (जैसे कि विभिन्न फसलों की किस्में), साथ ही विभिन्न प्रकार के विभिन्न पारिस्थितिक तंत्र, समुद्री और स्थलीय, जिसमें जैसे तटीय क्षेत्र, जंगल, आर्द्रभूमि, घास के मैदान, पहाड़ और रेगिस्तान, मानव शामिल हैं। आज के इक्कीसवीं सदी के दौर मे जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता एवं खाद्य प्रणाली संकट की एक प्रमुख चुनौतियों में से हैं, जिससे प्रजातियों का अस्तित्व खतरे में होने के साथ साथ है

खाद्य प्रणाली परिवर्तन मे प्रजातियों की विविधता का महत्वः

1. स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं और सहकारी प्रथाओं को बढ़ावा देनाः एक विविधता वाली खाद्य प्रणाली, कई सकारात्मक लाभ दे सकती है। प्रजातियों की विविधता पारिस्थितिक लचीलेपन को बढ़ाती है और उत्पादन, वितरण और उपभोग के सहकारी मॉडल के लिए उत्प्रेरक का काम भी करती है, जिससे केंद्रीकृत शक्तियों का प्रभुत्व कम हो जाता है। विविध फसलो की प्रजातियां और फसल प्रणालिया समुदाय समर्थित कृषि विकास के लिए मौलिक हैं, जो स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं पर सकारात्मक प्रभाव डालती हैं। सामुदायिक कृषि पहल कार्यक्रम, जिसके अंतर्गत किसानों और उपभोक्ताओं के बीच सीधी भागीदारी होती है जिसमे विभिन्न प्रकार की फसलों को शामिल करके, ये पहल किसानों को एक स्थिर बाजार प्रदान करते हुए उपभोक्ताओं को विविध और मौसमी उपज प्रदान करती है, जोकि स्थानीय अर्थव्यवस्थाओं को मजबूत बनाती है। एक स्थायी खाद्य के लिए भविष्य मे पर्यावरणीय प्रभाव को कम करते हुए विविधता–आधारित खाद्य प्रणाली एक व्यवहार्य और परिवर्तनकारी समाधान है। यह दृष्टिकोण ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन (जीएचजी) को कम करने में मदद कर सकता है, लेकिन कृषि के पुनर्योजी रूपों को भी बढ़ावा देता है जो मिट्टी के स्वास्थ्य और जंगली पौधों और जानवरों की प्रजातियों की जैव विविधता को बढ़ावा देता है।

2.पोषण संबंधी स्वास्थ्य में प्रजातियों की विविधता की भूमिकाः प्रजाति–विविध खाद्य प्रणाली सीधे सार्वजनिक स्वास्थ्य पर प्रभाव डालती है। एक विविध खाद्य प्रणाली बेहतर पोषण, स्वस्थ आंत माइक्रोबायोम को बढ़ावा देकर कुपोषण, मोटापा, हृदय रोगों और कैंसर जैसी बीमारियो से निजात दिलाने मे मदद कर सकती है।

3.मृदा स्वास्थ्य और पर्यावरण पर प्रजातियों की विविधता की भूमिकाः विभिन्न प्रकार की फसलो की प्रजातिया मृदा स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण योगदान देती है जिसके परिणामस्वरूप, पानी की गुणवत्ता, जल प्रबंधन और कार्बन भंडारण जैसे विभिन्न पर्यावरणीय मुद्दों का समाधान करने मे मदद कर सकती है। विविध फसल प्रणाली, पोषक तत्वों के चक्र को अनुकूलित करके, मिट्टी की संरचना में सुधार करके, मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाकर और सूक्ष्मजीव विविधता को बढ़ावा देकर मिट्टी की उर्वकता को बढ़ाती है इस प्रकार स्वस्थ मिट्टी टिकाऊ खाद्य उत्पादन की नींव है, क्योंकि उसमे बाहरी इनपुट की आवश्यकता कम होती। इसलिए हम फसल विविधता को बढ़ावा देकर, अपनी वर्तमान खाद्य प्रणालियों के सामने आने वाली कई चुनौतियों जैसे कि मिट्टी का क्षरण, जल प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और जैव विविधता का नुकसान इत्यादि का समाधान करने मे सक्षम हो सकते हैं।

4.जलवायु परिवर्तन के साथ अंतःक्रियाः जलवायु परिवर्तन का जैव विविधता पर सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार का प्रभाव पड़ता है। जलवायु परिवर्तन वर्तमान में जैव विविधता के लिए बहुत बड़ा खतरा नहीं है, लेकिन निकट भविष्य में यह संभवतः भूमि–उपयोग परिवर्तन के प्रभावों से अतिरिक्त प्रभाव पैदा कर सकता है। जलवायु परिवर्तन के कारण सूखे, बाढ़ और लू की आवृत्ति और गंभीरता में होने वाले परिवर्तन से कृषि उत्पादन को प्रभावित करते हुए, कृषि उपयुक्तता में बदलाव और उत्पादकता में बदलाव जिसके परिणामस्वरूप भविष्य की खाद्य सुरक्षा पर संभावित प्रभाव पड़ता है। जैसा कि सभी जानते है कि वनों की कटाई से वायुमंडलीय कार्बन डाइऑक्साइड में वृद्धि होती है जो जलवायु परिवर्तन में काफी योगदान देती है, इसलिए भविष्य में वैश्विक तापमान में वृद्धि को कम करने के लिए जैव विविधता के द्वारा प्राकृतिक वनों के पुनर्जनन का सुझाव दिया गया है।

5. अधिक पैदावार और कम पर्यावरणीय नुकसान के लिए खेतों के भीतर फसल विविधताः अंतरफसल खेती के द्वारा भूमि के एक ही टुकड़े पर दो या दो से अधिक स्थानिक रूप से परस्पर मिश्रित फसल प्रजातियों की खेती करते है। वर्तमान मे हुई खोजो से ये पता लगा है कि अंतरफसल खेती से भूमि के एक टुकड़े पर खेती की जाने वाली प्रत्येक फसल प्रजाति की तुलना में कम इनपुट, निर्वाह से लगभग 16 से 30 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त होती है। विविध कृषि प्रणालियाँ के माध्यम से नाइट्रोजन–स्थिर करने वाली फलियां वाली फसल उगाकर खराब मिट्टी को अधिक उपजाऊ बना सकते है।

6. जैव विविधता–आधारित कृषि पद्धतियों के लिए प्रजननः ज्यादा आनुवंशिक अंतर वाले मूल पौधों से संकर संतान उत्पन्न हो सकती है जोकि माता–पिता की तुलना में तनाव का बेहतर प्रतिरोध करते हुए तेजी से बढ़ती है, अधिक बीज और फल पैदा करती है। इस प्रकार अंतरफसल के माध्यम से एक साथ उगाए जाने पर पैदावार को अधिकतम करने के लिए फसल प्रजातियों की एक जोड़ी की विशेष किस्में विकसित की जा सकती हैं। प्रकृति के इस समुदाय में, प्रत्येक जीव अपने लक्षणों का एक अनूठा संयोजन विकसित करता है एवं पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं का शोषण करता है, जिससे अंतर उपज लाभ और कीट नियंत्रण का आधार है। जैव विविधता पर प्रभाव डालने वाले या उससे लाभान्वित होने वाले क्षेत्रों में परिवर्तनकारी परिवर्तन मे मुख्य बाधाएं निम्नलिखित हैंः

- अपर्याप्त ज्ञान आधार
- नवाचार की धीमी दर
- अपर्याप्त मुख्यधारा
- कमी पुनः–प्रोत्साहनों का संरेखण
- अर्थव्यवस्था और पारिस्थितिकी तंत्र प्रबंधन के बीच इंटरफेस पर बेहतर निगरानी उपकरणः तालमेल के लिए अवास्तविक अवसर

जैव विविधता को प्रोत्साहित करने के लिए नीतिगत उपायः

1.जैव विविधता के लिए रणनीतिक योजना 2011–2020 का कार्यान्वयनः हमे यह सुनिश्चित करना होगा कि सतत विकास लक्ष्यों और जैव विविधता के लिए वर्तमान रणनीतिक योजनाओ के बीच सामंजस्य के वर्तमान स्तर को बनाए रखते हुए इसके उत्तराधिकारी के तहत इसमें और सुधार किया जाएगा। इस संबंध में, वैज्ञानिक, तकनीकी और तकनीकी सलाह पर कन्वेंशन की सहायक संस्था (एसबीएसटीटीए) ने दिसंबर 2017 में अपनी इक्कीसवीं बैठक में कार्यान्वयन और अनुवर्ती कार्रवाई के संदर्भ में जैव विविधता और सतत विकास के लिए 2030 एजेंडा के प्रतिच्छेदन पर विचार किया। जैव

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

विविधता के लिए रणनीतिक योजना 2011 –2020 के अंतर्गत दो रूपरेखाओं के पारस्परिक रूप से मजबूत कार्यान्वयन के निहितार्थों पर भी चर्चा की गई है और इसमें आगे का विश्लेषण भी शामिल है कि एसडीजी जैव विविधता के लिए रणनीतिक योजना 2011–2020 के कार्यान्वयन में कैसे योगदान करते हैं।

2.विकास नीतियों और जैव विविधता को एकीकृत करने के दृष्टिकोण को बढ़ावा देनाः भावी पीढ़ियों के लिए जैव विविधता के लाभों को सुनिश्चित करने और जीवन का समर्थन करने वाली पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं पर विकास निवेश के नकारात्मक प्रभावों से बचने के लिए, राष्ट्रीय और निजी और सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों में स्थानीय निर्णय निर्माताओं और हितधारकों को यह सुनिश्चित करने की महती आवश्यकता है

3.प्रभावी अंतर–एजेंसी समन्वय, हितधारक जुड़ाव के लिए राष्ट्रीय संस्थागत तंत्रः कन्वेंशन के दलों और भागीदारों के अनुभव से यह पता चलता है कि सभी संबंधित मंत्रालयों में जैव विविधता, राष्ट्रीय गरीबी उन्मूलन रणनीतियों और क्षेत्रीय योजनाओं को एकीकृत करने के लिए प्रभावी संस्थागत व्यवस्था प्रमुख आवश्यकताओं में से एक है। इसका एक पहलू सरकार–व्यापी नीतियों को विकसित करने के लिए प्रभावी अंतर–मंत्रालयी या अंतर–एजेंसी प्रक्रियाओं का उपयोग है। ऐसा तंत्र बेहतर एकीकृत दृष्टिकोण के माध्यम से सरकार–व्यापी और क्षेत्रीय नीतियों के विकास और कार्यान्वयन के लिए एक प्रभावी औपचारिक मंच प्रदान करता है।

4. पारंपरिक ज्ञान और पारिस्थितिक प्रथाओं का समर्थन करनाः यह सुनिश्चित करने के लिए कि गरीबों को पारिस्थितिकी तंत्र सेवाओं से लाभ मिलता रहे, स्वदेशी लोगों और स्थानीय समुदायों के पहुंच, उपयोग, शासन और उपयोग के पारंपरिक अधिकारों और कानूनों को पहचानने और भूमि और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधनको मजबूत करने का महत्व दिया जाए।

5. जलवायु परिवर्तन और ऊर्जा प्रणालियों एवं खाद्य प्रणालियों के लिए कार्रवाई करनाः

(अ) जलवायु परिवर्तन और ऊर्जा प्रणालीः वनों की कटाई को रोकना और उन्हे पुनर्जीवित करना जलवायु शमन और जैव विविधता की सुरक्षा में महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है। ऐसे उपायों में मैंग्रोव जैसे तटीय आवासों का संरक्षण और बढ़ावा और फसलों और उनके जंगली रिश्तेदारों की विविधता को बढ़ाना शामिल है ताकि किसानों को सूखा या बाढ़ प्रतिरोधी किस्मों पर स्विच करके जलवायु परिवर्तन के अनुकूल होने में मदद मिल सके।

(ब) खाद्य प्रणालियाँः स्थिरता प्राप्त करने के लिए खाद्य प्रणालियों में प्रमुख परिवर्तन बहुत जरूरी है। इसके लिए कृषि, जलीय कृषि और जंगली मत्स्य पालन के बेहतर प्रबंधन की आवश्यकता है। इस प्रकार फसलों और पशुधन के प्रबंधन में यथार्थवादी परिवर्तन करते हुए पानी की खपत और प्रदूषण दोनों को काफी हद तक कम कर सकते हैं। अधिक टिकाऊ कृषि पद्धतियों को अपनाकर भूमि और जल संसाधनों को बहाल करना भी आवश्यक है, एवं इसके साथ साथ कृषि क्षेत्र से जुड़े नीति निर्माताओं और संस्थानों को ऐसे वित्तीय पुरस्कार तैयार करने चाहिए जो किसानों को स्वदेशी सहित कई फसल प्रजातियों को एकीकृत करने के लिए प्रोत्साहित करें। इसके अतिरिक्त, अवसर लागत और विविध कृषि प्रणालियों के अंतर्निहित मूल्य जैसे कारकों पर विचार करते हुए, भुगतान दरें मोनोकल्चर के संभावित लाभों से अधिक आकर्षक होनी चाहिए। इसके लिए कृषि विस्तार सेवाओं का विस्तार करने, प्रदर्शन फार्मों को सीखने के केंद्र के रूप में स्थापित करने और अनुसंधान में निवेश करने की आवश्यकता है जो विविधता बढ़ाने, मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार और कृषि लचीलापन बढ़ाने के लिए इन प्रथाओं की क्षमता का पता लगाता है। चौथा, अनुसंधान ने लंबे समय से स्थापित किया है कि सामुदायिक बीज बैंक स्वदेशी प्रजातियों के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ये बैंक जलवायु परिवर्तन, कीटों और बीमारियों जैसे खतरों से सुरक्षा प्रदान करते हुए आनुवंशिक सामग्री के भंडार के रूप में कार्य करते हैं।

6. फसल विविधता, संरक्षण और बेहतर खाद्य प्रणालियों के लिए एक्स–सीटू एवं क्रायोप्रिजर्वेशन संरक्षण का उपयोगः

राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर केंद्रीकृत जीनबैंकों में दीर्घकालिक उपयोग के लिए अधिक व्यापक संग्रह बनाने के सामूहिक प्रयासों से स्पष्ट रूप से काफी दक्षताएं प्राप्त की जानी हैं। जंगली या किसानों के खेतों में उगने वाले पौधों के विपरीत, जिन्हें आमतौर पर केवल वर्ष की कुछ निश्चित अवधि जैसे कि फसल के समय में ही एकत्र किया जा सकता है, जबकि जीनबैंक मे नमूने पूरे वर्ष उपलब्ध रहते हैं, जीनबैंक आम तौर पर पर्याप्त मात्रा में अच्छी आपूर्ति करने में सक्षम होते हैं अनुसंधान और प्रजनन उद्देश्यों के लिए गुणवत्तापूर्ण बीज उपलब्ध करने मे सक्षम है। जीनबैंक आम तौर पर ऐसे नमूनों की आपूर्ति करने में सक्षम होते हैं जो कीटों और बीमारियों से पूर्णतया मुक्त होते है।

क्रायोप्रिजर्वेशनः अधिकांश फसलों के तथाकथित रूढ़िवादी बीज होते हैं, जिन्हें पर्याप्त सुखाकर कोल्ड स्टोर में अपेक्षाकृत आसानी से संरक्षित किया जा सकता है। हालाँकि, अन्य महत्वपूर्ण फसलें भी हैं – जैसे केला, कसावा, कोको और कॉफी जो वानस्पतिक रूप से प्रवर्धित होती हैं, बीज पैदा नहीं करती हैं या ऐसे बीज होते हैं जो रूढ़िवादी नहीं होते हैं। इसलिए –18डिग्री सेल्सियस पर बीजों को सामान्य रूप से सुखाने और भंडारण के माध्यम से उनका पूर्व–स्थिति संरक्षण संभव नहीं हो सकता है, इसलिए इन फसलों को आमतौर पर फील्ड जीनबैंक या इन विट्रो, यानी टिशू कल्चर में संरक्षित किया जाता है। लंबी अवधि तक ऐसी फसलों के आनुवंशिक संसाधनों को सुरक्षित रूप से बनाए रखने के लिए क्रायोप्रिजर्वेशन एक इष्टतम तरीका है।

बीजीय मसाला फसलों में बीज प्रमाणीकरण तकनीक

जोगेन्द्र सिहं, शैलेष मार्कर, डी. के. गोठवाल एवं ए. सी. शिवरान
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

सारांशः भारत एक कृषि प्रधान देश है। फसल उत्पादन में गुणवत्तायुक्त बीजों का अहम स्थान है। प्रारम्भिक काल से ही किसान बीज की महत्वता से परिचित है और इसीलिए हमारे पौराणिक ग्रन्थों में कहा गया है राजस्थान में बीज गुणवत्ता को सुदृढ बनाने के लिए एक स्वतंत्र संस्था राजस्थान राज्य बीज एवं जैविक प्रमाणीकरण संस्था कार्यरत है। बीज प्रमाणीकरण तकनीक को समझकर किसान प्रमाणित बीज उत्पादन कर सकता है जिससे किसान को अधिक एवं गुणवतायुक्त उपज प्राप्त होगी, जिसे अधिक कीमत पर बेचकर अपनी आय को दोगुना कर सकता है तथा अपने परिवार

का सामाजिक व आर्थिक स्तर को ऊपर उठाकर बेहतर जीवन–यापन कर सकता है एव देश की प्रगति में भी अपना योगदान दे सकता है।

बीज प्रमाणीकरणः भारत में बीजीय मसाला फसले जैसे– धनिया, जीरा, सौंफ, मेथी, अजवाइन आदि की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है। इन फसलों की गुणवता और उत्पादकता सुनिश्चित करने के लिए बीज प्रमाणीकरण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया बीज की आनुवांशिक शुद्धता, भौतिक शुद्धता, अंकुरण क्षमता, रोग मुक्त स्थिति एवं नमी स्तर की पुष्टि करती है। यह प्रक्रिया बीज उत्पादन से लेकर वितरण तक हर चरण में गुणवता नियंत्रण सुनिश्चित करती है। किसानो को उच्च गुणवतायुक्त बीज उपलब्ध करवाना, फसल की उत्पादकता व गुणवता में सुधार लाना, और बीज उद्योग में पारदर्शिता व विश्वास बनाना ही बीज प्रमाणीकरण के मुख्य उद्देश्य है।

बीज प्रमाणीकरण के मुख्य चरण

1. **खेत निरीक्षण** :– बीजीय मसाला फसल के बीज उत्पादन खेत में जाँच की जाती है ताकि आनुवांशिक शुद्धता एवं रोग मुक्त स्थिति की पुष्टि को सके।
2. **बीज विधायन** :– बीजों की भौतिक शुद्धता यथा अन्य फसलों के बीज, खरपतवारों के बीज, छोटे दानों, कंकड़, पत्थर, चारा, धूल, मिट्टी इत्यादि को हटाने उपरान्त बीज की गुणवता सुनिश्चित करते है।
3. **बीज परीक्षण** :– बीज परीक्षण प्रयोगशाला में भौतिक शुद्धता, अंकुरण क्षमता, बीज का स्वास्थ्य एवं नमी की मात्रा का परीक्षण करते है।
4. **टैगिंग, सीलिंग एवं पैकिंग** :– बीज मानक पाये जाने पर प्रमाणित बीजों पर बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा टैग एव सील लगाई जाती है जो कि बीजों की गुणवता एवं प्रमाणीकता की गारंटी देते है।

किसान प्रमाणित बीज उत्पादन करने की महत्वपूर्ण कड़ी होने एवं अधिकांश उत्पादन प्रक्रिया उनकी देखरेख में होने के कारण यह आवश्यक है उन्हे बीज प्रमाणीकरण की सम्पूर्ण प्रक्रिया की जानकारी होनी चाहिए। अतः किसान को बीजीय मसालों फसलों में बीज उत्पादन के समय बीज की गुणवत्ता बनाये रखने हेतु निम्न बिन्दुओं की जानकारी होना आवश्यक हैः–

1. बीजीय मसाला फसलों के बीज उत्पादक किसान निर्धारित प्रपत्र फार्म 1 बी में आवश्यक जानकारी भरकर निर्धारित पंजीकरण व निरीक्षण शुल्क के साथ स्वयं या बीज उत्पादन संस्था के माध्यम से बीज प्रमाणीकरण संस्था को भेजें। इसके साथ किसान अपनी जमीन की जमाबन्दी, नजरी नक्शा, कोई एक आई.डी. कार्ड की प्रति भी संलग्न करें
2. बीजीय मसाला फसलों के प्रमाणित बीज उत्पादन हेतु ऐसे खेत का चयन करें जिसमें पिछले एक–दो वर्षों से वह फसल न बोई गई हो अन्यथा गत वर्ष के पड़े हुए बीज स्वतः उग जाते है जिससे बीज की आनुवंशिक गुणवता खराब हो जाती है।
3. बीज उत्पादक किसान बीजीय मसाला फसलों के लिए आवश्यक निर्धारित न्यूनतम पृथक्करण दूरी की पालना सुनिश्चित करें।
4. बीजीय मसाला फसलों के बीजोत्पादन हेतु बीजों को प्रमाणित स्रोतों जैसे– कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि अनुसंधान केन्द्रों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, राष्ट्रीय बीज निगम व राज्य बीज निगम आदि से ही उस क्षेत्र के लिए संस्तुतित किस्म के प्रजनक/आधार बीज क्रय कर आवश्यक बीजोपचार के बाद बताई गई विधि से एंव निर्धारित समयावधि में ही बुवाई करें। अधिक उत्पादन हेतु कृषि विभाग द्वारा बताई गई समस्त शस्य क्रियाऐं, यथा कतार से कतार व पौधे से पौधे की दूरी, रासायनिक उर्वरक, खाद, पौध संरक्षण रसायन आदि का पालन करें।
5. बीजीय मसाला फसलों में पूर्व पुष्पावस्था से परिपक्वावस्था तक मैथी में दो निरीक्षण एवं जीरा, धनिया, सौंफ व अजवाइन में तीन निरीक्षण अनिवार्य रूप से करवायें। निरीक्षण मे विलम्ब की स्थिति में बीज उत्पादक संस्था अथवा बीज प्रमाणीकरण संस्था को यथाशीघ्र सूचित करें।
6. प्रथम निरीक्षण के दौरान प्रमाणीकरण संस्था द्वारा बीज स्त्रोत का सत्यापन खाली थैली/कट्टे, टैग, लेबल एवं बिल से किया जाता है इसलिए किसान इनको सम्भाल कर रखें। इसके अभाव में बीज उत्पादन कार्यक्रम बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा निरस्त किया जा सकता है।
7. बीज प्रमाणीकरण संस्था एवं बीज उत्पादक संस्था द्वारा निरीक्षण के दौरान बीज उत्पादक किसान स्वयं अथवा उसके प्रतिनिधि को साथ रहना चाहिए, जिससे बीज की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने वाले रोगिंग, कटाई, गहाई (थ्रेसिंग) व भण्डारण के दौरान ध्यान रखने वाली बातों आदि पहलूओं को भली प्रकार से समझा जा सके।
8. द्वितीय/तृतीय फसल निरीक्षण के समय दिये गये निर्देशानुसार अवांछनीय पौधे, अन्य फसलों/किस्मों के पौधे, रोगग्रस्त पौधे, खरपतवार, पोलन शेडर (संकर किस्मों में) आदि को समूल नष्ट करते रहें। यह रोगिंग प्रक्रिया 3 सें 4 बार दोहरायें। फसल निरीक्षण के समय बीज फसल में निर्धारित मानक से अधिक अवांछित पौधे नहीं होने चाहिए, अन्यथा बीजोत्पादन निरस्त कर दियाजाता है।
9. बीज प्रमाणीकरण संस्था द्वारा अन्तिम निरीक्षण के दौरान सारणी 1 में दर्शाये गए फसल निर्धारित मानकों के अनुरूप पाई जाती है तो अनुमानित उपज प्रति एकड़ के हिसाब से निरीक्षण प्रपत्र में भरकर एक प्रति बीज उत्पादक किसान को सौंप दी जाती है, उसी के अनुसार ही (अनुमानित उपज से अधिक नहीं) रॉ–बीज विधायन केन्द्र पर जमा करवाना होता है।
10. फसल पककर तैयार हो जाने पर बीज फसल की कटाई सावधानी से करें। गहाई से पूर्व थ्रैसर की पूर्ण सफाई कर बीज फसल की गहाई अलग से करें। उत्पादित रॉ–बीज को प्राथमिक सफाई के बाद अच्छी तरह से सुखाकर स्वच्छ बारदाने (यथासंभव नया बारदाना अथवा जरूरत पड़ने पर पुराने बारदाने को उल्टा कर अच्छी तरह झाड़कर व उपचारित कर) में भरकर समान वजन करके सिलाई कर देवें। प्रत्येक बारदाने के ऊपर तथा

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

अन्दर कागज/बुकरम की पर्ची पर बारदानों की संख्या, फसल, किस्म, वर्ग एवं उत्पादक का नाम व गॉव का नाम अथवा पहचान कोड के साथ लगावें।

11. बीज उत्पादक द्वारा स्वयं के अथवा बीज उत्पादक संस्था द्वारा उपलब्ध करवाये गये बारदाने में उत्पादित रॉ–बीज उपरोक्तानुसार भरकर स्वयं के साधन से यथाशीघ्र एवं निर्धारित अन्तिम तिथि से पूर्व सम्बन्धित बीज विधायन केन्द्र पर पूर्व सूचना के भिजवायें। तुलाई एवं नमी जांच के समय स्वयं/प्रतिनिधि उपस्थित रहें। जमा करवाई गई रॉ–बीज की मात्रा की रसीद (नमी प्रतिशत के उल्लेख सहित) प्राप्त करें।
12. बीज विधायन केन्द्र से सम्बन्धित रॉ–बीज की ग्रेडिंग की अनुमानित तिथि प्राप्त कर निर्धारित तिथि को यथासंभव अपनी/अपने प्रतिनिधि की उपस्थिति में विधायन कार्य सम्पन्न करावें तथा बीज उत्पादक संस्था की नीतिनुसार विधायन के दौरान निकाला गया अण्डर साईज अथवा अमान्य बीज प्राप्त कर उसके निस्तारण की व्यवस्था शीघ्र करें।
13. प्रमाणीकरण संस्था द्वारा विधायन के उपरान्त प्रत्येक प्लॉट से नमूने लेकर सम्बिधित बीज परीक्षण प्रयोगशाला में परीक्षण के लिए गुप्त कोड लगाकर भिजवाया जाता है। यदि कोई नमूना बीज मानकों के अनुरूप नहीं पाया जाता है, तो उसे बीज हेतु पैकिंग नहीं किया जाता है।
14. नमूना निर्धारित मापदण्डों (सारणी 1 में दर्शाये अनुसार) के अनुरूप मानक पाये जाने पर बीज उत्पादन संस्था को रॉ–बीज जमा रसीद को प्रस्तुत कर निर्धारित नीतिनुसार प्रीमियम/प्रोत्साहन राशि सहित सम्बन्धित बीज उत्पादक किसान अपने बीज का भुगतान प्राप्त करे।
15. नमूना मानक पाये जाने पर विधायित बीजों को निर्धारित पैकिंग मात्रा में भरकर बैग पर बीज उत्पादक संस्था का लेबल के साथ बीज प्रमाणीकरण संस्था का प्रमाणीकरण टैग भी लगाया जाता है और बाजार में विपणन योग्य तैयार हो जाता है।

सारणी 1. मुख्य बीजीय मसाला फसलों के प्रमाणित बीज उत्पादन हेतु बीज प्रमाणीकरण मानक।

प्रमाणीकरण मानक	जीरा		धनिया		मैथी		सौंफ		अजवाइन	
	आधार बीज	प्रमाणित बीज	आधार बीज	प्रमाणित बीज	आधार बीज	प्रमाणित बीज	आधार बीज	प्रमाणित बीज	आधार बीज	प्रमाणित बीज
प्रक्षेत्र मानक										
पृथ्थकरण दूरी (मीटर में) (न्यूनतम)	–	–	200	100	50	25	200	100	200	100
अवांछित पौधे (प्रतिशत में) (अधिकतम)	0.10	0.50	0.10	0.50	0.10	0.20	0.10	0.50	0.10	0.50
आपत्तिजनक खरपतवारों के पौधे (प्रतिशत में) (अधिकतम)	0.05	0.10	कोई नहीं	कोई नहीं	0.01	0.02	कोई नहीं	0.05	–	–
बीज मानक										
बीज अंकुरण प्रतिशत (न्यूनतम)	65	65	65	65	70	70	65	65	65	65
भौतिक शुद्धता प्रतिशत (न्यूनतम)	97	97	97	97	98	98	97	97	97	97
अन्य फसल के बीज (अधिकतम)	10/किग्रा	20/किग्रा	10/किग्रा	20/किग्रा	10/किग्रा	10/किग्रा	10/किग्रा	20/किग्रा	10/किग्रा	20/किग्रा
खरपतवारों के बीज (अधिकतम)	10/किग्रा	20/किग्रा	–	–	10/किग्रा	10/किग्रा	10/किग्रा	20/किग्रा	10/किग्रा	20/किग्रा
आपतिजनक खरपतवारों के बीज (अधिकतम)	5/किग्रा	10/किग्रा	कोई नहीं	कोई नहीं	2/किग्रा	5/किग्रा	5/किग्रा	10/किग्रा	–	–
अन्य विभेद्य किस्मों के बीज (अधिकतम)	–	–	–	–	10/किग्रा	20/किग्रा	–	–	–	–
नमी प्रतिशत (अधिकतम)	10	10	10	10	8	8	10	10	10	10

(स्रोतः– भारतीय न्यूनतम बीज प्रमाणीकरण मानक, 2013 केन्द्रीय बीज प्रमाणन बोर्ड, कृषि एवं सहकारिता विभाग, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली)

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

भारत में डेयरी क्षेत्र का विकास एवं भविष्य की संभावनाएँ

अरूण प्रताप सिंह[1], अरविन्द कुमावत[1], भूपेन्द्र कस्वा[1] एवं मनोज कुमार शर्मा[2]
[1]दुग्ध विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर)
[2]श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

परिचयः भारत को दूध का कटोरा कहा जाता है। यहाँ दूध और दूध से बने उत्पादों का विशेष महत्व है। पौराणिक काल से ही गाय और भैंस हमारी संस्कृति का हिस्सा रही हैं। आज भारत दुनिया में सबसे ज्यादा दूध उत्पादन करने वाला देश है। यह सफलता श्वेत क्रांति (ऑपरेशन फ्लड) की देन है, जिसने देश को दूध की कमी से निकालकर दुनिया का सबसे बड़ा उत्पादक बना दिया। डेयरी क्षेत्र ने न सिर्फ ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत किया है, बल्कि लाखों किसानों, खासकर महिलाओं को रोजगार भी दिया है। आइए, जानते हैं कि यह सफर कैसे शुरू हुआ और आगे क्या संभावनाएं हैं।

1– डेयरी विकास की यात्रा (ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य)

स्वतंत्रता के बाद भारत में दूध की भारी कमी थी। शहरों की दूध की मांग पूरी करने के लिए दूर–दराज के इलाकों से दूध लाना पड़ता था, जिससे किसानों को उचित मूल्य नहीं मिल पाता था।

मुख्य पड़ाव

1–1946– अमूल की स्थापना–गुजरात के खेड़ा जिले में सहकारी आंदोलन की शुरुआत हुई। सरदार वल्लभभाई पटेल और त्रिभुवनदास पटेल के मार्गदर्शन में किसानों ने मिलकर खेड़ा डिस्ट्रिक्ट को–ऑपरेटिव मिल्क प्रोड्यूसर्स यूनियन बनाया, जिसे हम आज अमूल के नाम से जानते हैं। इसने दिखाया कि कैसे किसान एकजुट होकर अपने उत्पाद का सही दाम पा सकते हैं।

2–1970–1996– ऑपरेशन फ्लड (श्वेत क्रांति)–राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड ने डॉ. वर्गीज कुरियन के नेतृत्व में ऑपरेशन फ्लड शुरू किया। यह दुनिया का सबसे बड़ा डेयरी विकास कार्यक्रम था।

- **चरण 1 (1970–1980)**–देश के **4** बड़े शहरों (दिल्ली, मुंबई, चेन्नई, कोलकाता) को दूध के बाजार से जोड़ा गया।
- **चरण 2 (1981–1985)**–दूध के उत्पादन को बढ़ाने और सहकारी समितियों के दायरे को बढ़ाने पर जोर दिया गया।
- **चरण 3 (1985–1996)**–पशु स्वास्थ्य और चारा विकास पर ध्यान केंद्रित किया गया।

इस क्रांति ने भारत को दूध के मामले में आत्मनिर्भर बना दिया।

डेयरी विकास की समयरेखा

परंपरागत पशुपालन काल (स्वतंत्रता पूर्व)
↓
1946–खेड़ादुग्ध संघ की स्थापना (आनंद मॉडल)
↓
1950–सहकारी दुग्ध समितियों का विस्तार
↓
1965–राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड की स्थापना
↓
1970–ऑपरेशन फ्लड (श्वेत क्रांति) चरण–1
↓
1981–ऑपरेशन फ्लड चरण–2
↓
1987–ऑपरेशन फ्लड चरण–3
↓
1998–भारत विश्व का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश बना
↓
2000–डेयरी उद्यमिता विकास योजना
↓
2012–राष्ट्रीय डेयरी योजना
↓
2014–राष्ट्रीय गोकुल मिशन
↓
2017–डेयरी प्रसंस्करण एवं अवसंरचना विकास कोष
↓
2020–पशुपालन अवसंरचना विकास कोष
↓
2021– वर्तमान डिजिटलीकरण, ई–गोपाला ऐप, नस्ल सुधार एवं वैल्यू एडिशन पर जोर

2. वर्तमान स्थिति भारत का डेयरी परिदृश्य

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

आज भारत में दूध उत्पादन की रफ्तार तेज है। केंद्रीय पशुपालन और डेयरी मंत्रालय के अनुसार, देश में दूध उत्पादन लगातार बढ़ रहा है।

- विश्व में स्थान– प्रथम (विश्व के कुल दूध उत्पादन का लगभग 22–24 प्रतिशत हिस्सा)।
- वार्षिक उत्पादन– (अनुमानित) लगभग 210–220 मिलियन टन (2022–23 के आंकड़ों के अनुसार)।
- प्रति व्यक्ति उपलब्धता– राष्ट्रीय औसत 450 ग्राम प्रतिदिन (विश्व औसत से अधिक)।

तालिका राज्यवार दूध उत्पादन (शीर्ष 5 राज्य)

नीचे दी गई तालिका में भारत के प्रमुख दूध उत्पादक राज्यों के नाम और उनके उत्पादन का अनुमानित प्रतिशत दर्शाया गया है ।

क्रम	राज्य का नाम	कुल उत्पादन में हिस्सा (लगभग)
1	उत्तर प्रदेश	18 प्रतिशत
2	राजस्थान	15 प्रतिशत
3	मध्य प्रदेश	14 प्रतिशत
4	गुजरात	12 प्रतिशत
5	आंध्र प्रदेश	8 प्रतिशत
6	शेष राज्य	33 प्रतिशत

3. डेयरी क्षेत्र की संरचना गाँव से शहर तक का सफर

हमारे देश में दूध का सफर गाँव के एक छोटे से डेयरी फार्म से शुरू होकर शहर की बड़ी–बड़ी कंपनियों तक पहुँचता है। यह एक अच्छी तरह से जुड़ी हुई श्रृंखला है।

दूध उत्पादन से उपभोग तक का प्रवाह

पशुपालक–डेयरी किसान
↓
दुग्ध दुहना
↓
ग्राम दुग्ध संग्रह केंद्र
↓
सहकारी दुग्ध संघ –निजी डेयरी
↓
चिलिंग सेंटर (शीतलीकरण)
↓
प्रसंस्करण संयंत्र
↓
गुणवत्ता परीक्षण एवं पैकेजिंग
↓
थोक विक्रेता – वितरक
↓
खुदरा विक्रेता डेयरी बूथ
↓
उपभोक्ता

इस श्रृंखला के लाभ

- किसान को उसके दरवाजे पर ही दूध मिल जाता है।
- बिचौलियों के चक्कर से मुक्ति मिलती है।
- दूध का सही मूल्य मिलता है।

4. भविष्य की संभावनाएँ

भारत का डेयरी क्षेत्र तेजी से बदल रहा है और आने वाले समय में इसकी और भी संभावनाएं हैं।

1. **बढ़ती मांग**– बढ़ती आबादी और शहरीकरण के कारण दूध और दूध उत्पादों की मांग दिन–प्रति–दिन बढ़ रही है। लोग अब प्रोटीन युक्त आहार को ज्यादा तरजीह दे रहे हैं।
2. **मूल्यवर्धित उत्पादों का बाजार**– आज के समय में सिर्फ दूध बेचना ही काफी नहीं है। पनीर, दही, छाछ, लस्सी, फ्लेवर्ड मिल्क, आइसक्रीम, और घी जैसे उत्पादों की मांग तेजी से बढ़ रही है। किसान सहकारी समितियां या छोटे उद्यमी इन उत्पादों को बनाकर अच्छा मुनाफा कमा सकते हैं।
3. **निर्यात की संभावनाएं**– भारतीय घी और पनीर की खाड़ी देशों, अमेरिका और यूरोप में भी मांग है। गुणवत्ता और पैकेजिंग पर ध्यान देकर हम निर्यात बढ़ा सकते हैं।
4. **डिजिटल डेयरी और तकनीक का उपयोग**–

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- ई–पशु हाट– पशुओं की खरीद–बिक्री ऑनलाइन।
- डिजिटल लेन–देन–दूध के भुगतान सीधे बैंक खातों में।
- आधुनिक मशीनें– दूध निकालने की मशीन, ऑटोमेटिक दूध जांच मशीन, ठंडा करने के उपकरण (बल्क मिल्क कूलर)।

5. जैविक दूध उत्पादन– जैविक खेती की तरह ही जैविक दूध उत्पादन की भी मांग बढ़ रही है, जिसमें रासायनिक चारा और दवाओं का इस्तेमाल नहीं किया जाता। इस दूध के दाम भी अच्छे मिलते हैं।

5. चुनौतियाँ और समाधान

हालांकि संभावनाएं बहुत हैं, कुछ चुनौतियां भी हैं जिनसे सुझाव पाना जरूरी है।

क्र.स.	चुनौतियाँ	समाधान के सुझाव
1	छोटे पशुधन का आकारः अधिकतर किसानों के पास सिर्फ 1–2 पशु हैं, जिससे उत्पादन कम होता है।	सहकारी समितियों के माध्यम से सामूहिक खेती को बढ़ावा देना। उन्नत नस्ल के पशु पालने के लिए प्रोत्साहन।
2	चारे की कमी और गुणवत्ता और सूखा और हरा चारा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है।	उन्नत बीज वाली चारे की खेती को बढ़ावा देना। साइलेज (हरा चारा सुरक्षित रखने की विधि) बनाने की तकनीक सिखाना।
3	पशु स्वास्थ्य बीमारियों से दूध उत्पादन प्रभावित होता है।	नियमित टीकाकरण शिविर लगाना। पशुओं के लिए बीमा योजना का लाभ उठाना। आयुष्मान भारत योजना में पशुओं का इलाज शामिल करवाने की मांग।
4	बाजार तक पहुंच और उचित मूल्य या सही मूल्य न मिलने पर किसान निराश हो जाता है।	सहकारी समितियों का दायरा बढ़ाना। किसानों को बाजार की जानकारी देने के लिए मोबाइल ऐप विकसित करना।
5	5. जलवायु परिवर्तन अत्यधिक गर्मी या सर्दी से पशुओं पर असर पड़ता है।	जलवायु–अनुकूल पशुशाला का निर्माण। पेड़ लगाकर छाया और हरा चारा उपलब्ध कराना।

सरकारी योजनाएं और सहायता

सरकार डेयरी किसानों की मदद के लिए कई योजनाएं चला रही है–

- राष्ट्रीय पशुधन मिशन– पशुधन विकास के लिए वित्तीय सहायता।
- राष्ट्रीय गोकुल मिशन– देशी नस्ल की गायों के संरक्षण और उन्नति के लिए।
- डेयरी उद्यमिता विकास योजना–डेयरी से जुड़े छोटे उद्योग (जैसे दही, पनीर बनाना) शुरू करने के लिए बैंक ऋण पर सब्सिडी।
- किसान क्रेडिट कार्ड–पशुपालकों के लिए भी किसान क्रेडिट कार्ड की सुविधा, जिससे कम ब्याज पर ऋण मिलता है।
- पशुधन बीमा योजना–कम प्रीमियम पर पशुओं का बीमा।

निष्कर्षः भारत का डेयरी क्षेत्र आत्मनिर्भरता और समृद्धि की राह पर तेजी से आगे बढ़ रहा है। यह सिर्फ एक व्यवसाय नहीं, बल्कि ग्रामीण भारत की रीढ़ है। अगर हम छोटी–मोटी चुनौतियों को तकनीक, सहकारिता और सरकार की योजनाओं से दूर कर लें, तो आने वाला समय डेयरी किसानों के लिए बहुत सुनहरा है। नए उत्पादों, डिजिटल सुविधाओं और निर्यात के अवसरों को पहचान कर हम न सिर्फ अपनी आमदनी बढ़ा सकते हैं, बल्कि देश को दूध के मामले में और मजबूत बना सकते हैं।

आधुनिक बकरी पालनः कम खर्च में अधिक मुनाफा

भूपेन्द्र कस्वां, प्रवीण पिलानीयाँ एवं अरूण प्रताप सिंह
कृषि महाविद्यालय, कोटपुतली एवं दुग्ध विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय
(श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर)

बकरी एक बहुउपयोगी पशु है जो अपने छोटे कद व हर तरह की जलवायु में रहने की क्षमता तथा रहन–सहन की आसान आदतों के कारण आज देश का सभी वर्ग बकरी पालन करते हैं। बकरी पालन व्यवसाय कम पूँजी एवं कम साधन से आरम्भ कर परिवार के भरण पोषण के लिए नियमित आय प्राप्त की जा सकती है। राजस्थान में बकरी पालन प्राचीन काल से गाँव के भूमिहीन और निर्धन लोंगों की आजीविका का साधन रहा है। पशु पालक द्वारा बकरियों के उचित रख रखाव, संतुलित पोषाहार और बेहतर प्रबन्धन के द्वारा बकरियों को रोग ग्रस्त होने से बचाकर दुधारू बकरियों को बेचकर बाल व खाल द्वारा प्राप्त आय, बकरों को माँस के रूप में बेचकर, बकरियों की खाद को बेचकर आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते है। यदि पशु पालक बकरियों का आधुनिक तरीके से बकरी पालन व

प्रबंधन करे तो निश्चित रूप से ही उनमें अधिक लाभ प्राप्त होगा जिसके लिये निम्न बातों की जानकारी होना आवश्यक है–

1. **बकरी की मुख्य नस्लें–** राजस्थान में मुख्य रूप से सिरोही, सौजत, मारवाड़ी, जखराना आदि नस्ल की बकरियाँ पायी जाती हैं।

(1) सिरोही – यह नस्ल मुख्यतः माँस व दूध के लिये पाली जाती है। इस नस्ल के पशु का आकार मध्यम एवं शरीर गठीला होता है। प्रजननः योग्य नर का औसत शारीरिक भार 40–50 किग्रा व मादा का औसत शारीरिक भार 23–30 किग्रा होता है। इस नस्ल की बकरियाँ प्रायः एक बार में दो बच्चों को जन्म देती हैं।

(2) सौजत –यह नस्ल उत्तर–पश्चिम, शुष्क एंव अर्द्ध शुष्क क्षेत्र की नई नस्ल है, जिसका उदगम स्थल सोजत और उसके आसपास का क्षेत्र है। यह विभिन्न तरह के रंगों में पायी जाती है, लेकिन मुख्यतः सफेद रंग की पायी जाती है। इस नस्ल के कान लम्बे होते है व छोटी और पतली पूंछ होती है, और शंकु आकार के थन पाये जाते है। वयस्क नर बकरे का भार 50 –60 किग्रा और वयस्क मादा का औसत शारीरिक भार 40–50 किग्रा होता है।

(3) मारवाड़ी– यह मध्यम आकार की काले रंग की बकरी होती है। नर का औसत शारीरिक भार 30–35 किग्रा व मादा का औसत शारीरिक भार 25–30 किग्रा होता है। इनके शरीर से वर्ष में औसतन 200–300 ग्राम बाल प्राप्त होते हैं जो गलीचे बनाने के काम में आते हैं। इस नस्ल में रोग प्रतिरोधक क्षमता एवं सूखा सहन करने की क्षमता अन्य बकरियों की अपेक्षा अधिक होती है)

(4) जखराना–यह नस्ल राजस्थान के जखराना और अलवर में पायी जाती है। इसका आकार बडा और कान पर सफेद धब्बे होते है। इनके वयस्क नर का भार औसतन 55 किग्रा तथा मादा का औसत भाारीरिक भार 45 किग्रा होता है। इसे दूध और माँस उत्पादन दोनों के लिए प्रयोग किया जाता है। प्रतिदिन दूध का औसत उत्पादन 2. 0–3.0 किलो होता है।

(5) गूजरी– बकरी की यह नई नस्ल है, जो जयपुर, अजमेर, टोंक, नागोर तथा सीकर जिलो में पायी जाती है। इस नस्ल का मूल क्षेत्र नागोर जिले की कुचामन और नावां तहसील है। यह नस्ल आकार में बडी होती है, जो कि दूध और माँस के लिए पाली जाती है। इसका रंग मिश्रित भूरा– सफेद होता है, जिसमें सफेद रंग का चेहरा, पैर व

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पेट तथा पूरे शरीर पर भूरे रंग के धब्बे पाये जाते है जो यह दूसरी नस्लो से भिन्न नजर आती है।इसका सिर छोटा और चौडा होता है व कान लम्बे और झुके हुए होते है। यह नस्ल अपने बडे आकार, मजबूत शरीर और दूध उत्पादन के लिए जानी जाती है। इनके वयस्क नर का भार औसतन 70–80 किग्रा तथा मादा का औसत भाारीरिक भार 50–60 किग्रा तक होता है। प्रतिदिन दूध का औसत उत्पादन 3.0–4.0 किलो होता है।

(6) करौली –बकरी की यह नस्ल राजस्थान के दक्षिण–पूर्वी आर्द्र मैदानों की नई नस्ल है। इस नस्ल का मूल क्षेत्र करौली जिले की सपोटरा, मान्डरेल तथा हिडोंन तहसील है तथा यह नस्ल सवाई माधोपुर, कोटा, बूँदी और बाँरा जिलो तक फैली हुई है। इस नस्ल की बकरी का चेहरा, कान, पेट और पैरो पर भूरे रंग की पट्टियों के साथ बकरी के रंग का आकार काला होता है। कान लम्बे, लटके हुए तथा कानों की सीमा पर भूरे रंग की रेखाओं से मुड़े होते है व नाक रोमन होती है। मध्यम आकार के सींग जो कि ऊपर की ओर नुकीले होते है, इस नस्ल की एक विशिष्ट विशेषता है।

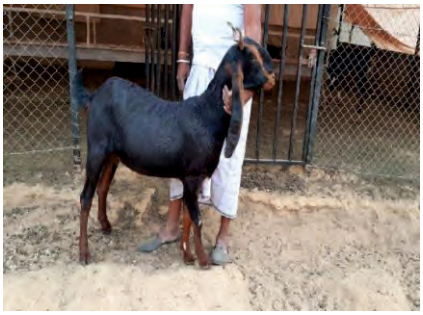

2. **बकरियों हेतु आवास व्यवस्था :–**बकरियों के आवास की दिशा पूर्व–पश्चिम में होनी चाहिए ताकि सूर्य की सीधी गर्मी से बचा जा सकें। बकरी की आदर्श आवास सुविधा हेतु बाड़े में कुछ स्थान पर छायादार व कुछ स्थान खुला हों जिसमें चारे एवं पानी की व्यवस्था उपलब्ध हो। बकरी के बाड़े हेतु स्थान का चयन इस हिसाब से करे की पानी रूकने की सम्भावना न हों। बकरियों को खड़े रहने के लिये प्रति वयस्क के हिसाब से 1–1.5 वर्ग मीटर स्थान होना चाहिये। नर बकरे, बच्चे एवं बकरियों तथा बीमार पशुओं के लिये आवास की व्यवस्था अलग अलग होनी चाहिये। बकरो का बाड़ा बकरियों के बाडे से कम से कम 16 मीटर की दूरी पर होना चाहिये।

3. **बकरियों में उम्र का निर्धारण :–**

- बकरियों की उम्र उनके दांत को देखकर निर्धारित की जाती है। पूरी विधि आगे दी गई है।
- जन्म के समय सामने वाले सभी 8 दांत निचले जबड़े में उपस्थित होते है ऊपर के जबड़े में कोई दांत नहीं होते है।
- 2 से 14 महीनें की उम्र में बीच का एक जोड़ा दांत गिर जाता है तथा उनके स्थान पर स्थाई दांत आते है।
- 24 से 26 महीनें की उम्र में दूध के 2 दांत और टूट जाते है जिनके स्थान पर स्थाई दांत आते है।
- 26 से 38 महीनें की उम्र में दूध के दो और दांत टूट कर मुंह में स्थाई दांतो की संख्या ले लेते है और अब स्थाई दांतो की संख्या 6 हो जाती है।
- 40 से 50 महीनें की आयु में किनारे के शेष 2 दूध के दांत भी गिर जाते है और चार जोड़ा यानि कि 8 स्थाई दांत बन जाते है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

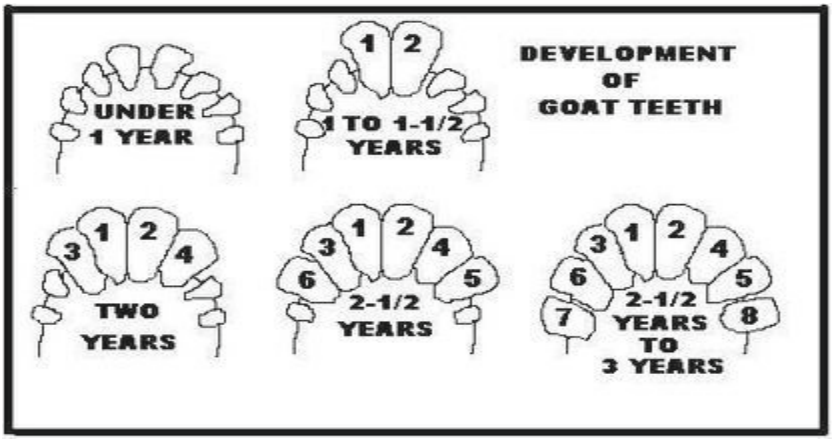

4. **बकरियों हेतु आहार व्यवस्थाः—**बकरी लगभग सभी प्रकार की वनस्पति खा सकती है। बकरी पेड़ों की पत्तियों से लेकर घास तक चरती है। बकरियों में रेशेदार चारों को पचाने की अधिक क्षमता होती है। चरने के अलावा बकरियां बबूल, आम, जामुन, खेजड़ी, नीम, बेर की पत्तियाँ खाना पसन्द करती है। बकरियां रिजका व बरसीम भी खाना पसन्द करती है। बकरयिों को प्रोटीन से भरपूर राशन देना चाहिये। बकरियां अपने शारीरिक भार का 3—3. 5 प्रतिशत शुष्क पदार्थ खा सकती है। बकरियों को उत्पादन क्षमता एवं शारीरिक वृद्धि के लिये शुष्क पदार्थों के अतिरिक्त दाना मिश्रण भी दिया जाना चाहिये। दाना मिश्रण में दाना अवयव निम्न प्रकार होने चाहिये—

क्र.स.	दाना अवयव	प्रतिशत
1.	चना	15
2.	जौ या मक्का	37
3.	मूंगफली या खल	25
4.	गेहूँ का चोकर	20
5.	खनिज लवण	2.5
6.	साधारण नमक	0.5

निम्न प्रकार से दाना मिश्रण खिलाना चाहिये—

क्र.स.	उम्र	मात्रा प्रतिदिन
1.	छोटे मेमने (4 माह से कम आयु वाले)	100—200 ग्राम
2.	4 माह से ग्याभिन होने तक	200—300 ग्राम
3.	दूध देने वाली बकरी	400—500 ग्राम
4.	ग्याभिन/सूखी बकरी	300—400 ग्राम
5.	बीजू बकरा	500—700 ग्राम

5- **बकरियों में प्रजनन :—** सामान्यता : बकरी 8—12 माह की उम्र में गर्मी में आने लगती है। लेकिन अच्छे दुग्ध उत्पादन व शारीरिक भार में वृद्धि परिणाम के लिये बकरियों को 15—18 माह में ही गर्भित करवाना चाहिये तथा इस आयु तक बकरी का वजन 22—25 किग्रा. हो जाना चाहिए, बकरियों में मदकाल लगभग 24—28 घण्टो का होता है। ताव में आने के 34—36 घण्टे बाद गर्भित करवाना चाहिये। इस दौरान यदि गर्भ ना ठहरे तो बकरी 18—21 दिन बाद पुनः मदकाल में आ जाती है। बकरी का गर्भकाल 145—151 दिन होता है सामान्यता हमारें यहाँ बकरियों को साल भर गर्भित करवाया जा सकता है, परन्तु प्रजनन के लिये एक समय होना चाहिये जिससे कि बच्चे पैदा होने के समय अच्छी चराई उपलब्ध हो तथा बरसात व ज्यादा ठण्ड न हो इससे बकरी का स्वास्थ्य ठीक रहने के साथ ही साथ अधिक दूध उत्पादन से बच्चे की शारीरिक वृद्धि ठीक होगी तथा बच्चों में मृत्यु दर कम रहेगी। प्रदेश के मैदानी भागों में बसंत ऋतु प्रजनन हेतु उपयुक्त रहती है। वैसे एक बकरा 8—9 माह की उम्र में गर्भाधान करने योग्य हो जाता है लेकिन अच्छे परिणाम के लिये डेढ़ से दो वर्ष का बकरा प्रजनन हेतु उपयोग में लेना चाहिए। एक बकरा 30—35 बकरियों को गर्भधारण करवाने के लिये उपयुक्त रहता है। प्रति दो वर्ष में रेवड़ से ब्रीडर बकरा बदल देना चाहिये ताकि अन्तः प्रजनन को रोका जा सके। प्रजनन के अलावा अन्य नर बकरों के लिये जन्म के 15 दिन की उम्र में ही बधिया कर देना चाहिये जिससे उनके शारीरिक भाग में वृद्धि अच्छी होगी।

6- बकरी में गर्मी के लक्षण :—

- बकरी खाना छोड़ देती है और बेचैन सी दिखाई देती है तथा पूँछ हिलाती है तथा एक विशेष प्रकार से मिमयाती है।
- बकरी के योनी द्वार पर सूजन हो जाती है, तथा लाल रंग की दिखाई देती है।
- अचानक दूध की मात्रा घट जाती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- रस्सी तोड़कर भागने की कोशिश करती है और दूसरी बकरियों पर चढ़ती है।
- कुछ बकरियां संकोची स्वभाव की होती है उनकी गर्मी का पता नहीं लग पाता है केवल एक ही लक्षण दिखाई पड़ता है और वह है योनि द्वार पर लाल रंग का होना। ऐसी बकरियों पर सावधानीपूर्वक निगाह रखनी चाहिए उन्हे प्रजनन काल में प्रतिदिन बकरें के पास छोड़ देनी चाहिए।

7-बच्चों की देखभाल :–

- बच्चे पैदा होते ही उसकी नाल साफ कर देनी चाहिए और नाल को काटकर उसमें टिंचर आयोडीन लगा देनी चाहिए ।
- बच्चे को उसकी मां का दूध जन्म के 1 घंटे में पिलाना चाहिए।
- बच्चो को नियमित रूप से दूघ तथा अन्य भोजन देने चाहिए। उन्हे एक चम्मच अरंडी का तेल दें दें जिससे उनका पेट एक बार साफ हो जाए।
- सर्दियों में बच्चों को सर्दी से बचाना बहुत जरूरी होता है।
- बच्चों को उनकी जरूरत के अनुसार दूध की मात्रा देनी चाहिए।
- पीने के लिए स्वच्छ और ताजा पानी देना चाहिए।
- बच्चों में दस्त लगने पर तुरन्त उपचार करना चाहिए तथा बच्चों में जूं नहीं लगने देना चाहिए, इसके लिए हर 10 दिन बाद गैमक्सिन दवाई का बुरकाव करना चाहिए।
- बच्चों को समय– समय पर डीवर्मिंग करवाना चाहिए।

8-स्वास्थ्य संरक्षण :–अन्य जानवरों की तुलना में बकरी कम बीमार पड़ती है लेकिन अधिक लाभ के लिये बकरी की नियमित देखभाल करना आवश्यक है। बकरियों को वर्ष में तीन बार कृमिनाशाक दवा पशुचिकित्सिक की सलाह से निम्न प्रकार से पिलानी चाहिये–

1. वर्षा ऋतु से पूर्व (माह मई–जून) – प्रथम खुराक
2. वर्षा ऋतु के बाद (माह सितम्बर–अक्टूबर)– द्वितीय खुराक
3. बसंत ऋतु में (माह फरवरी–मार्च) – तृतीय खुराक

बकरियों में नियमित टीकाकरण से संक्रामक रोगों द्वारा होने वाली पशुधन हानि को रोका जा सकता है निम्न बीमारियों के बचाव के लिये टीकाकरण करवाना चाहिए–फड़कियां, माता रोग, मुँहपका–खुरपका।

9- बकरीपालन करने के फायदे :–सूखा प्रभावित क्षेत्र में खेती के साथ बकरी पालन आसानी से किया जा सकने वाला कम लागत का अच्छा बिजनेस है, इससे आमतौर पर कई लाभ होते है, जैसे :–

- जरूरत के समय बकरियों को बेचकर आसानी से नकद पैसा प्राप्त किया जा सकता है।
- छोटे स्तर पर बकरी पालन करने के लिए किसी भी प्रकार की तकनीकी ज्ञान की जरूरत नहीं पड़ती।
- बकरी पालन बहुत तेजी से बढ़ता है, इसलिए यह बिजनेस कम लागत में अधिक मुनाफा देने वाला है।
- बकरियों को बेचने के लिए बाजार स्थानीय स्तर पर ही मिल जाता है, दरअसल अधिकतर व्यवसायी गांव से ही आकर बकरी बकरे को खरीद कर ले जाते है।

10-सरकार की तरफ से आर्थिक मदद :–

सरकार की तरफ से कृषि और पशुपालन को बढ़ावा देने के लिए कई तरह की योजनाएँ चलाई जाती है। यह योजनाएं कभी राज्य सरकारें लाती है तो कभी केन्द्र सरकार। अतः आप अपने राज्य में चल रहे ऐसी योजनाओं का पता लगा कर लाभ उठा सकते है। इसके अलावा आपको नाबार्ड की तरफ से भी आर्थिक मदद प्राप्त हो सकती है।

राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना : राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना की पहल कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा किया गया है। पशुपालन और चारा क्षेत्र में आधारभूत विकास करना योजना का प्रमुख लक्ष्य है।

योजना का उदेश्य :– पशुपालन उद्योग का विकास करना है। योजना के सफल क्रियान्वयन के पश्चात रोजगार के अवसर प्राप्त होगें। पशु उत्पादकता के क्षेत्र में बढ़ोतरी दर्ज होगी। मांस एवं दूध की उत्पादकता को बढ़ा कर खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के साथ ही अन्य देशों में पशुधन निर्यात करने की मंशा है।

ऋण अनुदान की अधिकतम राशि : बकरी एवं भेड़ पालन के मामले में लगायी गयी पूंजी का 50 प्रतिशत सब्सिडी सरकार द्वारा प्रदान किया जायेगा। ग्रामीण क्षेत्रों में मदर यूनिट की स्थापना करने में लगने वाले कुल लागत का 50 प्रतिशत सब्सिडी के रूप में प्रदान किया जायेगा। यूनिट की स्थापना में लगने वाली बाकी राशि की व्यवस्था उद्मी/संस्था को स्वयं या फिर किसी अन्य वित्तीय संस्थान से वित्त पोषण प्राप्त कर करनी होगी। कुल पूंजी पर प्राप्त होने वाली अधिकतम 50 लाख की राशि को 25 लाख की कुल दो किश्तों में प्रदान की जायेगी। इतने की अनुपालना में लगने वाली पूंजी की राशि को पशुपालक स्वयं करेगे अथवा किसी वित्तीय संस्था से वित्त पोषित कराना होगा। आवश्यकता होने पर ब्याज दर पर 4 प्रतिशत की छूट भी प्रदान की जायेगी। इस योजना के तहत किसान कम से कम 100+5 बकरियों की यूनिट रखनी होगी और अधिकतम 500+25 बकरियों की संख्या के साथ प्रजनन कार्यशाला स्थापित कर सकते है। 100+5 बकरियों की यूनिट लगाने पर लागत 20 लाख रूपयें मानी जाती है। इस पर किसान को 50

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

प्रतिशत या अधिकतम 10 लाख रूपयें की सब्सिडी देने का प्रावधान है, एकल किसान योजना के तहत आवेदन करके बकरी पालन कर 10 लाख रूपयें की सब्सिडी मिल सकती है। एकल किसान में पुरूष एवं महिला दोनो को सब्सिडी दी जायेगी। इसके अलावा मीट–मांस, दूध, ऊन आदि अच्छी गुणवत्ता वाली उत्पादन कार्यशाला स्थापित की जा सकती है।

राष्ट्रीय पशुधन योजना में आवेदन करने का तरीका :

राष्ट्रीय पशुधन मिशन ऑनलाइन आवेदन करें या पशुपालन हेतु आवेदन करने के लिए अपने जनपद के पशुपालन विभाग में सम्पर्क कर आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकते है। इसके साथ ही यदि आप चाहे तो राष्ट्रीय पशुधन मिशन योजना में ऑनलाईन आवेदन के माध्यम से आवेदन कर सकते है।उपरोक्त बातों पर बकरी पालक ध्यान देवें तो बकरी उत्पादन एवं प्रबन्धन करके निश्चित रूप से ही अपनी बकरियों से अधिक आय प्राप्त कर अपना जीवन स्तर ऊँचा उठा सकते हैं।

प्याज में विभिन्न बीज प्राइमिंग विधियों का वृद्धि एवं कंद उपज पर प्रभाव

ममता यादव, राजीव कुमार नारोलिया, दीपक गुप्ता एवं सुनिल कुमार यादव
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

प्याज ***(एलियम सेपा* एल.)**एक महत्वपूर्ण आर्थिक सब्जी फसल है, जिसकी उत्पादकता मुख्य रूप से बीजों के समान एवं शीघ्र अंकुरण तथा सुदृढ़ प्रारंभिक पौध स्थापना पर निर्भर करती है। सामान्यतः प्याज के बीजों में कम जीवन्तता तथा शीघ्र गुणवत्ताह्रास की समस्या पाई जाती है, जिसके कारण खेत में असमान अंकुरण और कमजोर पौध विकास देखने को मिलता है। चूँकि प्रारंभिक वृद्धि ही आगे चलकर कंद निर्माण और अंतिम उपज को निर्धारित करती है, इसलिए बुवाई से पूर्व बीजों की गुणवत्ता में सुधार अत्यंत आवश्यक हो जाता है। इस संदर्भ में बीज प्राइमिंग एक प्रभावी पूर्व–बुवाई तकनीक के रूप में स्थापित हुई है, जिसमें बीजों को नियंत्रित आद्रीकरण द्वारा अंकुरण पूर्व जैव–रासायनिक एवं एंजाइमीय क्रियाओं के लिए सक्रिय किया जाता है। इससे अंकुरण की गति बढ़ती है, पौध स्फूर्ति में सुधार होता है तथा प्रतिकूल परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता विकसित होती है।

प्याज में बीज प्राइमिंग की विभिन्न विधियाँ: प्याज में अंकुरण, पौध स्फूर्ति तथा उपज सुधारने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार की बीज प्राइमिंग विधियाँ अपनाई जाती हैं। इन विधियों में प्रयुक्त प्राइमिंग एजेंट तथा उनके शारीरिक प्रभावों के आधार पर भिन्नता पाई जाती है।

हाइड्रोप्राइमिंग–सबसे सरल और प्रचलित विधि है, जिसमें प्याज के बीजों को 12–24 घंटे तक स्वच्छ जल में भिगोकर पुनः उनकी मूल आर्द्रता तक सुखाया जाता है। यह प्रक्रिया कोशिका झिल्ली की मरम्मत को प्रोत्साहित करती है और प्रारंभिक चयापचयी क्रियाओं को सक्रिय करती है, जिससे अंकुरण तेज और समान होता है। कम लागत और सरलता के कारण यह विधि खेत स्तर पर व्यापक रूप से उपयोगी है।

ऑस्मोप्राइमिंग–ऑस्मोप्राइमिंग में बीजों को पॉलीइथिलीन ग्लाइकोल जैसे ऑस्मोटिक घोलों में लगभग 24 घंटे तक नियंत्रित दाब पर रखा जाता है। यह विधि जल अवशोषण को नियंत्रित कर अंकुरण के दौरान होने वाली क्षति को कम करती है तथा बीजों में परासरण समायोजन की क्षमता बढ़ाती है। परिणामस्वरूप सूखा एवं लवणीय परिस्थितियों में भी बेहतर अंकुरण और वृद्धि देखी जाती है।

हैलोप्राइमिंग–लवण प्राइमिंग में बीजों को 1–2: पोटैशियम नाइट्रेट या 1: कैल्शियम क्लोराइड जैसे अकार्बनिक लवणों के घोल में 12–24 घंटे तक भिगोया जाता है। यह विधि आयनिक संतुलन सुधारने तथा तनाव सहनशीलता से संबंधित शारीरिक प्रक्रियाओं को सक्रिय करने में सहायक होती है। विशेषकर लवणीय परिस्थितियों में यह अंकुरण दर एवं प्रारंभिक वृद्धि को बेहतर बनाती है।

हार्मोनल–प्राइमिंग में पौध वृद्धि नियामकों का उपयोग किया जाता है। उदाहरणस्वरूप, जिबरेलिक अम्ल के 50–100 चचउ घोल में लगभग 12 घंटे तक बीज भिगोने से भ्रूण वृद्धि तीव्र होती है, जड़ का शीघ्र प्रकट होना संभव होता है तथा शाकीय वृद्धि में वृद्धि होती है। यह कोशिका विभाजन और विस्तार को प्रोत्साहित कर पौधों को अधिक ऊँचाई और बेहतर पत्ती विकास प्रदान करती है।

बायोप्राइमिंग–बायोप्राइमिंग में बीजों को लाभकारी सूक्ष्मजीवों के साथ आद्रीकरण किया जाता है। ट्राइकोडर्मा विरिडे जैसे जैव–एजेंट को 4 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर 24 घंटे तक नम अवस्था में रखने से रोग प्रतिरोधक क्षमता तथा पोषक तत्व अवशोषण क्षमता में सुधार होता है। इससे अंकुरण बेहतर होता है और मृदा जनित रोगों से सुरक्षा मिलती है।

अंकुरण पर बीज प्राइमिंग का प्रभाव:बीज प्राइमिंग अंकुरण प्रतिशत और अंकुरण गति दोनों में उल्लेखनीय वृद्धि करती है। प्राइमिंग के दौरान झिल्ली की मरम्मत तथा एंजाइमों, विशेषकर α–अमाइलेज, की सक्रियता बढ़ती है, जिससे बीज में संचित भोजन का शीघ्र अपघटन होता है। इससे अंकुरण की विलंब अवस्था कम होती है और खेत में समान एवं शीघ्र अंकुरण प्राप्त होता है। हाइड्रोप्राइमिंग या जिबरेलिक अम्ल प्राइमिंग जैसे उपचार अंकुरण को कई दिनों पहले प्रारंभ करने में सहायक सिद्ध होते हैं, जिससे पौधों की समान स्थापना और कम मृत्यु दर सुनिश्चित होती है।

पौध वृद्धि एवं शाकीय विकास पर प्रभाव:प्राइम किए गए बीजों से विकसित पौधों में जड़ एवं तना वृद्धि अधिक सशक्त होती है। लंबी एवं घनी जड़ें जल तथा पोषक तत्वों के अवशोषण को बढ़ाती हैं, जबकि अधिक पत्तियाँ एवं उच्च क्लोरोफिल मात्रा प्रकाश संश्लेषण को प्रोत्साहित करती है। इससे पौधों की ऊँचाई, जैव द्रव्यमान और समग्र स्फूर्ति में वृद्धि होती है।

उपज संबंधी गुणों एवं कंद उपज पर प्रभाव : समान पौध स्थापना एवं बेहतर शाकीय वृद्धि के परिणामस्वरूप कार्बोहाइड्रेट संचय बढ़ता है, जो कंद विकास में सहायक होता है। इससे कंद का व्यास, वजन एवं कुल घुलनशील ठोस पदार्थ में

वृद्धि देखी जाती है। हार्मोनल प्राइमिंग विशेष रूप से कंद के आकार एवं गुणवत्ता में सुधार करती है। कुल मिलाकर, प्राइम किए गए बीजों से अधिक बाजार योग्य उपज प्राप्त होती है।

अजैविक तनाव परिस्थितियों में प्रभाव:बीज प्राइमिंग सूखा, लवणता तथा तापमान असंतुलन जैसी अजैविक तनाव परिस्थितियों में पौधों की सहनशीलता बढ़ाती है। प्राइम किए गए बीजों में परासरण समायोजन तथा एंटीऑक्सीडेंट एंजाइमों की सक्रियता बेहतर होती है, जिससे कोशिकीय क्षति कम होती है। पॉलीइथिलीन ग्लाइकोल या पोटैशियम नाइट्रेट जैसे उपचार झिल्ली की स्थिरता बनाए रखने में सहायक होते हैं, जिससे प्रतिकूल परिस्थितियों में भी पौधों की जीवित रहने की क्षमता और वृद्धि बनी रहती है। इसका परिणाम स्थिर कंद विकास और संतोषजनक उपज के रूप में सामने आता है।

समग्र कृषि एवं आर्थिक लाभ:बीज प्राइमिंग एक सरल, कम लागत और किसान हितैषी तकनीक है, जो प्याज की फसल में बेहतर स्थापना और अधिक उत्पादकता सुनिश्चित करती है। यह अंकुरण की एकरूपता बढ़ाती है, बीज की आवश्यकता कम करती है तथा पुनः बुवाई की आवश्यकता घटाती है। बेहतर प्रारंभिक वृद्धि से पोषक तत्वों और जल का कुशल उपयोग होता है, जिससे कंद उपज और गुणवत्ता दोनों में सुधार होता है। इस प्रकार यह तकनीक सामान्य तथा तनावपूर्ण दोनों परिस्थितियों में उपज स्थिरता बढ़ाकर किसानों की आय में वृद्धि करती है।

सीमाएँ एवं सावधानियाँ:बीज प्राइमिंग के दौरान समय और सांद्रता का उचित निर्धारण आवश्यक है, क्योंकि अत्यधिक प्राइमिंग से बीजों की भंडारण क्षमता कम हो सकती है।

निष्कर्ष: विभिन्न बीज प्राइमिंग विधियाँ प्याज की वृद्धि, स्फूर्ति तथा कंद उपज को उल्लेखनीय रूप से बढ़ाती हैं। नियंत्रित आर्द्रीकरण द्वारा बीजों की शारीरिक एवं जैव–रासायनिक सक्रियता में सुधार होता है, जिससे अंकुरण तेज, पौध विकास सशक्त एवं उपज अधिक होती है। साथ ही, यह तकनीक अजैविक तनाव परिस्थितियों में भी उपज स्थिरता सुनिश्चित करती है। अतः प्याज की समग्र उत्पादकता बढ़ाने तथा सतत कृषि प्रणाली को सुदृढ़ करने में बीज प्राइमिंग एक वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक रूप से अत्यंत प्रभावी उपाय सिद्ध होती है।

पशुओ के लिए वर्षभर हरा चारा का उत्पादन

शिव मूरत मीना, जुनेद अख्तर एवं भवानी सिंह मीना
कृषि महाविद्यालय, बसेड़ी–धौलपुर

पशुओं का स्वास्थ्य समय से प्रजनन एवं सस्ते दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से हरे चारे का बड़ा महत्व है। अतः इस अध्याय में इस विषय पर विस्तार से चर्चा की जा रही है।

1– हरे एवं रसीले चारे– हरे चारे वे चारे हैं जिनमें पानी की मात्रा अधिक पाई जाती है। सामान्यतः इनमें पानी (नमी) की मात्रा 70–80 प्रतिशत होती है। इसी प्रकार इन चारों में शुष्क पदार्थ (ड्राई मेटर) की मात्रा 20–30 प्रतिशत तक होती है। यह चारे स्वादिष्ट, रसदार, सुपाच्य, पोश्टिक तथा दुर्गन्द रहित होने के साथ–साथ चारे की फसल थोड़े समय में पैदा होने वाली अधिक, अधिक पैदावार देने वाली तथा अधिक कटाई देने वाली होती है। इन चारे की फसलें ऐसी हों जिससे उनसे ''साईलेज'' तथा ''हे'' आसानी से बनाया जा सके। इस प्रकार जिस मौसम में हरा चारा उपलब्ध न हो तो साईलेज खिलाकर पशुओं की आवश्यकता पूरी हो सके।

2–चारे की मुख्य फसलें– दो दाल बाली फसलों में मुख्यतः रबी में बरसीम, खरीफ में लोबिया व ग्वार तथा एक दाल वाली फसलों में रबी में जई, खरीफ में मक्का, ज्वार, बाजरा, मकचरी आदि होती हैं। सर्दियों में भालगम, तिलहन, सरसों तथा बहुवर्षीय दलहनी फसलों में रिजका, स्टाईलो, राइसबीन आदि तथा घासों में हाथी घास, पाराघास, गिन्नीघास, दीनानाथघास, सुडान घास, रोड घास, नन्दी घास, राई घास आदि हरे चारे के रूप में प्रयोग होने वाली घासे होती हैं। चारे की अच्छी पैदावार के लिए निम्न वातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है।

3– चारा उत्पादन के बृद्धि सम्बन्धी सुझाव– चारे की उपज बढाने के लिए निम्नलिखित सुझाव ध्यान देने योग्य है।

1. चारे की प्रजातियों का चुनाव उनकी अधिक उपज करने की क्षमता पर की जाए।
2. चारा पशुओं को कीड़ों तथा बीमारियों से बचाया जाए।
3. जलवायु एवं भूमि की खराब परिस्थितियों को सहने की क्षमता रखने वाली प्रजाति का चुनाव करें।
4. प्रति एकड़ अधिक पोषक तत्व देने वाली प्रजाति का चुनाव करें।
5. चारा फसले पशुओं के लिए स्वादिष्ट, पाचक और रसीली होनी चाहिए।
6. पर्याप्त तकनीकी निवेश जैसे– उत्तम बीज, सिचाई, खाद के प्रयोग करने पर अधिक उत्पादन देने वाली प्रजाति होनी चाहिए।
7. कम समय में चारे की अधिक फसल देने वाली प्रजाति का चुनाव करें।
8. चारा प्रजाति में अधिका बीज पैदा करने की क्षमता भी होनी चाहिए।

4–सम्पूर्ण वर्ष हरा चारा उगाने के सुझाव– दूध वाले व गर्भित पशुओं को वर्षभर कुछ ना कुछ मात्रा में हरे चारे की जरूरत अवश्य होती है। अतः वर्ष भर हरे चारे की उपलब्धता के सुझाव निम्नवत प्रस्तुत हैं।

1. अनाज की खेती के साथ–साथ हरे चारे के उत्पादन में ''मिश्रित खेती'' को बढ़ावा दिया जाए। जिससे किसानों को अनाज एवं चारा दोनों मिल सकें।
2. बहुवर्षीय घासों एवं मौसमी चारे की मिश्रित खेती को बढ़ावा दिया जाए।
3. सिचाई, बीज एवं खाद के साथ साथ आधुनिक तकनीकी का उपयोग कर पूरे वर्ष हरे चारे का उत्पादन लिया जाए।
4. सघन चारा उत्पादन हेतु 1. ओवर लैपिंग विधि तथा 2. रिले क्रोपिंग विधि को अपनाया जाए।
5. चारे का फसल चक्र निम्न प्रस्तुत वार्षिक चारा कलेंडर के अनुसार अपनाया जाए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

5–पूरे वर्ष हरा चारा उगाऐं– पौष्टिक हरे चारे पूरे वर्ष प्राप्त करने के लिए तथा पशुओं को स्वस्थ बनाये रखने एवं दूध की मात्रा में वृद्धि करने के लिए विभिन्न चारों की बुवाई पूरे वर्ष की जा सकती है। इसकी समय सारणी निम्न तालिका में प्रस्तुत है:–

क्र.सं.	चारे का नाम	बुबाई का समय	बीज की मात्रा	पैदावार
1	ज्वार	मार्च से मई तथा जून से जुलाई	16–20 कि.ग्रा. प्रति एकड़	260 क्वि. प्रति एकड़
2	बाजरा	मार्च से अप्रेल 25 जून से 10 जुलाई तक	शुद्ध बिजाई के लिए 3–4 कि.ग्राम. प्रति एकड़ मिश्रित बिजाई के लिए 2 से 3 कि.ग्रा. प्रति एकड़	140–160 क्वि. 2 कटाई में 200–220 क्वि. प्रति एकड़
3	मकचरी	25 जून से जुलाई	16–18 कि.ग्रा. प्रति एकड़	180–200 क्वि. प्रति एकड़
4	लोबिया	मार्च से जुलाई	17–18 कि.ग्रा. प्रति एकड़	130–140 क्वि. प्रति एकड़
5	मक्का	मार्च–अगस्त	24–25 कि.ग्रा. प्रति एकड़	180–200 क्वि. प्रति एकड़
6	संकर हाथी घास	मार्च एवं जुलाई	6000 से 8000 जड़ें	400–500 क्वि. प्रति एकड़
7	अंजना घास	जून , जुलाई	5–7 कि.ग्रा. प्रति एकड़	160–200 क्वि. प्रति एकड़
8	ग्वार	10 जून से 15 जुलाई	18–20 कि.ग्रा. प्रति एकड़	औसत 20 क्वि. प्रति एकड़
9	बरसीम	सितम्बर के आखरी सप्ताह से अक्टूबर तक	8–10 कि.ग्रा. प्रति एकड़	300–350 क्वि. प्रति एकड़
10	रिजका	अक्टूबर से मध्य नवम्बर तक	4–5 कि.ग्रा. प्रति एकड़	350–400 क्वि. प्रति एकड़
11	जई	अक्टूबर से मध्य दिसम्बर तक	30–40 कि.ग्रा. प्रति एकड़	200–220 क्वि. प्रति एकड़
12	सरसों	अक्टूबर के शुरू में	1.50 से 2.00 कि.ग्रा. प्रति एकड़	100–120 क्वि. प्रति एकड़
13	सैंजी	सितम्बर के आखरी सप्ताह से अक्टूबर तक	10–12 कि.ग्रा. प्रति एकड़	100 क्वि. प्रति एकड़
14	मैथा	अक्टूबर से नबम्बर	12–15 कि.ग्रा. प्रति एकड़	60–80 क्वि. प्रति एकड़

5– पशुओं को हरा चारा खिलाने से लाभ–

1. दुग्ध उत्पादक अपनी भूमि पर स्वयं उगा सकता है।
2. कृषि के साथ हरे चारे की मिश्रित खेती आसान, आर्थिक तथा उपयोगी होती है।
3. हरे चारे पाचक, स्वादिष्ट तथा पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। अतः पशु इन्हें बड़े चाव से खाते हैं।
4. इसके उपयोग से दुग्ध उत्पादन लागत में कमी आती है और इसके पोषक तत्व सस्ते होते हैं।
5. दो दलीय /फलीदार चारा उगाने से कृशि भूमि को पर्याप्त मात्रा में नत्रजन (नाइट्रोजन) मिलता है। अतः इसकी खेती करने से रासायनिक खादों के प्रयोग की मात्रा तथा व्यय में कमी आती है।
6. हरा चारा स्थूल (वल्की) होने के कारण इसे खिलाने से पशुओं को पेटभर खाने से संतुष्टि मिलती है व पशुओं को पर्याप्त मात्रा में रेशा (फाईबर) भी मिलता है। इसको खिलाने में किसी विशेष विधि की आवश्यकता नहीं होती है। केबल इनकी कुट्टी काटकर खिलाया जाना पर्याप्त होता है। हरे चारे के खेत में पशुओं को सीधे चराया भी जा सकता है। अतः इस चारे के यातायात के व्यय में बचत होती है।

निष्कर्ष:-दुग्ध उत्पादन लागत में पशु पर 70 से 80 प्रतिशत तक का खर्चा करना होता है। अतः अच्छे नस्ल के स्वस्थ पशु के साथ–साथ संतुलित पशु आहार का बड़ा महत्व है। पशुओं के खिलाने में हरे चारे की मात्रा इतनी ज्यादा होगी। पशु उतना ही स्वस्थ्य एवं अधिक व सस्ता दुग्ध उत्पादन करेगा। हरे चारे में दो दाल के चारे जैसे– बरसीम, लूसर्न, लोबिया, ग्वार आदि सबसे अधिक पोषक एवं पोषक तत्वों के हिसाब से स्वतः संतुलित होते हैं। अतः चारा उत्पादन में इनकी खेती को बढ़ावा देना चाहिए। एक औसत या अच्छी पशु को दो दलीय हरे चारे पर रखने से 5 से 6 लीटर तक के दुग्ध उत्पादन पर किसी भी प्रकार के रातब (दाना मिश्रण) देने की आवश्यकता नहीं होती।

साइलेज से हरे चारे का संरक्षण

सुमित्रा देवी बम्बोरिया[1], शान्ति देवी बम्बोरिया[2], जितेंद्र सिंह बम्बोरिया[3] एवं किरण दुदवाल[4]
[1,4]श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर, राजस्थान,[2]भारतीय मक्का अनुसंधान संस्थान, लुधियाना एवं [3]कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर

हमारे देश में पशुओं को हरा चारा केवल उसी समय मिल पाता है जब तक कि वह खेत में खड़ा होता है। गर्मियों और सर्दियों के लिए चारे को संरक्षित रखने की किसानों द्वारा कोई विधि नहीं अपनाई जाती है। विशेषकर हमारे देश में मई–जून तथा अक्टूबर–नवंबर में देश के लगभग सभी भागों में चारे की कमी के कारण पशुओं को पर्याप्त मात्रा में चारा नहीं मिल पाता है जिसका विपरीत प्रभाव पशुओं के स्वास्थ्य, उनकी कार्य क्षमता तथा दुग्ध उत्पादन पर पड़ता है। वर्ष के उन दिनों के लिए चारा संरक्षित रखना अनिवार्य होता है जब पशुओं को हरा चारा उपलब्ध न हो। ऐसा करने के लिए यह आवश्यक है कि जब चारा अधिक मात्रा में उपलब्ध हो तो अतिरिक्त चारे की मात्रा को साइलेज बनाकर संरक्षित करना चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

साइलेज

हरे चारे जिनमें कार्बोहाइड्रेट की मात्रा अधिक होती है, जैसे ज्वार, मक्का, बाजरा, जई, संकर नेपियर घास, मकचरी, सूडान घास इत्यादि को रसीली अवस्था में जब उनमें शुष्क पदार्थ की मात्रा 30 से 35% हो अच्छी प्रकार से कुट्टी काटने के बाद गड्ढे में दबा–दबा कर रखा जाता है, ताकि उसमें अंदर बिल्कुल वायु न रहे। इस प्रकार वायु की अनुपस्थिति में बढ़ने वाले अवायवीय जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि होती है तो चारे में उपस्थित शर्करा को लैक्टिक अम्ल में बदल देते हैं जो चारे को लगभग ढाई से तीन महीने में साइलेज में तैयार कर देते हैं।

साइलेज बनाने के लिए उपयोगी फसलें

चारे की फसलें जिनमें काफी मात्रा में कार्बोहाइड्रेट तथा शुष्क पदार्थ की मात्रा 30 से 35% तक हो साइलेज बनाने के लिए उपयुक्त रहती है। निम्नलिखित चारे की फसलें साइलेज बनाने के लिए उपयुक्त होती है जैसे– मक्का, ज्वार, जई, संकर नेपियर घास, सूडान घास, बाजरा, मकचरी इत्यादि।

साइलेज के लिए चारे की फसलों को काटने का उपयुक्त समय

फसल का नाम	काटने का समय
मक्का	दुग्धवस्था पर
ज्वार	पुष्पावस्था पर
जई	दुग्धवस्था पर
बाजरा, सूडान घास	फूल आने की प्रारंभिक अवस्था पर
संकर नेपियर	फसल की ऊंचाई 1.5 से 2 मीटर होने पर

साइलेज बनाने की विधियां

साइलेज बनाने के लिए मुख्य रूप से कृषकों को दो विधियां अपनानी चाहिए।

1. गड्ढा विधि (पिट मेथड)
2. खाई विधि (ट्रेंच मेथड)

1. गड्ढा विधि (पिट मेथड): इस विधि में साइलेज बनाने के लिए भूमि में आयताकार या गोलाकार कच्चे या पक्के गड्ढे बनाए जाते हैं जिनकी गहराई चारे की मात्रा तथा भूमि में पानी की सतह पर निर्भर करती है। गड्ढे ऐसी जगह पर बनाने चाहिए जहां पर पानी की सतह काफी नीचे हो तथा ऊंचे व बालू स्थान पर बनाने चाहिए। कच्चे गड्ढे में साइलेज बनाना हो तो खोदने के पश्चात उसकी दीवारों व धरातल पर धान का पुआल (पराली) घास इत्यादि बिछा देनी चाहिए अथवा मिट्टी से लिपाई या पॉलिथीन की चादर लगा देनी चाहिए। ऐसा करने से दबाया हुआ चारा मिट्टी से मिलकर खराब नहीं होता हैं 5 मीटर लंबे, 3 मीटर चौड़े व 1.8 मीटर गहरे गड्ढे में लगभग 300 क्विंटल कटा हुआ हरा चारा संरक्षित किया जा सकता है। तथा 2 मीटर व्यास के व 4 मीटर गहरे गोलाकार गड्ढे में लगभग 60 क्विंटल हरा चारा संरक्षित किया जा सकता है जो एक छोटे किसान के लिए उपयुक्त है।

2. खाई विधि (ट्रेंच विधि): इस विधि में ऐसी खाई खोदी जाती है जो भूमि के धरातल पर 3 मीटर चौड़ी तथा भूमि के अंदर 2.75 मीटर, एक सिरे से दूसरे सिरे तक इसमें ढलान दिया जाता है इसकी गहराई 2.25 से 2.75 मी. रखते हैं। खाई के फर्श का ढलान एक तरफ होना चाहिए वैसे किसान दोनों तरफ भी ढ़लान बना सकते हैं। दोनों तरफ ढ़लान बनाने में चारे को ठीक प्रकार से दबाया जा सकता है। खाई कच्ची या पक्की सीमेंट द्वारा भी बना सकते हैं, अगर कच्ची है तो दीवारों व फर्श पर पॉलिथीन की चादर या धान के पुआल (पराली) बिछा कर परत लगा देनी चाहिए, जिससे कि मिट्टी साइलेज में ना मिल सके। या फिर कच्ची दीवारों व फर्श को चारा भरने से पूर्व मिट्टी से लिपाई कर देनी चाहिए। 10 मीटर लंबी, 3 मीटर चौड़ी तथा 1.5 मीटर गहरी खाई में लगभग 350 से 400 क्विंटल हरा चारा संरक्षित रखा जा सकता है।

हरे चारे को साइलेज बनाने के लिए गड्ढे में भरना

1. चारे की फसल को फूल आने की अवस्था पर सुबह के समय काट कर पूरे दिन खेत में छोड़ देते हैं जिससे कि चारे में नमी की मात्रा कम हो जाए। साइलेज बनाते समय चारे में नमी की मात्रा 65–70 प्रतिशत होनी चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

2. जब साइलेज अधिक मात्रा में बनाते हैं तो कुट्टी काटने वाली मशीन को गड्ढे के ऊपर एक किनारे पर लगा देते हैं ताकि चारा कट–कट कर स्वयं ही गड्ढे में गिरता रहे जब चारा 1 फुट ऊंचाई तक भर जाये तब उसे ट्रैक्टर, मजदूरों अथवा बैलों की सहायता से ठीक प्रकार से दबाना चाहिए जिससे उसके अंदर बिल्कुल वायु न रहे।
3. गड्ढे को अतिशीघ्र व बहुत धीरे–धीरे नहीं भरना चाहिए यदि गड्ढा बहुत शीघ्र भरा जाएगा तो चारा ठीक तरह से नहीं भरेगा तो चारे में वायु रह जाती है जो साइलेज को खराब कर देती है। गड्ढे को अधिक धीरे– धीरे भरने से चारा सूखने का भय रहता है जिससे अच्छी साइलेज नहीं बनती हैं। गड्ढे को रोजाना 1.0–1.25 मीटर भरना चाहिए। इस प्रकार चारे की सतह लगाकर तथा खूब दबाकर कई बार में चारे को गड्ढे में भूमि की सतह से 1.0–1.5 मी. ऊँचा भर लेना चाहिए क्योंकि बाद में किणवन (फरमनटेशन) के पश्चात चारे का स्तर कम हो जाता है।
4. गड्ढे एक दिन में नहीं भर पाते है, रोजाना भरे हुए चारे की उपरी सतह को पॉलिथीन की चादर से ढक देना चाहिए ताकि चारा सूख न जाए व वर्षा का पानी अंदर न जा सक।
5. साइलेज बनाते समय 5 किलोग्राम यूरिया प्रति टन चारे की दर से कुट्टी में भली प्रकार भराई करते समय पतली परतों में चारे के ऊपर डालना चाहिए। ऐसा करने से अच्छी गुणवत्ता का साइलेज बनेगा।
6. अंत में चारे को भूमि की सतह से 1.0–1.5 मीटर ऊँचा भरने के पश्चात ऊपर से धान की पुआल, घास या भूसा की सतह तथा पॉलिथीन बिछा कर 6 से 9 इंच मिट्टी से ढक कर लेप कर देते हैं जिससे कि कही से वायु व जल गड्ढे में प्रवेश न कर सके।
7. उपरोक्त विधि से संरक्षित किया गया चारा ढाई से तीन महीने में साइलेज के रूप में बनकर तैयार हो जाता है।
8. एक पशु को 20 से 25 किलोग्राम साइलेज प्रतिदिन खिला सकते हैं। दूध देने वाले पशु को दूध निकालने से कुछ समय पहले साइलेज नहीं खिलाना चाहिए नहीं तो दूध में इसकी गंध आ सकती है।

साइलेज के गुण

1. एक अच्छी साइलेज में स्पष्ट अम्लत्व की गंध तथा स्वाद हो और उसमें फफूंदी व ब्यूटायरिक अम्ल बिल्कुल न हो तथा इसक पी.एच. 3.5 से 4.2 होना चाहिए।
2. अच्छी साइलेज का रंग हल्का बादामी या पीला बादामी होना चाहिए।
3. साइलेज की पत्तियों के सभी भाग सुरक्षित होने चाहिए तथा वह चिपकी व सख्त नहीं होनी चाहिए।

साइलेज बनाने के लाभ

1. साइलेज बनाकर हरे चारे को पौष्टिक अवस्था में काफी समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है तथा इसे पशुओं को पूरे वर्ष खिलाया जा सकता है जिससे दाने की बचत होती है।
2. चारे की फसलों के पोषक तत्वों को साइलेज बना कर नष्ट होने से बचाया जा सकता है।
3. बरसात के मौसम में जब चारे की मात्रा ज्यादा होती है तो कुछ समय के बाद चारे बेकार हो जाते हैं। साइलेज बनाकर सुरक्षित रख कर जब हरे चारे की कमी हो विशेषकर मई–जून तथा अक्टूबर–नवंबर में खिलाकर चारे की कमी पूरी की जा सकती है।
4. साइलेज बनाने के लिए फसल को फूलने की अवस्था पर ही काट लेते हैं जिससे अगली फसल की बुवाई के लिए खेत शीघ्र खाली हो जाते हैं जिससे दूसरी फसल की बुवाई समय से हो जाती है।
5. चारे की फसलों जैसे सूखी ज्वार, बाजरा, मक्का की कड़वी को संग्रह करने में काफी स्थान की आवश्यकता होती है तथा आग लगने व वर्षा से खराब होने का भी भय रहता है।
6. कुछ फसलों की अंतिम अवस्था में कीट लगने का भय रहता है फूलते समय काट लेने पर यह भय दूर हो जाता है।
7. साइलेज अधिक पाचक व पौष्टिक होने के कारण पशु को अधिक स्वस्थ एवं अधिक दूध देने में सहायता होती है।
8. साइलेज बनाने के लिए जब फसल को पुष्पावस्था पर काटते हैं तो कुछ खरपतवार भी उस समय पुष्पावस्था में होते हैं जो फसल के साथ ही काट लिए जाते हैं जिससे अगले मौसम में उसे खेत में खरपतवार कम उगते हैं इस प्रकार खरपतवार नियंत्रण होता है।

एक कदम आत्मनिर्भर किसान की ओरः किसान क्रेडिट कार्ड योजना 2026

उदय लाल गुर्जर, सुभिता कुमावत एवं नितिन डोडा
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

परिचय भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ कृषि है और यह देश की कुल आय का एक बड़ा हिस्सा प्रदान करने के लिए कृषि पर निर्भर करती है। किसानों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से भारतीय रिजर्व बैंक और नाबार्ड (NABARD) ने 1998 में किसान क्रेडिट कार्ड योजना शुरू की। किसान क्रेडिट कार्ड योजना किसानों को विभिन्न कृषि गतिविधियों के लिए आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करती है। इस योजना के माध्यम से किसानों को खेती के विभिन्न चरणों, जैसे बीज, खाद, कीटनाशक, और फसल कटाई के लिए ऋण उपलब्ध कराया जाता है।

यह योजना बागवानी, डेयरी पालन, मुर्गी पालन और अन्य गैर–फसल गतिविधियों के लिए भी वित्तीय सहायता प्रदान करती है। KCC योजना का प्राथमिक उद्देश्य किसानों को साहूकारों और अनौपचारिक ऋणदाताओं पर निर्भरता से मुक्त करना और उन्हें संगोठित बैंकिंग प्रणाली में शामिल करना है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना की लोकप्रियता और महत्व को देखते हुए, इस योजना के ऐतिहासिक संदर्भ, विकास, और समय समय पर किए गए सुधारों का विश्लेषण करना है। इसके अलावा, अध्ययन में केसीसी योजना के प्रभाव, चुनौतियों, और संभावनाओं का भी विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन केसीसी योजना की सफलता और इसकी प्रभावकारीता को बढ़ाने के लिए आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करता है, जो भारतीय कृषि और बैंकिंग क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण हैं।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना का महत्वः कृषि अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य सीमित संसाधनों में अधिकतम उत्पादन और किसान की आय में वृद्धि करना है। किसान क्रेडिट कार्ड योजना का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यह किसानों को अनौपचारिक ऋणदाताओं और साहूकारों की गिरत से मुक्त करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में अक्सर किसान उच्च ब्याज दरों पर अनौपचारिक ऋणदाताओं से ऋण लेते हैं, जिससे वे कर्ज के जाल में फंस जाते हैं। KCC योजना के तहत, किसानों को संगोठित बैंकिंग प्रणाली के माध्यम से ऋण मिलता है, जो न केवल सुरक्षित है, बल्कि ब्याज दरें भी अपेक्षाकत कम होती हैं। इससे किसानों की वित्तीय स्थिति स्थिर होती है और वे विभिन्न कृषि कार्यों पर अधिक ध्यान केंद्रित कर पाते हैं।

किसान क्रेडिट कार्ड इस लक्ष्य को निम्न प्रकार से पूरा करता है

- सस्ती ब्याज दर पर ऋण के माध्यम से किसानों को कम ब्याज पर ऋण मिलता है, जिससे उनकी उत्पादन लागत घटती है।
- समय पर पूंजी उपलब्धता फसल चक्र के अनुसार समय पर ऋण मिलने से किसान साहूकारों पर निर्भर नहीं रहते।
- नकदी प्रवाह में सुधार किसानों की आय और व्यय के बीच संतुलन बना रहता है।
- ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती कृषि गतिविधियों में निवेश बढ़ने से ग्रामीण रोजगार और बाजार को गति मिलती है।

योजना का विकास और सुधारः इसके अलावा, KCC योजना में समय समय पर किए गए सुधारों ने इसके महत्व को और बढ़ाया है। 2004 में बागवानी और डेयरी पालन को शामिल करने से लेकर 2018 में मुर्गी पालन और अन्य गैर–फसल गतिविधियों के लिए ऋण सुविधा प्रदान करने तक, इन सुधारों ने योजना को अधिक समावेशी और व्यापक बनाया है। डिजिटल बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार भी केसीसी योजना का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जिससे ऋण प्रक्रिया में गति और सरलता आई है। इन सुधारों ने किसानों को अधिकतम लाभ पहुँचाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और भारतीय कृषि क्षेत्र के समग्र विकास में योगदान दिया है।

- 1998 में के.सी.सी योजना की शुरूआत हुई थी, जिसमें मुख्य रूप से फसल ऋण की सुविधा प्रदान की जाती थी।
- 2004 के सुधारः बागवानी और डेयरी पालन को शामिल करने से किसानों को विविध कृषि गतिविधियों के लिए ऋण मिलना शुरू हुआ।
- 2012 के सुधारः डिजिटल बैंकिंग सुविधाओं के माध्यम से किसानों को त्वरित और सरल ऋण प्राप्ति हुई।
- 2018 के सुधारः मुर्गी पालन और अन्य गैर–फसल गतिविधियों के लिए ऋण सुविधा ने किसानों की आय में वृद्धि की।

2026 में किसान कल्याण के लिए किसान क्रेडिट कार्ड की भूमिका : 2026 तक किसान क्रेडिट कार्ड योजना को डिजिटल बैंकिंग, डायरक्ट बेनिफिट ट्रांसफर और फसल बीमा योजनाओं से जोड़ा गया है। इससे किसानों को निम्न लाभ मिल रहे हैं

- डिजिटल किसान क्रेडिट कार्ड और मोबाइल बैंकिंग सुविधा
- छोटे और सीमांत किसानों को प्राथमिकता
- प्राकृतिक आपदा की स्थिति में ऋण पुनर्गठन
- पशुपालन और मत्स्य पालन को विशेष ऋण सीमा
- अल्पकालीक फसली ऋण की सीमा 3 लाख रूपये से बढ़ाकर 5 लाख रूपये कर दी है। इस सीमा के तहत, समय पर ऋण चुकाने वाले किसानों को प्रभावी रूप से 4% की कम ब्याज दर पर लोन मिलता रहेगा, जिससे कृषि के लिए आसान और सस्ता ऋण मिल सके।

परिणाम और विश्लेषणः किसान क्रेडिट कार्ड योजना के तहत जारी ऋण की मात्रा और वितरण के आंकड़ों का विश्लेषण किया गया। यह पाया गया कि योजना ने किसानों की वित्तीय स्थिति को स्थिर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

- इस योजना ने किसानों को त्वरित और सस्ता ऋण सुविधा प्रदान की है।
- समय समय पर किए गए सुधारों ने योजना की प्रभावकारीता को बढ़ाया है।
- डिजिटल बैंकिंग सुविधाओं के माध्यम से ऋण प्रक्रिया को सरल बनाया गया है।

यह परिणाम दर्शाते हैं कि केसीसी ने किसानों की आय में 15–20 गुणा वृद्धि और ऋण चुकौती क्षमता में सुधार लाया है, जिससे कृषि उत्पादकता बढ़ी है।

निष्कर्ष

के.सी.सी. योजना ने भारतीय कृषि क्षेत्र में महत्वपूर्ण सुधार लाए हैं। यह योजना किसानों को विभिन्न कृषि गतिविधियों के लिए आवश्यक वित्तीय सहायता प्रदान करती है। केसीसी योजना का ऐतिहासिक संदर्भ और विकास महत्वपूर्ण रहा है। समय समय पर किए गए सुधारों ने योजना की प्रभावकारीता को बढ़ाया है। योजना के समक्ष कुछ चुनौतियां हैं, लेकिन इसके बावजूद इसने कृषि क्षेत्र में सकारात्मक प्रभाव डाले हैं। 2026 में RBI के प्रस्तावित सुधारों से योजना और मज़बूत होगी, जिससे किसानों को लंबी अवधि का लाभ मिलेगा।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

अजवाइनः मानव और पशुओं के लिए वरदान, पोषक तत्व एवं किसानों की आय बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका

राम स्वरुप चौधरी, रोशन चौधरी, शिवराज कुमावत एवं जनक राज
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

परिचय

अजवाइन, जिसका वैज्ञानिक नाम *Trachyspermum ammi* है, दक्षिण एशिया में प्राचीन काल से उपयोग में लाई जाने वाली एक अत्यंत महत्वपूर्ण औषधीय एवं मसाला फसल है। भारत में इसे सामान्यतः "अजवाइन" के नाम से जाना जाता है और यह सदियों से आयुर्वेद तथा लोक चिकित्सा पद्धति का अभिन्न अंग रही है। इसके छोटे, अंडाकार बीजों में तीव्र सुगंध पाई जाती है, जो इसमें उपस्थित थाइमोल के कारण होती है। अजवाइन केवल मानव स्वास्थ्य के लिए ही नहीं, बल्कि पशु स्वास्थ्य प्रबंधन में भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है। साथ ही, इसकी खेती किसानों के लिए एक लाभकारी एवं आयवर्धक विकल्प बनकर उभरी रही है।

अजवाइन के पोषक तत्वः अजवाइन के बीज पोषक तत्वों और जैव सक्रिय यौगिकों से भरपूर होते हैं। इसमें प्रमुख सक्रिय तत्व थाइमोल होता है, जो शक्तिशाली जीवाणुरोधी और फफूंदनाशक गुणों से युक्त है। अजवाइन में रेशा (फाइबर), कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, कैल्शियम, आयरन, फॉस्फोरस तथा आवश्यक तेल प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें एंटीऑक्सीडेंट गुण भी होते हैं, जो शरीर की कोशिकाओं को ऑक्सीडेटिव तनाव से बचाते हैं। इसके अतिरिक्त, अजवाइन में विटामिन ए, विटामिन–सी तथा विटामिन –बी समूह भी उपस्थित होते हैं, जो पाचन शक्ति, रोग प्रतिरोधक क्षमता और चयापचय क्रिय को सुदृढ़ बनाते हैं।

मानव स्वास्थ्य के लिए अजवाइन के लाभः अजवाइन आयुर्वेद में अत्यंत महत्वपूर्ण औषधि मानी जाती है। यह विशेष रूप से पाचन संबंधी विकारों में अत्यंत प्रभावी है। इसके सेवन से पाचन संबंधी समस्याए , गैस, अम्लता, पेट दर्द और सूजन जैसी समस्याओं में शीघ्र राहत मिलती है। थाइमोल गैस्ट्रिक रसों के स्राव को बढ़ाकर पाचन प्रक्रिया को बेहतर बनाता है।यह श्वसन संबंधी रोगों जैसे खांसी, दमा और ब्रोंकाइटिस में भी लाभकारी है। इसके सूजनरोधी और जीवाणुरोधी गुण छाती की जकड़न कम कर श्वसन तंत्र को स्वस्थ बनाते हैं। महिलाएं मासिक धर्म के दर्द एवं अनियमितता से राहत पाने के लिए अजवाइन का पानी उपयोग करती हैं। अजवाइन हृदय स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक है। यह कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखने में सहायक होती है और दीर्घकालिक रोगों के जोखिम को कम करती है। साथ ही, यह चयापचय को सक्रिय कर वजन नियंत्रण में भी मदद करती है।

पशु स्वास्थ्य में अजवाइन की उपयोगिताः अजवाइन पशु चिकित्सा में भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है। गाय, भैंस, बकरी और भेड़ जैसे पशुओं में यह प्राकृतिक पाचन उत्तेजक (Digestive Stimulant) के रूप में कार्य करती है। यह पशुओं की भूख बढ़ाती है, गैस की समस्या कम करती है तथा जठरांत्र संक्रमणों से बचाव करती है। कई किसान पशु आहार में अजवाइन चूर्ण मिलाकर पाचन क्षमता को बेहतर बनाते हैं। इसके जीवाणुरोधी गुण आंतरिक परजीवियों को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं। पोल्ट्री पालन में भी अजवाइन आंतों के स्वास्थ्य को सुधारती है और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाकर उत्पादन में वृद्धि करती है। इसके अतिरिक्त, यह जुगाली करने वाले पशुओं में मीथेन उत्सर्जन को कम कर पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देती है।

अजवाइन के औषधीय उपयोगः अजवाइन आयुर्वेद में ऐंठनरोधी, उत्तेजक, टॉनिक तथा वातनाशक गुणों के लिए प्रसिद्ध है।

- यह दमा, अपच, दस्त और गैस में लाभकारी है।
- "जीवन रक्षक सुधा" एवं "अग्निवर्धक चूर्ण" जैसे आयुर्वेदिक योगों में इसका प्रयोग होता है। अग्निवर्धक चूर्ण का इस्तेमाल कब्ज, अपच, पित्त की बीमारी और पुराने दस्त में किया जाता है, जबकि जीवन रक्षक सुधा का इस्तेमाल सिर दर्द, सीने और कमर दर्द में किया जाता है।
- लंबी खांसी में कफ निकालने के लिए उपयोगी है।
- अजवाइन चूर्ण को गुनगुने पानी के साथ लेने से श्वसन रोगों में लाभ मिलता है।
- 20 ग्राम अजवाइन पाउडर, 5 ग्राम सेंधा नमक और 60–70 ग्राम शहद मिलाकर पेस्ट बना लें। 1ग्राम पेस्ट दिन में तीन बार लेने से काली खांसी ठीक हो जाती है।
- शराब की लत छोड़ने में अजवाइन के बीज चबाना सहायक माना जाता है।
- इसका काढ़ा हुकवर्म और दांत दर्द में उपयोगी है।
- अजवाइन पत्तों का लेप कीट काटने पर लगाया जाता है।
- टॉन्सिलाइटिस में बीज को दिन–रात मुंह में रखना चाहिए। जो एक कृमिनाशक का काम करता है बीज थाइमोल बनाने के लिए फायदेमंद है जिसे गले के दर्द में से राहत मिलती हैं।
- 3ग्राम अजवाइन और दालचीनी को उबालकर पानी में मिलाकर दिन में तीन बार 3 से 4 दिन तक पीने से इन्फ्लूएंजा ठीक हो जाता है।
- 6ग्राम अजवाइन पाउडर को गर्म दूध के साथ लेने से पीरियड्स के लिये लाभदायक होता है।
- डिलीवरी के बाद कुछ दिनों तक गुड़ के साथ अजवाइन पाउडर लेने से पीठ दर्द में आराम मिलता है, यूट्रस साफ होता है, पाचन ठीक होता है, भूख बढ़ती है और ताकत मिलती है।
- अजवाइन तेल का मुख्य घटक थाइमोल टूथपेस्ट और इत्र निर्माण में प्रयुक्त होता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

अजवाइन की खेती एवं किसानों की आय में वृद्धिः अजवाइन कम लागत और ज्यादा कीमत वाली फसल है, जो अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में आसानी से उगाई जा सकती है। यह अच्छी जल निकासी वाली दोमट मिट्टी में उत्तम उत्पादन देती है। इसकी फसल अवधि लगभग 4 से 5 महीने होती है जिससे किसान इसे रोटेशनल फसल के तौर पर उगा सकते हैं। भारत अजवाइन का प्रमुख उत्पादक एवं निर्यातक देश है, विशेषकर राजस्थान और गुजरात राज्य इसके बड़े उत्पादक हैं। देश–विदेश में बढ़ती मांग के कारण किसानों को इससे अच्छा लाभ प्राप्त होता है। औषधि उद्योग, मसाला उद्योग और हर्बल उत्पादों में इसकी बढ़ती उपयोगिता ने इसके बाजार मूल्य को और अधिक बढ़ा दिया है। किसान अजवाइन तेल की प्रोसेसिंग, ब्रांडेड पैकेजिंग तथा जैविक खेती अपनाकर अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि कर सकते हैं। सरकार द्वारा औषधीय एवं सुगंधित पौधों को प्रोत्साहन देने वाली योजनाएं भी किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो रही हैं।

निष्कर्षः अजवाइन एक बहुउपयोगी, औषधीय एवं पोषक तत्वों से भरपूर बीजीय फसल है, जो मानव और पशु दोनों के स्वास्थ्य के लिए अत्यंत लाभकारी है। इसके चिकित्सीय गुण इसे एक प्राकृतिक उपचार के रूप में विशेष स्थान प्रदान करते हैं। साथ ही, इसकी खेती ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों के लिए आर्थिक सशक्तिकरण का सशक्त माध्यम बन सकती है। वैज्ञानिक खेती, मूल्य संवर्धन और टिकाऊ पशुपालन पद्धतियों को अपनाकर अजवाइन ग्रामीण विकास, बेहतर स्वास्थ्य और समृद्धि की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

पारंपरिक पशुओं से आधुनिक दुग्ध उत्पादः किसानों के लिए अवसर

उर्मिला चौधरी एवं भूपेन्द्र कस्वां
डेयरी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, जोबनेर

परिचयः भारत में परंपरागत रूप से गाय और भैंस को मुख्य दुग्ध पशु माना जाता रहा है, लेकिन इसके साथ–साथ ऊँट, गधा, घोड़ा और याक जैसे कई अन्य पशु भी हैं, जो यद्यपि कम मात्रा में दूध देते हैं, फिर भी उनका दूध विशेष गुणों से भरपूर होता है। आज के समय में जब उपभोक्ता स्वास्थ्य, पोषण और पारंपरिक खाद्य पदार्थों के प्रति अधिक जागरूक हो रहे हैं, तब इन कम दूध देने वाले पारंपरिक पशुओं के दूध से नए और मूल्यवर्धित दुग्ध उत्पाद बनाने की संभावनाएँ तेज़ी से बढ़ रही हैं। हालाँकि गाय और भैंस का दूध सबसे अधिक इस्तेमाल होता है, लेकिन इन पारंपरिक पशुओं के दूध में खास पोषण गुण होते हैं, जिनकी बाज़ार में अच्छी कीमत मिल सकती है। इससे किसानों को कम दूध से भी ज्यादा आमदनी का अवसर मिल सकता है।

बदलती उपभोक्ता माँग और नए बाज़ारः आज शहरी और अर्ध–शहरी क्षेत्रों में लोग केवल पेट भरने वाला भोजन नहीं, बल्कि ऐसा भोजन चाहते हैं जो स्वास्थ्यवर्धक, आसानी से पचने वाला और प्राकृतिक हो। इसी कारण गाय–भैंस के दूध के अलावा अब लोग ऊँट, गधा और घोड़ी जैसे पशुओं के दूध की ओर भी ध्यान दे रहे हैं। इन पशुओं के दूध में कुछ ऐसे पोषक तत्व पाए जाते हैं जो सामान्य दूध से अलग और कई मामलों में बेहतर माने जाते हैं। यही कारण है कि इन दुग्ध उत्पादों को प्रीमियम या विशेष श्रेणी में रखा जाता है और इनके अच्छे दाम मिल सकते हैं।

गधा और घोड़ी का दूधः बच्चों और विशेष पोषण के लिएः गधे और घोड़ी का दूध कई मायनों में माँ के दूध के समान माना जाता है। इसमें वसा की मात्रा कम, लैक्टोज की मात्रा अधिक और प्रोटीन की संरचना ऐसी होती है जो बच्चों के लिए आसानी से पचने योग्य होती है। ऐसे बच्चे जिन्हें गाय या भैंस के दूध से एलर्जी हो जाती है, उनके लिए यह दूध एक अच्छा विकल्प बन सकता है। अस्पतालों, पोषण केंद्रों और विशेष बच्चों के आहार में इस दूध की माँग धीरे–धीरे बढ़ रही है। किसानों के लिए यह एक अवसर है कि वे गधा या घोड़ी पालकर उनके दूध को सीधे या प्रसंस्कृत रूप में बेचकर अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि इसकी कीमत सामान्य दूध से कई गुना अधिक होती है।

ऊँट और गधे का दूधः स्वास्थ्यवर्धक और औषधीय महत्वः ऊँट और गधे के दूध को परंपरागत रूप से औषधीय गुणों वाला माना जाता है। कई अध्ययनों और अनुभवों के अनुसार यह दूध मधुमेह (शुगर), उच्च रक्तचाप और रोग–प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक हो सकता है। इसी कारण ऊँट के दूध से बने स्वास्थ्य पेय, किण्वित पेय और प्रोबायोटिक उत्पादों की माँग बढ़ रही है। किसान इस दूध को कच्चे रूप में बेचने के अलावा इससे दही जैसे उत्पाद, खट्टे पेय या बोतल बंद स्वास्थ्य पेय बनाकर अधिक लाभ कमा सकते हैं। खासकर रेगिस्तानी और शुष्क क्षेत्रों के किसानों के लिए ऊँट एक ऐसा पशु है जो कम पानी और कठिन परिस्थितियों में भी अच्छी तरह जीवित रहता है।

चीज़ और अन्य विशेष दुग्ध उत्पादः पहले यह माना जाता था कि गधा, ऊँट और घोड़े के दूध से चीज़ बनाना संभव नहीं है, लेकिन अब नई तकनीकों की मदद से यह काम किया जा रहा है। गधे के दूध से बनी "पुले चीज़" दुनिया की सबसे महँगी चीज़ों में गिनी जाती है। इसी तरह याक के दूध से बनी "छुरपी" पहाड़ी क्षेत्रों में पहले से ही लोकप्रिय है। इन चीज़ों में प्रोटीन और वसा की मात्रा अधिक होती है और इनकी शेल्फ–लाइफ भी अच्छी होती है। यदि किसान समूह या सहकारी संस्था के माध्यम से इस तरह के उत्पाद तैयार करें, तो वे पर्यटन क्षेत्रों, शहरों और विशेष बाज़ारों में इन्हें अच्छे दाम पर बेच सकते हैं।

दूध से मिठाइयाँ और अन्य उत्पादः बकरी और ऊँट जैसे पशुओं के दूध में लैक्टोज की मात्रा अधिक होती है, जिससे यह दूध मिठाइयाँ और अन्य उत्पाद बनाने के लिए उपयुक्त होता है। बकरी के दूध से बनने वाला "काजेटा" जैसे उत्पाद अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी पसंद किए जाते हैं। किसान अपने स्तर पर या छोटे प्रसंस्करण इकाई के माध्यम से दूध की मिठाइयाँ, और स्प्रेड तैयार कर सकते हैं। ऐसे उत्पाद स्थानीय हाट, मेलों, धार्मिक स्थलों और पर्यटन क्षेत्रों में आसानी से बिक जाते हैं।

पारंपरिक किण्वित पेय और प्रोबायोटिक उत्पादः घोड़ी के दूध से बना "कौमिस" और ऊँट के दूध से बना "चाल" जैसे पारंपरिक पेय सदियों से उपयोग में हैं। ये पेय पाचन के लिए अच्छे माने जाते हैं और शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं। आज इन्हें वैज्ञानिक तरीके से बनाकर प्रोबायोटिक स्वास्थ्य पेय के रूप में बाज़ार में उतारा जा सकता है। यदि किसानों को सही प्रशिक्षण और स्वच्छता की जानकारी दी जाए, तो ये उत्पाद ग्रामीण स्तर पर भी बनाए जा सकते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

किसानों के लिए विशेष लाभः इन पारंपरिक पशुओं का एक बड़ा लाभ यह है कि ये सीमांत और शुष्क क्षेत्रों में भी पाले जा सकते हैं, जहाँ गाय–भैंस पालन कठिन होता है। इन पशुओं को चारे और पानी की आवश्यकता भी अपेक्षाकृत कम होती है। इससे छोटे और सीमांत किसानों को कम लागत में पशुपालन का अवसर मिलता है। साथ ही, इन पशुओं के दूध से बने उत्पादों की कीमत अधिक होने के कारण कम मात्रा में दूध होने पर भी अच्छी आय संभव है।

बाज़ार संभावनाएँ और प्रेरक कारक

- उच्च पोषण गुणवत्ताः इनमें लैक्टोफेरिन, लाइसोज़ाइम और इम्युनोग्लोबुलिन जैसे जैव–सक्रिय तत्व प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं तथा ये आसानी से पचने योग्य होते हैं।
- सततताः ये पशु सीमांत एवं शुष्क क्षेत्रों में पाले जाते हैं, जिससे स्थानीय जैव–विविधता का संरक्षण होता है और छोटे किसानों की आय बढ़ती है।
- पारंपरिक खाद्य पदार्थों की बढ़ती माँगः वैश्विक स्तर पर प्रामाणिक और पारंपरिक खाद्य पदार्थों के प्रति रुचि बढ़ रही है।

चुनौतियाँ और भविष्य की दिशा

- सीमित दुग्ध उत्पादनः कम एवं मौसमी दूध उत्पादन के कारण बड़े पैमाने पर प्रसंस्करण कठिन है।
- मानकीकरण की कमीः विशेष रूप से किण्वित उत्पादों में गुणवत्ता और सूक्ष्मजीव सुरक्षा सुनिश्चित करना चुनौतीपूर्ण है।
- प्रसंस्करण तकनीकः उत्पादन क्षमता, गुणवत्ता और शेल्फ–लाइफ बढ़ाने हेतु कम लागत वाली आधुनिक तकनीकों पर अनुसंधान की आवश्यकता है।

निष्कर्षः ऊँट, गधा, घोड़ा और याक जैसे पारंपरिक पशु आज केवल जीवनयापन का साधन नहीं, बल्कि आधुनिक दुग्ध उत्पादों के माध्यम से आय बढ़ाने का अवसर बन सकते हैं। बदलती उपभोक्ता माँग, स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता और पारंपरिक उत्पादों की लोकप्रियता को देखते हुए यह समय किसानों के लिए बहुत अनुकूल है। सही जानकारी, प्रशिक्षण और सहयोग मिलने पर ये पशु ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने और किसानों की आमदनी बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।

तालिका 1: अल्प दूध–उत्पादक पशु और संभावित दुग्ध उत्पाद

पशु	दूध की विशेषताएँ	संभावित उत्पाद	विशेष लाभ / उपयोग	बाज़ार प्रासंगिकता
गधा	मानवीय दूध के समान, कम वसा, उच्च लैक्टोज	शिशु आहार, हाइपोएलर्जेनिक दूध, प्रोबायोटिक पेय	एलर्जी कम, पाचन में आसान, बच्चों के लिए सुरक्षित	अस्पताल, औषधीय दूध बाजार, प्रीमियम उपभोक्ता
घोड़ी	कम वसा, उच्च लैक्टोज, प्रोटीन संरचना मानव दूध समान	कौमिस (किण्वित पेय), शिशु आहार, स्वास्थ्य पेय	पाचन और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक	पारंपरिक/एथनिक बाजार, पर्यटन स्थल, प्रीमियम स्वास्थ्य पेय
ऊँट	कम वसा, प्रोटीन व लैक्टोज संतुलित, औषधीय गुण	प्रोबायोटिक ऊँट दूध, चाल (किण्वित पेय), रेडी–टू–ड्रिंक स्वास्थ्य पेय	मधुमेह, उच्च रक्तचाप में सहायक, रोग–प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है	स्वास्थ्य–सेवा केंद्र, हॉटेल/रेस्टोरेंट, प्रीमियम उपभोक्ता
याक	उच्च वसा और प्रोटीन, ठंडा–स्थिर दूध	चीज़ (छुरपी), किण्वित पेय, दही	ऊर्जा और पोषण में उच्च, लंबी शेल्फ–लाइफ	पर्यटन स्थल, हॉटल्स, हाई–वैल्यू चीज़ बाज़ार
बकरी	मध्यम वसा, उच्च लैक्टोज	काजेटा (दूध–जैम), दही, स्प्रेड	कैरामेलाइज्ड उत्पाद बनाने में उपयुक्त	पारंपरिक/स्थानीय बाजार, मेलों, हाट

तालिका 2: बाज़ार महत्व और उत्पाद वर्गीकरण

प्रमुख पशु स्रोत	उत्पाद प्रकार	स्वास्थ्य/पोषण लाभ	संभावित बाजार/उपभोक्ता
गधा, घोड़ी	शिशु और हाइपोएलर्जेनिक दूध	एलर्जी कम, पाचन में आसान, बच्चों के लिए सुरक्षित	अस्पताल, औषधीय दूध बाजार, प्रीमियम उपभोक्ता
ऊँट, घोड़ी, याक	प्रोबायोटिक और किण्वित पेय	रोग प्रतिरोधक और पाचन में सहायक	पारंपरिक/एथनिक बाजार, प्रीमियम स्वास्थ्य पेय
गधा, याक, ऊँट	उच्च–मूल्य चीज़	ऊर्जा और पोषण में उच्च, लंबी शेल्फ–लाइफ	प्रीमियम चीज़ बाज़ार, पर्यटन स्थल, हॉटल्स
बकरी, ऊँट	कैरामेलाइज्ड उत्पाद	मिठाई, काजेटा (दूध–जैम), और स्प्रेड के लिए उपयुक्त	पारंपरिक/स्थानीय बाजार, मेलों, हाट
ऊँट, गधा	रेडी–टू–ड्रिंक स्वास्थ्य पेय	मधुमेह और उच्च रक्तचाप में सहायक	वास्थ्य केंद्र, सुपरमार्केट, प्रीमियम उपभोक्ता

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

खाद्य तेलों में भारत की आत्मनिर्भरताः आवश्यकता, चुनौतियाँ और समाधान

करण सचदेवा, मनोहर राम, जोगेंद्र सिंह एवं नितिन डोडा
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

प्रस्तावनाः भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में अनाज फसलों के बाद तिलहनी फसलों का दूसरा सबसे बड़ा योगदान है। पिछले एक दशक में तिलहन क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता में क्रमशः 1.60, 6.87 तथा 3.63 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर्ज की गई है। भारत कृषि प्रधान देश होने के बावजूद खाद्य तेलों के क्षेत्र में लंबे समय से आयात पर निर्भर रहा है। बढ़ती जनसंख्या, बदलती जीवनशैली तथा खाद्य आदतों में परिवर्तन के कारण खाद्य तेलों की मांग निरंतर बढ़ रही है, नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, प्रत्येक भारतीय के पीछे औसतन हर साल 19.5 किलोग्राम खाद्य तेल की खपत होती है, जो की पिछले दशक में औसतन 15.8 किलोग्राम थी, जबकि घरेलू उत्पादन उसी गति से नहीं बढ़ पाया है। परिणामस्वरूप देश को अपनी आवश्यकता का बड़ा हिस्सा(57 प्रतिशत) आयात के माध्यम से पूरा करना पड़ता है। वर्तमान परिस्थितियों में खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता केवल आर्थिक आवश्यकता नहीं, बल्कि खाद्य एवं पोषण सुरक्षा, किसान आय वृद्धि तथा कृषि की स्थिरता से जुड़ा एक राष्ट्रीय लक्ष्य बन चुकी है।

भारत में खाद्य तेलों की वर्तमान स्थिति

भारत सरकार के तृतीय अग्रिम अनुमान के अनुसार वर्ष 2024–25 में तिलहनों का कुल क्षेत्रफल, उत्पादन और उत्पादकता क्रमशः 30.26 मिलियन हैक्टर, 42.61 मिलियन टन और 1408 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर रहे। हालांकि, बढ़ती जनसंख्या की मांग को पूरा करने के लिए घरेलू खाद्य तेल की उपलब्धता पर्याप्त नहीं है। परिणामस्वरूप, भारत न केवल विश्व में तिलहन उत्पादन में अग्रणी है, बल्कि खाद्य तेलों का सबसे बड़ा आयातक देश भी बन गया है। भारत हर वर्ष खाद्य तेल की कुल खपत का लगभग 50–60 प्रतिशत आयात करता है। वर्ष 2023–24 में खाद्य तेल का आयात 15.65 मिलियन टन रहा, जो वर्ष 2010–11 (7.24 मिलियन टन) की तुलना में 115.3 प्रतिशत अधिक है।

राई–सरसों रबी की प्रमुख तिलहनी फसलों में से एक है। वैश्विक स्तर पर भारत राई–सरसों उत्पादन में 13.76 प्रतिशत के योगदान के साथ चीन और कनाडा के बाद तीसरे स्थान पर है, जबकि क्षेत्रफल के आधार पर 20.37 प्रतिशत के योगदान के साथ कनाडा के बाद दूसरे स्थान पर है।

खाद्य तेलों में राई-सरसों का योगदान

भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में राई–सरसों फसलों का उत्पादन तिलहनी फसलों में विशेष महत्व रखता है। वर्ष 2024–25 के तृतीय अग्रिम अनुमान के अनुसार, तिलहनों के कुल क्षेत्रफल एवं उत्पादन में राई–सरसों का योगदान क्रमशः 28.6 प्रतिशत (8.63 मिलियन हैक्टर) और 31.8 प्रतिशत (12.61 मिलियन टन), तथा कुल खाद्य तेल उत्पादन में इसका योगदान लगभग 33.8 प्रतिशत है। इस प्रकार, राई–सरसों फसलें देश की खाद्य तेल आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। अनुकूल जलवायु, विस्तृत क्षेत्रफल तथा किसानों द्वारा इस फसल की स्वीकृति ने राजस्थान को **"सरसों का प्रदेश"** के रूप में स्थापित किया है। इस दृष्टि से खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता की दिशा में सरसों आधारित उत्पादन प्रणाली अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता की आवश्यकता

- **आर्थिक सुदृढ़ता -** खाद्य तेलों का आयात कृषि आयात बिल का बड़ा हिस्सा है। घरेलू उत्पादन बढ़ाने से विदेशी मुद्रा की बचत होगी तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मजबूत होगी।
- **खाद्य एवं पोषण सुरक्षा -** तेल मानव आहार का अनिवार्य घटक है। आयात पर अत्यधिक निर्भरता आपूर्ति संकट की स्थिति में खाद्य सुरक्षा के लिए जोखिम उत्पन्न कर सकती है।
- **किसानों की आय में वृद्धि -** तिलहन फसलें नकदी फसल के रूप में किसानों को बेहतर आर्थिक लाभ प्रदान करती हैं। विशेष रूप से सरसों जैसी फसल किसानों के लिए लाभकारी विकल्प है।
- **कृषि विविधीकरण -** धान–गेहूं आधारित फसल प्रणाली से हटकर तिलहन फसलों को अपनाने से मृदा स्वास्थ्य में सुधार तथा जल संसाधनों का संतुलित उपयोग संभव है।

खाद्य तेल उत्पादन की प्रमुख चुनौतियाँः तिलहन फसलों की अपेक्षाकृत कम उत्पादकता उच्च तेल प्रतिशत एवं उन्नत किस्मों का सीमित प्रसार, वर्षा आधारित खेती पर अधिक निर्भरता, कीट एवं रोगों का प्रभाव, प्रसंस्करण एवं विपणन अवसंरचना की कमी इन चुनौतियों के कारण तिलहन उत्पादन की वृद्धि मांग के अनुरूप नहीं हो पा रही है। सरकारी प्रयास और अनुसंधान की भूमिका खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई योजनाएँ संचालित की जा रही हैं। राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन ऑयल पाम राष्ट्रीय खाद्य तेल मिशन ऑयल तिलहन के माध्यम से देश में खाद्य तेलउत्पादन बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है, जिससे आयात निर्भरता को कम किया जा सके। इसके साथ ही भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा कृषि विश्वविद्यालय उन्नत किस्मों के विकास, जलवायु सहनशील जीनोटाइपों की पहचान और आधुनिक प्रजनन तकनीकों के उपयोग पर कार्य कर रहे हैं। राई-सरसों में उच्च उत्पादन एवं अधिक तेल प्रतिशत वाली किस्मों के विकास ने उत्पादन वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए आवश्यक उपाय

- **उन्नत किस्मों का विकास एवं प्रसार -** उच्च उत्पादन क्षमता, अधिक तेल प्रतिशत तथा सूखा एवं ताप सहनशील किस्मों का विकास और किसानों तक उनका प्रसार आवश्यक है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- **फसल क्षेत्र का विस्तार -** परती भूमि तथा कम उत्पादक क्षेत्रों में तिलहन फसलों को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। धान–गेहूं प्रणाली में सरसों का समावेशन प्रभावी विकल्प हो सकता है।
- **सिंचाई एवं पोषक तत्व प्रबंधन -** सूक्ष्म सिंचाई, संतुलित उर्वरक उपयोग और वैज्ञानिक कृषि तकनीकों से उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है।
- **मूल्य समर्थन एवं बाजार व्यवस्था -**न्यूनतम समर्थन मूल्य का प्रभावी क्रियान्वयन तथा किसानों को बाजार से सीधे जोड़ना आवश्यक है।
- **प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन-** ग्रामीण स्तर पर तेल प्रसंस्करण इकाइयों की स्थापना से रोजगार सृजन के साथ किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त होगा।

भविष्य की दिशाः भारत में खाद्य तेलों की मांग लगातार बढ़ रही है। यदि अनुसंधान, नीति निर्माण और किसानों के प्रयासों को एकीकृत किया जाए, तो आयात निर्भरता को काफी हद तक कम किया जा सकता है। विशेष रूप से राई–सरसों जैसी पारंपरिक एवं जलवायु अनुकूल फसलों को बढ़ावा देकर देश आत्मनिर्भरता की दिशा में तेजी से आगे बढ़ सकता है।

निष्कर्षः खाद्य तेलों में आत्मनिर्भरता भारत के लिए आर्थिक मजबूती, पोषण सुरक्षा और किसानों की समृद्धि का आधार है। सरकार, वैज्ञानिकों, उद्योगों और किसानों के सामूहिक प्रयासों से भारत आने वाले वर्षों में खाद्य तेल उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बन सकता है, जिसमें राई–सरसों और राजस्थान की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रहेगी।

खुशहाल किसान, स्वस्थ धरतीः प्राकृतिक खेती का मंत्र

छत्रपाल बागड़ा, दीपक शर्मा, देवराज गुर्जर एवं उदय लाल गुर्जर
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

दुनिया को 2047 तक कुल खाद्य उत्पादन में 70 प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी, ताकि बढ़ती वैश्विक जनसंख्या और बढ़ते मध्यम वर्ग द्वारा संचालित उपभोग में बदलाव के साथ तालमेल रखा जा सके, जैसा कि खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) की हाल ही रिपोर्टों में बताया गया है। हमारा देश, भारत, 2030 तक 1.51 अरब लोगों के साथ विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश बनने की संभावना है। ऐसी परिस्थितियों में, तेजी से बढ़ती जनसंख्या के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना राष्ट्र की प्रमुख चिंताओं में से एक होगा। इस कारण, बड़े पैमाने पर ऐसी कृषि पद्धतियों या उत्पादन तकनीकों को लागू करना जो वैज्ञानिक रूप से प्रमाणित नहीं हैं और जिनका फसल उत्पादन पर हानिकारक प्रभाव पड़ सकता है, खाद्य और पोषण सुरक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्य के लिए गंभीर चिंता पैदा कर सकता है।

'हरित क्रांति' तकनीक, जिसमें उच्च उत्पादन वाली बीज किस्मों, रासायनिक उर्वरकों और सिंचाई का उपयोग शामिल था, जिसे 1960 के दशक के मध्य में अपनाया गया था, ने देश में खाद्य कमी को दूर करने में मदद की। इसके विपरीत, कृषि की तीव्रता बढ़ने से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े, जैसे मिट्टी का क्षरण, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, भूमि और जल स्रोतों का यूट्रोफिकेशन तथा जैव विविधता का नुकसान। इसके विपरीत, प्राकृतिक खेती एक अनोखी रसायन–मुक्त खेती पद्धति है, जो कृषि–पर्यावरण आधारित विविध कृषि प्रणाली पर आधारित है, जिसमें फसलें, पेड़ और पशुधन शामिल होते हैं, जिससे कार्यात्मक जैव विविधता संभव होती है।

प्राकृतिक खेती की उत्पत्ति और महत्व

प्राकृतिक खेती कोई तकनीक नहीं बल्कि प्रकृति का हिस्सा मानकर देखने का दृष्टिकोण है, न कि उससे अलग। इसे "फुकुओका विधि", "प्राकृतिक खेती का तरीका" या "कुछ न करने वाली खेती" भी कहा जाता है। "कुछ न करने वाली खेती" का मतलब मेहनत न करना नहीं, बल्कि कृत्रिम इनपुट और उपकरणों से बचना है। भारत में प्राकृतिक खेती या शून्य बजट प्राकृतिक खेती को 1990 के दशक के मध्य में पहली बार कृषि वैज्ञानिक सुभाष पालेकर द्वारा बढ़ावा दिया गया था, जिन्हें इस वैकल्पिक कृषि प्रणाली को बढ़ावा देने के लिए देश के सर्वोच्च नागरिक सम्मानों में से एक से सम्मानित किया गया। यह खेती प्रणाली रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के स्थान पर प्राकृतिक विकल्प अपनाकर उत्पादन लागत को काफी कम करने में सहायक मानी जाती है।

घरेलू रूप से तैयार किए गए उत्पाद जैसे बीजामृत, जीवामृत, नीमास्त्र आदि का उपयोग तथा मिश्रित फसल (इंटरक्रॉपिंग) और मल्चिंग अपनाई जाती है। उनके अनुसार, प्राकृतिक खेती प्रणाली में 30 एकड़ भूमि के लिए केवल एक देशी गाय की आवश्यकता होती है। यह भी माना जाता है कि यह मिट्टी के स्वास्थ्य को सुधारने, मिट्टी में जैविक कार्बन बढ़ाने में मदद करती है, वह भी बिना जैविक खेती की तरह भारी मात्रा में गोबर खाद डाले। इस प्रकार यह कम कार्बन फुटप्रिंट के साथ सतत कृषि प्राप्त करने में सहायक होती है।

प्राकृतिक खेती के उद्देश्य

प्राकृतिक खेती का मुख्य उद्देश्य उत्पादन क्षमता को बेहतर बनाकर किसानों की उपज बढ़ाना तथा रासायनिक पदार्थों (उर्वरक, खरपतवारनाशी और कीटनाशक) के उपयोग से बचते हुए उचित कीमत पर उच्च गुणवत्ता वाला और स्वस्थ भोजन उपलब्ध कराना है। प्राकृतिक खेती का स्वर्ण नियम है कि मिट्टी में जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ाई जाए, जिससे सूक्ष्मजीव जीवन को सहारा मिले और मिट्टी की उर्वरता बढ़े। प्राकृतिक खेती में महत्वपूर्ण कदम हैं– फसल विविधता का संरक्षण, जुताई न करना, जलग्रहण क्षेत्र प्रबंधन, फसल विविधीकरण, समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन, समन्वित खरपतवार प्रबंधन तथा समेकित कीट प्रबंधन।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

प्राकृतिक खेती की विशेषताएँ और आलोचनाएँ

भारत में मौजूद कुल 14.65 करोड़ किसानों में से 85 प्रतिशत से अधिक छोटे किसान हैं और 10 करोड़ से अधिक किसान (68.5 प्रतिशत) औसतन 0.38 हेक्टेयर भूमि पर खेती करते हैं। यह बताया गया है कि दुनिया के गरीब और भूखे लोगों का बड़ा हिस्सा छोटे खेतों पर निर्भर करता है और कम इनपुट, कम उत्पादन वाली तकनीकों के साथ कम भूमि पर जीवन यापन करने के लिए संघर्ष करता है। ऐसी स्थिति में भारतीय कृषि में आधुनिक तकनीक और नवाचार का उपयोग ही एकमात्र समाधान माना जाता है। इसके अलावा, वैज्ञानिक समुदाय का एक वर्ग प्राकृतिक खेती प्रणाली का विरोध करता है, यह कहते हुए कि यह वैज्ञानिक प्रमाणों पर आधारित नहीं है और कुछ विचारों को बढ़ावा देती है, विशेष रूप से देशी गायों से जुड़ी धारणाएँ, जिन्हें कुछ लोग पिछड़ा और पक्षपातपूर्ण मानते हैं। भारत की राष्ट्रीय कृषि विज्ञान अकादमी ने दिल्ली में एक दिवसीय विचार–विमर्श सत्र आयोजित किया और इस निष्कर्ष पर पहुँची इसने ZBNF को "अप्रमाणित" तकनीक बताते हुए कहा कि इससे किसानों या उपभोक्ताओं को ठोस लाभ नहीं मिलेगा। दूसरी ओर, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की व्यवहार्यता की जांच के लिए एक समिति का गठन किया है। भारत सरकार के वित्त मंत्री ने ZBNF प्रथाओं पर जोर दिया है और किसानों से इस नवाचारी मॉडल को अपनाने की अपील की है, जो किसानों की आय दोगुनी करने में मदद कर सकता है। मिट्टी से कार्बन–समृद्ध जैविक पदार्थ के नष्ट होने से कार्बन डाइऑक्साइड (एक ग्रीनहाउस गैस) निकलती है, जो जलवायु परिवर्तन को तेज कर सकती है। लेकिन मिट्टी को पुनर्जीवित करके हम अधिक कार्बन जमीन के नीचे संचित कर सकते हैं और जलवायु परिवर्तन की गति को धीमा कर सकते हैं। मिट्टी की रक्षा के अलावा, कवर क्रॉप्स बढ़ते समय वायुमंडल से कार्बन अवशोषित करते हैं और उसे मिट्टी में पहुंचाते हैं। नकदी फसलों के विपरीत, जिन्हें काटकर मिट्टी से हटा दिया जाता है, कवर क्रॉप्स मिट्टी में ही सड़कर मिट्टी निर्माण में योगदान देते हैं। हालांकि पौधे मिट्टी के लिए कार्बन का मुख्य स्रोत हैं, सूक्ष्मजीव इसे भोजन के रूप में उपयोग करके यह सुनिश्चित करते हैं कि कम से कम कुछ कार्बन मिट्टी में बना रहे। इसलिए माना जाता है कि ZBNF या प्राकृतिक खेती इसी सिद्धांत पर आधारित है।

सुभाष पालेकर का ZBNF के प्रति दृष्टिकोण

- श्री सुभाष पालेकर के अनुसार, ZBNF/ प्राकृतिक खेती के चार मुख्य घटक होते हैं।
- जीवामृत, गाय के मूत्र, गोबर, बिना जोती मिट्टी, दाल का आटा और गुड़ के मिश्रण से मिट्टी की उर्वरता बढ़ाना।
- बीजामृत, गाय के मूत्र, गोबर और चूना आधारित मिश्रण से बीज उपचार।
- मल्चिंग, बहुफसली खेती, विभिन्न पेड़ों के साथ खेती, और फसल अवशेष से मिट्टी की नमी बचाना व कार्बन बढ़ाना।
- केंचुओं को सक्रिय कर जल वाष्प संघनन के माध्यम से नमी बनाए रखना।

निष्कर्ष: प्राकृतिक खेती पर्यावरण के लिए सुरक्षित और टिकाऊ कृषि प्रणाली मानी जाती है। यह खेती लागत कम करने और मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने में मदद कर सकती है। इससे किसानों को रसायनों पर निर्भरता कम करनी पड़ती है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में यह खेती छोटे किसानों के लिए लाभकारी हो सकती है। हालांकि, इसे बड़े स्तर पर लागू करने के लिए अधिक वैज्ञानिक शोध और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। सही तरीके से अपनाने पर यह खाद्य सुरक्षा और सतत कृषि विकास में मदद कर सकती है।

जलवायु परिवर्तन और पौध रोगः किसानों के लिए नई चुनौतियाँ

सरोज ओला, आनंद कुमार मीना एवं मनीषा कुमावत
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर,

परिचयः पौध रोग विज्ञान आज के समय में कृषि और खाद्य सुरक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हो गया है। बदलते मौसम और जलवायु परिवर्तन के कारण पौधों में रोगों का स्वरूप, उनका प्रसार और गंभीरता बदल रही है। तापमान में वृद्धि, असमान वर्षा, उच्च आर्द्रता, सूखा, बाढ़ और वायुमंडलीय गैसों का स्तर पौधों की प्रतिरोध क्षमता को प्रभावित करता है। इससे पहले सीमित क्षेत्रों तक ही पाए जाने वाले रोग अब नए क्षेत्रों में फैलने लगे हैं।

जलवायु परिवर्तन पौध रोग विज्ञान के लिए कई नई चुनौतियाँ प्रस्तुत कर रहा है। रोगजनकों और कीटों की संख्या बढ़ रही है, उनके जीवन चक्र बदल रहे हैं, और पारंपरिक नियंत्रण तकनीकें अब हमेशा प्रभावी नहीं रह रही हैं।

जलवायु परिवर्तन और पौध रोगों का वैज्ञानिक संबंध

1. तापमान में वृद्धि

उच्च तापमान कई रोगजनकों के विकास और प्रसार को बढ़ावा देता है।

प्रभावः

- फफूंदी और बैक्टीरिया तेजी से फैलते हैं।
- पौधों का प्रतिरोध कम हो जाता है।

उदाहरणः

- टमाटर का बैक्टीरियल विल्ट बैक्टीरिया तेजी से बढ़ते हैं।
- आलू में जड़ सड़न, गर्म मौसम और अधिक मिट्टी की नमी से फफूंदीजन्य रोग अधिक फैलते हैं।

वैज्ञानिक कारणः तापमान बढ़ने पर रोगजनकों की वृद्धि दर और संक्रमण क्षमता बढ़ जाती है, जबकि पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

2. असमान वर्षा और उच्च आर्द्रता

लगातार वर्षा या अत्यधिक नमी फफूंदी और कवकजन्य रोगों के लिए अनुकूल होती है।

प्रभावः

- बीजाणु तेजी से उत्पन्न और फैलते हैं।
- पत्तियाँ और फसल जल्दी संक्रमित होती हैं।

उदाहरणः

- धान में ब्लास्ट रोग, और पत्ती धब्बा, उच्च आर्द्रता में तेजी से फैलते हैं।
- अंगूर और गेहूँ में पाउडरी मिल्ड्यू नमी और कम धूप में तेजी से विकसित होता है।

वैज्ञानिक कारणः नमी कवक के प्रजनन और प्रसार के लिए आवश्यक है। वर्षा और अधिक आर्द्रता वातावरण को रोगजनकों के अनुकूल बनाती है।

3. सूखा और जल तनाव : सूखा पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता को कमजोर कर देता है।

प्रभावः

- पौधों में विषाणु और जीवाणु संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है।

उदाहरणः

- टमाटर और धनिया में मोजेक वायरस सूखे में तेजी से फैलता है।
- सूखे में गेहूँ और मक्का में फफूंदीजन्य रोग अधिक गंभीर हो जाते हैं।

वैज्ञानिक कारणः जल तनाव में पौधों के तंत्रिका और प्रतिरोधक पदार्थ कम बनते हैं, जिससे रोगजनकों के प्रवेश और वृद्धि की संभावना बढ़ जाती है।

4. CO_2 और प्रदूषण में वृद्धि

वातावरण में CO_2 की बढ़ती मात्रा पौधों की वृद्धि तो बढ़ाती है, लेकिन रोगजनकों के लिए भी अनुकूल वातावरण बनाती है।

प्रभावः

- फसलों में संक्रमण की संभावना बढ़ती है।
- रोगजनकों के विकास की दर बढ़ती है।

उदाहरणः

- गेहूँ में पाउडरी मिल्ड्यू तेजी से फैलता है।
- फसल की पत्तियाँ अधिक मोटी और नमी जमा करने वाली हो जाती हैं, जिससे कवकजन्य रोगों के लिए अनुकूल वातावरण बनता है।

1. नई चुनौतियाँ

- अपरिचित और नए रोगों का प्रसार
- रोग पहले सीमित क्षेत्र में थे, अब बदलते मौसम के कारण नए क्षेत्रों में प्रवेश कर रहे हैं।

उदाहरणः

- गेहूँ का काला धब्बा पहले उत्तर भारत तक सीमित था, अब मध्य और दक्षिण भारत में भी फैल चुका है।

2. कीट और रोगजनक सहयोग

- कुछ कीट रोगजनकों को फैलाने में मदद करते हैं।

उदाहरण : तम्बाकू में कीट के काटने के बाद विषाणु संक्रमण की संभावना बढ़ जाती है।

3. रोग नियंत्रण में कठिनाई

- अस्थिर मौसम और बदलती परिस्थितियों में पारंपरिक रासायनिक और जैविक उपाय हमेशा प्रभावी नहीं रहते।
- रोग प्रतिरोधी फसलों और डिजिटल निगरानी की आवश्यकता बढ़ती है।

4. फसल और खाद्य सुरक्षा पर असर

- रोगों का प्रसार और गंभीरता बढ़ने से फसल की उपज और गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

उदाहरणःआलू और टमाटर में फफूंदीजन्य रोग उपज को 30–40 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं।

समाधान और रणनीतियाँ

1. रोग प्रतिरोधी फसल प्रजातियाँ

- उच्च तापमान, सूखा और रोगों के प्रति प्रतिरोधी किस्मों का विकास और खेती।

उदाहरण : गेहूँ की प्रजातियाँ जो काला धब्बा और ब्लास्ट रोग दोनों के प्रति प्रतिरोधी हैं।

2. सटीक रोग निगरानी और डिजिटल कृषि

- सेंसर, ड्रोन और GIS तकनीक से रोगों की शुरुआती पहचान।
- समय पर नियंत्रण और नुकसान में कमी।

3. सांस्कृतिक उपाय और जैविक नियंत्रण फसल चक्र, संतुलित सिंचाई, रोगमुक्त बीज और जैविक कवकनाशक।

उदाहरण : अंगूर में जैविक कवकनाशक के उपयोग से पाउडरी मिल्ड्यू को नियंत्रित किया जा सकता है।

4. जलवायु अनुकूल कृषि सूखा प्रतिरोधी और तापमान सहनशील फसल किस्मों का चयन।

- स्मार्ट सिंचाई और मौसम आधारित रोग प्रबंधन।

निष्कर्षः जलवायु परिवर्तन ने पौध रोग विज्ञान के क्षेत्र में नई चुनौतियाँ पैदा कर दी हैं। रोगों का स्वरूप बदल रहा है, नए रोग फैल रहे हैं, और पारंपरिक नियंत्रण तकनीकें अक्सर असफल साबित हो रही हैं। इससे निपटने के लिए आवश्यक है कि किसान, वैज्ञानिक और नीति निर्माता मिलकर जलवायु अनुकूल, रोग प्रतिरोधी और टिकाऊ कृषि प्रणाली

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

अपनाएँ। समय पर रोग पहचान, डिजिटल निगरानी, रोग प्रतिरोधी फसल प्रजातियों और पर्यावरण अनुकूल उपायों के माध्यम से फसल उत्पादन और गुणवत्ता दोनों में सुधार किया जा सकता है।

प्राकृतिक कृषि : आज की आवश्यकता

मीना चौधरी[1], डी. के. जाजोरिया[1], रामधन घसवा[2] एवं मुकेश चन्द भटेश्वर[1]
[1]श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर
[2]कृषि विज्ञान केंद्र, जावरा, रतलाम

प्राकृतिक कृषि (एनएफ) से तात्पर्य स्वदेशी पारंपरिक खेती से है, जो पूरी तरह से कम लागत वाले प्राकृतिक रूप से उपलब्ध इनपुट जैसे देसी गाय के गोबर, गौमूत्र और अन्य पौधों पर आधारित फॉर्मूलेशन पर आधारित है। इस प्रणाली में बाहरी रूप से खरीदे गए इनपुट जैसे सिंथेटिक, रासायनिक या जैविक उर्वरकों का उपयोग नहीं किया जाता है। इस प्रकार यह खेती की इनपुट लागत को कम करता है और किसानों के आर्थिक लाभ को बढ़ाता है। इस खेती का मूलमंत्र हैः गांव का पैसा गांव में।

हाल ही में 2020–21 में कृषि पर 17वीं लोकसभा स्थायी समिति द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा देशव्यापी एनएफ को बढ़ावा देने के लिए "भारतीय प्राकृतिक कृषि पद्धति" नामक एक योजना शुरू की गई थी। वर्तमान में 8 राज्यों जैसे आंध्र प्रदेश छत्तीसगढ़ केरल हिमाचल प्रदेश झारखंड ओडिशा मध्य प्रदेश और तमिलनाडु से लगभग 4.09 लाख हेक्टेयर क्षेत्र एनएफ के अंतर्गत आता है।

प्राकृतिक खेती बनाम जैविक खेती बनाम पारंपरिक खेतीः प्राकृतिक, जैविक और पारंपरिक खेती के तरीकों में मुख्य अंतर उनके इनपुट के उपयोग में निहित है हालांकि ये तीनों प्रणालियाँ कई अन्य पहलुओं में भी भिन्न हैं (तालिका 1)। जहाँ प्राकृतिक खेती खेत में उपलब्ध संसाधनों पर आधारित पोषक तत्वों के उपयोग की सलाह देती है और पारंपरिक फसल के बीजों का उपयोग करती है, वहीं जैविक खेती में खेत के बाहर के संसाधनों का भी उपयोग किया जाता है विशेष रूप से जैविक पोषक तत्वों जैसे खाद, वर्मीकम्पोस्ट और बायो–फॉर्मूलेशन का उपयोग पोषक तत्व स्रोत के रूप में और पौध संरक्षण के उद्देश्य से किया जाता है। दूसरी ओर पारंपरिक खेती, संकर या उन्नत किस्मों, सिंथेटिक उर्वरकों, पौध संरक्षण रसायनों और खरपतवारनाशकों के उपयोग की अनुमति देती है। प्राकृतिक खेती में किसी अन्य कृषि प्रणाली का प्रतिस्थापन नहीं है, बल्कि यह कृषि के पर्यावरण पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को कम करने का एक विकल्प मात्र है।

तालिका 1 : पारंपरिक खेती, जैविक खेती और प्राकृतिक खेती में अंतर

मापदंड	पारंपरिक खेती	जैविक खेती	प्राकृतिक खेती
आवश्यक सामग्री / पोषक तत्व स्रोत	रसायन आधारित, उर्वरक, गोबर की खाद	रसायन मुक्त गोबर की खाद, वर्मीकम्पोस्ट, जैविक उर्वरक, पंचगव्य, आदि	रसायन मुक्त देसी गोबर और गाय का मूत्र, जीवामृत घनजीवामृत, बीजामृत
उपयोग किए जाने वाले बीज	उच्च उपज वाली किस्म या संकर बीज	उच्च उपज वाली किस्म या संकर बीज	स्थानीय किस्म के बीज
फसल प्रणाली	एकल फसल प्रणाली	एकल / मिश्रित	अंतर्विभाजित / मिश्रित / बहुफसल
कीट नियंत्रण	रासायनिक कीटनाशक	जैविक प्रबंधन	नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, दशपर्णी, आदि
बाजार क्षमता	सुस्थापित	संविदा किसानों के लिए सुनिश्चित बाजार	कोई स्थापित बाजार / प्रमाणन नहीं
उपज	उच्च उपज क्षमता	रूपांतरण अवधि के दौरान उपज में कमी	कम उपज की संभावना

राष्ट्रीय कृषि पद्धति के मुख्य स्तंभ या मॉडलः

राष्ट्रीय कृषि पद्धति के चार प्रमुख स्तंभ हैं : बीजामृत, जीवामृत, मल्चिंग और वाफ्सा

1. **बीजामृत :** बुवाई करने से पहले बीजों का संस्कार अर्थात संशोधन करना बहुत जरूरी है। इसके लिए बीजामृत बहुत ही उत्तम है। देशी गाय के गोबर और गोमूत्र से बीजों का उपचार करना प्राकृतिक खेती में महत्वपूर्ण है। क्योंकि यह बीजों को बीज जनित और मृदा जनित रोगों से बचाता है और स्वस्थ बीज अंकुरण को बढ़ावा देता है। छोटे किसान देशी गायों को आसानी से पाल सकते हैं क्योंकि वे किफायती होती हैं और स्थानीय परिस्थितियों के अनुकूल बेहतर ढल जाती हैं।

आवश्यक सामग्री : देशी गाय का गोबर (5 कि.ग्रा), गोमूत्र (5 लीटर), चूना या कली (50 ग्राम), पानी (20 लीटर), खेत की मिट्टी (50 ग्राम)

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

विधि :

- उपरोक्त सभी पदार्थों को पानी में घोलकर 24 घंटे तक रखें।
- दिन में दो बार लकड़ी से इसे हिलाएँ ।
- 24 घंटे के बाद बीज को प्लास्टिक शीट या सीमेंट के फर्श पर फैला दें। तैयार घोल को बीजों पर छिड़कें। सुनिश्चित करें कि बीज घोल में अच्छी तरह से ढँक गए हों।
- बीजों को छाया में सुखाकर फिर बुवाई करें ।
- रोपण से पहले जड़ों को कुछ सेकंड के लिए घोल में डुबोएं। पौध निकालकर अपने खेत या बगीचे में रोपें।

उपयोग : बीजामृत द्वारा शुद्ध हुए बीज जल्दी और ज्यादा मात्रा में उगते हैं। जड़ें तेजी से बढ़ती हैं। पौधे, भूमि द्वारा लगने वाली बीमारियों से बचे रहते हैं एवं अच्छी प्रकार से पतले–बढ़ते हैं।

2. जीवामृत : यह एक प्रकार का जीवाणु संवर्धन कल्चर है जो कि गौमूत्र तथा गोबर से तैयार किया जाता है। जीवामृत एक लाभदायक सूक्ष्म जीवों का भण्डार है। जीवामृत में लाभदायक सूक्ष्मजीव (एजोस्पाइरिंलम, पी एस एम, स्यूडोमोनास, ट्राइकोडर्मा, यीस्ट और मोल्ड) बहुतायत में पाये जाते हैं। इसके उपयोग से भूमि में विद्यमान लाभदायक जीवाणु एवं केंचुए भी आकर्षित होते हैं। ये कार्बनिक अवशेषों के सड़ाव में सहायता करते हैं। परिणामस्वरूप मुख्य सूक्ष्म पोषकतत्वों, एन्जाइम्स और हार्मोन को संतुलित मात्रा में पौधों को उपलब्ध कराते हैं। जीवामृत बनाने की विधि इस प्रकार है।

आवश्यक सामग्री

देसी गाय का गोबर (10 कि.ग्रा.), देशी गाय का गौमूत्र (10 लीटर), गुड़ (1 कि.ग्रा.), बेसन (1 कि.ग्रा.), जल (180 लीटर), पेड़ के नीचे की मिट्टी (1 कि.ग्रा.)

विधि :

- एक बड़ी प्लास्टिक की टंकी लेवें एवं उपरोक्त सभी सामग्री उसमें डाल देवें।
- सभी सामग्री डालने के बाद डंडे की मदद से उसे 2 से 3 मिनट तक घड़ी की दिशा में अच्छी प्रकार से घूमा कर मिलाएँ।
- तीन दिन तक सुबह – शाम अच्छे से मिलाएँ तथा कपड़े से ढक दें । तीन दिन पश्चात इसे उपयोग ले सकते हैं।
- इसे सात दिन तक उपयोग कर सकते हैं।

जीवामृत का उपयोग :

- पलेवा और प्रत्येक सिंचाई के साथ 200 लीटर जीवामृत एक एकड़ में बहते पानी पर बूँद बूँद टपका दें।
- फसलों पर जीवामृत के 10 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें। छिड़काव करने से पौधों को उचित पोषण मिलता है और दाने/फल स्वस्थ होते हैं।
- अच्छी प्रकार छानकर टपक या छिड़काव (ड्रिप या स्प्रिंकलर) सिंचाई के माध्यम से प्रयोग करें। 200 लीटर जीवामृत 1 हेक्टेयर क्षेत्र के लिए पर्याप्त है।
- फलवृक्षों में वृक्ष के चारों तरफ 25 से 50 सेंटीमीटर नाली खोदकर जैविक अवशेष भरकर जीवामृत से तर करें । एक ड्रम 1 हेक्टेयर क्षेत्रफल हेतु पर्याप्त है।

3. मल्चिंग :प्राकृतिक खेती में, फसल के अपशिष्ट, जैविक अपशिष्ट या आवरण फसलों का उपयोग करके खेत की मल्चिंग करना एक महत्वपूर्ण स्तंभ के रूप में कार्य करता है। यह न केवल ऊपरी मिट्टी को कटाव से बचाता है, बल्कि अपघटन पर ह्यूमस का उत्पादन करता है जो ऊपरी मिट्टी का संरक्षण करता है, वाष्पीकरण से होने वाली हानि को कम करता है, जल धारण क्षमता में सुधार करता है, मिट्टी के पोषक तत्वों को बढ़ाता है और खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करता है।

4. वाफ़सा : इसका तात्पर्य पौधों की स्वस्थ वृद्धि और विकास के लिए आवश्यक अच्छी मृदा वायु संचार और मृदा नमी से है।

प्राकृतिक खेती में कीट व व्याधि प्रबंधन :

1.ब्रह्मास्त्र : यह पत्तियों से तैयार एक प्राकृतिक कीटनाशक है जिसमें कीटों को दूर भगाने के लिए विशिष्ट अल्कलॉइड होते हैं। यह फली और फलों में मौजूद सभी चूसने वाले कीटों और छिपे हुए कैटरपिलर को नियंत्रित करता है।

आवश्यक सामग्रीः–20 लीटर गोमूत्र, 2 किलोग्राम नीम के पत्ते छोटे तनों या शाखाओं के साथ, 2 किलोग्राम करंज के पत्ते, 2 किलोग्राम सीताफल के पत्ते, 2 किलोग्राम धतूरा के पत्ते, 2 किलोग्राम अरंडी के पत्ते, 2 किलोग्राम आम के पत्ते और 2 किलोग्राम लैन्टाना के पत्ते।

विधि :

- एक उपयुक्त बर्तन में 20 लीटर गोमूत्र लें।
- ऊपर बताई गई सामग्री के अनुसार किन्हीं पांच पत्तों का पेस्ट इसमें डालें।
- उपरोक्त सामग्री को धीमी आंच पर उबालें।
- उपरोक्त सामग्री को छाया में 48 घंटे तक ठंडा होने दें।
- एक मिनट के लिए सामग्री को घड़ी की दिशा में दिन में दो बार हिलाएं।
- 4–8 घंटे के बाद, घोल को छान लें और भविष्य में उपयोग के लिए मिट्टी के बर्तन में रख दें।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- ब्रह्मास्त्र को छः महीने तक स्टोर किया जा सकता है।

उपयोग विधि :6 लीटर ब्रह्मास्त्र को 200 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ खेत में खड़ी फसल पर पत्तों पर छिड़काव के रूप में प्रयोग करें।

2. नीमास्त्र :

नीमास्त्र का उपयोग बीमारियों को रोकने या ठीक करने के लिए किया जाता है, और उन कीड़ों या लार्वा को मारने के लिए किया जाता है जो पौधे के पत्ते खाते हैं और पौधे का रस चूसते हैं। यह हानिकारक कीड़ों के प्रजनन को नियंत्रित करने में भी मदद करता है। नीमास्त्र तैयार करना बहुत आसान है और प्राकृतिक खेती के लिए एक प्रभावी कीट विकर्षक और जैव कीटनाशक है।

आवश्यक सामग्रीः—200 लीटर पानी, 2 किलोग्राम गाय का गोबर, 10 लीटर गोमूत्र, 10 किलोग्राम नीम के पत्तों का बारीक पेस्ट छोटी शाखाओं के साथ।

विधि :—

- एक ड्रम में 200 लीटर पानी लें और उसमें 10 लीटर गोमूत्र डालें। फिर 2 किलोग्राम देसी गाय का गोबर डालें।
- इसके बाद 10 किलोग्राम कुचली हुई नीम की पत्तियों को उसके छोटे तनों या शाखाओं के साथ डालें।
- उपरोक्त सभी सामग्रियों को एक मोटी लकड़ी की छड़ी से दक्षिणावर्त दिशा में हिलाएं।
- ड्रम को बोरे से ढक दे।
- धूप और वर्षा के जोखिम को रोकने के लिए नीमास्त्र को छाया में तैयार करें और रखें।
- उपरोक्त घोल को रोजाना सुबह और शाम को दक्षिणावर्त दिशा में एक मिनट तक हिलाएं।
- 48 घंटे के बाद घोल को छान लें और उपयोग के लिए स्टोर कर लें।

उपयोग विधिः उपरोक्त तैयार व छाने हुए नीमास्त्र को बिना पानी मिलाए प्रयोग करें। इस प्रकार तैयार नीमास्त्र को 6 माह तक उपयोग के लिए भण्डारित किया जा सकता है।

नियंत्रण : सभी रस चूसक कीट, हरा तेला, एफिड, सफेद मक्खी और छोटी इल्लियां नीमास्त्र द्वारा नियंत्रित की जाती हैं।

3. **अग्निअस्त्र :** अग्निअस्त्र का उपयोग रस चूसने वाले कीड़े, छोटी सूंड़ी, लट के लिए के नियंत्रण हेतु उपयोग लिया जाता है।

आवश्यक सामग्रीः— नीम के पत्ते 5 किलोग्राम, देशी गाय का मूत्र 20 लीटर, तम्बाकू पाउडर 500 ग्राम, तीखी हरी मिर्च की चटनी 500 ग्राम, देशी लहसून की चटनी 500 ग्राम।

अग्निास्त्र बनाने की विधिः—

- कुटे हुए नीम के पत्तों, तम्बाकू पाउडर, मिर्च की चटनी व लहसुन की चटनी को गौ—मूत्र में मिलाकर धीमी आँच पर उबाल लें।
- मिश्रण को 48 घंटे के लिए रख दें, और इस मिश्रण को सुबह—शाम लकड़ी की डंडी से हिलाए।
- 6—8 लीटर मिश्रण को 200 लीटर पानी में मिला कर फसल पर प्रति एकड़ छिडकाव करें।
- इसको 3 महीने के अंदर उपयोग मे लेना चाहिए।

4. दशपर्णी अर्क :

दशपर्णी अर्क का उपयोग कई तरीके के कीट जैसे बड़ी सूंड़ियों, लटों आदि के नियंत्रण के लिए किया जाता है।

आवश्यक सामग्रीः—पानी 200 लीटर, गौमूत्र 20 लीटर, देशी गाय का गोबर 2 किलोग्राम, पत्ते (नीम, करंज, अरंडी, सीताफल, बेल, गेंदा, तुलसी टहनी पत्ते सहित धतूरा, आम, आक) 2—2 किलोग्राम, हल्दी पाउडर 500 ग्राम, अदरक की चटनी 500 ग्राम, हींग पाउडर 10 ग्राम, सोंठ पाउडर 200 ग्राम, तम्बाकू पाउडर 1 किलोग्राम, हरी मिर्च की चटनी 1 किलोग्राम, देशी लहसुन की चटनी 1 किलोग्राम।

बनाने की विधि :—

- गोबर व गौमूत्र को पानी में घोल कर 2 घंटे के लिए रख दें।
- हल्दी का पाउडर, अदरक की चटनी व हींग के पाउडर को मिला कर 24 घंटे के लिए छाया में रखें।
- मिश्रण को हिलाकर, सोंठ व तम्बाकू पाउडर, तीखी मिर्च व देशी लहसुन मिलाकर 24 घंटे के लिए रख दें।
- पौधों के पत्तों को इस मिश्रण में दबा दें। मिश्रण को बोरी से ढक कर 30—40 दिन के लिए रख दें व इसको सुबह—शाम घोले।
- 6—8 लीटर अर्क को 200 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

फफूंदनाशक (फंगीसाइड) :

इसका उपयोग फफूंद जनित रोगों के नियंत्रण के लिए किया जाता है तथा यह विषाणु (वायरस) नाशक भी है ।

आवश्यक सामग्रीः—पानी 200 लीटर व 3—5 दिन पुरानी खट्टी लस्सी 5 लीटर।

बनाने व उपयोग की विधिः—पानी व खट्टी लस्सी को अच्छी प्रकार से मिलाकर 1 एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

राजस्थान की दलहनी फसलों में खरपतवार प्रबंधनः चुनौतियाँ, प्रभाव एवं एकीकृत रणनीतियाँ

सुनील कुमार यादव, सीमा शर्मा एवं श्वेता गुप्ता
राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान, दुर्गापुरा,जयपुर

भारत में दलहनी फसलें पोषण सुरक्षा, मृदा उर्वरता एवं टिकाऊ कृषि प्रणाली का महत्वपूर्ण आधार हैं। ये फसलें प्रोटीन का प्रमुख स्रोत होने के साथ–साथ वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण द्वारा मृदा स्वास्थ्य को भी सुधारती हैं। राजस्थान में चना, मूंग, उड़द, मोठ, अरहर एवं लोबिया जैसी दलहनी फसलें वर्षा आधारित परिस्थितियों में व्यापक रूप से उगाई जाती हैं। परंतु इन फसलों की उत्पादकता अपेक्षाकृत कम है, जिसका एक प्रमुख कारण खरपतवारों का प्रकोप है। प्रारंभिक वृद्धि अवस्था में दलहनी फसलें खरपतवारों के साथ प्रतिस्पर्धा में कमजोर रहती हैं, जिससे उपज में भारी कमी हो सकती है। अतः प्रभावी खरपतवार प्रबंधन रणनीतियाँ अपनाना अत्यंत आवश्यक है।

दलहनी फसलों में खरपतवार समस्या का स्वरूप :– खरपतवार फसल के साथ जल, पोषक तत्व, प्रकाश एवं स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। राजस्थान की शुष्क एवं अर्ध–शुष्क परिस्थितियों में वर्षा की अनियमितता के कारण खरपतवारों की तीव्र वृद्धि देखी जाती है। अनुसंधानों से यह स्पष्ट है कि यदि प्रारंभिक 30–45 दिनों तक खरपतवार नियंत्रण न किया जाए, तो दलहनी फसलों में 30 से 70 प्रतिशत तक उपज हानि हो सकती है। कई स्थितियों में यह हानि और भी अधिक दर्ज की गई है।

राजस्थान में दलहनी फसलों के प्रमुख खरपतवार

फसल	संकरी पत्ती वाले खरपतवार	चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार	सेज (मोथा वर्ग)
चना	दूब घास, फालारिस	बथुआ, हिरनखुरी, फुमेरिया	नागमोथा
मूंग	मकरा घास, सांवा	सनोई, मैनथा	नागमोथा
उड़द	दूब घास, सांवा	सनोई, डिगेरा	साइपरस प्रजाति
अरहर	दूब घास	हिरनखुरी, बथुआ	नागमोथा
मोठ	मकरा घास	सनोई	साइपरस प्रजाति

खरपतवारों से होने वाली हानियाँ

खरपतवार न केवल उपज घटाते हैं, बल्कि फसल की गुणवत्ता, कटाई–मड़ाई की दक्षता एवं उत्पादन लागत को भी प्रभावित करते हैं। ये कीट एवं रोगों के आश्रय स्थल बनते हैं तथा जल की कमी की स्थिति में फसल को अधिक नुकसान पहुँचाते हैं। दलहनी फसलों में धीमी प्रारंभिक वृद्धि होने के कारण खरपतवारों का प्रभाव और अधिक गंभीर हो जाता है।

खरपतवार प्रबंधन की विभिन्न विधियाँ

1.निवारक (प्रतिरोधक) उपाय :– खरपतवार प्रबंधन की शुरुआत रोकथाम से होती है। इसके अंतर्गत शुद्ध एवं प्रमाणित बीजों का उपयोग, अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर खाद का प्रयोग, कृषि यंत्रों की सफाई, मेड़–नालियों की नियमित सफाई तथा खरपतवार–मुक्त सिंचाई जल का उपयोग शामिल है। ये उपाय दीर्घकाल में खरपतवार समस्या को कम करने में सहायक होते हैं।

2. यांत्रिक एवं हस्तचलित विधियाँ :– निराई–गुड़ाई खरपतवार नियंत्रण की पारंपरिक एवं प्रभावी विधि है। बुवाई के 20 से 25 दिन तथा 35 से 40 दिन बाद एक–दो बार निराई–गुड़ाई करने से खरपतवारों पर अच्छा नियंत्रण पाया जा सकता है। हालांकि, श्रम की कमी एवं बढ़ती मजदूरी के कारण यह विधि कई बार व्यावहारिक नहीं रह जाती।

3. सांस्कृतिक विधियाँ (कृषि क्रियात्मक प्रबंधन) :– सांस्कृतिक विधियाँ खरपतवार नियंत्रण का स्थायी समाधान प्रस्तुत करती हैं। इनमें उचित फसल चक्र, अंतरवर्तीय फसलें, समय पर बुवाई, संतुलित उर्वरक प्रबंधन, उचित बीज दर एवं कतार दूरी शामिल हैं। चना या अरहर के साथ मूंग–उड़द की अंतरवर्तीय खेती से खरपतवारों का दबाव कम होता है। फसल अवशेषों की मल्चिंग भी खरपतवार उगने से रोकती है।

4. रासायनिक विधियाँ (शाकनाशी प्रबंधन) :– वर्तमान में श्रम की कमी को देखते हुए शाकनाशियों का उपयोग बढ़ रहा है। दलहनी फसलों में सामान्यतः बुवाई के 0 से 3 दिन बाद पेंडीमेथालिन का छिड़काव प्रभावी पाया गया है। केवल घास वर्ग के खरपतवारों की अधिकता होने पर उपरांतकालीन शाकनाशियों का प्रयोग किया जा सकता है। शाकनाशियों का चयन फसल, खरपतवार की प्रजाति एवं अवस्था के अनुसार करना चाहिए, अन्यथा फसल को क्षति हो सकती है।

5. जैविक विधियाँ :– जैविक खरपतवार नियंत्रण में प्राकृतिक शत्रुओं, रोगजनकों या जैव–आधारित उत्पादों का उपयोग किया जाता है। यद्यपि यह विधि पर्यावरण–अनुकूल है, परंतु इसकी प्रभावशीलता सीमित एवं धीमी होती है। फिर भी दीर्घकालीन टिकाऊ कृषि के लिए इसका महत्व बढ़ रहा है।

6. एकीकृत खरपतवार प्रबंधन :– एकीकृत खरपतवार प्रबंधन का अर्थ है विभिन्न विधियों का समन्वित उपयोग। केवल एक विधि पर निर्भर रहने से समस्या का स्थायी समाधान संभव नहीं है। निवारक, सांस्कृतिक, यांत्रिक एवं रासायनिक

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

विधियों को फसल एवं क्षेत्र विशेष के अनुसार अपनाने से बेहतर परिणाम मिलते हैं। राजस्थान जैसी शुष्क परिस्थितियों में पूर्व–उद्भव शाकनाशी. एक बार निराई–गुड़ाई का संयोजन अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुआ है।

राजस्थान के लिए उपयुक्त रणनीतियाँ

राजस्थान में वर्षा आधारित दलहनी फसलों के लिए निम्न रणनीतियाँ उपयोगी पाई गई हैं:

- समय पर बुवाई एवं उचित बीज दर
- खरपतवार –मुक्त बीज एवं खेत की तैयारी
- बुवाई के तुरंत बाद उपयुक्त शाकनाशी का प्रयोग
- 30 से 35 दिन बाद एक बार हाथ से निराई
- अंतरवर्तीय फसल प्रणाली एवं फसल चक्र का पालन

ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा रोगमुक्त पौधों का उत्पादन

वर्षा कुमारी, डी.के गोठवाल, एस. मार्कर एवं आशीष शीरा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

ऊतक संवर्धन द्वारा रोगमुक्त पौधों का उत्पादन बागवानी और फसल सुधार में प्रयुक्त एक महत्वपूर्ण जैव प्रौद्योगिकी पद्धति है। यह संक्रमित रोपण सामग्री से विषाणु,जीवाणु, कवक और फाइटोप्लाज्मा जैसे रोगजनकों को समाप्त करने में सहायक है और स्वस्थ एकसमान और उच्च उपज वाली फसलों को सुनिश्चित करता है। पौधों के रोग, विशेषकर विषाणुजनित रोग,वानस्पतिक प्रवर्धन के माध्यम से आसानी से फैल जाते हैं। ऊतक संवर्धन तकनीक नियंत्रित प्रयोगशाला परिस्थितियों में रोगजनक–मुक्त पौधे तैयार करने में सक्षम है। यह तकनीक निम्नलिखित फसलों में व्यापक रूप से उपयोग की जाती है जैसे–आलू, केला,गन्ना,स्ट्रॉबेरी, सजावटी पौधे.

रोग उन्मूलन का सिद्धांत: मुख्य सिद्धांत निम्नलिखित पर आधारित हैं: मेरिस्टेम संवर्धन जिसमे शीर्ष मेरिस्टेम आमतौर पर वायरस से मुक्त होता है क्योंकि तीव्र कोशिका विभाजन वायरस के गुणन को रोकता है। संवहनी ऊतकों की कमी रोगजनकों की गति को सीमित करती है।

रोगमुक्त पौधों के उत्पादन के चरण

चरण १: मातृ पौधे का चयन: एक स्वस्थ,मूल प्रजाति के पौधे का चयन किया जाता है। अनुक्रमण या आणविक तकनीकों का उपयोग करके रोगों का जांच किया जाता है।

चरण २: प्रत्यारोपण संग्रह: छोटे अंकुर सिरे या मेरिस्टेम को काटकर अलग किया जाता है। कीटाणुनाशकों (जैसे सोडियम हाइपोक्लोराइट) का उपयोग करके सतह का रोगाणुशोधन किया जाता है।

चरण ३: मेरिस्टेम संवर्धन: मेरिस्टेम को रोगाणुरहित पोषक माध्यम (जैसे,एमएस माध्यम) पर प्रवर्धित किया जाता है। इसे नियंत्रित तापमान और प्रकाश की स्थितियों में इनक्यूबेट किया जाता है।

चरण ४: अंकुरों का गुणन एकाधिक अंकुरों के निर्माण को बढ़ावा देने के लिए साइटोकाइनिन मिलाए जाते हैं।

चरण ५: जड़ निर्माण: जड़ों के निर्माण को प्रेरित करने के लिए ऑक्सिन का उपयोग किया जाता है।

चरण ६: अनुकूलन (पर्यावरण के अनुकूल बनाना): पौधों को मिट्टी या आधार में स्थानांतरित किया जाता है। ग्रीनहाउस में धीरे–धीरे बाहरी परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है।

चरण ७: खेत में रोपण: अनुकूल परिस्थितियों में तैयार किए गए पौधों को खेत में लगाया जाता है।

निष्कर्ष: ऊतक संवर्धन प्रौद्योगिकी, विशेष रूप से मेरिस्टेम संवर्धन, रोगमुक्त पौध सामग्री के उत्पादन की एक विश्वसनीय और कुशल विधि है। यह फसल उत्पादकता, गुणवत्ता और स्थिरता में सुधार करके आधुनिक कृषि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन द्वारा रासायनिक उर्वरकों की लागत कम करना

ब्रिजेश कुमार बाजिया, के.के. शर्मा एवं बिन्जा राम
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

परिचय: भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ की अधिकांश आबादी खेती पर निर्भर है। राजस्थान जैसे अर्ध–शुष्क एवं शुष्क क्षेत्र में खेती करना जलवायु, मिट्टी की गुणवत्ता तथा जल की उपलब्धता के कारण चुनौतीपूर्ण कार्य है। पिछले कुछ दशकों में किसानों ने अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए रासायनिक उर्वरकों का अत्यधिक उपयोग किया है। इससे प्रारम्भ में उत्पादन बढ़ा, परन्तु धीरे–धीरे मिट्टी की उर्वरता कम होने लगी, उत्पादन लागत बढ़ी और पर्यावरण पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ा।

आज के समय में वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन की आवश्यकता अत्यधिक बढ़ गई है। यह तकनीक किसानों को कम लागत में अधिक उत्पादन प्राप्त करने में सहायता करती है। वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन का मुख्य उद्देश्य मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखना, पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग करना, जल संरक्षण करना तथा टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देना है। राजस्थान की जलवायु को ध्यान में रखते हुए यदि किसान पारंपरिक और आधुनिक मृदा प्रबंधन तकनीकों को अपनाते हैं, तो वे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम कर सकते हैं और खेती को अधिक लाभकारी बना सकते हैं।

राजस्थान की मिट्टी एवं जलवायु की विशेषताएँ

राजस्थान की जलवायु मुख्यतः शुष्क और अर्ध–शुष्क होती है। यहाँ वर्षा कम होती है तथा तापमान अधिक रहता है। इस क्षेत्र की मिट्टी में प्रायः जैविक कार्बन की मात्रा कम होती है तथा कई क्षेत्रों में क्षारीयता और लवणीयता की समस्या भी देखी जाती है। जल की कमी के कारण पोषक तत्वों का उचित उपयोग नहीं हो पाता। इसलिए इस क्षेत्र में मृदा प्रबंधन तकनीकों का वैज्ञानिक उपयोग आवश्यक है।

राजस्थान की जलवायु के अनुसार उपयुक्त आधुनिक एवं पारंपरिक मृदा प्रबंधन तकनीकें

1. **मृदा परीक्षण :–** मृदा परीक्षण वैज्ञानिक खेती का पहला और सबसे महत्वपूर्ण चरण है। मृदा परीक्षण से खेत की मिट्टी में उपलब्ध पोषक तत्वों की जानकारी मिलती है। इसके आधार पर किसान आवश्यक मात्रा में ही उर्वरक का उपयोग कर सकते हैं। इससे उर्वरकों की अनावश्यक लागत कम होती है और उत्पादन भी बढ़ता है।
2. **जैविक खाद का उपयोग :–** पारंपरिक रूप से किसान गोबर की खाद, कम्पोस्ट तथा वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग करते आए हैं। ये खाद मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ाती हैं, जिससे मिट्टी की संरचना सुधरती है और जल धारण क्षमता बढ़ती है। इससे रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम हो जाती है।
3. **हरी खाद :–** हरी खाद जैसे ढैंचा और सनाई की खेती करके उसे मिट्टी में मिला देने से मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ती है। राजस्थान के मानसून काल में हरी खाद का उपयोग विशेष रूप से लाभकारी होता है। यह विधि सस्ती और प्रभावी है।

4.फसल चक्र :– लगातार एक ही फसल उगाने से मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी हो जाती है। दलहनी फसलों को फसल चक्र में शामिल करने से मिट्टी में नाइट्रोजन की पूर्ति होती है। उदाहरण के लिए गेहूँ के बाद चना या मूंग उगाने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है।

5. जैव उर्वरकों का उपयोग :– जैव उर्वरक जैसे राइजोबियम, एजोटोबैक्टर और पीएसबी मिट्टी में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाते हैं। ये उर्वरक सस्ते होते हैं और पर्यावरण के लिए भी सुरक्षित होते हैं। राजस्थान की मिट्टी में इनका उपयोग रासायनिक उर्वरकों की मात्रा कम कर सकता है।

राइजोबियम (दलहनी फसलों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण)
एजोटोबैक्टर (नाइट्रोजन उपलब्धता बढ़ाना)
पीएसबी (फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु)

6.मल्चिंग तकनीक :– मल्चिंग में फसल अवशेष, पत्तियाँ या प्लास्टिक शीट का उपयोग करके मिट्टी को ढका जाता है। इससे मिट्टी की नमी बनी रहती है और खरपतवार कम उगते हैं। राजस्थान जैसे शुष्क क्षेत्र में मल्चिंग अत्यंत उपयोगी तकनीक है।

7.सूक्ष्म सिंचाई तकनीक :– ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणाली जल की बचत करती है तथा उर्वरकों का उपयोग अधिक प्रभावी बनाती है। इससे पौधों को आवश्यक मात्रा में पोषक तत्व मिलते हैं और लागत कम होती है।

8.फसल अवशेष प्रबंधनः– फसल अवशेषों को जलाने के बजाय मिट्टी में मिलाने से जैविक पदार्थ बढ़ता है। इससे मिट्टी की संरचना सुधरती है और पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।

9.संतुलित उर्वरक उपयोग :– केवल नाइट्रोजन उर्वरक का अधिक उपयोग करने से मिट्टी की उर्वरता घटती है। नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों का संतुलित उपयोग आवश्यक है। इससे उत्पादन बढ़ता है और लागत कम होती है।

10.**मृदा संरक्षण तकनीक :**–राजस्थान में हवा और पानी से मिट्टी का कटाव होता है। कंटूर खेती, टेरसिंग तथा वृक्षारोपण जैसी तकनीकों से मिट्टी का संरक्षण किया जा सकता है। इससे मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है।

11.जैव चार का उपयोगः– बायोचार मिट्टी में कार्बन की मात्रा बढ़ाता है और जल धारण क्षमता सुधारता है। राजस्थान की शुष्क मिट्टी में यह तकनीक अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रही है।

12.एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन :– इस तकनीक में रासायनिक उर्वरक, जैविक खाद और जैव उर्वरकों का संतुलित उपयोग किया जाता है। इससे मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है और उत्पादन लागत कम होती है।

13.वर्षा जल संचयन :– राजस्थान में वर्षा कम होती है, इसलिए वर्षा जल संचयन अत्यंत आवश्यक है। इससे सिंचाई के लिए जल उपलब्ध रहता है और मिट्टी में नमी बनी रहती है।

14.संरक्षण कृषिः–इस तकनीक में न्यूनतम जुताई, फसल अवशेष संरक्षण तथा फसल विविधता को अपनाया जाता है। इससे मिट्टी की गुणवत्ता सुधरती है और उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है।

15.सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधनः– राजस्थान की मिट्टी में जिंक, आयरन और सल्फर की कमी देखी जाती है। इन तत्वों का उचित उपयोग फसल उत्पादन बढ़ाता है और उर्वरकों की दक्षता सुधारता है।

वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन के लाभः–

- रासायनिक उर्वरकों की लागत कम होती है।
- मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है।
- जल संरक्षण होता है।

- पर्यावरण प्रदूषण कम होता है।
- फसल उत्पादन और गुणवत्ता में वृद्धि होती है।
- खेती अधिक लाभकारी बनती है।
- मिट्टी की संरचना सुधरती है।
- जल धारण क्षमता बढ़ती है।
- सूखा एवं जलवायु परिवर्तन के प्रभाव कम होते हैं।
- टिकाऊ कृषि को बढ़ावा मिलता है।

निष्कर्षः–राजस्थान की जलवायु और मिट्टी की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन अपनाना समय की आवश्यकता है। केवल रासायनिक उर्वरकों पर निर्भर रहना दीर्घकाल में मिट्टी की उर्वरता को नुकसान पहुँचाता है और खेती की लागत बढ़ाता है। पारंपरिक तकनीकों जैसे जैविक खाद, हरी खाद और फसल चक्र के साथ–साथ आधुनिक तकनीकों जैसे मृदा परीक्षण, सूक्ष्म सिंचाई और एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन को अपनाकर किसान कम लागत में अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। यदि किसान इन तकनीकों को अपनाते हैं, तो वे मिट्टी की गुणवत्ता बनाए रखते हुए पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान दे सकते हैं। वैज्ञानिक मृदा प्रबंधन न केवल किसानों की आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि भविष्य की पीढ़ियों के लिए टिकाऊ कृषि प्रणाली विकसित करने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

बैंगन के प्रमुख रोग एवं उनका रोकथाम

मेघा आसीवाल
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

बैंगन एक लोकप्रिय एवं लाभकारी सब्जी है। बैंगन एक सोलेनेसी परिवार का सदस्य है ।

पुष्प– बैंगनी या हरापन लिए हुए पीले रंग का, होता है।

फल – बैंगन कई प्रकार के, छोटे से लेकर बड़े तक गोल और लंबे भी, होते हैं : गोल गहरा बैंगनी, लंबा बैंगनी, लंबा हरा, गोल हरा, हरापन लिए हुए सफेद, सफेद, छोटा गोल बैंगनी रंगवाला, वामन बैंगन, ब्लैकब्यूटी, गोल गहरे रंग वाला, मुक्तकेशी, रामनगर बैंगन, गुच्छे वाले बैंगन आदि।

उत्पति –बैंगन का जन्म स्थान भारत एवं चीन के उष्ण कटिबन्धी प्रदेश ही माने जाते हैं। बैंगन की खेती लगभग पूरे वर्ष भर की जाती हैं।

जलवायु तथा भूमि – बैंगन की अच्छी पैदावार हेतु गर्म जलवायु की आवश्यकता होती हैं। तथा जल जल निकास युक्त दौमट मिट्टी इसके उत्पादन हेतु सर्वोत्ताम मानी गयी हैं।

नर्सरी– बैगन की एक हेक्टेयर में पौध रोपण हेतु 400–500 ग्राम बीज की आवश्यकता होती हैं। एवं बीजों को बुवाई से पूर्व थाइराम या केप्टान नामक कवकनाशी दवा की 2 ग्राम प्रति किलों बीज की दर से उपचारित कर नर्सरी में बुवाई करनी चाहिए।

पौधरोपण – वर्षाकालीन फसल हेतु फरवरी मार्च, शरदकालीन फसल हेतु जून – जुलाई एवं बसंतकालीन फसल हेतु सितम्बर में नर्सरी में पौधे 30–40 दिन बुवाई के बाद 10–15 सें.मी. ऊंचाई के हो जायें तो कतार से कतार की दूरी 60–70 सेन्टीमीटर एवं पौधे से पौधे की दूरी 60 से.मी. ध्यान में रखते हुए रोपाई कर देनी चाहिए।

बैंगन की फसल कई प्रकार के हानिकारक रोगो द्वारा प्रभावित होती हैं। जो निम्नलिखित है –

बैंगन के प्रमुख रोग एवं उनका रोकथाम

आर्द गलन (डेम्पिंग ऑफ) : रोगजनकः पीथियम अफेनिडर्मेटम
लक्षणः

- यह रोग मुख्यतः पौधशाला में उगे पौधों पर लगता हैं। यह पौधों की दो अवस्थाओं में पाया जाता हैं ।
- पहली अवस्था में पौधों के भूमि से निकलने से पूर्व अथवा तुरन्त पश्चात तथा दूसरी अवस्था में पौध बन जाने पर। पहली अवस्था में पौधे छोटी अवस्था में ही मर जाते हैं। दूसरी अवस्था में भूमि के सम्पर्क वाले तने के हिस्से में पीले–हरे रंग के विक्षत बनते हैं। जो तने को प्रभावित कर उत्ताकों को नष्ट कर देते हैं।
- पौधशाला में पौधों का मुरझान और बाद में सूख जाना रोग का प्रमुख लक्षण हैं।

रोकथाम :–

- बीज को बुवाई से पूर्व थायरम या कैप्टान नामक कवकनाशी की 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर बोयें।
- बीजों की बुवाई उचित जल निकास युक्त भूमि से 10–15 से.मी. ऊंचाई पर बुवाई करें।
- पौधशाला में रोगग्रस्त पोधों को निकाल कर नष्ट कर देना चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- मेटालेक्सिल का छिडकाव करें।

पत्ती धब्बा रोग (अल्टरनेरिया लीफ स्पोट्स) : रोगजनकः अल्टरनेरिया सोनेलाई / अल्टरनेरिया अल्टरनाटा

लक्षणः

- हल्के भूरे रंग के गोलाकार धब्बे
- टारगेट बोर्ड / बुल आई, जैसे लक्षण दिखाई देते है।
- अनियमित आकार के भूरे धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बें आपस में मिलकर विक्षत का रूप धारण कर देते हैं। जिससे पत्तियां सूख कर गिर जाती हैं।
- रोगी फल पीले पड़ जाते है तथा पकने से पूर्व ही गिर जाते हैं।

रोकथाम :–

- खरपतवारों की रोकथाम नियमित रूप से करते रहना चाहिए।
- रोगी पत्तियाँ को तोड़ कर यथा स्थान पर जला देना चाहिए ।
- हेक्साकोनाजोल का छिडकाव करें।
- नेटिवो का छिडकाव करें।

सर्कोस्पोरा लीफ स्पोट्स : रोगजनकः सर्कोस्पोरा मेलोंगेना

लक्षणः

- सर्कोस्पोस प्रजातियों के कारण पत्तियाँ में कोणीय से अनियमित आकार के धब्बे बन जाते हैं। जो बाद में मटमेले भूरे रंग के हो जाते हैं।
- यह रोग जनक कवक फलो में सड़न भी उत्पन्न कर देता हैं। तथा फलों का आकार छोटा रह जाता है। जिससे उपज की भारी हानि होती हैं।

रोकथाम :–

- खरपतवारों की रोक थाम नियमित रूप से करते रहना चाहिए।
- रोगी पत्तियाँ को तोड़ कर यथा स्थान जला देना चाहिए ।
- कोपर योगिको का छिडकाव

स्कलेरोटीनिया अगंमारी रोग : रोगजनकः स्कलेरोटीनिया स्पीसीज

लक्षणः

- इस रोग के लक्षणों में संक्रमण स्थान पर शुष्क धब्बा बनता हैं, जो धीरे – धीरे तने या शाखा को घेर लेता हैं। तथा ऊपर नीचे फैल कर संक्रमित भाग को सम्पूर्ण नष्ट कर देता हैं।
- तने के आधार पर संक्रमण होने पर आंशिक मुरझान दिखाई देती हैं। तने के पिथ में भूरे रंग से काले रंग के स्कलेरोटीनिया बन जाते है। संक्रमित फल में भी मांसल उत्तक विगलित हो जाता हैं।

रोकथाम :–

- रोग की रोकथाम हेतु फसल अवशेष, खरपतवार संक्रमित फल इत्यादि को एकत्रित कर के जला देना चाहिए।
- खेत की ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई कर देनी चाहिए।
- कार्बेन्डाजिम का छिडकाव करें।
- ट्राइकोडर्मा हारजीऐनम तथा ट्राइकोडर्मा वीरिडी से बीज उपचारित कर बोना चाहिए।

उक्टा या म्लानी रोग :रोगजनकः वर्टिसीलियम डहेली / राल्सटोनिया सोलेनासियारम

लक्षणः

- इस रोग का संक्रमण मुख्यतः जड़ों एवं तनो पर होता है। इससे संक्रमित पौधा बोना रह जाता हैं।
- फलोत्पादन नहीं करता, पुष्प तथा फल विकृत होकर गिर जाते हैं। तने की अनुपस्त तथा लम्बतः काट में सवहंनी उत्तक घुसर काले रंग का दिखाई देता हैं।
- प्रभावित पत्तियाँ पीली पड़ कर गिर जाती हैं।

रोकथाम :–

- मृदा उपचार ट्राइकोडर्मा तथा स्यूडोमोनास फ्लरोसेंस द्वारा किया जाना चाहिए।
- प्रोपिकोनाजोल का प्रयोग।

छोटी पत्ती रोग :रोगजनकः माइकोप्लाजमा, लीफ होपर' नामक कीट से फैलता हैं।

लक्षणः

- रोगी पौधा बोना रह जाता हैं तथा पत्तियां आकार में छोटी रह जाती हैं।
- रोगी पौधों पर फूल नहीं बनते हैं। और पौधा झाड़ीनुमा हो जाता हैं।
- इन पौधों पर फल भी लग जाते हैं तो वे अत्यंत कठोर होते हैं।
- रोगी पौधों को उखाड कर जला देना चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

रोकथाम :–

- रोगी पौधों को उखाड कर जला देना चाहिए।
- पौधों को रोपाई से पूर्व टेट्रासाइक्लिन के 100 पी.पी.एम. घोल में डुबोकर रोपाई करनी चाहिए।
- लीफहोपर से फसल को बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड का छिड़काव करना चाहिए।

सूत्रकृमि :रोगजनकः मेलोइड़ोगाइन स्पीसीज
लक्षणः

- रोगी पौधों की जड़ो में गाठें बन जाती हैं, रोगी पौधा बौना रह जाता हैं।
- पत्तियाँ हरी पीली होकर लटक जाती हैं।
- इस रोग के कारण पौधा नष्ट तो नहीं होता किन्तु गांठो के सडने पर सूख जाता है।

रोकथाम :रोगी पौधों को उखाड कर जला देना चाहिए तथा खेत मे नमी होन पर नीम की खली का प्रयोग करें।

वैज्ञानिक दृष्टि से हड़जोड़ः हड्डी चिकित्सा से समग्र स्वास्थ्य लाभ

कमल कुमार बैरवा, जितेद्र गुर्जर, हरदत कस्वा, रमेश कुमार एवं कपिल
स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

परिचय

हड़जोड़ एक बहुवर्षी चतुष्कोणीय तना वाले पौधे की लता है, जो अंगूर परिवार से संबंधित है। इसे आयुर्वेद में 'अस्थिसंधानक' और 'अस्थि श्रृंखला' के नाम से भी जाना जाता है। हड़जोड़ का मुख्य उपयोग हड्डियों से जुड़ी समस्याओं के इलाज में होता है। यह पौधा कैल्शियम, मैग्नीशियम, और विटामिन बीसे भरपूर होता है, जो हड्डियों की मजबूती बढ़ाने और टूटी हड्डी को तेजी से जोड़ने में सहायक होते हैं। इसके अलावा, हड़जोड़ में सूजन कम करने वाले (एंटी–इंफ्लेमेटरी) गुण होते हैं, जो गठिया और जोड़ों के दर्द को कम करने में मदद करते हैं।
हड़जोड़ का उपयोग पाचन सुधारने, गैस और अम्लता को कम करने, और चोट–फोड़ से जल्दी ठीक होने के लिए भी किया जाता है। कई आयुर्वेदिक उपचारों में इसे मोच, पाइल्स और अन्य वातज रोगों के लिए भी प्रयोग किया जाता है। यह पौधा विशेष रूप से दक्षिण भारत और श्रीलंका में व्यापक रूप से उपयोग में लाया जाता है। आयुर्वेद विशेषज्ञ इसे टूटी हड्डी जोड़ने वाली रामबाण औषधि मानते हैं।

हड्डियों को मजबूत बनाने वाले घटक

हड़जोड़ का वैज्ञानिक अध्ययन अब तक इसके हड्डी स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभावों को उजागर करता है। यह पौधा मुख्य रूप से हड्डियों के टूटने और कमजोर होने की समस्याओं से बचाव करने में प्रभावी है। शोध बताते हैं कि हड़जोड़ में पाए जाने वाले सक्रिय यौगिक जैसे फ्लावोनोइड्स, विटामिन बी, कैल्शियम और केटोस्टेरॉयड्स हड्डी बनाने वाली कोशिकाओं (ओस्टियोब्लास्ट) को प्रोत्साहित करते हैं और हड्डी कमजोर करने वाली कोशिकाओं (ओस्टियोक्लास्ट) की गतिविधि को कम करते हैं।

एक शोध में यह पाया गया कि हड़जोड ओस्टियोक्लास्टोजेनेसिस (हड्डी विकराल कोशिकाओं का निर्माण) को रोकता है, जिससे बोन लॉस (हड्डी क्षय) कम होता है। यह हड्डी के सूक्ष्मसंरचना को भी ठीक रखता है, जिससे हड्डी मजबूत बनती है। इसके अलावा, हड़जोड़ की एंटी–इंफ्लेमेटरी और एंटीऑक्सीडेंट गतिविधि जोड़ो के दर्द और सूजन को कम करने में मदद करती है। इसके पारंपरिक उपयोगों में हड्डी टूटने पर त्वरित जख्म भरने, जोडों की समस्याओं में राहत, और पाचन तंत्र को सुधारने की क्षमता शामिल है। वैज्ञानिक अनुसंधान ने इसकी सुरक्षा को भी प्रमाणित किया है, जिससे यह लंबी अवधि तक उपयोग के लिए उपयुक्त है।

हड़जोड़ के औषधीय गुण

हड़जोड़ के औषधीय गुण व्यापक और बहुपयोगी हैं, जो विशेष रूप से हड्डियों, जोड़ों, पाचन तंत्र और सूजन से जुड़ी समस्याओं में उपयोगी होते हैं। इसके मुख्य औषधीय गुण निम्नलिखित हैंः–

1. हड्डियों को मजबूत बनानाः हड़जोड़ में पाए जाने वाले कैल्शियम, मैग्नीशियम और फास्फोरस जैसे खनिज, हड्डियों के निर्माण और मरम्मत को तेज करते हैं। यह टूटी हड्डियों के जल्दी जुड़ने में सहायक होता है।
2. एंटी–इंफ्लेमेटरी और दर्द निवारकः हड़जोड़ के अर्क में सूजन कम करने वाले तत्व होते हैं, जो गठिया और जोड़ों के दर्द में राहत प्रदान करते हैं।
3. पाचन सुधारः यह गैस, अम्लता, और कब्ज जैसी पाचन समस्याओं को ठीक करता है तथा भूख बढ़ाने में मदद करता है।
4. एंटीऑक्सिडेंट गुणः हड़जोड़ शरीर को मुक्त कणों से बचाता है, जिससे कोशिकाओं की सुरक्षा होती है और उम्र बढ़ने की प्रक्रिया धीमी होती है।
5. रक्तस्राव रोधकः इसका उपयोग रक्तस्राव को नियंत्रित करने में भी किया जाता है।
6. मांसपेशियों एवं चोट की तेजी से मरम्मतः हड़जोड़ चोट या मोच से जल्दी ठीक होने में मदद करता है।
7. वजन नियंत्रण में सहायकः कुछ शोधों में हड़जोड़ को वजन कम करने और मेटाबॉलिक संतुलन बनाए रखने में फायदेमंद बताया गया है।
8. हृदय स्वास्थ्यः यह रक्त परिसंचरण सुधारता है और हृदय रोगों के जोखिम को कम कर सकता है।

हड्डी टूटने के उपचार में हड़जोड़ का उपयोग

हड़जोड़ हड्डी टूटने के उपचार में एक प्रभावशाली प्राकृतिक औषधि के रूप में काम करता है। इसके तने में उपस्थित कैल्शियम, मैग्नीशियम, फास्फोरस, और विटामिन C जैसे पोषक तत्व हड्डी की मरम्मत और पुनर्निर्माण को प्रभावी तरीके से बढ़ावा देते हैं। वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि हड़जोड़ हड्डी को जोड़ने वाली कोशिकाओं (ऑस्टियोब्लास्ट) की सक्रियता बढ़ाता है और हड्डी तोड़ने वाली कोशिकाओं (ऑस्टियोक्लास्ट) की क्रिया को कम करता है। इस प्रकार, यह हड्डी टूटने के बाद रिकवरी समय को घटाता है। इसके अलावा, हड़जोड़ में पाए जाने वाले एंटी–इंफ्लेमेटरी घटक सूजन और दर्द को कम करते हैं, जिससे मरीज को जल्दी आराम मिलता है। यह हड्डी की सूक्ष्मसंरचना को भी बनाए रखने में मदद करता है, जिससे हड्डी मजबूत बनती है और दोबारा टूटने का खतरा कम होता है। पारंपरिक रूप से भी आयुर्वेद में हड़जोड़ को हड्डी जोड़ने वाली रामबाण औषधि माना गया है, जिसका प्रयोग टूटी हड्डी के उपचार के लिए सदियों से किया जा रहा है।

सूजन और दर्द में राहत

हड़जोड़ में पाए जाने वाले एंटी–इंफ्लेमेटरी (सूजनरोधी) और एनाल्जेसिक (दर्द निवारक) गुण सूजन और दर्द को कम करने में प्रभावी हैं। शोधों के अनुसार, हड़जोड़ के सक्रिय यौगिक शरीर में सूजन पैदा करने वाले रसायनों को अवरुद्ध करते हैं, जिससे गठिया, जोड़ों के दर्द, और मांसपेशियों की सूजन में राहत मिलती है। यह पद्धति दर्द के प्रबंधन में दवाओं के विकल्प के रूप में उपयोगी साबित हो रही है।

हड़जोड़ के अर्क शरीर की सूजन प्रतिक्रिया को नियंत्रित कर त्वरित आराम प्रदान करते हैं। इसके साथ ही, यह मांसपेशियों और संयोजी ऊतकों की मरम्मत में सहायता करता है, जिससे चोट के बाद के दर्द और कठोरता कम होती है। पारंपरिक आयुर्वेदिक चिकित्सा में भी हड़जोड़ का उपयोग चोट, मोच, और गठिया के उपचार में वर्षों से किया जा रहा है।औषधीय गुणों के कारण, हड़जोड़ सूजन से उत्पन्न दर्द को घटाकर रोगी की गतिशीलता बढ़ाने और दैनिक क्रियाओं को सहज बनाने में मदद करता है। यह प्राकृतिक उपाय होने के कारण लंबे समय तक सुरक्षित रूप से इस्तेमाल किया जा सकता है, पर शर्त यह है कि चिकित्सकीय सलाह के अनुसार ही सेवन किया जाए।

पाचन तंत्र पर प्रभाव

हड़जोड़ का पाचन तंत्र पर सकारात्मक प्रभाव होता है। इसमें पाए जाने वाले कार्मिनेटिव (पाचन सुधारक) गुण गैस, एसिडिटी और अपच जैसी समस्याओं को कम करने में मदद करते हैं। यह पाचन तंत्र की क्रियाशीलता को बढ़ाकर भोजन के बेहतर पाचन और पोषक तत्वों के अवशोषण को सुधारता है। हड़जोड़ की एंटी–इंफ्लेमेटरी और एंटीस्पास्मोडिक (दर्द और ऐंठन कम करने वाले) विशेषताएं पेट की सूजन और पेट दर्द को भी कम करती हैं। इसके नियमित सेवन से कब्ज और गैस बनने की समस्या से राहत मिलती है, जिससे पेट का स्वास्थ्य बेहतर होता है। पारंपरिक चिकित्सा में इसे पाचन विकारों के उपचार में उपयोग किया जाता रहा है। इसके अलावा, हड़जोड़ भूख बढ़ाने वाला भी माना जाता है, जिससे कमजोर और कमजोर स्वस्थ लोगों के लिए यह फायदेमंद होता है। यह पाचन तंत्र को संतुलित रखकर संपूर्ण स्वास्थ्य में सुधार लाने में योगदान देता है।

हड़जोड़ के अन्य स्वास्थ्य लाभ

हड़जोड़ के अन्य स्वास्थ्य लाभ भी अनेक हैं जो इसे एक बहुमुखी औषधीय पौधा बनाते हैं। इनमें से कुछ प्रमुख लाभ इस प्रकार हैं:

1. रक्तस्राव रोकना: हड़जोड़ के सेवन से रक्तस्राव नियंत्रण में मदद मिलती है, जिससे चोट या घाव जल्दी ठीक होते हैं।

2. मांसपेशियों की मरम्मत: यह मांसपेशियों और संयोजी ऊतकों की चोटों से जल्दी ठीक होने में सहायता करता है, विशेषकर खेल और शारीरिक श्रम से उत्पन्न चोटों में।

3. वजन नियंत्रण: कुछ अध्ययन बताते हैं कि हड़जोड़ शरीर में वसा नियंत्रण में सहायक होता है, जिससे वजन कम करने में मदद मिलती है।

4. हृदय स्वास्थ्य: हड़जोड़ रक्त परिसंचरण को बेहतर बनाता है और हृदय रोगों के जोखिम को कम कर सकता है।

5. महिलाओं के स्वास्थ्य में लाभ: यह मासिक धर्म में होने वाले दर्द, असामान्य रक्तस्राव एवं अन्य महिलाओं से जुड़ी समस्याओं को कम करने में प्रभावी है।

6. एंटीऑक्सीडेंट प्रभाव: यह शरीर को मुक्त कणों से बचाकर उम्र बढ़ने की प्रक्रिया को धीमा करता है और रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है।

हड़जोड़ का सुरक्षित उपयोग

हड़जोड़ का सुरक्षित उपयोग सुनिश्चित करने के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना आवश्यक है:

1. खुराक का पालन: हड़जोड़ का सेवन हमेशा चिकित्सक की सलाह और दिये गए खुराक अनुसार करना चाहिए। आमतौर पर कच्चे पत्ते, पाउडर या अर्क के रूप में उपयोग किया जाता है, परन्तु मात्रा अधिक लेने से दुष्प्रभाव हो सकते हैं।

2. गर्भावस्था एवं स्तनपान: गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं को हड़जोड़ के सेवन से बचना चाहिए, क्योंकि इसके सुरक्षित होने के पर्याप्त वैज्ञानिक प्रमाण नहीं हैं।

3. दवाइयों के साथ प्रतिक्रिया: यदि कोई व्यक्ति अन्य दवाएं ले रहा है, खासकर ब्लड थिनर या डायबिटीज की दवाएं, तो हड़जोड़ का उपयोग शुरू करने से पहले डॉक्टर से परामर्श अवश्य करें, क्योंकि यह दवाओं के प्रभाव को बदल सकता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

4. एलर्जी की संभावनाः कुछ लोगों को हड़जोड़ से एलर्जी या त्वचा पर प्रतिक्रिया हो सकती है, इसलिए पहली बार सेवन करते समय सावधानी बरतनी चाहिए।
7. लंबे समय तक सेवनः हड़जोड़ का लगातार लंबे समय तक सेवन करने से पहले चिकित्सीय निगरानी जरूरी है ताकि किसी भी असामान्य प्रतिक्रिया का समय पर पता चल सके।
8. खुर्दरे और अस्वच्छ स्रोतों से बचावः केवल प्रमाणित और शुद्ध उत्पाद का ही उपयोग करना चाहिए, क्योंकि अशुद्ध हड़जोड़ पौधों के सेवन से स्वास्थ्य संबंधी जोखिम हो सकते हैं।

निष्कर्ष

हड़जोड़ एक प्रभावशाली और बहुमुखी औषधीय पौधा है, जो हड्डियों, जोड़ों और पाचन तंत्र सहित विभिन्न शारीरिक प्रणालियों के लिए लाभकारी सिद्ध हुआ है। इसके सक्रिय घटक हड्डियों की मजबूती बढ़ाने तथा टूटने पर त्वरित मरम्मत में सहायता करते हैं, साथ ही सूजन और दर्द को कम करने में भी कारगर हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान इस पौधे के एंटी–इंफ्लेमेटरी, एंटीऑक्सिडेंट और बोन–हीलिंग गुणों की पुष्टि करते हैं, जो इसे पारंपरिक और आधुनिक चिकित्सा दोनों में एक महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हैं। हालांकि, इसके सुरक्षित उपयोग के लिए उचित खुराक और विशेषज्ञ की सलाह आवश्यक है। कुल मिलाकर, हड़जोड़ प्राकृतिक उपचार का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, जो स्वास्थ्य सुधार और रोगों की रोकथाम में सहायक हो सकता है।

स्वयं सहायता समूह : सशक्तिकरण की सशक्त पहल

कविता लाखराण[1], रेखा बधाला[2], मुकेश कुमावत[1] एवं सुरेश कुमार महला[1]
[1]श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर
[2]स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

भारत जैसे विशाल और विविधताओं से भरे देश में आर्थिक और सामाजिक असमानताएँ लंबे समय से एक चुनौती रही हैं। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और कमजोर वर्गों के सामने रोजगार, शिक्षा और वित्तीय संसाधनों की कमी एक बड़ी समस्या रही है। इन चुनौतियों से निपटने के लिए "स्वयं सहायता समूह" एक प्रभावी और परिवर्तनकारी मॉडल के रूप में उभरे हैं। स्वयं सहायता समूह न केवल आर्थिक सशक्तिकरण का माध्यम बने हैं, बल्कि सामाजिक बदलाव और आत्मनिर्भरता की दिशा में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं।

स्वयं सहायता समूह क्या है?

स्वयं सहायता समूह 10 से 20 सदस्यों का एक छोटा, स्वैच्छिक समूह होता है, जो आमतौर पर समान सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि से आते हैं। यह समूह नियमित रूप से छोटी–छोटी बचत जमा करता है और उस बचत को आपसी सहमति से जरूरतमंद सदस्यों को ऋण के रूप में देता है।
समूह की सबसे बड़ी विशेषता है। "एकता और विश्वास"। सदस्य आपस में मिलकर निर्णय लेते हैं, बैठकों का आयोजन करते हैं, लेखा–जोखा रखते हैं और सामूहिक जिम्मेदारी निभाते हैं।

भारत में स्वयं सहायता समूहों की शुरुआत

भारत में स्वयं सहायता समूह आंदोलन को संगठित रूप देने का श्रेय मुख्यतः राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक को जाता है। 1992 में नाबार्ड नें **स्वयं सहायता समूह**–बैंक लिंकेज कार्यक्रम की शुरुआत की, जिसके तहत स्वयं सहायता समूहों को बैंकों से जोड़ा गया ताकि उन्हें औपचारिक वित्तीय सहायता मिल सके।
इसके बाद केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) की शुरुआत की, जिसे वर्तमान में दीनदयाल अंत्योदय योजना के अंतर्गत संचालित किया जा रहा है। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण गरीब महिलाओं को संगठित कर उन्हें स्वरोजगार और कौशल विकास के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाना है।

स्वयं सहायता समूह की कार्यप्रणाली

1. नियमित बचतः प्रत्येक सदस्य एक निश्चित राशि मासिक या साप्ताहिक रूप से जमा करता है।
2. आंतरिक ऋणः समूह की कुल बचत से जरूरतमंद सदस्य को कम ब्याज दर पर ऋण दिया जाता है।
3. सामूहिक निर्णयः सभी निर्णय लोकतांत्रिक तरीके से लिए जाते हैं।
4. बैंक लिंकेजः समूह का बैंक खाता खोला जाता है और समय के साथ बैंक से ऋण भी प्राप्त किया जाता है।
5. लेखा–जोखा और पारदर्शिताः समूह की आय–व्यय का रिकॉर्ड रखा जाता है।

महिलाओं का सशक्तिकरण

स्वयं सहायता समूहों का सबसे सकारात्मक प्रभाव महिलाओं के जीवन पर पड़ा है। ग्रामीण क्षेत्रों में जहां महिलाएं पहले केवल घरेलू कार्यों तक सीमित थीं, अब वे समूह के माध्यम से आर्थिक गतिविधियों में भाग ले रही हैं।
वे सिलाई, बुनाई, डेयरी, मधुमक्खी पालन, अचार–पापड़ निर्माण, हस्तशिल्प, अगरबत्ती निर्माण, और जैविक खेती जैसे कार्यों से आय अर्जित कर रही हैं। इससे न केवल उनकी आय बढ़ी है, बल्कि परिवार और समाज में उनका सम्मान भी बढ़ा है।
सामाजिक परिवर्तन की दिशा में कदम
स्वयं सहायता समूह केवल आर्थिक गतिविधियों तक सीमित नहीं हैं। ये समूह सामाजिक मुद्दों पर भी सक्रिय भूमिका निभाते हैं, जैसे :–

- बाल विवाह रोकना

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- दहेज प्रथा के खिलाफ जागरूकता
- स्वच्छता और स्वास्थ्य अभियान
- बच्चों की शिक्षा को बढ़ावा देना
- नशा मुक्ति अभियान

कई राज्यों में महिलाओं ने ग्राम पंचायत चुनावों में भाग लेकर नेतृत्व की नई मिसालें भी कायम की हैं।

आर्थिक विकास में योगदान

स्वयं सहायता समूह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। छोटे–छोटे व्यवसायों के माध्यम से स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर उत्पन्न होते हैं। इससे पलायन कम होता है और गांवों में ही आय के स्रोत विकसित होते हैं।

भारत के कई राज्यों – जैसे आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, बिहार और ओडिशा में SHG मॉडल ने उल्लेखनीय सफलता प्राप्त की है। विशेष रूप से आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में महिला स्वयं सहायता समूहों ने बड़े पैमाने पर स्वरोजगार और सामुदायिक विकास में योगदान दिया है।

डिजिटल युग

डिजिटल इंडिया अभियान के बाद स्वयं सहायता समूहों को डिजिटल लेन–देन, ऑनलाइन मार्केटिंग और ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म से जोड़ा जा रहा है। कई SHG उत्पाद अब ऑनलाइन प्लेटफॉर्म के माध्यम से देश–विदेश में बेचे जा रहे हैं। सरकार द्वारा प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं को डिजिटल साक्षरता सिखाई जा रही है, जिससे वे मोबाइल बैंकिंग, ऑनलाइन भुगतान प्रणाली का उपयोग कर सकें।

चुनौतियाँ

हालांकि स्वयं सहायता समूहों ने उल्लेखनीय सफलता हासिल की है, फिर भी कुछ चुनौतियाँ मौजूद हैं–

- वित्तीय साक्षरता की कमी
- बाजार तक सीमित पहुंच
- उत्पाद की गुणवत्ता और ब्रांडिंग
- समूह प्रबंधन में अनुभव की कमी
- कुछ क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का अभाव

इन चुनौतियों का समाधान प्रशिक्षण, मार्गदर्शन और सरकारी सहयोग से किया जा सकता है।

सफलता की प्रेरणादायक कहानियाँ

देश के कई गांवों महिलाओं ने अपनी मेहनत और लगन से असंभव को संभव कर दिखाया है। उदाहरण के तौर पर, कुछ समूहों ने जैविक खेती अपनाकर बड़े बाजारों में अपने उत्पाद बेचे और लाखों रुपये का वार्षिक कारोबार किया। कुछ समूहों ने मास्क और सैनिटाइजर बनाकर कोविड–19 महामारी के दौरान न केवल आय अर्जित की, बल्कि समाज की सेवा भी की।

इन कहानियों से यह स्पष्ट होता है कि यदि अवसर और मार्गदर्शन मिले तो महिलाएं किसी भी क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सकती हैं।

आत्मनिर्भर भारत की ओर एक कदम

स्वयं सहायता समूह "आत्मनिर्भर भारत" के सपने को साकार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। ये समूह न केवल व्यक्तिगत स्तर पर बल्कि सामुदायिक और राष्ट्रीय स्तर पर भी विकास का आधार बन रहे हैं। जब महिलाएं आर्थिक रूप से सक्षम होती हैं, तो उनका परिवार, समाज और अंततः पूरा देश सशक्त होता है। SHG मॉडल ने यह सिद्ध कर दिया है कि छोटे–छोटे प्रयास मिलकर बड़े परिवर्तन ला सकते हैं।

निष्कर्ष

स्वयं सहायता समूह आज भारत के ग्रामीण विकास और महिला सशक्तिकरण का मजबूत स्तंभ बन चुके हैं। इन समूहों ने लाखों महिलाओं को आत्मनिर्भर बनने का अवसर दिया है। बचत, सहयोग और सामूहिक प्रयास की शक्ति ने सामाजिक और आर्थिक बदलाव की नई कहानी लिखी है।

आवश्यक है कि सरकार, बैंकिंग संस्थाएं और समाज मिलकर इन समूहों को और मजबूत करें। प्रशिक्षण, विपणन सहायता और तकनीकी समर्थन प्रदान को और प्रभावी बनाया जा सकता है।

स्वयं सहायता समूह केवल एक आर्थिक मॉडल नहीं, बल्कि एक सामाजिक क्रांति है जो "संगठन में शक्ति" के सिद्धांत पर आधारित है और देश को समृद्ध एवं आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में निरंतर अग्रसर है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

एकीकृत कीट प्रबंधन में चिपचिपे जाल (स्टिकी ट्रैप) की प्रभावशीलता और उपयोगिता

महाजन उमेश विशाल, वीर सिंह एवं प्रकाश कुमार
स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर

प्रस्तावना–

राजस्थान की कृषि मुख्यतः मानसून पर आधारित है और यहाँ के किसान सीमित संसाधनों में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए निरंतर प्रयासरत रहते हैं। हरित क्रांति के बाद से उत्पादन बढ़ाने और कीट एवं रोगों पर नियंत्रण के लिए रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का उपयोग तेजी से बढ़ा। प्रारंभिक वर्षों में इन रसायनों से निश्चित रूप से उत्पादन में वृद्धि हुई और कीट प्रकोप पर प्रभावी नियंत्रण मिला। किंतु समय के साथ इनके दुष्परिणाम भी सामने आने लगे हैं। लगातार और अंधाधुंध रासायनिक उपयोग के कारण मिट्टी की जैविक सक्रियता घट रही है। भूमि की संरचना कमजोर हो रही है और सूक्ष्मजीवों का संतुलन बिगड़ रहा है। परिणामस्वरूप उत्पादन लागत बढ़ती जा रही है। जबकि फसल की गुणवत्ता और बाजार मूल्य पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है। इसके साथ ही मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।

ऐसी परिस्थितियों में राजस्थान के किसानों के सामने यह चुनौती है कि वे उत्पादन भी बनाए रखें और प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण भी करें। यही कारण है कि अब राज्य के किसान एकीकृत कीट प्रबंधन और जैविक उपायों की ओर अपना रुझान बढ़ा रहे हैं। विशेष रूप से चिपचिपे जाल (स्टिकी ट्रैप)जैसे सरल सस्ते और पर्यावरण अनुकूल उपकरण कीट नियंत्रण के प्रभावी विकल्प हैं।

चिपचिपे जाल (स्टिकी ट्रैप) क्या है और क्यों है प्रभावी–

यह एक जैविक उपकरण है। जो बिना किसी विषैले रसायन के हानिकारक कीटों को आकर्षित कर उन्हें पकड़ लेता है। यह रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में काफी सस्ता और सुरक्षित विकल्प है। इसके उपयोग से फसलों को होने वाला कीट–नुकसान लगभग 40 से 50 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। इससे न तो मिट्टी की गुणवत्ता पर असर पड़ता है, न पर्यावरण पर और न ही मानव स्वास्थ्य पर कोई दुष्प्रभाव होता है तथा साथ ही रासायनिक या जैविक दवाओं के छिड़काव खर्च को भी कम किया जा सकता है।

विभिन्न रंगों के स्टिकी ट्रैप फसलों के अनुसार उपयोग और प्रभाव–

1. पीला चिपचिपा (स्टिकी ट्रैप)–

यह सबसे अधिक प्रचलित और व्यापक रूप से उपयोग किया जाने वाला ट्रैप है। यह अधिकांश हरी सब्जियों वाली फसलों में लगाया जाता है। पीले रंग की ओर आकर्षित होकर रस–चूसक उड़ने वाले कीट इसमें चिपक जाते हैं। सरसों की फसल में हमला करने वाले माहू के नियंत्रण में भी यह अत्यंत प्रभावी सिद्ध हुआ है। इसके नियमित उपयोग से कीटों की प्रारंभिक अवस्था में ही पहचान हो जाती है। जिससे समय पर नियंत्रण उपाय किए जा सकते हैं।

लक्षित कीट–अन्य रस–चूसक उड़ने वाले कीट

2. नीला चिपचिपा (स्टिकी ट्रैप)–

यह ट्रैप मुख्यतः थ्रिप्स जैसे शोषक कीटों के नियंत्रण के लिए उपयोग किए जाते हैं। मुख्यतः फूलों वाली फसलें तथा विभिन्न सब्जी वाली फसलों में थ्रिप्स की समस्या अधिक देखी जाती है। नीला रंग थ्रिप्स को विशेष रूप से आकर्षित करता है। इसलिए इस रंग के ट्रैप लगाने से इनकी निगरानी एवं नियंत्रण में मदद मिलती है। ग्रीनहाउस और संरक्षित खेती में इसका उपयोग अत्यंत लाभकारी माना जाता है।

लक्षित कीट–

- थ्रिप्स (मुख्य लक्षित कीट)
- पत्ती सुरंगक (लीफमाइनर)
- अन्य सूक्ष्म शोषक कीट

उपयोगी फसलें–

- फूलों की फसलें (गुलाब, जरबेरा, कार्नेशन, ग्लैडियोलस)
- खीरा वर्गीय सब्जियाँ
- मिर्च, टमाटर
- ग्रीनहाउस एवं पॉलीहाउस फसलें

3. सफेद चिपचिपा (स्टिकी ट्रैप)–

इस ट्रैप का उपयोग फल एवं सब्जी फसलों में पाए जाने वाले लाल बीटल तथा विभिन्न प्रकार के बग कीटों के नियंत्रण के लिए किया जाता है। यह ट्रैप इन कीटों की गतिविधि पर निगरानी रखने में सहायक होता है और संक्रमण की तीव्रता का आकलन करने में मदद करता है।

लक्षित कीट–

- लाल बीटल
- विभिन्न बग कीट
- कुछ भृंग वर्ग के उड़ने वाले कीट

सफेद मक्खी | पत्ती सरंगक | थ्रिप्स

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

उपयोगी फसलें–

- फल फसलें (कद्दूवर्गीय, बागवानी फसलें)
- सब्जी फसलें

प्रमुख लाभ–

- रसायन मुक्त नियंत्रण इसमें किसी भी जहरीले कीटनाशक का उपयोग नहीं होता।
- कम लागत वह रासायनिक कीटनाशकों के छिड़काव की तुलना में काफी सस्ता विकल्प है।
- कीट प्रकोप की निगरानी या खेत में किस प्रकार के कीट हैं और उनकी संख्या कितनी है, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है।
- मिट्टी जल, वायु और मानव स्वास्थ्य पर कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता।
- लाभकारी कीटों का संरक्षण, लक्षित कीटों पर नियंत्रण और अनावश्यक छिड़काव से बचा जा सकता है।

कितनी कमी ला सकता है नुकसान में–

स्टिकी ट्रैप के नियमित उपयोग से कीटों से होने वाला नुकसान 40 से 50 प्रतिशत तक कम किया जा सकता है। साथ ही रासायनिक कीटनाशकों के छिड़काव की संख्या भी घटती है जिससे उत्पादन लागत कम होती है।

फसल में कीटों की प्रभावी निगरानी और नियंत्रण के लिए चिपचिपे ट्रैप का सही तरीका–

- इन्हें बांस की डंडी और तार की सहायता से मजबूती से इस प्रकार लगाया जाता है कि वे हवा में स्थिर रहें।
- एक एकड़ खेत में सामान्यतः 10–15 ट्रैप तथा प्रति हेक्टेयर लगभग 25–37 ट्रैप लगाने चाहिए, जिसे कीट प्रकोप और फसल की सघनता के अनुसार समायोजित किया जा सकता है।
- ट्रैप को फसल की ऊँचाई से लगभग 50–75 सेमी ऊपर लगाना चाहिए तथा फसल बढ़ने पर ऊँचाई भी समायोजित करनी चाहिए।
- ट्रैप में अधिक कीट चिपक जाने पर उसे बदलकर नई चिपचिपी परत लगाकर पुनः उपयोग करना चाहिए।

निष्कर्ष–

आज की खेती में केवल उत्पादन बढ़ाना ही लक्ष्य नहीं बल्कि मिट्टी की सेहत, पर्यावरण की सुरक्षा और उपभोक्ताओं को सुरक्षित खाद्य उपलब्ध कराना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। ऐसे में स्टिकी ट्रैप एक प्रभावी सुरक्षित और टिकाऊ समाधान के रूप में सामने आया है। यदि किसान इसे एकीकृत कीट प्रबंधन के साथ अपनाएँ तो निश्चित ही खेती अधिक लाभकारी और पर्यावरण अनुकूल बन सकती है।

बायोचार : किसानों की समृद्धि और टिकाऊ खेती की नई दिशा

राकेश कुमावत, श्याम सुंदर शर्मा, सोनू जैन एवं शोभना विश्नोई
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, राजस्थान

परिचय : भारत में लगातार गहन खेती, असंतुलित रसायनिक उर्वरक उपयोग और फसल अवशेष जलाने जैसे कारकों से मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा कम होती जा रही है। यह जैविक कार्बन मिट्टी की उर्वरता, जल धारण क्षमता और पौधों के विकास के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। अध्ययन बताते हैं कि देश की अधिकांश कृषि भूमि में जैविक कार्बन 0.5 प्रतिशत से भी कम है, जबकि अच्छी उत्पादकता के लिए इसे 0.75 से 1.0 प्रतिशत तक होना आवश्यक माना जाता है, ऐसी स्थिति में मिट्टी की सेहत सुधारने और कार्बन पुर्नस्थापन के लिए बायोचार एक प्रभावी और वैज्ञानिक विकल्प के रूप में उभर रहा है। बायोचार एक कार्बन–समृद्ध, स्थिर पदार्थ है जो पायरोलिसिस (कम ऑक्सीजन में तापीय प्रक्रिया) द्वारा कृषि अपशिष्ट से बनाया जाता है और मिट्टी में मिलाने पर कार्बन को दशकों से सैकड़ों वर्षों तक स्थिर रख सकता है, बायोचार मिट्टी की भौतिक और रासायनिक गुणों को बेहतर बनाता है। इसकी छिद्रयुक्त संरचना मिट्टी की जल धारण क्षमता बढ़ाती है, और मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों को समर्थन देती है। यही नहीं, यह मिट्टी में जैविक कार्बन की मात्रा बढ़ाने में मदद करता है, जिससे मिट्टी की उर्वरता और उत्पादन क्षमता सुधरती है, साथ ही बायोचार जैविक कार्बन को स्थिर रूप से मिट्टी में संचित करके कार्बन संचयन में मदद करता है, जिससे जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सकता है। वैज्ञानिक अध्ययन दिखाते हैं कि बायोचार के उपयोग से मिट्टी में कार्बन का स्तर काफी लंबे समय तक बना रहता है, जो इसे मिट्टी स्वास्थ्य और पर्यावरण संरक्षण दोनों के लिए महत्वपूर्ण उपाय बनाता है।

बायोचार क्या है?

बायोचार एक स्थायी कार्बन युक्त पदार्थ है, जिसे जैविक अवशेषों (जैसे धान का पुआल, गेहूं का भूसा, लकड़ी, गोबर आदि) को 350 से 600°सेन्टीग्रेट तापमान पर कम ऑक्सीजन की अवस्था में गर्म करके तैयार किया जाता है। इस प्रक्रिया को पायरोलिसिस कहा जाता है। साधारण राख से भिन्न, बायोचार की संरचना छिद्रयुक्त होती है, जिससे इसका सतही क्षेत्रफल अधिक होता है। यही विशेषता इसे मिट्टी सुधारक के रूप में प्रभावी बनाती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

मिट्टी पर बायोचार का प्रभावः

बायोचार मिट्टी की उर्वरता, संरचना और जैविक स्वास्थ्य को सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाकर और मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों को बढ़ावा देकर फसल उत्पादन को बढ़ाता है। साथ ही, स्थायी कार्बन संचयन के माध्यम से यह पर्यावरणीय स्थायित्व और जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने में भी योगदान देता है।

1. भौतिक गुणों में सुधार

बायोचार डालने से मिट्टी की जल धारण क्षमता में 10 से 30 प्रतिशत तक वृद्धि होती है, जिससे पौधों को सूखे की स्थिति में भी पर्याप्त पानी उपलब्ध रहता है और फसल बेहतर बढ़ती है। इसके अलावा, बायोचार के प्रयोग से मिट्टी का आयतन घनत्व घटता है, जिससे मिट्टी की संरचना में सुधार होता है और जड़ों की वृद्धि एवं विस्तार बेहतर होता है।

2. रासायनिक गुणों में सुधार

बायोचार डालने से मिट्टी की अम्लता कम होती है और मिट्टी का pH संतुलित रहता है, जिससे फसल की वृद्धि में मदद मिलती है। इसके अलावा, बायोचार मिट्टी की धनायन आदान–प्रदान क्षमता बढ़ता है, जिससे पोषक तत्व लंबे समय तक मिट्टी में बने रहते हैं। यह नत्रजन के अपक्षालन को भी कम करता है, जिससे पौधों को पोषक तत्व लंबे समय तक उपलब्ध रहते हैं और उर्वरक की बचत होती है।

3. जैविक गतिविधि में वृद्धि

बायोचार की छिद्रयुक्त संरचना मिट्टी में लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए एक सुरक्षित और अनुकूल वातावरण प्रदान करती है। यह मिट्टी में जैविक गतिविधियों को बढ़ावा देता है, जिससे नत्रजन स्थिरीकरण बेहतर होता है और फास्फोरस की घुलनशीलता बढ़ती है। परिणामस्वरूप, मिट्टी की उर्वरता में सुधार होता है और पौधों को आवश्यक पोषक तत्व लंबे समय तक उपलब्ध रहते हैं। इससे फसल की वृद्धि अच्छी होती है, पौधों की जड़ें मजबूत बनती हैं और पानी तथा पोषक तत्वों की बचत होती है।

बायोचार का फसल उत्पादन पर प्रभावः

- फसलों में अंकुरण दर में सुधार, जिससे खेत में पौधों की समान और बेहतर स्थापना होती है।
- फसल पौधों की ऊँचाई, जड़ विकास एवं कुल जैव द्रव्यमान में वृद्धि, जिससे उत्पादन क्षमता बढ़ती है।
- फसलों में सूखा सहनशीलता बढ़ती है, जिससे कम वर्षा या जल की कमी की स्थिति में भी अच्छी वृद्धि बनी रहती है।
- फसलों द्वारा उर्वरकों के बेहतर उपयोग की क्षमता बढ़ती है, जिससे लागत कम आती है और उपज में सुधार होता है।

बायोचार बनाने की सामान्य प्रक्रिया

- **आवश्यक सामग्रीः** धान/गेहूँ का भूसा, पुआल, गन्ने का डंठल, सूखी लकड़ी, नारियल के छिलके या सूखा गोबर।
- **सामग्री को सुखानाः** सामग्री को छोटे टुकड़ों में काट लें और अच्छी तरह धूप में सुखा लें।
- **बायोचार बनाने की विधियाँः**

1. ढेर विधि द्वारा बायोचार बनाना

ढेर विधि ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे सरल और सस्ती तकनीक है। इस विधि में सूखी लकड़ी, पुआल या फसल अवशेषों को शंकु या गोल ढेर के रूप में जमा किया जाता है। ढेर की ऊँचाई लगभग 1 से 1.5 मीटर और चौड़ाई 1 से 2 मीटर रखी जाती है। बीच में पतली लकड़ियाँ रखकर आग लगाई जाती है। जब आग अच्छी तरह पकड़ ले, तो ढेर के ऊपर मिट्टी या राख की परत डाल दें ताकि हवा कम प्रवेश करे। इससे सामग्री पूरी तरह जलने के बजाय धीरे–धीरे काली होकर बायोचार में बदल जाती है। यह प्रक्रिया लगभग 4 से 8 घंटे तक चलती है। जब धुआँ हल्का या नीला दिखने लगे, तो समझें कि बायोचार तैयार हो गया है। अंत में ढेर को पूरी तरह मिट्टी से ढक दें या हल्का पानी छिड़ककर बुझा दें। इस विधि से लगभग 20 –35 प्रतिशत बायोचार प्राप्त होता है।

2. ड्रम विधि द्वारा बायोचार बनाना

ड्रम विधि ढेर विधि से अधिक नियंत्रित और बेहतर परिणाम देने वाली तकनीक है। इसके लिए लोहे का ड्रम लें। ड्रम के नीचे 4–6 छोटे छेद गैस निकलने के लिए कर दें। सूखी सामग्री ड्रम में भरकर ऊपर से आग लगाएं। ड्रम के अंदर तापमान 400–600°C तक पहुँच सकता है। यह प्रक्रिया 2 से 5 घंटे में पूरी हो जाती है। जब धुआँ कम हो जाए, तब ड्रम के छेद बंद कर दें और उसे स्वाभाविक रूप से ठंडा होने दें। इस विधि से 25–40 प्रतिशत तक बायोचार प्राप्त होता है। इसकी गुणवत्ता समान और बेहतर होती है।

बायोचार की उपयोग की अनुशंसित मात्राः

सामान्यतः बायोचार की 5–10 टन प्रति हेक्टेयर मात्रा उपयुक्त मानी जाती है।

प्रयोग विधिः खेत की जुताई के समय मिट्टी में मिलाएं। गोबर की खाद या कम्पोस्ट के साथ मिलाकर डालने से बेहतर परिणाम मिलते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

निष्कर्षः

बायोचार एक प्रभावी और टिकाऊ मिट्टी सुधारक है, जो सतत कृषि और फसल उत्पादन वृद्धि के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। लगातार गहन खेती और रासायनिक उर्वरकों के अति प्रयोग से मिट्टी में जैविक कार्बन कम हो रहा है, जिससे उर्वरता और जल धारण क्षमता प्रभावित होती है। बायोचार मिट्टी में स्थिर कार्बन जोड़कर इसकी संरचना, पोषक तत्व उपलब्धता और जल धारण क्षमता बढ़ाता है। इसकी छिद्रयुक्त संरचना लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान करती है। इससे नाइट्रोजन स्थिरीकरण और फास्फोरस घुलनशीलता बेहतर होती है। बायोचार फसल की अंकुरण दर, पौधों की ऊँचाई और जैव द्रव्यमान में सुधार करता है और सूखा सहनशीलता बढ़ाता है। इसे खेत की जुताई या गोबर/कम्पोस्ट के साथ मिलाकर प्रयोग किया जा सकता है। उचित मात्रा और वैज्ञानिक तरीके से उपयोग करने पर यह किसानों की आय, मिट्टी की सेहत और पर्यावरण संरक्षण में दीर्घकालिक योगदान देता है।

टिकाऊ कृषि के लिए संशोधित जैविक कीटनाशक

मुकेश चन्द भठेश्वर एवं मिना चौधरी
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

कृषि क्षेत्र में कीट एवं रोग प्रबंधन लंबे समय से किसानों तथा कृषि वैज्ञानिकों के समक्ष एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में उपस्थित रहा है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इनके नियंत्रण हेतु रासायनिक कीटनाशकों का व्यापक उपयोग किया जा रहा है, जो आर्थिक रूप से महंगे होने के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य, मृदा उर्वरता, भूमिगत जल स्रोतों, फसल की गुणवत्ता तथा पर्यावरणीय संतुलन पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं। इसके विपरीत, जैविक कीटनाशक प्राकृतिक एवं स्थानीय संसाधनों से निर्मित होते हैं। ये न केवल कीट एवं रोगों के प्रभाव को नियंत्रित करते हैं, बल्कि मृदा की जैविक सक्रियता और उर्वरता में भी वृद्धि करते हैं। इनका उपयोग किसानों की बाजार निर्भरता को कम करता है तथा उत्पादन लागत में कमी लाकर टिकाऊ कृषि प्रणाली को प्रोत्साहित करता है। अतः किसानों द्वारा अपनाए गए सरल, व्यवहारिक एवं प्रमाणित जैविक उपायों के माध्यम से फसलों को कीट एवं रोगों से होने वाली क्षति को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है।

कीट नियंत्रण के लिए आवश्यक सावधानियाँ एवं उपाय : उच्च गुणवत्ता वाले देशी बीजों तथा जैविक कम्पोस्ट खादों का उपयोग करना अत्यंत आवश्यक है। मृदा में जैविक तत्वों की मात्रा बढ़ाकर केंचुओं एवं लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण किया जाना चाहिए, जिससे मृदा की संरचना, उर्वरता तथा फसल की रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि होती है। कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण एवं संवर्धन प्रभावी कीट प्रबंधन का महत्वपूर्ण अंग है। पक्षी, मेंढक, सर्प तथा विभिन्न मित्र कीट जैसे कीटभक्षी जीवों के लिए अनुकूल पारिस्थितिक परिस्थितियाँ विकसित की जानी चाहिए तथा कृषि क्षेत्र में जैव विविधता को बनाए रखना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, खेत के एक भाग में ऐसी फसलों का रोपण किया जा सकता है जो कीटभक्षी जीवों को आकर्षित करें अथवा हानिकारक कीटों को दूर रखने में सहायक हों। साथ ही, फसल का नियमित निरीक्षण एवं अवलोकन करते रहना चाहिए, ताकि कीट या रोग के प्रारंभिक लक्षणों की पहचान कर समय पर उचित नियंत्रण उपाय अपनाए जा सकें।

कीट प्रबंधन के प्रभावी और आसान तरीके

नीम तेल का छिड़काव :नीम तेल का छीडकाव कीटों जैसे माहू, सफेद मक्खी, थ्रिप्स और छोटे रस चूसने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए अत्यंत प्रभावी है। इसे खेत में छिड़काव करने के लिए 0.5 से 1 प्रतिशत की सांद्रता (प्रति लीटर पानी 5 से 10 मिलीलीटर नीम तेल) पर्याप्त होती है, साथ में 1 से 2 ग्राम देसी साबुन या लिक्विड साबुन मिलाकर तेल को पानी में अच्छी तरह घोल दें। फूल आने की अवस्था में मधुमक्खियों की सक्रियता के समय छिड़काव न करें और हमेशा घोल ताजा बनाकर ही उपयोग करें।

नीम की पत्तियाँ : एक हेक्टेयर (लगभग 2.47 एकड़) भूमि में छिड़काव के लिए लगभग 25 से 30 किलोग्राम पत्तियों की आवश्यकता होगी। यह घोल कवक जनित रोगों, सुंडी, माहू आदि कीटों के नियंत्रण में अत्यंत लाभकारी सिद्ध होता है।

नीम की गिरीः नीम की गिरी का 20 लीटर घोल तैयार करने के लिए 1 किलो नीम के बीजों के छिलके उतारकर गिरी को अच्छी प्रकार से कूटें। ध्यान रहे कि इसका तेल न निकले। कुटी हुई गिरी को एक पतले कपड़े में बांधकर रातभर 20 लीटर पानी में भिंगो दें। अगले दिन इस पोटली को मसल मसलकर निचोड़ दें व इस पानी को छान लें। इस पानी में 20 ग्राम देसी साबुन या 50 ग्राम रीठे का घोल मिला दें। यह घोल दूध के समान सफेद होना चाहिए। इस घोल को कीट व फुफंद नाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है।

नीम की खली का घोलः एक हेक्टेयर की खड़ी फसल में 150 लीटर नीम की खली का घोल का छिड़काव करें। 250 लीटर घोल बनाने के लिए किलोग्राम नीम की खली को 150 लीटर पानी में एक पतले कपड़े में पोटली बनाकर रातभर के लिए भिगो दें। अगले दिन इसे मसलकर व छानकर छिड़काव करें। यह बहुत ही प्रभावकारी कीट व रोग नियंत्रक है।

बवेरिया बेसियाना : बवेरिया बेसियाना एक जैविक कीटनाशी फफूंदी है, जो विशेष रूप से कीटों पर संक्रमण करके उन्हें मारती है। यह मानव और पौधों के लिए सुरक्षित है। विशेषकर रस चूसने वाले कीटों और छोटे छेदक कीटों के नियंत्रण में प्रभावी।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

ट्राइकोडर्मा: ट्राइकोडर्मा एक लाभकारी फफूंदी है, जो मृदा में पाए जाने वाले हानिकारक फफूंदों जैसे फाइटोफ्थोरा, फुसैरियम, रूट रॉट आदि को दबाकर फसल की रक्षा करती है। यह जैविक कीट एवं रोग नियंत्रण में प्रमुख भूमिका निभाता है। मिट्टी में लगाने के लिए : 10 से 20 ग्राम ट्राइकोडर्मा पाउडर प्रति पौधा मिट्टी में डालें। रोपाई या प्रत्यारोपण से पहले पौधों की जड़ के आसपास मिलाएँ।

लहसुन मिर्च, प्याज आदि की पौध में लगने वाले कीड़ों की रोकथाम के लिए लहसुन का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए 1 किलो लहसुन तथा 100 ग्राम देसी साबुन को कूटकर 5 ली० पानी के साथ मिला देतें हैं व फिर पानी को छानकर इसका छिड़काव करते है।

तम्बाकू व नमक: सब्जियों की फसल में किसी भी कीट व रोग की रोकथाम के लिए 100 ग्राम तबाकू व 100 ग्राम नमक को 5 ली० पानी में मिलाकर छिड़कें। इसको और प्रभावी बनाने के लिए 20 ग्राम साबुन का घोल तथा 20 ग्राम बुझा चूना मिलाएँ।

गाय के गोबर का घोल: गाय के गोबर का सार बनाने के लिए 1 किलो गोबर को 10 ली० पानी के साथ मिलाकर टाट के कपड़े से छानें। यह पत्तियों पर लगने वाले माहू, सैनिक कीट आदि हेतु प्रभावी है।

दीमक की रोकथाम: बुबाई के समय एक हेक्टेयर (लगभग 2.47 एकड़) खेत में 100 किलो नीम की खल डालें। नागफनी की पत्तियाँ 25 किलो, लहसुन 5 किलो, नीम के पत्ते 5 किलो को अलग–अलग पीसकर 50 लीटर पानी में उबाल लें। ठंडा होने पर उसमें 5 लीटर मिट्टी का तेल मिलाकर एक हेक्टेयर जमीन में डालें। इसे खेत में सिंचाई के समय डाल सकते हैं।

चूहों का नियंत्रण: कच्चे अखरोट के छिलके निकालकर उन्हें बारीक पीसकर चटनी बना लें। इस चटनी के साथ आटे की छोटी–छोटी गोलियों को फसल के बीच–बीच व चूहे के बिलों में रखें। चूहे यह गोलियाँ खाने से मर जाते हैं। इसके अतिरिक्त देसी पपीते के छिलके या घोड़े या खच्चर की लीद को चूहों के बिलों के पास व खेतों में डालने से चूहे भाग जाते हैं या मर जाते हैं।

जैविक बाड़: कीटों एवं रोगों के नियंत्रण के लिए खेतों तथा फलोद्यानों में औषधीय एवं कीटरोधी पौधों की जैविक बाड़ अत्यंत प्रभावी सिद्ध होती है। खेत या बगीचे की मेढ़ों पर गेंदा, तुलसी, नीम, करंज, लेमनग्रास जैसे पौधे लगाने से हानिकारक कीटों की संख्या कम होती है तथा जैव विविधता बनी रहती है। फलोद्यानों में पेड़ों को अनावश्यक रूप से काटना या जलाना नहीं चाहिए, क्योंकि ये पेड़ प्राकृतिक कीटनाशी का कार्य करते हैं और पक्षियों एवं लाभकारी जीवों को आश्रय प्रदान कर फसल की सुरक्षा में सहायक होते हैं।

निष्कर्ष : संशोधित जैविक कीटनाशक रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में कम अवशेष छोड़ते हैं। मिट्टी की जैविक सक्रियता एवं उर्वरता में वृद्धि करते हैं। लाभकारी जीवों एवं परागणकर्ताओं पर न्यूनतम दुष्प्रभाव डालते हैं। उत्पादन लागत में कमी एवं टिकाऊ कृषि प्रणाली को प्रोत्साहित करते हैं।

खेत से बाजार तक मजबूती की पहल: प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना

सोनू जैन, पी.एस. शेखावत, शिवराज कुमावत एव शोभना बिश्नोई
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय जोबनेर

भारतीय अर्थव्यवस्था में खेती का अहम हिस्सा बना हुआ है, और यह देश की रीढ़ की हड्डी बनी हुई है। सकल घरेलू उत्पाद में इसका योगदान लगभग 18 प्रतिशत है, फिर भी खेती की उपज के स्टोरेज, बचाव और प्रसंस्करण के लिए बुनियादी ढ़ाँचे में चुनौतियां हैं। खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय के अनुसार 2023 में भंडारण, प्रसंस्करण और परिवहन में कमी के कारण देश को हर साल ₹90,000 करोड़ से ज्यादा की उपज का नुकसान होता है। सितंबर 2025 में पंजाब में आई बाढ़ के दौरान साफ तौर पर दिखा, जहां भारी बारिश ने फसलों को नष्ट कर दिया और आपूर्ति श्रृंखला में रुकावट पैदा कर दी, जिससे लुधियाना और पूरे राज्य के स्थानीय बाजारों में फलों और सब्जियों की भारी कमी हो गई। लगातार बर्बादी और अचानक कमी यह दिखाती है कि भारत की खेती की आपूर्ति श्रृंखला कितनी नाजुक बनी हुई है।

प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना: प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना, 2017 में शुरू की गई, एक केंद्रीय क्षेत्र योजना है जिसे खाद्य प्रसंस्करण उद्योग मंत्रालय ने लागू किया है। इसका मकसद खेती की बर्बादी को कम करके और किसानों के लिए बेहतर आमदनी पक्का करके भारत में एक आधुनिक खाद्य प्रसंस्करण पारिस्थितिकी तंत्र बनाना है। यह योजना कई चल रही योजनाओं को एक प्लेटफॉर्म पर एक साथ लाती है और उन्हें सही बनाती है। यह खेत से बाज़ार के बीच के लिंक को जोड़ती है और छोटे और छोटे किसानों को बेहतर कीमत दिलाकर उन्हें मज़बूत बनाने की कोशिश करती है। साथ ही, भारतीय उत्पादों को दुनिया भर में प्रतिस्पर्धी बनाने के लिए खाद्य सुरक्षा और गुणवत्ता आश्वासन को आगे बढ़ाती है। अपने संकलित दृष्टिकोण के साथ, प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना का मकसद खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र को ग्रामीण विकास, रोज़गार पैदा करने और कृषि निर्यात के लिए एक विकास इंजन में बदलना है।

प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना की मुख्य विशेषताएँ

- **मेगा फूड पार्क:** मेगा फूड पार्क, किसानों, प्रोसेसर और खुदरा विक्रेता को एक पारिस्थितिकी तंत्र के तहत एक साथ लाया जाता है ताकि खेत से बाज़ार तक मूल्य श्रृंखला बनाई जा सके, किसानों की आमदनी बढ़ाई जा

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

सके और प्रसंस्करण में निजी निवेश को आकर्षित किया जा सके। ये बड़ी सुविधाएँ फिर क्लस्टर दृष्टिकोण के आधार पर खाद्य प्रसंस्करण उद्योगों. के लिए सामान्य बुनियादी ढांचे देती हैं।

- **एकीकृत शीत श्रृंखला और मूल्य संवर्धन अवसंरचनाः** इसका उद्देश्य कटाई के बाद के नुकसानों को कम करना है, विशेष रूप से फल, सब्जियां, डेयरी, पोल्ट्री और मत्स्य पालन जैसी नाशवान वस्तुओं में। यह किसानों को सीधे बाजारों और खुदरा श्रृंखलाओं से जोड़ता है,
- **खाद्य प्रसंस्करण और संरक्षण क्षमताओं का निर्माण/विस्तारः** खाद्य प्रसंस्करण में छोटे और मध्यम उद्यमों (एसएमई) को प्रोत्साहित करने, और उत्पादों के शेल्फ जीवन को बढ़ाने के लिए आधुनिक पैकेजिंग, संरक्षण और प्रसंस्करण प्रौद्योगिकियों जैसी सुविधाओं द्वारा भारतीय कृषि उत्पादों की प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाने के लिए यह पहल शुरू की गई है।
- **कृषि प्रसंस्करण क्लस्टर (एपीसी):** प्रसंस्करण इकाइयाँ उत्पादन क्षेत्रों के पास स्थापित की जाती हैं राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मानकों का पालन पक्का करने और भारतीय प्रसंस्कृत भोजन में उपभोक्ता का भरोसा बनाने के लिए अत्याधुनिक प्रयोगशाला परीक्षण, कठोर प्रमाणीकरण और व्यापक गुणवत्ता नियंत्रण केंद्र बनाना।
- **मानव संसाधन और उद्यमिता विकासः** यह खाद्य प्रसंस्करण क्षेत्र में कुशल श्रम की ज़रूरत को पूरा करता है। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम, उद्यमशीलता विकास की कोशिशों और क्षमता निर्माण कार्यशाला को फ़ंड करता है।

प्रमुख चुनौतियाँः प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना (पीएमकेएसवाई) कई चुनौतियों का सामना कर रही है, जो इसके पूरे असर को कम करती हैं।

- **लागू करने में देरीः** 40 से ज़्यादा मेगा फूड पार्क को मंजूरी मिल चुकी है, और कुछ पहले से ही चालू हैं। ज़मीन खरीदने, मंजूरी और फ़ाइनेंसिंग की दिक्कतों की वजह से देरी होती है, जिससे किसानों और प्रोसेसर तक फ़ायदा पहुँचने की रफ़्तार धीमी हो जाती है।
- **अलग–अलग इलाकों में फैलावः** पीएमकेएसवाई के तहत प्रोजेक्ट कुछ ऐसे राज्यों में हैं जिनका इंडस्ट्रियल बेस मज़बूत है और इंफ़्रास्ट्रक्चर बेहतर है, जैसे महाराष्ट्र, गुजरात और आंध्र प्रदेश। इसके उलट, पूर्वी और उत्तर–पूर्वी राज्यों में, जहाँ फ़सल कटाई के बाद होने वाला नुकसान सबसे ज़्यादा है, कमज़ोर इंफ़्रास्ट्रक्चर और कम प्राइवेट हिस्सेदारी की वजह से इसे कम अपनाया गया है।
- **किसानों में कम जानकारीः** कई छोटे किसानों को इस स्कीम के बारे में पता नहीं है या उनके पास कोल्ड चेन और प्रोसेसिंग यूनिट से सीधे फ़ायदा उठाने के लिए इंस्टीट्यूशनल कैपेसिटी की कमी है।
- **वित्तीय और प्रशासनिक समस्याऐंः** एंटरप्रेन्योर्स को क्रेडिट लेने, कम्प्लायंस स्टैंडर्ड्स को पूरा करने और अप्रूवल के लिए ब्यूरोक्रेटिक प्रोसेस से गुजरने में मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, जिससे प्राइवेट इन्वेस्टमेंट में कमी आती है।
- **क्षमता उपयोग की समस्याएंः** ऑपरेशनल मेगा फूड पार्क्स और कोल्ड चेन प्रोजेक्ट्स में, क्षमता उपयोग अक्सर उम्मीद से कम होता है, क्योंकि फार्म–टू–मार्केट इंटीग्रेशन कमजोर होता है और कच्चे माल की पक्की सप्लाई पाने में मुश्किलें आती हैं।
- **निर्यात प्रतिस्पर्धात्मकता की चिंताएंः** पीएमकेएसवाई ने फूड सेफ्टी और क्वालिटी एश्योरेंस इंफ्रास्ट्रक्चर में सुधार किया है, लेकिन कम्प्लायंस गैप के कारण कुछ मार्केट में इंडियन फूड एक्सपोर्ट्स को रिजेक्शन का सामना करना पड़ रहा है।

प्रभावी कार्यान्वयन में सुधार के लिए सुझाव

- **किसानों के साथ लिंकेज मजबूत करेंः** छोटे और मार्जिनल किसानों को प्रोसेसिंग क्लस्टर्स और मेगा फूड पार्क्स से जोड़ने के लिए डेडिकेटेड सिस्टम बनाए जाने चाहिए।
- **रीजनल बैलेंस में सुधारः** पूर्वी और नॉर्थईस्ट राज्यों में इन्वेस्टमेंट को अट्रैक्ट करने के लिए ज्यादा इंसेंटिव्स, टारगेटेड सब्सिडी और स्पेशल इंफ्रास्ट्रक्चर पैकेज की जरूरत है, जहां फूड वेस्टेज ज्यादा है और इंफ्रास्ट्रक्चर कमजोर है।
- **फाइनेंसिंग और अप्रूवल को आसान बनानाः** एडमिनिस्ट्रेटिव प्रोसेस को आसान बनाना और SMEs और एंटरप्रेन्योर्स के लिए कम इंटरेस्ट वाले क्रेडिट और रिस्क–शेयरिंग मैकेनिज्म तक पहुंच बनाना, प्राइवेट पार्टिसिपेशन को और बढ़ावा दे सकता है।
- **मॉनिटरिंग और कैपेसिटी यूटिलाइजेशन को बढ़ानाः** इम्प्लीमेंटेशन प्रोग्रेस, फैसिलिटीज के यूटिलाइजेशन और ग्राउंड लेवल पर नतीजों को ट्रैक करने के लिए मजबूत मॉनिटरिंग मैकेनिज्म की जरूरत है। फैसिलिटीज को अच्छे से चलाने और सस्टेनेबिलिटी को बेहतर बनाने के लिए पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप का फायदा उठाया जा सकता है।
- **स्किल डेवलपमेंट और इनोवेशन पर फोकसः** फूड टेक्नोलॉजी, पैकेजिंग और लॉजिस्टिक्स में ट्रेनिंग प्रोग्राम को बढ़ाने से एक स्किल्ड वर्कफोर्स बन सकती है। वैल्यू–एडेड प्रोडक्ट्स में इनोवेशन को बढ़ावा देने से घरेलू कंजम्पशन और एक्सपोर्ट कॉम्पिटिटिवनेस दोनों बढ़ेगी।
- **डिजिटल इंटीग्रेशन और ट्रांसपेरेंसीः** किसान रजिस्ट्रेशन, सप्लाई एग्रीगेशन और प्रोसेसिंग यूनिट्स की मॉनिटरिंग के लिए डिजिटल प्लेटफॉर्म शुरू करने से एफिशिएंसी और ट्रांसपेरेंसी में सुधार हो सकता है।

निष्कर्षः प्रधानमंत्री किसान संपदा योजना का मूल उद्देश्य "खेत से बाजार तक" सुदृढ़ संपर्क स्थापित करना है। यह योजना केवल उत्पादन बढ़ाने पर नहीं, बल्कि मूल्य संवर्धन, प्रसंस्करण, सुरक्षित भंडारण और गुणवत्ता सुनिश्चित करने पर बल देती है। हालांकि, इसकी लंबे समय की सफलता लागू करने में देरी, कैपेसिटी यूटिलाइज़ेशन और इंफ्रास्ट्रक्चर में असमान कमियों जैसी चुनौतियों को हल करने पर निर्भर है'।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

राजस्थान में प्राकृतिक खेतीः चुनौतियाँ, अवसर और भविष्य के अनुसंधान दिशा–निर्देश

हेमराज बोदल्या[1] एवं महेन्द्र कुमार[2]
[1]स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर,
[2]कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर,

परिचयः भारत में इसे सुभाष पालेकर (जीरो बजट नैचुरल फार्मिंग) द्वारा लोकप्रिय किया गया। प्राकृतिक खेती एक रासायनिक–रहित, पारिस्थितिक खेती की विधि है जो कृत्रिम उर्वरकों, कीटनाशकों और भारी मशीनरी के बजाय प्राकृतिक प्रक्रियाओं, स्थानीय संसाधनों और पारंपरिक ज्ञान पर आधारित है। इसका उद्देश्य प्रकृति के खिलाफ नहीं बल्कि प्रकृति के साथ काम करना है और प्राकृतिक खेती के मुख्य सिद्धांत हैंः कोई रासायनिक उर्वरक या कीटनाशक नहीं, स्थानीय और प्राकृतिक सामग्री का उपयोग, मिट्टी को जीवित प्रणाली के रूप में देखना, मिश्रित फसल और जैव विविधता, मल्चिंग और मिट्टी में न्यूनतम हस्तक्षेप।

प्राकृतिक खेती का महत्व

1. **पर्यावरण संरक्षण :** मिट्टी क्षरण को कम करता है, जल प्रदूषण को रोकता है, जैव विविधता को बढ़ाता है, पारिस्थितिक संतुलन बनाए रखता है।
2. **मिट्टी की सेहत में सुधार :** कार्बनिक पदार्थ बढ़ाता है, लाभकारी सूक्ष्मजीवों को प्रोत्साहित करता है, मिट्टी की संरचना और उर्वरता में सुधार करता है।
3. **किसानों के लिए लागत में कमी :** महंगे रासायनिक इनपुट को समाप्त करता है, स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करता है, बाहरी बाजारों पर निर्भरता कम करता है।
4. **स्वास्थ्य लाभ :** रसायन–मुक्त खाद्य पदार्थ पैदा करता है, कीटनाशक अवशेषों से जुड़े स्वास्थ्य जोखिम को कम करता है।
5. **सतत् कृषि :** दीर्घकालिक उत्पादकता बनाए रखता है, भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करता है।
6. **जलवायु सहनशीलता :** कार्बन अवशोषण बढ़ाता है, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करता है।

राजस्थानी संदर्भ में प्राकृतिक खेती : राजस्थान की कृषि मुख्य रूप से बारिश पर निर्भर है, विशेष रूप से पश्चिमी और केंद्रीय क्षेत्रों में। राज्य में अत्यधिक असमान वर्षा होती है, जो रेगिस्तान क्षेत्रों में लगभग 100 मिमी से लेकर दक्षिण–पूर्वी जिलों में लगभग 650 मिमी तक होती है। उच्च तापमान, रेतीली मिट्टियाँ, बार–बार सूखा और लवणीयता की समस्या इस क्षेत्र की अधिकांश भूमि की विशेषताएँ हैं। प्रमुख फसलों में बाजरा, गेहूँ, सरसों, चना, दालें, जीरा, धनिया और अन्य मसाले शामिल हैं। जबकि ग्रीन रिवोल्यूशन ने श्रीगंगानगर और पूर्वी राजस्थान के कुछ हिस्सों जैसे सिचाई वाले क्षेत्रों में उत्पादन में सुधार किया, कई क्षेत्र अभी भी कम उत्पादन की समस्या से जूझ रहे हैं। रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग भूमि में कार्बनिक पदार्थ की कमी और सूक्ष्म पोषक तत्वों की असंतुलन का कारण बन गया है। इसके अलावा, कुछ जिलों में भूजल का क्षरण भी गंभीर चिंता का विषय बन गया है। हाल के वर्षों में, राजस्थान ने अपनी कृषि भूमि में प्राकृतिक खेती को अपनाने के लिए सक्रिय कदम उठाए हैं। राष्ट्रीय प्राकृतिक कृषि मिशन (एनएमएनएफ) और राज्य पहलों के तहत, किसानों को पारिस्थितिक प्रथाओं की ओर ले जाने के लिए वित्तीय सहायता, क्लस्टर–आधारित मॉडल और क्षमता निर्माण कार्यक्रम जैसी पहल लागू की जा रही हैं। हाल की रिपोर्टों के अनुसार, राजस्थान में 81,000 हेक्टेयर से अधिक पंजीकृत प्राकृतिक/जैविक कृषि क्षेत्र है, जो इसे भारत के अग्रणी राज्यों में से एक बनाता है। राजस्थान में प्राकृतिक और जैविक खेती कई क्षेत्रों में महत्वपूर्ण गति प्राप्त कर रही है, जिसमें कोटपूतली–बहरोर जिले के बामनवास कांकर पंचायत ने बढ़त बनाई है, जिसे राज्य की पहली पूरी तरह से जैविक प्रमाणित पंचायत के रूप में मान्यता प्राप्त है।

प्राकृतिक खेती की चुनौतियाँ

1. पर्यावरणीय और कृषि–जलवायु संबंधी बाधाएँः राजस्थान की शुष्क जलवायु, विशेषकर थार रेगिस्तान और उत्तरी जिलों में, जल संकट और असामयिक वर्षा का कारण बनती है। प्राकृतिक खेती की प्रथाएँ अक्सर मिट्टी की जैविक गतिविधि और पानी की उपलब्धता पर निर्भर करती हैं, जिससे जहाँ सिंचाई सीमित है वहाँ इन्हें बड़े पैमाने पर अपनाना मुश्किल हो जाता है।

2. संक्रमण लागत और किसानों की धारणाएँः हालाँकि प्राकृतिक खेती कृत्रिम उर्वरक और कीटनाशकों को समाप्त करके दीर्घकालिक लागत को कम करती है, संक्रमण के चरण में फसल की अनिश्चितताएँ और अल्पकालिक आर्थिक जोखिम हो सकते हैं। कुछ किसान कम उत्पादकता या अस्थिर उपज के भय से परंपरागत इनपुट छोड़ने में हिचकिचाते हैं। क्योंकि कई किसान छोटे भू–भाग पर काम करते हैं और मौसमी आय पर काफी निर्भर रहते हैं, इसलिए मामूली उपज की हानि भी आर्थिक रूप से जोखिमपूर्ण हो सकती है। पर्याप्त समर्थन प्रणाली के बिना, यह अनिश्चितता अपनाने के लिए हतोत्साहित करती है।

3. बाजार और प्रमाणन बाधाएँः मुख्य चुनौतियों में से एक प्राकृतिक उत्पादों के लिए मजबूत बाजार कड़ियों का अभाव है। किसान रासायनिक मुक्त फसलें उगा सकते हैं, लेकिन सीमित प्रमाणन प्रणाली और कमजोर आपूर्ति श्रृंखलाओं के कारण उन्हें प्रीमियम कीमत प्राप्त करने में कठिनाई होती है। औपचारिक जैविक प्रमाणन प्रक्रियाएँ छोटे किसानों के लिए महंगी और जटिल हो सकती हैं। सुनिश्चित बाजार और मूल्य प्रोत्साहनों के बिना, किसान प्राकृतिक खेती की ओर बदलाव करने से आर्थिक लाभ नहीं देख सकते।

4. संसाधन और विस्तार अंतरालः हालाँकि सरकारी कार्यक्रम प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देते हैं, जागरूकता के स्तर जिलों में भिन्न होते हैं। कई किसानों के पास तकनीकी ज्ञान, नियमित प्रशिक्षण कार्यक्रम और जैव–इनपुट उत्पादन सुविधाओं

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

की सीमित उपलब्धता है, जो व्यापक अपनाने में बाधा डालती है। किसानों के पास गुणवत्तापूर्ण जैविक बीज, जैव उर्वरक और समय पर सलाहकार सेवाओं तक पहुंच नहीं हो सकती।

5. सामाजिक और व्यवहारिक प्रतिरोधः कृषि प्रथाएँ सामाजिक आदतों और सामुदायिक मानदंडों में गहराई से जुड़ी हुई हैं। कई किसान दशकों से रासायनिक उर्वरक और कीटनाशकों का उपयोग कर रहे हैं और उन्हें उच्च उत्पादकता से जोड़ते हैं। उन्हें वैकल्पिक तरीकों को अपनाने के लिए मनाना निरंतर जागरूकता अभियानों और सफल प्रदर्शन मॉडल की आवश्यकता है।

प्राकृतिक खेती के अवसर

1. मिट्टी के स्वास्थ्य की मरम्मतः राज्य में मिट्टी का क्षरण एक गंभीर समस्या है। प्राकृतिक खेती मिट्टी में कार्बन, सूक्ष्मजीव गतिविधि और पोषक तत्वों के चक्रण को बढ़ाती है। समय के साथ, स्वस्थ मिट्टी जल धारण क्षमता को बेहतर बनाती है और सिंचाई पर निर्भरता को कम करती है। सूखा प्रभावित क्षेत्रों में यह लचीलापन काफी हद तक बढ़ा सकता है।

2. जलवायु परिवर्तन अनुकूलनः राजस्थान जलवायु परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। बढ़ते तापमान और अस्थिर वर्षा पैटर्न कृषि स्थिरता के लिए खतरा पैदा करते हैं। जैव विविधता और मिट्टी की नमी संरक्षण पर जोर देने वाली प्राकृतिक खेती, जलवायु प्रतिरोधक क्षमता को मजबूत कर सकती है। मिश्रित फसल प्रणाली कुल फसल विफलता के जोखिम को कम करती है।

3. इनपुट लागत में कमीः रासायनिक उर्वरक, कीटनाशकों और संकर बीज उत्पादन लागत में वृद्धि का कारण बनते हैं। प्राकृतिक खेती स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों पर निर्भर करके खर्च कम करती है। कम इनपुट लागत शुद्ध आय को बढ़ा सकती है, विशेषकर छोटे और सीमांत किसानों के लिए जो अक्सर ऋण के दबाव में काम करते हैं।

4. बढ़ती उपभोक्ता मांगः शहरी उपभोक्ता रासायनिक मुक्त और स्थायी रूप से उत्पादित खाद्य सामग्री को बढ़–चढ़कर पसंद कर रहे हैं। राजस्थान, जो मसालों, बाजरे और दलहन उत्पादित करता है, प्राकृतिक उत्पादों के लिए राष्ट्रीय और निर्यात बाजारों में अपना योगदान दे सकता है। जीरा और धनिया जैसी विशेष फसलों की अच्छी बाजार क्षमता है अगर इन्हें प्रभावी ब्रांडिंग और प्रमाणन प्रणालियों से समर्थन मिले।

5. सरकारी समर्थनः राजस्थान सरकार का 2025–26 का बजट प्राकृतिक खेती के समर्थन को प्रमुखता से दर्शाता है। 2. 5 लाख किसानों को प्राकृतिक खेती समर्थन योजनाओं में शामिल किया जा रहा है। वित्तीय प्रोत्साहनों में प्राकृतिक खेती अपनाने वाले किसानों को प्रति एकड़ लगभग ₹4000 और जैव–इनपुट संसाधन केंद्रों की स्थापना शामिल है।

6. स्थानीय फसलों का पुनरुत्थानः राजस्थान की जलवायु के लिए बाजरा जैसी पारंपरिक फसलें अच्छी तरह अनुकूल हैं। बाजरे और पोषण सुरक्षा पर राष्ट्रीय स्तर पर नए जोर के साथ, प्राकृतिक खेती उन स्थानीय किस्मों को शामिल कर सकती है जिनके लिए कम पानी की आवश्यकता होती है और जो कीटों और रोगों के प्रति अधिक प्रतिरोधी होती हैं।

भविष्य के शोध दिशा–निर्देश

1. दीर्घकालिक तुलना आधारित उपज अध्ययनः राजस्थान की कृषि–जलवायु परिस्थितियों में प्राकृतिक और पारंपरिक खेती प्रणालियों की दीर्घकालिक उत्पादकता की तुलना करने वाले वैज्ञानिक अध्ययन आवश्यक हैं। उपज की स्थिरता, मिट्टी के स्वास्थ्य के मानदंड और आर्थिक प्रतिलाभ पर डेटा साक्ष्य–आधारित अंतर्दृष्टि प्रदान करेंगे।

2. जल प्रबंधन नवाचारः प्राकृतिक खेती को जल–कुशल सिंचाई विधियों जैसे ड्रिप इरिगेशन और वर्षा जल संचयन के साथ एकीकृत करने पर शोध शुष्क क्षेत्रों में उत्पादकता बढ़ा सकता है। मल्चिंग प्रथाओं के तहत मिट्टी की नमी गतिशीलता पर अध्ययन भी उपयोगी होगा।

3. फसल और किस्म का चयनः राजस्थान के विभिन्न कृषि–जलवायु क्षेत्रों में प्राकृतिक खेती के लिए सबसे उपयुक्त फसल किस्मों की पहचान करना महत्वपूर्ण है। अनुसंधान को सूखा–प्रतिरोधी, कीट–प्रतिरोधी स्थानीय किस्मों और विविधीकरण रणनीतियों पर केंद्रित होना चाहिए।

4. कीट और रोग प्रबंधनः स्थानीय रूप से अनुकूल जैविक कीट नियंत्रण विधियों में और अनुसंधान करने से प्राकृतिक खेती प्रणालियों को मजबूत किया जा सकता है। क्षेत्र–विशिष्ट जैव–संयोजन विकसित करने से प्रभावशीलता बढ़ेगी।

5. आर्थिक और मार्केट अनुसंधानः वैल्यू चेन विकास, उपभोक्ता व्यवहार, प्रमाणन मॉडल और मूल्य प्रीमियम पर अनुसंधान नीति निर्धारण में सहायक हो सकता है। पारम्परिक प्रमाणन के लागत–कुशल विकल्प के रूप में सहभागिता गारंटी प्रणाली का अन्वेषण किया जा सकता है।

6. नीति और संस्थागत विश्लेषणः सरकारी योजनाओं, वित्तीय प्रोत्साहनों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के प्रभाव का मूल्यांकन नीति ढांचे को सुधारने में मदद करेगा। अनुसंधान यह भी आकलन करना चाहिए कि विश्वविद्यालयों, गैर–सरकारी संगठनों और किसान संगठनों के बीच संस्थागत सहयोग अपनाने की दरों को कैसे प्रभावित करता है।

निष्कर्षः प्राकृतिक कृषि राजस्थान में कृषि के लिए एक परिवर्तनकारी दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करती है। यह पारिस्थितिकीय संतुलन, मिट्टी के पुनर्योजीकरण, जैव विविधता और कृत्रिम इनपुट पर कम निर्भरता पर जोर देकर राज्य की पर्यावरणीय वास्तविकताओं के साथ घनिष्ठ रूप से मेल खाती है। जबकि जलवायु संबंधी सीमाएं, बाजार की सीमाएं और संक्रमणकालीन उपज की अनिश्चितताओं जैसी चुनौतियाँ बनी रहती हैं, मिट्टी के स्वास्थ्य, लागत में कमी और जलवायु सहिष्णुता के मामले में दीर्घकालिक लाभ महत्वपूर्ण हैं। प्राकृतिक खेती को बड़े पैमाने पर सफल बनाने के लिए नीति निर्माताओं, शोधकर्ताओं, विस्तार एजेंसियों और किसान समुदायों द्वारा समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है। शोध, बुनियादी ढांचे, प्रशिक्षण और बाजार विकास में निवेश यह निर्धारित करेगा कि प्राकृतिक खेती राजस्थान में एक विशिष्ट प्रथा बनती है या मुख्यधारा की कृषि की रूपरेखा बन जाती है। इसके बावजूद, प्राकृतिक खेती को व्यापक रूप से अपनाने के लिए जलवायु संबंधी बाधाओं को दूर करना, बुनियादी ढांचे को मजबूत करना, भरोसेमंद बाजार सुनिश्चित करना और शोध प्रयासों का विस्तार करना आवश्यक है। विश्वविद्यालयों, सरकारी निकायों, गैर सरकारी संगठनों और किसान समूहों के बीच सहयोगी साझेदारी राज्य में पारंपरिक कृषि के विकल्प के रूप में प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण होगी।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

राजस्थान के शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों में कृषि वानिकी से पशुओं के लिए चारा उत्पादन

धर्मेन्द्र त्रिपाठी, सी.एल. खटीक, झूमर लाल एवं हरफूल सिंह
कृषि अनुसंधान केन्द्र, (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर) फतेहपुर सीकर

भारत का पशुधन क्षेत्र इसकी कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ़ है, जो खाद्य सुरक्षा, ग्रामीण आजीविका और सकल घरेलू उत्पाद में महत्वपूर्ण योगदान देता है। यह क्षेत्र दुनिया की पशुधन आबादी के लगभग 20% और मानव आबादी के 17.5% का भरण–पोषण करता है, जो दुनिया के केवल 2.3% भूमि क्षेत्र में है। हालाँकि, इसके पैमाने और महत्व के बावजूद, भारत लगातार चारे की कमी का सामना कर रहा है। जिसमें हरे चारे के लिए 35.6% सूखी फसल अवशेषों के लिए 10.5% और केंद्रित फीड के लिए 44% का अनुमान है। यह कमी पशुधन उत्पादकता को गंभीर रूप से प्रभावित करती है, जिससे दूध और मांस उत्पादन में कमी आती है और लाखों ग्रामीण आजीविका को खतरा होता है। कई परस्पर जुड़े कारक इस कमी को बढ़ावा देते हैं चारे की खेती के लिए समर्पित सीमित भूमि, पोषण की दृष्टि से खराब फसल अवशेषों पर अत्यधिक निर्भरता, चरागाह भूमि का सिकुड़ना और जलवायु परिवर्तन के बिगड़ते प्रभाव। डेयरी और मांस उत्पादों की बढ़ती मांग के युग में, परिवर्तनकारी दृष्टिकोण के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान करना आवश्यक है। राजस्थान की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि कार्यों एव पशुपालन पर ही निर्भर करती है तथा कृषि के उपरान्त पशुपालन को ही जीविका का प्रमुख साधन माना जा सकता है । राजस्थान में प्रायः सूखे की समस्या रहती है। इसी वजह से पशुओं को पर्याप्त मात्रा में चारा उपलब्ध नहीं हो पाता। राज्य के मरुस्थलीय और पर्वतीय क्षेत्रों में भौगोलिक और प्राकृतिक परिस्थितियों का सामना करने के लिये एकमात्र विकल्प पशुपालन व्यवसाय ही रह जाता है । राज्य में जहाँ एक ओर वर्षाभाव के कारण कृषि से जीविकोपार्जन करना कठिन होता है, वहीं दूसरी ओर औद्योगिक रोजगार के अवसर भी नगण्य हैं। ऐसी स्थिति में ग्रामीण लोगों ने पशुपालन को ही जीवन शैली के रूप में अपना रखा है। पशुपालन व्यवसाय से राज्य की अर्थव्यवस्था अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष घटकों से लाभान्वित होती है। पशुपालन देश के ग्रामीण क्षेत्रों में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है जिससे कृषि पर निर्भर परिवारों को अनुपूरक आय प्राप्त होती है।

जलवायु परिवर्तन और बदलते समय के बावजूद, दुनिया भर के किसान पशुओं के लिए स्थिर चारे के स्रोत के रूप में जंगलों पर निर्भर रहे हैं। वृक्षों की संरचना इस प्रकार अनुकूल होती है कि वे अपनी गहरी जड़ों के आसपास की मिट्टी और पारिस्थितिक स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं, और उनकी पत्तियां और शाखाएं कृषि खाद्य श्रृंखला को लाभ पहुंचा सकती हैं। लगभग 8,000 वर्षों तक, पशु वृक्षों की पत्तियों को खाते और उनमें सोते रहे, जिससे जहाँ भी मनुष्य बसे, वहाँ कार्बन, नाइट्रोजन, खनिज और सूक्ष्मजीवों का जमाव होता रहा। घास के मैदानों और चरागाहों से वृक्ष और झाड़ियाँ इतनी मूल्यवान थीं कि उन्हें काटना उचित नहीं समझा गया इसके बजाय, उन्हें इस तरह से काटा गया कि नई टहनियाँ पशुओं की चरने की ऊँचाई से ऊपर बढ़ हमारे खेत में लगे सभी चारे वाले पेड़ों की छंटाई से निकली पत्तियों को पशु बड़े चाव से खाते हैं। कृषिवानिकी भी चारा फसलों के साथ अरडू, अंजन, खेजड़ी, और मोरस अल्बा जैसे पेड़ों को एकीकृत करके एक व्यवहार्य समाधान प्रस्तुत करते हैं जो जैव विविधता को बढ़ाता है, मिट्टी की संरचना में सुधार करता है और कार्बन पृथक्करण में योगदान देता है। समान रूप से गहन पशुधन संचालन की जरूरतों को पूरा करते हैं। भारत में चारा फसलों के अंतर्गत आने वाला क्षेत्र 86 लाख हेक्टेयर है, जो देश में कृषि योग्य क्षेत्र के पांच प्रतिशत से भी कम है। 20वीं शताब्दी में हरे चारे की आपूर्ति 46 लाख टन बताई गई है, जबकि मांग 1134 लाख टन है। इससे भारत में मांग की तुलना में 65 प्रतिशत की कमी का पता चलता है। इसके अतिरिक्त, भीषण गर्मी के दौरान खेत में उगाई जाने वाली चारा फसलों की कम पैदावार के कारण पशुधन के चारे को लेकर प्रमुख चिंता उत्पन्न होती है। इस स्थिति में, वृक्षों पर उगने वाले चारे पशुधन के लिए एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक चारा स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। विभिन्न वृक्षों पर उगने वाले चारे जैसे अरडू, नीम, अंजन (हार्डविकिया बिन्नाटा), देशी बबूल, खेजड़ी, सुबबुल, ग्लिरिसिडिया, शहतूत आदि, हमारे देश में पशुधन के लिए संभावित चारा स्रोत के रूप में कार्य करते हैं। वृक्षों पर उगने वाले चारे के कई लाभ हैं। जैसे आसानी से उगाए जा सकते है । पूरे वर्ष उपलब्ध रहते हैं। चारे की लागत कम होती है। मिट्टी के गुणों में सुधार होता है। प्रति हेक्टेयर पशुधन उत्पादन बढ़ता है।

कृषिवानिकी पद्धति से चारा उत्पादनः उपलब्ध स्थल एवं स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति के अनुसार कृषि वानिकी विभिन्न स्वरूपों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

कृषि वन पध्दति इस पध्दति में बहुउद्देश्यीय वृक्ष जैसे शीशम, सागौन, नीम, देशी बबूल, खेजड़ी, रोहिडा, देशी बबूल, अंजन (हार्डविकिया बिन्नाटा) के साथ–साथ रिक्त स्थान में खरीफ में ग्वार बाजरा, अरहर, मूंग, उरद, लोबिया मोठ तथा चंवला तथा रबी में गेहूँ, चना, सरसों और अलसी की खेती की जा सकती है। इस पध्दति के अपनाने से इमारती लकड़ी, जलाऊ लकड़ी, खाद्यान्न, दालें व तिलहनों की प्राप्ति होती है। पशुओं को चारा भी उपलब्ध होता है। **वन चरागाह पध्दति** इस प्रणाली में भूमि को चरागाह के रूप में उपयोग करके पशुधन को पाला जाता है। साथ ही इसमें ऐसे वन वृक्षों जिससे चारा मिलता है जैसे अरडू, नीम, अंजन, खेजड़ी आदि की कतारों के मध्य खाली जमीन पर घासें लगाई जाती है। यह प्रणाली विशेष रूप से चारागाह भूमि या पंचायत भूमि तथा बंजर भूमि आदि के लिए बहुत उपयुक्त है। प्रयोगों द्वारा सिद्व हुआ है कि 5X5 मीटर की दूरी पर लगाई नूटन्स झाड़ी की कतारों के बीच धामन घास लगाई जाये तो पशुओं के लिए उच्च गुणवता का चारा प्राप्त हो सकता है। नूटन्स झाड़ी एक स्वतः फैलने वाली झाड़ी है जिनकी पत्तियों में 15 प्रतिशत प्रोटीन पाई जाती है तथा इसे बकरीयॉ बड़े चाव से खाती हैं। यदि झाड़ी की कतारों के बीच धामन घास लगाई जाये तो अकाल की परिस्थितियों में भी 35 से 45 क्विन्टल प्रति हैक्टेर अच्छी किस्म का चारा प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही साथ भूमि का कटाव रूकता है तथा उपजाउ क्षमता मे भी वृद्वि होती है।

कृषि वन चरागाह : यह पध्दति भी बंजर भूमि के लिये उपयुक्त है । इनमें बहुउद्देश्यीय वृक्ष जैसे अरडू, अंजन, खेजड़ी, सिरस, बकाइन, शीशम, देसी बबूल, सूबबूल इत्यादि के साथ खरीफ में तिल, मूंगफली, बाजरा, मूंग, उड़द, लोबिया और बीच–बीच में सूबबूल की झाड़ियां लगा देते है जिनसे चारा प्राप्त् होता है और जब बहुउद्देश्यीय वृक्ष बड़े हो जाते हैं, तो

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

फसलों के स्थान पर वृक्षों के बीच में घास एवं दलहनी चारे वाली फसलों का मिश्रण लगाते हैं इस प्रकार इस पध्दति से चारा, ईंधन इमारती लकड़ी व खाद्यान्न की प्राप्ति होती है ओर बंजर भूमि भी कृषि योग्य हो जाती है।

उद्यान चारा पध्दति : यह पध्दति उन स्थानों के लिये अत्यन्त उपयोगी है जहां सिंचाई के साधन उपलब्ध न हों और श्रमिकों की समस्या भी हो इस पध्दति में भूमि में कठोर प्रवृत्ति के वृक्ष, जैसे–बेर, बेल, अमरूद, जामुन, शरीफा, आंवला इत्यादि उगाकर वृक्षों के बीच में घांस जैसे–अंजन, हाथी घांस, मार्बल के साथ–साथ दलहनी चारे जैसे स्टाइलो, क्लाइटोरिया इत्यादि लगाते हैं इस पध्दति से फल एवं घांस भी प्राप्त् होती है और साथ ही भूमि की उर्वरा शक्ति में वृध्दि होती है इसके अतिरिक्त भूमि एवं जल संरक्षण भी होता है भूमि में कार्बनिक पदाथो की वृध्दि भी होती है

पोलार्डिंग : पोलार्डिंग का मतलब है पेड़ को काटकर एक लंबा ठूंठ छोड़ देना ताकि वह फिर से उग सके। यह कॉपिसिंग के समान है जिसमें ठूंठ को नीचे (जमीन के पास) काटा जाता है, लेकिन पोलार्डिंग में इसे थोड़ा ऊपर (लगभग कंधे की ऊंचाई तक) काटा जाता है ताकि नई वृद्धि चराई की ऊंचाई से ऊपर रहे। आप गर्मियों में चारे की आपूर्ति के लिए पेड़ काटना चाहते हैं, इसलिए सुनिश्चित करें कि आपका पेड़ इतना परिपक्व और मजबूत हो कि अगली वसंत ऋतु में फिर से उग सके। पेड़ की पूरी छंटाई हर 2–6 साल में ही करें, या वैकल्पिक रूप से हर साल 50% शाखाएँ हटा दें।

पेड़ों से पशुओं के लिए स्वास्थ्य लाभ : यह बात कई किसानों को भलीभांति ज्ञात है कि कुछ वृक्ष पशुओं के स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होते हैं। विज्ञान ने अभी तक उनके सभी प्रभावों पर पूर्ण शोध नहीं किया है और अधिकांश जानकारी अनुभवजन्य है, लेकिन वृक्षों में पाए जाने वाले गाढ़े टैनिन (जो छाल में केंद्रित होते हैं) में कृमिनाशक (कीड़े मारने वाले) प्रभाव सिद्ध हो चुके हैं। कुछ पौधे पशुओं की आंत में प्रोटीन के अवशोषण को बढ़ाते हैं, जिससे पशुओं को तेजी से बढ़ने और संक्रमण एवं रोगों से लड़ने में मदद मिलती है। कुछ पेड़ पाचन क्रिया को बेहतर बना सकते हैं, या पेट फूलने या चेहरे के एक्जिमा को रोकने में मदद कर सकते हैं।

कृषिवानिकी में कुछ वृक्षों से चारा उत्पादन

अरडू (महारूख): इसके पत्तों में लगभग 19% कच्चा प्रोटीन और 64% पचने योग्य पोषक तत्व होते हैं । मुख्य रूप से बकरी और भेड़ के लिए बहुत स्वादिष्ट और पौष्टिक माना जाता है। अम्लीय विघ्नकारी फाइबर और उदासीन विघ्नकारी फाइबर क्रमशः 42 और 48% हैं। अरडू के पत्तों को किसान अच्छा चारा मानते हैं। इससे पशुओं को वर्ष भर हरा चारा मिलता रहता है। परिपक्व पत्ते अत्यधिक स्वादिष्ट और पौष्टिक होते हैं, जिन्हें आमतौर पर भेड़ और बकरियों को खिलाया जाता है। वयस्क पशुओं को अरडू के पत्तों का चारा दिया जा सकता है। **कृषि वानिकी** में अरडू 10x10 मीटर के अन्तराल पर लगाया जाता है। मेड़ पर भी 5–7 मीटर की दूरी पर लगा सकते है। यदि अरडू के पेड़ मेड़ पर लगाने हो तो खेत के उतर व की मेड़ पर चाहिये ताकि फसलों को लू व पाला से बचाया जा सके। इसके अलावा अरडू का 8–10 वर्ष का पेड़ 8 से 10 हजार रूपये तक में बिक जाता है।

बोरडी (बेर): **बोरडी** का पाला बकरियों, ऊंटों और भेड़ों के लिए अत्यंत पौष्टिक, हरा–भरा चारा है, जो शुष्क क्षेत्रों में वरदान माना जाता है। इसकी सूखी या ताजी पत्तियां प्रोटीन से भरपूर होती हैं, जो पशुओं को स्वस्थ रखती हैं, दूध उत्पादन बढ़ाती हैं और कांटे व लकड़ी के अतिरिक्त लाभ भी देती हैं। विशेष रूप से बकरियों और ऊंटों के लिए अमृत समान माना जाता है। इसे ताजा खिलाया जा सकता है या सुखाकर लंबे समय तक स्टोर भी किया जा सकता है।

खेजड़ी : खेजड़ी से चारा (लूंम) उत्पादन प्रमुख है जो बकरियों, ऊंटों और भेड़ों का प्रमुख भोजन है। उत्पादन क्षमता एक सामान्य खेजड़ी का पेड़ प्रति वर्ष लगभग 20–25 किलोग्राम सूखा चारा दे सकता है। उत्पादन समय यह गर्मी के महीनों (मार्च से जून) में भी हरा रहता है और चारा देती है चारे के साथ–साथ इसकी फलियाँ(सांगरी) सब्जी के लिए और लकड़ियाँ ईंधन के रूप में काम आती हैं

खेरी (कुमट): कुमट का पेड़ अपनी घनी, कांटेदार पत्तियों और टहनियों के माध्यम से मुख्य रूप से सूखे व बंजर क्षेत्रों में पशुओं के लिए उत्कृष्ट चारा (चारा पत्तियां), गोंद, जलाऊ लकड़ी और खेत की सुरक्षा के लिए बाड़ प्रदान करते हैं इसे मेड़ों पर लगाकर अतिरिक्त आय व संसाधन पाए जा सकते हैं पत्तियां और टहनियाँ कुमट की पत्तियां पशुओं, बीज की फलियां विशेषकर ऊँट, बकरियों और भेड़ों के लिए पौष्टिक चारा हैं पशु चाव से खाते हैं. पत्तियों में लगभग कच्चा प्रोटीन और फाइबर होता है. बीज फली की तुलना कपास खली से भी की जाती है

देशी बबूल: बबूल चारा उत्पादन के लिए लोकप्रिय हैं उपयोग विधि पत्तियों और फलियों को पीसकर खिलाने से पाचन और पोषक तत्वों का अवशोषण बेहतर होता है

सुबबूल: सुबबूल पशु चारे के लिए एक बेहतरीन, तेजी से बढ़ने वाला और प्रोटीन से भरपूर पेड़ है। इसे चारा मशीन भी कहा जा सकता है क्योंकि इसकी पत्तियां मवेशियों के लिए बहुत पौष्टिक होती हैं। उच्च प्रोटीन इसकी पत्तियों में लगभग 21% से अधिक कच्चा प्रोटीन होता है। साल भर हरा यह गर्मी के मौसम में भी फलता–फूलता है, जब हरे चारे की कमी होती है। कंटीहीन यह बबूल जैसा दिखता है लेकिन इसमें कांटे नहीं होते।

नीम : नीम के पेड़ का उपयोग चारे के रूप में विशेषकर सूखे के समय बकरियों और भेड़ों के लिए किया जाता है, क्योंकि इसकी पत्तियों में 12–18% प्रोटीन, फाइबर और खनिज होते हैं। कड़वाहट के कारण इसे सीधे कम पसंद करते हैं, इसलिए इसे सुखाकर, अन्य चारे में मिलाकर या खली के रूप में खिलाना बेहतर है। पशु आहार के रूप में उपयोग मुख्य रूप से बकरियों, भेड़ों और ऊंटों के लिए उपयोगी। सूखे के समय यह एक बेहतरीन चारा विकल्प है। सावधानी पत्तियों में टैनिन और सैपोनिन जैसे पोषण–विरोधी कारक होते हैं, इसलिए इन्हें सीमित मात्रा में ही दें।

अंजन: अंजन का पेड़ सूखे प्रतिरोधी चारा स्रोत के रूप में बेहतरीन है, जिसकी पत्तियों में 9–11% प्रोटीन होता है और यह 100 वर्षों तक हरा चारा देता है इसकी टहनियों और पत्तों को गाय, बकरी, भैंस को खिलाया जा सकता है जो सूखे के समय आपातकालीन चारे की कमी पूरी करते हैं आपातकालीन चारा यह सूखे की स्थिति में जब अन्य चारा उपलब्ध न हो, तब एक भरोसेमंद हरे चारे का स्रोत बनता है ।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

कृषि के आधुनिक उपकरण, शुष्क भूमि प्रबंधन और AI & IoT का भविष्य

उपेन्द्र सिंह एवं नवीन कुमार
कृषि अभियांत्रिकी विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय ,जोबनेर

1. प्रस्तावना: भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 13.09 प्रतिशत है और यह देश के 54.6 प्रतिशत कार्यबल को रोजगार प्रदान करती है। बढ़ती जनसंख्या और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों के बीच, कृषि में आधुनिक उपकरणों और तकनीक का समावेश अनिवार्य हो गया है। विशेष रूप से भारत के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों, जैसे राजस्थान, गुजरात और हरियाणा में खेती को लाभकारी बनाने के लिए वैज्ञानिक विधियों और डिजिटल क्रांति की महत्ता बढ़ गई है।

2. कृषि की उन्नति के आधुनिक उपकरण :उत्पादन बढ़ाने और श्रम कम करने के लिए आज कई आधुनिक उपकरण उपलब्ध हैं:

- **इंटरकल्टीवेटर और टिलर:** मिट्टी की गुड़ाई और खरपतवार नियंत्रण के लिए उपयोग किए जाते हैं।
- **मैनुअल सीडर:** बीजों के बीच समान दूरी बनाए रखने और बुवाई की दक्षता बढ़ाने के लिए Balwaan Hand Seeder जैसे उपकरण प्रभावी हैं।
- **ड्रोन:** कीटनाशकों के छिड़काव और फसल की स्वास्थ्य निगरानी के लिए ड्रोन का उपयोग बढ़ रहा है।
- **आधुनिक सिंचाई प्रणाली:** ड्रिप (टपक) और स्प्रिंकलर (फव्वारा) सिंचाई तकनीकें पानी की बचत में क्रांतिकारी साबित हुई हैं।
- **लेजर लैंड लेवलर** यह मशीन ऊबड़–खाबड़ खेत को एक समान समतल करने के लिए लेजर तकनीक का उपयोग करती है।
- **शुष्क क्षेत्रों में उपयोगिता:**

पानी की बचत: समतल खेत में पानी समान रूप से फैलता है, जिससे सिंचाई में 20 –30 प्रतिशत पानी की बचत होती है।
उपज में वृद्धि: पानी और खाद का वितरण समान होने से पैदावार में 8–10 तक की बढ़ोतरी होती है।
कम लागत: ट्रैक्टर के समय और डीजल की खपत कम होती है क्योंकि सिंचाई का समय घट जाता है।
कृषि ड्रोन : ड्रोन भविष्य की खेती के लिए एक क्रांतिकारी उपकरण है, जिसका उपयोग कीटनाशकों के छिड़काव और फसल की निगरानी के लिए किया जाता है।
उपयोगिता:

- **तेज छिड़काव:** जो काम घंटों में होता था, वह ड्रोन से मात्र 15–20 मिनट प्रति एकड़ में हो जाता है।
- **सुरक्षा:** किसान रसायनों के सीधे संपर्क में आने से बचते हैं।
- **संसाधन बचत:** दवाओं और पानी का छिड़काव केवल प्रभावित पौधों पर करने की क्षमता
- **शुष्क और अर्ध–शुष्क भूमि में उपयोगिता एवं विधियाँ**

शुष्क क्षेत्रों में पानी की कमी और उच्च तापमान मुख्य बाधाएं हैं। यहाँ निम्नलिखित विधियाँ कारगर हैं:

- **सूक्ष्म सिंचाई (Micro-Irrigation):** ड्रिप सिंचाई के माध्यम से सीधे पौधों की जड़ों तक पानी पहुँचाया जाता है, जिससे 35% से 60% तक पानी की बचत होती है।
- **उन्नत बीज तकनीक:** कम पानी में उगने वाली और सूखा–सहिष्णु (Drought-tolerant) किस्मों का उपयोग।
- **मल्चिंग:** मिट्टी की नमी बनाए रखने के लिए प्लास्टिक या जैविक कचरे से भूमि को ढंकना।
- **परंपरागत फसलें:** शुष्क क्षेत्रों में बाजरा, कैर–सांगरी, और चना जैसी फसलों को प्राथमिकता दी जाती है जो यहाँ की जलवायु के अनुकूल हैं।

4. कृषि में AI IoT का भविष्य में उपयोग : इंटरनेट ऑफ थिंग्स (IoT) और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (AI) भविष्य की खेती का आधार हैं:

- **स्मार्ट सेंसर :** मिट्टी में लगे सेंसर नमी, तापमान और पोषक तत्वों का डेटा रीयल–टाइम में किसान के फोन पर भेजते हैं।
- **सटीक खेती :**AI के माध्यम से केवल उसी हिस्से में खाद या पानी दिया जाता है जहाँ जरूरत हो, जिससे संसाधनों की बर्बादी रुकती है।
- **भविष्यवाणी :** एआई–आधारित मौसम पूर्वानुमान किसानों को बुवाई और कटाई के सही समय की जानकारी देते हैं।
- **स्वचालन :**IoT आधारित प्रणालियाँ सिंचाई पंपों को जरूरत के अनुसार अपने आप चालू या बंद कर सकती हैं।

5. सरकारी नीतियाँ

सरकार इन तकनीकों को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएं चला रही है:

- **नमो ड्रोन दीदी योजना:** महिला स्वयं सहायता समूहों को 15,000 ड्रोन उपलब्ध कराने का लक्ष्य, जिसमें 80: तक सब्सिडी दी जा रही है।
- **प्रति बूंद अधिक फसल :** सूक्ष्म सिंचाई को बढ़ावा देने के लिए वित्तीय सहायता।
- **डिजिटल इंडिया लैंड रिकॉर्ड्स:** भूमि प्रबंधन को पारदर्शी बनाने के लिए।

- **PM-Kisan AI Chatbot:** किसानों की समस्याओं के त्वरित समाधान के लिए एआई का उपयोग।

6. उपयोग करने की विधियाँ

1. **मिट्टी परीक्षणः** सबसे पहले मृदा स्वास्थ्य कार्ड के माध्यम से अपनी भूमि की जांच कराएं।
2. **टपक सिंचाई स्थापनाः** शुष्क भूमि में पानी बचाने के लिए ड्रिप सिस्टम लगवाएं।
3. **सेंसर का उपयोग :** छोटे IoT सेंसर लगाकर नमी की निगरानी करें।
4. **ऐप्स से जुड़ाव :** 'm-Kisan' या अन्य सरकारी ऐप्स के माध्यम से मौसम और बाजार भाव की जानकारी लें।

7. सब्सिडी प्रक्रिया

भारत सरकार और राज्य सरकारें (विशेषकर राजस्थान) किसानों को आधुनिक यंत्र खरीदने के लिए **(Sub-Mission on Agricultural Mechanization)** और **कृषि यंत्र योजना** के तहत वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं।

- **अनुदान की मात्राः**
  - **लघु, सीमांत, महिला और SC/ST किसानः 50 / तक की सब्सिडी।**
  - **सामान्य किसान :** 40% तक की सब्सिडी।
- **आवेदन प्रक्रिया Step-by-Step) :**
  - **पंजीकरणः** राजस्थान के किसान **RajKisan Saathi** पोर्टल पर जन–आधार के माध्यम से आवेदन करें।
  1. **दस्तावेजः** आधार कार्ड, नवीनतम जमाबंदी (6 माह से पुरानी न हो), बैंक पासबुक और अधिकृत विक्रेता का कोटेशन।
  2. **सत्यापनः** खरीद के बाद कृषि पर्यवेक्षक भौतिक सत्यापन करेंगे।
  3. **भुगतानः** सत्यापन के बाद सब्सिडी की राशि सीधे किसान के बैंक खाते में जमा कर दी जाती है।

निष्कर्षः आधुनिक उपकरणों के साथ AI &IoT का संगम न केवल शुष्क क्षेत्रों में खेती को संभव बनाएगा, बल्कि किसानों की आय दोगुनी करने में भी सहायक होगा।

जड़ वाली सब्जियों में लगने वाले सूत्रकृमि का प्रकोप एंव उनका प्रबंधन

सीमा यादव[1], हेमराज गुर्जर[2] एवं बी.एस. चंद्रावत[3]
[1]राजस्थान कृषि महाविद्यालय, एम.पी.यू.ए.टी., उदयपुर
[2]राजस्थान कृषि अनुसंधान संस्थान (रारी), दुर्गापुरा, जयपुर
[3]श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

सामान्य परिचयः सब्जियाँ ज्यादातर दो तरह से उगाई जाती हैं। पहली, कुछ जमीन के ऊपर होती हैं और कुछ जमीन के नीचे, जिन्हें जड वाली सब्जियाँ भी कहा जाता है। मिट्टी के नीचे उगने पर वे ज्यादा मिनरल्स (खनिज) सोख लेती हैं, जिससे उनमें फाइबर, विटामिन (विशेष रूप से ए और सी), पोटैशियम और एंटीऑक्सीडेंट जैसे पोषक तत्व ज्यादा होते हैं। और एक्सपर्ट्स के अनुसार आयुर्वेद से मंजूर जड वाली सब्जियाँ भारत की खाने–पीने और पोषक तत्व की विरासत का एक जरूरी हिस्सा हैं। जमीनकंद और अरबी से लेकर शकरकंद, गाजर, मूली और चुकंदर तक ये जमीन के नीचे उगने वाली चीजें कई तरह से इस्तेमाल होती हैं और कई तरह से इस्तेमाल की जाती हैं। पाचन को बेहतर बनाने, रक्तचाप को रेगुलेट करने और प्रतिरक्षा बढ़ाने से लेकर खून को साफ करने तक, ये इंसान के शरीर को फिट और सक्रिय रखने में कई अहम भूमिका निभाती हैं।

जड़ वाली सब्जियों का महत्व

आलूः यह पोषक तत्वों का पावरहाउस भी है। यह ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है और इसमें विटामिन फाइबर और आयरन भरपूर मात्रा में होते हैं, जो पाचन, हृदय स्वास्थ्य और रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। यह वसा रहित और कोलेस्ट्रॉल मुक्त है। आलू में प्रचुर मात्रा में कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है आलू में आयरन, फास्फोरस, कैल्शियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम और जिंक जैसे खनिज पाए जाते हैं, जो हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए जरूरी हैं।

शकरकंदीः यह सर्दियों का एक खास फल है और पूरे भारत में पाया जाता है। यह बीटा–कैरोटीन, विटामिन ए और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होता है और आंखों की रोशनी, त्वचा और रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए अच्छा होता है।

शलजम :यह सर्दियों में खूब पसंद किया जाता है, शलजम विटामिन सी और पोटेशियम से भरपूर होता है, जो रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने और रक्तचाप को नियंत्रित करने में सहायक होते हैं। यह लिवर के विषाक्त पदार्थों को निकालने में भी मदद करता है।

मूली :यह सर्दियों की सब्जी पूरे भारत में उगाई जाती है और पाचन क्रिया सुधारने के लिए जानी जाती है। इसमें ऐसे यौगिक होते हैं जो लिवर के स्वास्थ्य को बेहतर बनाते हैं और विषाक्त पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने में मदद करते हैं। इस सब्जी के पत्ते भी फाइबर से भरपूर होते है।

गाजर :यह सर्दियों की एक प्रमुख सब्जी है जो बीटा–कैरोटीन, विटामिन ए और एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर है, जो आंखों की सेहत को बेहतर बनाती है, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है और त्वचा की चमक बढ़ाती है।

चुकंदरः यह सब्जी देश के ठंडे क्षेत्रों में उगाई जाती है और रक्त संचार सुधारने, रक्तचाप कम करने और सहनशक्ति बढ़ाने के लिए जानी जाती है। यह एक प्राकृतिक रक्त शोधक भी है।

जड़ वाली सब्जियों में लगने वाले सूत्रकृमि:.

सूत्रकृमिः भारत के प्रमुख सब्जी उत्पादक क्षेत्रो में सूत्रकृमिकी कई प्रजातियाँ मौजूद है और इनमें से कुछ प्रजातियाँ जड़ वाली सब्जियों के उत्पादन के लिए अत्यधिक हानिकारक है। सूत्रकृमि छोटे पतले धागेनुमा प्राणी होते हैं जिन्हें नग्न

आंखों द्वारा नहीं देखा जा सकता केवल सूक्ष्मदर्शी के द्वारा ही देखा जा सकता है यह सूत्रकृमिमें पौधों की जड़ों एवं अन्य भागों को प्रभावित करते हैं जिससे पौधों की जीवन क्रिया, बाधित हो जाती है जैसे मूलग्रंथि सूत्रकृमि(*मेलोइडोगाइनी*), पुट्टी सूत्रकृमि(सिस्ट) और मूलविक्षित सूत्रकृमि(*प्रेटिलेन्चस* प्रजाति), यह सूत्रकृमि की अनेक प्रजातियां जड़ वाली सब्जियों में आर्थिक नुकसान पहुचाती है। सूत्रकृमि प्रभावित पौधों में अन्य रोगों के होने की संभावना रहती है जैसे फंगस जीवाणु आदि पौधों को संक्रमित करते हैं, सूत्रकृमि तथा रोकारकों के मिलने से आर्थिक नुकसान बहुत ज्यादा होता है। मूलग्रंथि सूत्रकृमि(मेलोइडोगाइनी प्रजाति) जड़ वाली सब्जियों को काफी आर्थिक नुकसान पहुंचाते हैं, सूत्रकृमि प्रभावित क्षेत्रो में सब्जियों की पैदावार में 10% से 25–50% तक का नुकसान होता है। भारत में गाजर और आलू में लगभग 18–32% का नुकसान होता है। खासकर मूलविक्षित सूत्रकृमि के साथ, जड़ वाली सब्जियों में पैदावार का नुकसान शुरुआती आबादी के आधार पर 14% से 71% तक हो सकता है।

सूत्रकृमि रोगों के लक्षण

मूलग्रंथि सूत्रकृमि (जड़–गांठसूत्रकृमि) जड़– गांठ सूत्रकृमि (*मेलोइडोगाइन* प्रजाति) पौधे–परजीवी सूत्रकृमि हैं। वे गर्म जलवायु या कम सर्दी वाले क्षेत्रों में मिट्टी में मौजूद होते हैं। दुनिया भर में पौधों की लगभग 2000 प्रजातियाँ जड़ गाँठ सूत्रकृमि द्वारा संक्रमण के प्रति संवेदनशील हैं जड़–गांठ सूत्रकृमि गतिहीन अंतःपरजीवी होते हैं। मिट्टी में केवल द्वितीय चरण अवस्था ही संक्रामक अवस्था होती हैं। मादा सूत्रकृमि द्वारा दिए गए अंडों (जिलेटिनस परत से घिरे अंडे) से किशोर सूत्रकृमि निकलते हैं। किशोर सूत्रकृमि मिट्टी से होते हुए पौधे की जड़ों तक पहुँचते हैं, जहाँ वे सुई जैसी स्टाइलेट का उपयोग करके जड़ों को (जड़ के सिरे के ठीक पीछे) छेदते हैं और कोशिका के अंदर के पदार्थ को चूस लेते हैं। पौधे में प्रवेश करने के बाद, किशोर सूत्रकृमि कई बार अपनी त्वचा बदलते हैं। वयस्क होने पर, नर जड़ों को छोड़ देते है मादा जड़ों में ही रहती हैं और भोजन करना जारी रखती हैं। मादा सूत्रकृमि द्वारा आक्रमण और भोजन करने से मेजबान कोशिकाएं बड़ी होकर विशाल कोशिकाओं में परिवर्तित हो जाती हैं, जिससे जड़ों पर गांठें बन जाती हैं। एक बार जब मादा सूत्रकृमि भोजन करने के लिए जगह बना लेती है, तो उसका शरीर बड़ा हो जाता है और जड़ से बाहर निकल आता है। वह अपने शरीर के बाहरी भाग पर एक चिपचिपे पदार्थ में अंडे देती है। और आमतौर पर प्रति वर्ष तीन या चार पीढ़ियाँ होती हैं। जड़–गांठ सूत्रकृमि गाजर, मूली, आलू और चुकंदर के लिए बहुत हानिकारक होते हैं पौधों के कुछ हिस्सों का विकास रुक जाता है। संक्रमित गाजर और मूली आमतौर पर दो भागों में बंटी हुई और विकृत होती हैं। मुख्य जड़ और द्वितीयक जड़ों पर कई गांठें पाई जा सकती हैं। जब गाजरों को पतझड़ और सर्दियों में लंबे समय तक मिट्टी में छोड़ दिया जाता है, तो सूत्रकृमि अक्सर लेंटिसेल क्षेत्रों में प्रवेश कर जाते हैं और बड़े–बड़े गांठें बना देते हैं। आलू में सामान्यत, पौधे की ऊपरी सतह पर दिखने वाले लक्षणों में बौनेपन, पीलेपन, क्लोरोसिस और मृत पौधे शामिल हैं। संक्रमित पौधे तापमान या नमी की कमी के कारण जल्दी मुरझा जाते हैं। संक्रमण बिना किसी ऊपरी सतह के लक्षण दिखाए भी हो सकता है। गंभीर रूप से संक्रमित पौधों पर, पोषक जड़ों पर गांठें उभारों के रूप में दिखाई देते हैं। मेलोइडोगाइन हैप्ला प्रजाति छोटे, स्पष्ट गांठें बनाता है जिनके चारों ओर पार्श्व जड़ों का फैलाव होता है। मेलोइडोगाइन इनकोग्निटा प्रजाति अधिक स्पष्ट गांठें बनाता है। संक्रमित आलू के पौधों में अलग–अलग स्तर की वृद्धि रुक सकती है, पत्तियां पीली पड़ सकती हैं पौधे मुरझाने लगते हैं। जड़ों में गांठें बन जाती हैं। प्रभावित कंदों में छाले या गांठ हो जाती है। जड़–गांठ सूत्रकृमि कंदों की गुणवत्ता, आकार और संख्या को कम कर देता है। जड़–गांठ सूत्रकृमि संक्रमित आलू, रालस्टोनिया सोलानासेरम के कारण होने वाले जीवाणु मुरझान रोग के प्रति अधिक संवेदनशील हो जाते हैं। इसके अलावा, वर्टिसिलियम और राइजोक्टोनिया जैसे कवक रोगजनकों से संक्रमित होने पर भी लक्षण अधिक गंभीर हो जाते हैं।

मूलविक्षित सूत्रकृमि (*प्रेटिलेन्चस* प्रजाति): मूलविक्षित सूत्रकृमि अंतःपरजीवी होते हैं जो भोजन के लिए जड़ में प्रवेश करते हैं और जड़ के ऊतकों के माध्यम से स्वतंत्र रूप से घूमते हैं। सभी जीवन अवस्थाएं पौधों को संक्रमित कर सकती हैं। जड़ तंत्र आमतौर पर आकार में छोटा हो जाता है, पोषक जड़ों की संख्या कम हो जाती है और जड़ का रंग गहरा हो जाता है। जड़ों और डंठलों पर छोटे–छोटे धब्बेदार निशान देखे जा सकते हैं। समय के साथ इन धब्बों का आकार बढ़ सकता है। यह गहरा रंग आमतौर पर द्वितीयक कवक और जीवाणुओं के कारण होता है, जो सूत्रकृमि द्वारा बनाए गए घावों के माध्यम से जड़ों में प्रवेश करते हैं। जड़–घाव वाले सूत्रकृमि से क्षतिग्रस्त पौधों में मिट्टी की सतह के पास लंबी स्वस्थ जड़ें हो सकती हैं, लेकिन निचली जड़ें गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। आलू के कंदों की सतह पर काले या भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो स्कैब बीमारी जैसे लगते हैं। ये घाव आलू की बाहरी त्वचा को खराब कर देते हैं। गाजर और मूली में इनकी मुख्य जड़ों पर लाल–भूरे से काले रंग के लंबे घाव बन जाते हैं। इसके कारण जड़ें खुरदरी हो जाती हैं और बाजार में उनकी गुणवत्ता गिर जाती है।

पुट्टी सूत्रकृमि (सिस्ट): पुट्टी सूत्रकृमि नंगी आंखों से दिखाई नहीं देते है। प्रत्येक सिस्ट में 500–600 तक अंडे हो सकते हैं। जब किसी फसल से रासायनिक स्राव निकलता है, जो उपयुक्त भोजन की उपस्थिति का संकेत देता है, मौजूद किशोर अंडे से बाहर निकलकर भोजन करना शुरू कर देते हैं। वे मेजबान पौधों की जड़ों तक पहुँचते हैं और उन पर आक्रमण करते हैं। जैसे–जैसे मादाएं परिपक्व होती हैं, वे फूलने लगती हैं और आसपास के पौधों के ऊतक फट जाते हैं। अंततः उनका निचला आधा भाग जड़ की बाहरी त्वचा को फाड़ देता है, जिससे सिर वाला सिरा जुड़ा रहता है। सिस्ट को उठाते ही वे जड़ों से अलग होकर आसपास की मिट्टी में गिर जाते हैं। सिस्ट का बाहरी आवरण परिपक्व होकर लाल–भूरे रंग का हो जाता है, जो विकसित हो रहे किशोर लार्वा की रक्षा करता है। सामान्यतः एक वर्ष में एक ही पीढ़ी होती है। आलू के पुट्टी सूत्रकृमि नंगी आंखों से दिखाई नहीं देते, लेकिन इनके अंडे वाले सफेद सिस्ट (*पैलिडा*) या सुनहरे सिस्ट (*रोस्टोचिएन्सिस*) प्रजातियाँ आलू के पौधों की जड़ों पर पाए जा सकते हैं। पौधों की वृद्धि रुक जाती है और पौधे बौने रह जाते हैं, खेत में धब्बेदार (पैची) रूप में कमजोर पौधे दिखाई देते है। पत्तियाँ पीली (क्लोरोसिस) पड़ जाती हैं, संक्रमित पौधे आसानी से उखड़ जाते है। जड़ें छोटी, शाखायुक्त और कमजोर हो जाती है। जड़ों पर सफेद,

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पीले या भूरे रंग के छोटे–छोटे सिस्ट दिखाई देते हैं कंदों का आकार छोटा रह जाता है। कंदों की संख्या कम हो जाती है।

सूत्रकृमि का प्रबंधनः खरपतवार नियंत्रण अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि कई खरपतवार जड़–क्षयकारी सूत्रकृमि के लिए उपयुक्त मेजबान होते हैं।

फसल चक्र : आलू को 4–6 वर्षों तक गैर–मेजबान फसलों (जैसे मक्का, बीन्स, जौ, गेहूं या ब्रासिका) के साथ बारी–बारी से बोएं। इसमें सूत्रकृमि भूख से मर जाते हैं और मिट्टी में उनकी संख्या कम हो जाती है।

प्रतिरोधी किस्में:सूत्रकृमि के प्रति प्रतिरोधी पौधों की किस्मों का चयन सूत्रकृमि के प्रबंधन के सबसे विश्वसनीय तरीका हैं।

मृदा प्रबंधनः मिट्टी की उर्वरता और जैविक पदार्थ में सुधार करने से आलू के पौधे मजबूत होते हैं और सूत्रकृमि से होने वाले नुकसान के प्रति कम संवेदनशील हो जाते हैं। नीम की खली का उपयोग करें, नीम की खली एक पर्यावरण–अनुकूल विकल्प है।

ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई : मई–जून के महीने मे खेतो की मिट्टी पलट हल से 15–30 से.मी. गहरी जुताई करके छोड़ दे, संक्रमित खेत को डिस्क हल से जोता जाता है और तेज धूप में रखा जाता है, जिससे मिट्टी का तापमान बढ़ जाता है और सूत्रकृमि मर जाते हैं।

मृदा सौरीकरण : मृदा सौरीकरण से मौजूदा संक्रमण को कम किया जा सकता है। इसके अलावा, मिट्टी को सौर ऊर्जा से गर्म करना (प्लास्टिक की चादरों का उपयोग करके मिट्टी को धूप में गर्म करना) छोटे पैमाने पर सूत्रकृमि की संख्या को कम करने में सहायक हो सकता है।

जैविक नियंत्रणों का उपयोग : *पेसिलोमाइसिस लिलासिनस* (एक परजीवी कवक) और *बैसिलस* प्रजाति जैसे जैविक नियंत्रण एजेंट सूत्रकृमि को नियंत्रित करने में मदद कर सकते हैं।

सरसों में माहू का मौसमी प्रकोप एवं प्रबंधनः एक समीक्षात्मक अध्ययन

योगेन्द्र सिंह, सुमन एवं पेरुरी वंदना
एसकेएन कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

सारांशः सरसों भारत की प्रमुख तिलहनी फसल है, जिसकी उत्पादकता विभिन्न जैविक एवं अजैविक कारकों से प्रभावित होती है। सरसों में माहू, विशेषतः *लिपाफिस एरीसिमी*, एक प्रमुख कीट है जो पत्तियों, कोमल टहनियों एवं पुष्पक्रम से रस चूसकर गंभीर आर्थिक क्षति पहुँचाता है। इसका प्रकोप प्रायः शीत ऋतु में अधिक होता है तथा 10–20 डिग्री सेल्सियस तापमान और मध्यम आर्द्रता इसकी वृद्धि के लिए अनुकूल मानी जाती है। इस लेख में माहू के मौसमी प्रकोप की प्रवृत्ति, जैव–पर्यावरणीय संबंध, क्षति के लक्षण तथा समेकित कीट प्रबंधन रणनीतियों का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया गया है। समय पर निगरानी, जैविक नियंत्रण, संतुलित पोषण प्रबंधन तथा आवश्यकता आधारित रासायनिक नियंत्रण अपनाकर इसके प्रभाव को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है।

मुख्य शब्दः सरसों, माहू, मौसमी प्रकोप, जैविक नियंत्रण, समेकित कीट प्रबंधन

1. प्रस्तावनाः भारत में सरसों (रेपसीड–मस्टर्ड समूह) तिलहन उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह फसल मुख्यतः रबी मौसम में उगाई जाती है। सरसों की प्रमुख कीट समस्याओं में माहू (एफिड) का स्थान सर्वोपरि है। माहू अत्यधिक प्रजनन क्षमता वाला कीट है जो अनुकूल परिस्थितियों में अल्प समय में भारी जनसंख्या विकसित कर सकता है। माहू का प्रकोप यदि पुष्पन अवस्था में हो जाए तो उत्पादन में 30–70 प्रतिशत तक हानि संभव है। अतः इसके मौसमी व्यवहार एवं प्रबंधन की वैज्ञानिक समझ अत्यंत आवश्यक है।

2. कीट की पहचान एवं जीवन चक्रः

2.1 वर्गीकरण

गणः हेमिप्टेरा
कुलः एफिडिडी
प्रजातिः*लिपाफिस एरीसिमी*

2.2 पहचानः

आकारः 1–2 मि.मी.
रंगः हल्का हरा या पीला
शरीर नरम एवं नाशपाती आकार का
झुंडों में पत्तियों की निचली सतह पर पाए जाते हैं

2.3 जीवन चक्रः मादा माहू जीवित शिशुओं को जन्म देती है (जीवितप्रजक)। अनुकूल परिस्थितियों में एक मादा 50–100 शिशु उत्पन्न कर सकती है। जीवन चक्र 7–10 दिनों में पूर्ण हो जाता है, जिससे जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती है।

3. मौसमी प्रकोपः माहू का प्रकोप जलवायु कारकों से अत्यधिक प्रभावित होता है।

3.1 तापमान का प्रभावः

10–20 डिग्री सेल्सियस तापमान वृद्धि के लिए सर्वाधिक अनुकूल।
25 डिग्री सेल्सियस से ऊपर प्रजनन दर घटने लगती है।
पाला या अत्यधिक वर्षा जनसंख्या कम कर सकती है।

3.2 आर्द्रता एवं वर्षा

मध्यम आर्द्रता (60–75 प्रतिशत) माहू की वृद्धि को बढ़ावा देती है। हल्की वर्षा प्रसार में सहायक होती है, जबकि तेज वर्षा जनसंख्या को कम कर सकती है।

3.3 फसल अवस्था के साथ संबंध

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

30–45 दिन की अवस्था में प्रारंभिक प्रकोप
पुष्पन अवस्था में अधिकतम जनसंख्या
दाना भराव अवस्था में प्रभाव घटने लगता है

3.4 भौगोलिक प्रवृत्तिः उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में दिसंबर से फरवरी के बीच सर्वाधिक प्रकोप देखा जाता है।

4. क्षति के लक्षण एवं आर्थिक प्रभावः

4.1 प्रत्यक्ष क्षति

- पत्तियों का मुड़ना एवं सिकुड़ना
- पीतिमा (क्लोरोसिस)
- पुष्पक्रम का अविकसित रहना
- दानों का छोटा रह जाना

4.2 अप्रत्यक्ष क्षतिः माहू द्वारा उत्सर्जित मधुरस (हनीड्यू) पर काली फफूंद विकसित हो जाती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण बाधित होता है।

4.3 आर्थिक क्षति स्तर (ईटीएल): यदि 10 सेमी शीर्ष भाग पर 50–60 माहू या प्रति पौधा 150–200 माहू दिखाई दें तो नियंत्रण आवश्यक माना जाता है।

5. समेकित कीट प्रबंधन (आईपीएम): माहू नियंत्रण हेतु समेकित दृष्टिकोण अपनाना सर्वोत्तम है।

5.1 सांस्कृतिक उपायः समय पर बुवाई (अक्टूबर का प्रथम पखवाड़ा)। संतुलित उर्वरक प्रयोग (अधिक नाइट्रोजन से बचें)। फसल चक्र अपनाना। खेत की नियमित निगरानी

5.2 प्रतिरोधी किस्में: कम संवेदनशील किस्मों का चयन प्रारंभिक नियंत्रण में सहायक है।

5.3 जैविक नियंत्रणः माहू के प्राकृतिक शत्रु महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैंः

- लेडीबर्ड बीटल
- ग्रीन लेसविंग
- हॉवर फ्लाई

इन परभक्षियों का संरक्षण रासायनिक दवाओं के अंधाधुंध प्रयोग से बचकर किया जा सकता है।

5.4 जैव–कीटनाशक

नीम आधारित उत्पाद (0.5–1 प्रतिशत)
ब्यूवेरिया बेसिआना आधारित फफूंदनाशी

5.5 रासायनिक नियंत्रण (आवश्यकता आधारित): गंभीर प्रकोप की स्थिति मेंः

इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल
थायमेथोक्जाम 25 डब्ल्यूजी
एसिटामिप्रिड 20 एसपी, छिड़काव सायंकाल करें एवं मधुमक्खियों की सुरक्षा का ध्यान रखें।

6. जलवायु परिवर्तन एवं भविष्य की चुनौतियाँ: जलवायु परिवर्तन के कारण तापमान एवं वर्षा पैटर्न में बदलाव माहू के जीवन चक्र को प्रभावित कर सकते हैं। हल्की सर्दी एवं लंबी शीत अवधि भविष्य में प्रकोप की तीव्रता बढ़ा सकती है। अतः पूर्वानुमान आधारित चेतावनी प्रणाली विकसित करना आवश्यक है।

7. निष्कर्षः सरसों में माहू का प्रकोप मुख्यतः शीत ऋतु में अधिक देखा जाता है और यह उत्पादन में उल्लेखनीय कमी का कारण बन सकता है। संतुलित उर्वरक प्रबंधन, समय पर निगरानी, प्राकृतिक शत्रुओं का संरक्षण एवं आवश्यकता आधारित रासायनिक नियंत्रण अपनाकर प्रभावी प्रबंधन संभव है। समेकित कीट प्रबंधन रणनीति ही दीर्घकालीन एवं टिकाऊ समाधान प्रदान कर सकती है।

जिप्सम का मृदा सुधारक के साथ – साथ फसल उत्पादन में महत्व

इन्दुबाला सेठी ,नरेन्द्र कुमार पारीक एवं हरफूल सिंह
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

वर्तमान समय में दिन प्रति लगातार मृदा की स्थिति अधिक खराब हो रही है । भारत का कुल भोगोलिक क्षेत्रफल 329 मि. हे. है । जिसमें से भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद् के अनुसार लगभग 120 मि. हे. भूमि खराब हैं। कुल भोगोलिक क्षेत्रफल में से केवल लगभग 141 मि. हे. खेती योग्य भूमि है। जिसमें क्षारीय मृदा का क्षेत्रफल लगभग 3.7 मि. हे. है। देश का भोगोलिक क्षेत्रफल हम बढ़ा नही सकते, केवल उपलब्ध भूमि को ही सुधार कर खेती कर सकते है। इस खेती अयोग्य भूमि को सुधारने के लिए जिप्सम मृदा सुधारक प्रयोग करके भूमि की क्षारीयता की समस्या को दूर कर सकते है । जिप्सम को खाद के रूप अपनाकर कम लागत में भूमि की क्षारीयता कम करने के साथ – साथ मृदा में पोषक तत्व भी बनाये रखता है।

क्या है जिप्सम ? जिप्सम को खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। जिप्सम एक उर्वरक उत्पाद है जिसको रसायनिक भाषा में कैल्शियम सल्फेट कहते है, जिसमें 29.4 प्रतिशत कैल्शियम और 23.5 प्रतिशत सल्फर पाया जाता है। पोधों के लिए नत्रजन, फोस्फोरस एवं पोटाश के बाद गंधक चोथा प्रमुख पोषक तत्व है। एक अनुमान के अनुसार तिलहनी फसलों के पोधों को फोस्फोरस के बराबर मात्रा में गंधक की आवश्यकता होती है। सल्फर एक माध्यमिक पोषक तत्व जिसकी मृदा में 48 प्रतिशत कमी हो गई है। दलहनी और तिलहनी फसलों में इसके प्रयोग से 20 से 30 प्रतिशत की

उपज में वृद्धि होती है। गंधक रहित उर्वरक जैसे डी. ए. पी. एवं यूरिया का अधिक उपयोग किया जा रहा है और गंधकयुक्त सिंगल सुपर फॉस्फेट का कम उपयोग हो रहा है। साथ ही अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्मों द्वारा जमीन से गंधक का अधिक उपयोग किया जा रहा है। एक ही खेत में हर वर्ष तिलहनी एवं दलहनी फसलों की खेती करने से खेतों में गंधक की कमी हो जाती है। जिप्सम के उपयोग से तिलहनी, दलहनी व अनाज वाली फसलों के उत्पादन की बढ़ोतरी के साथ – साथ भूमि भी स्वस्थ रहती है। जिप्सम गंधक का सर्वोतम व सस्ता स्रोत है एवं राज्य में आसानी से उपलब्ध है। कृषि क्षेत्र में जिप्सम और फोस्फोजिप्सम का उपयोग कर रहे हैं।

जिप्सम की आवश्यकता क्यों ? जिप्सम एक आवश्यक तत्व सल्फर का मुख्य स्त्रोत है इसके साथ – साथ केल्सियम भी प्रदान करता है। वर्तमान में अंधाधुंद कृषि करने से सल्फर की मृदा में कमी हो रही है आकड़ों के अनुसार अभी 48प्रतिशतमृदा में कमी है। जिप्सम सस्ता स्त्रोत है जो आसानी से मिल जाता है। पौधों में सल्फर की कमी से नई पतियों में लक्षण दिखाई देते है । जिससे उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। केल्सियम की मृदा में कमी नहीं है परंतु यह पौधों को प्रदान करता है जिससे उपज बढ़ती है। मूँगफली के दानों के लिए सल्फर के साथ – साथ केल्शियम अति आवश्यक है।

तिलहनी फसलों में जिप्समः तिलहनी फसलों में गंधक उपयोग से दानों में तेल की मात्रा में बढ़ोतरी होती है साथ ही दाने सुडोल एवं चमकीले बनते है । जिसके कारण तिलहनी फसलों की पैदावार में बढ़ोतरी होती है।

दलहनी फसलों में जिप्समः दलहनी फसलों में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। प्रोटीन के निर्माण के लिए गंधक अति आवश्यक पोषक तत्व है । इससे दलहनी फसलों में दाने सुडौल बनते है व पैदावार बढती है । यह पोधों की जड़ो में स्थित राईजोबियम जीवाणु की क्रियाशीलता को बढ़ाता है जिससे पौधे वातावरण में उपस्थित नत्रजन का अधिक से अधिक उपयोग कर सकते है।

अनाज वाली फसलों में जिप्समः खाद्यान फसलों में जिप्सम के उपयोग से गंधक तत्व की आपूर्ति होती है । इससे पौधों की बढ़वार अच्छी होती है। प्रोटीन की मात्रा बढ़ती है।

क्षारीय भूमि का सुधारः जिस मृदा का पी.एच. मान 8.5 अधिक तथा विनियमशील सोडियम की मात्रा 15 प्रतिशत से अधिक क्षारीय भूमि में होती हैं। कैल्शियम सल्फेट सोडियम के साथ रासायनिक प्रतिक्रिया करने के बाद का आयनिक विनिमय सोडियम को सोडियम सल्फेट के रूप में निक्षालन हो जाता है । जिससे हानिकारक सोडियम बाहर हो जाता है।

रासायनिक प्रतिक्रियाः $CaSO_4 + NaCO_3 = CaCO_3 + Na_2SO_4$

जिप्सम को खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है।

- ✓ पोधों के लिए नत्रजन , फोस्फोरस एवं पोटाश के बाद गंधक चोथा प्रमुख पोषक तत्व है।
- ✓ एक अनुमान के अनुसार तिलहनी फसलों के पोधों को फोस्फोरस के बराबर मात्रा में गंधक की आवश्यकता होती है।
- ✓ सल्फर एक माध्यमिक पोषक तत्व जिसकी मृदा में 48 प्रतिशत कमी हो गई है।
- ✓ दलहनी और तिलहनी फसलों में इसके प्रयोग से 20 से 30 प्रतिशत की उपज में वृद्धि होती है।
- ✓ गंधक रहित उर्वरक जैसे डी. ए. पी. एवं यूरिया का अधिक उपयोग किया जा रहा है और गंधकयुक्त सिंगल सुपर फॉस्फेट का कम उपयोग हो रहा है । साथ ही अधिक उपज देने वाली उन्नत किस्मों द्वारा जमीन से गंधक का अधिक उपयोग किया जा रहा है।
- ✓ एक ही खेत में हर वर्ष तिलहनी एवं दलहनी फसलों की खेती करने से खेतों में गंधक की कमी हो जाती है। जिप्सम के उपयोग से तिलहनी, दलहनी व अनाज वाली फसलों के उत्पादन की बढ़ोतरी के साथ – साथ भूमि भी स्वस्थ रहती है।
- ✓ जिप्सम गंधक का सर्वोतम व सस्ता स्रोत है एवं राज्य में आसानी से उपलब्ध है। कृषि क्षेत्र में जिप्सम और फोस्फोजिप्सम का उपयोग कर रहे हैं।

गंधक के कार्य एवं सचलताः पौधे में प्रोटीन संश्लेशण, पादप संरचना एवं विभिन्न कार्यो हेतु गंधक की आवश्यकता होती है। कार्बोहाइड्रेट के उपापचय में भी गंधक की आवश्यकता होती है। यह पौधे में नाइट्रोजन से कम सचल है इसलिए कमी के लक्षण सबसे पहले नई पत्तियों पर दिखाई देते है।

गंधक की कमी के कारणः मृदा में सुलभ गंधक की कम मात्रा। सघन खेती के कारण मृदा से गंधक का निष्कासन। गंधक मुक्त उर्वरकों का अनुप्रयोग (उदाहरणः अमोनियम सल्फेट के स्थान पर यूरिया सिंगल सुपर फास्फेट के स्थान पर ट्रिपल सुपर फास्फेट, सल्फेट ऑफ पोटाश के स्थान पर म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रगतिशील देशों के अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में औद्योगिक गैस में गंधक के कम होने के कारण गंधक का वर्षण द्वारा संचय कम होता है।

कैल्शियम के कार्य एवं सचलताः साधारणतया कमी के लक्षण पहले नई पत्तियों पर दिखाई देते है। कैल्शियम की कमी से जड़ों का कार्य बाधित हो जाता है और धान के पौधे में लोहे की कमी को प्रेरित करता है। कैल्शियम की पर्याप्त आपूर्ति जीवाणु पर्ण झुलसा तथा भूरा धब्बा रोगों की प्रतिरोधता होती है।

कैल्शियम की कमी के कारणः मृदा में सुलभ कैल्शियम की कम मात्रा (क्षीण, अम्लीय रेतीली मृदा)। क्षारीय पीएच के साथ विस्तृत विनिमेय सोडियमः कैल्शियम अनुपात जिससे कैल्शियम उद्ग्रहण घट जाता है। मृदा में विस्तृत लोहः कैल्शियम अथवा मैग्नेशियमः कैल्शियम अनुपात जिससे कैल्शियम उद्ग्रहण घट जाता है। अत्यधिक नाइट्रोजन अथवा पोटैशियम उर्वरक का अनुप्रयोग जिससे अमोनियमः कैल्शियम अथवा पोटैशियमः कैल्शियम का अनुपात विस्तृत हो जाता है तथा कैल्शियम का उद्ग्रहण घट जाता है। अत्यधिक फास्फोरस उर्वरक का अनुप्रयोग जिससे कैल्शियम की सुलभता कम हो सकती है (क्योंकि क्षारीय मृदा में कैल्शियम फास्फेट निर्मित हो जाता है)।

जिप्सम प्रयोग की मात्राः बुवाई से पहले 250 किलो जिप्सम प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में मिलाने की सिफारिश की है। क्षारीय भूमि में जिप्सम का उपयोग करना चाहिए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

जैविक खेती में खरपतवार प्रबंधन

हरफूल सिंह, नरेन्द्र कुमार पारीक, एवं इन्दुबाला सेठी
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

भारत में पिछले 50 सालों में रासायनिक कीटनाशकों, खरपतवारनाशकों और उर्वरकों के प्रयोग ने कृषि उत्पादकता बढ़ाने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किन्तु रासायनिक उर्वरकों का व्यापक उपयोग मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। रासायनिक उर्वरकों, खरपतवारनाशकों और कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से मिट्टी में लवण जमाव के साथ–साथ मिट्टी की उत्पादकता भी कम हो जाती है। जैविक खेती में फसल उत्पादन की सफलता मुख्य रूप से गुणवत्ता युक्त जैव उर्वरकों के प्रयोग पर निर्भर करती है। जैविक खेती एक सम्पूर्ण कृषि कार्यमाला है जिसमें पर्यावरण को शुद्ध रखते हुए प्राकृतिक संतुलन को कायम रखकर भूमि जल व वायु को प्रदूषित किये बिना दीर्घ अवधि तक टिकाऊ उत्पादन प्राप्त किया जाता है। जैविक खेती का मुख्य उद्देश्य एक ऐसी जीवन धारण करने वाली कृषि प्रणाली का विकास करना है जिससे भविष्य में अधिक मात्रा में पोषक खाद्यान्न का उत्पादन हो सके। किसान भाईयों को जैविक खेती में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए ताकि गुणवत्तायुक्त उत्पाद प्राप्त हो सके। भविष्य में कृषि विकास के लिए रासायनिक कीटनाशकों, खरपतवारनाशकों और उर्वरकों पर कम निर्भर होते हुये तथा मिट्टी, जल एवं वायु की गुणवत्ता रखते हुये जैविक विधियाँ का उपयोग कर जैविक खेती को बढ़ावा देना चाहिए। खरपतवार फसलों से जल, सूर्य का प्रकाश, स्थान, और पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं जिसके कारण पैदावार कम हो जाती है। खरपतवार हानिकारक कीटों के लिए पराश्रयी पौधों के रूप में कार्य करते हैं। इसके अलावा फसल कटाई के समय परिपक्व खरपतवार भी साथ में आ जाते हैं और उत्पाद की गुणवत्ता को भी खराब करते हैं। अतः उपयुक्त समय में खरपतवार प्रबंधन अतिआवश्यक है। खरपतवारों की रोकथाम से न केवल फसलों की पैदावार बढ़ाई जा सकती है, बल्कि उनमें उपस्थित प्रोटीन, विटामिन, आदि पोषक तत्वों की मात्रा एवं गुणवत्ता में भी वृद्धि की जा सकती है। जैविक विधि से न केवल खरपतवार नष्ट होते है बल्कि मृदा की गुणवता बने रहने में, वातावरण प्रदुषण को रोकना एवं मनुष्य का स्वास्थ्य स्वस्थ बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

खरपतवार नियंत्रण का क्रांतिक कालः यह फसल के जीवन चक्र का वह समय होता है, जब फसल को उत्पादन हानि से बचाव के लिए फसल को खरपतवार मुक्त रखा जाता है। इस समय फसल में खरपतवार जल, पोषक तत्व एवं जगह के लिए प्रतिस्पर्धा करते है। इस समय फसल के खरपतवारों का नियंत्रण करना इसके नियंत्रण का क्रांतिक काल कहलाता है। क्रांतिक काल में खरपतवारों के नियंत्रण से फसल उत्पादन का स्तर फसल को पूरे फसल काल में खरपतवार मुक्त रखने से उत्पादन स्तर के बराबर होता है। क्रांतिक काल का समय बीज के उगने अथवा फसल रोपाई के बाद के दिनों का होता है।

जैविक खरपतवार प्रबंधनः खरपतवारों का प्रबन्ध करने के लिए विभिन्न उपाय जैसे – बचावकारी क्रियाएँ, कृषि क्रियाएँ, यान्त्रिक क्रियाएँ एवं जैविक क्रियाएँ आदि का प्रयोग इस तरह करके कि एवं रसायनों का प्रयोग न करके जिससे भूमि की उत्पादकता एवं उर्वरता प्रभावित न हो तथा मानव सहित अन्य किसी भी जीव – जन्तुओं, पशु–पक्षियों व वांछित पेड़–पौधों को किसी भी प्रकार का नुकसान न हो और साथ ही पर्यावरण भी सुरक्षित रहे, फसलों को सफलतापूर्वक उगाना ही जैविक खरपतवार प्रबंधन कहलाता है। जैविक खेती में उत्पादन हानि को कम करने एवं खरपतवारों के द्वारा होने वाले अन्य दुष्प्रभावों को रोकने के लिए विभिन्न विधियाँ जो खरपतवार प्रबंधन में समयानुसार एवं क्रमानुसार अपनाई जाती हैं वे निम्नलिखित हैं :

1. बचावकारी उपाय
2. शस्य विधियाँ
3. यांत्रिक विधियाँ
4. जैविक विधियाँ

1. बचावकारी उपायः इसके अन्तर्गत वे सभी उपाय आते हैं; जिनके द्वारा खरपतवार के बीजों को उन स्थानों पर पहुँचने या फैलने से रोका जाता है जहाँ वे पहले से मौजूद नहीं हैं । इसके लिए उन सभी परिस्थितियों को जानना आवश्यक है, जिनमें खरपतवार एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचते हैं। खरपतवार के बीजों के फैलाव को रोकने के लिए निम्नलिखित दो उपाय मुख्य रूप से अपनाये जाते हैं :

1. स्वच्छता 2. सिंचाई एवं जल निकास नालियों के क्षेत्रफल में कमी।

1. स्वच्छताः इसके द्वारा खेत में नए खरपतवारों के प्रवेश को रोकने के साथ–साथ खेतों में पहले से विधमान खरपतवारों द्वारा अधिक मात्रा में बीजों को पैदा करने से रोका जाता है। स्वच्छता के उपाय निम्नलिखित हैं :

- ✓ बुवाई के लिए खरपतवार रहित साफ–सुथरे बीजों का उपयोग करें।
- ✓ खेत की मेड़ और सिंचाई नालियों को खरपतवार से मुक्त रखें।
- ✓ रोपाई वाली फसलों में खरपतवारों को पौधशाला में ही पौध से अलग कर दें।
- ✓ फसल कटाई के समय फसल बीजों के साथ खरपतवारों के बीजों को जाने दें।
- ✓ जिस खेत में खरपतवार का प्रकोप हो उसकी मिट्टी उठाकर दूसरे खेत में न डालें।
- ✓ कृषि कार्य में उपयोग होने वाले सभी उपकरण और मशीनों को उपयोग में लाने से पहले तथा उपयोग के बाद साफ कर लें।
- ✓ खेत के चारों ओर ऐसी हेज कतारें लगायें जो कि हवा के द्वारा वितरित होने वाले खरपतवार के बीजों को खेत में आने से रोक सकें।
- ✓ पशुओं को खरपतवार के बीजों से मुक्त चारा खिलाएं तथा पशुओं को खरपतवार वाले क्षेत्र से होकर बिना खरपतवार वाले क्षेत्र में न जाने दें।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- ✓ यह सुनिश्चित करें कि गोबर की खाद एवं कम्पोस्ट खाद का उपयोग पूर्ण अपघटन के बाद ही किया जाए, जिससे कि गोबर की खाद एवं कम्पोस्ट खाद में उपस्थति खरपतवार के बीजों की अंकुरण शक्ति समाप्त हो जाये।

2. सिंचाई एवं जल निकास नालियों के क्षेत्रफल में कमी :खेत में उपलब्ध सिंचाई एवं जल निकास नालियों में भारी मात्राओं में खरपतवार पनपते रहते हैं और यहाँ से इनका फैलाव खेतों तक होता है। अतः सिंचाई एवं जल निकास नालियों का क्षेत्रफल कम करके खरपतवारों की संख्या एवं इनके दबाव में कमी लाई जा सकती है।

2. शस्य विधियाँ : कृषिगत विधियों के द्वारा फसल के पौधों को स्वस्थ एवं रोगमुक्त रखा जाता हैं जिससे फसलों के पौधे खरपतवारों से अच्छी तरह से संघर्ष करके उनकी वृद्धि एवं विकास को रोक सकें। प्रमुख कृषिगत विधियाँ निम्नलिखित हैं

1. फसल चक्र :फसल चक्र लम्बे समय के लिए खरपतवार नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण होता है। किसी खेत में एक ही प्रकार की फसल को उगाते रहने से उस फसल में होने वाले खरपतवारों का दबाव उसमें बढ़ जाता है क्योंकि उनकी उगने तथा वृद्धि की दशाएं अनुकूल होती हैं जैसे – गेहूँ के खेत में गेहूँ का मामा तथा जंगली जई आदि। इसके नियंत्रण के लिए फसल चक्र में परिवर्तन करके फसल को उगाया जाता है तो इन खरपतवारों की अंकुरण क्षमता एवं वृद्धि भिन्न फसल के लिए उपयोग की जाने वाली कर्षण क्रियाओं (भूपरिष्करण, बुवाई का समय, फसल प्रतियोगिता आदि) के कारण नष्ट हो जाती है और इनका नियंत्रण हो जाता है। जैसे– बहुवर्षीय खरपतवारों के नियंत्रण के लिए धान–बरसीम फसल चक्र अच्छा रहता है।

2. किस्म का चुनाव : जैविक खेती में खरपतवार नियंत्रण हेतु ऐसी फसल किस्म का चुनाव करना चाहिए जो शीघ्र उगने वाली हो एवं अधिक क्षेत्र घेरती हो । ऐसी फसल किस्में खरपतवार की वृद्धि को दबा देती हैं । शीघ्र वृद्धि करने वाली फसलों में खरपतवारों से प्रतियोगिता करने की क्षमता अधिक होती है।

3. बुवाई का समय :बुवाई के समय में परिवर्तन करके खरपतवारों के प्रकोप को कम किया जा सकता है। जैसे – गेहूँ की देर से बुवाई करने पर बथुआ, गुल्ली डंडा एवं जंगली जई आदि खरपतवारों का प्रकोप कम हो जाता है । इसी प्रकार किसी खरपतवार विशेष को नष्ट करने के लिए फसल बुवाई के 10–15 दिन पूर्व पलेवा या परेवट करने से खरपतवार उग आते हैं। इन उगे हुए खरपतवारों को जुताई द्वारा नष्ट करने के बाद फसल की बुवाई करना लाभकारी होता है।

4. बीज बुवाई दर एवं पंक्तियों की दूरी :बीज दर अधिक रखने से पौधों की संख्या बढ़ जाती है । बढ़ी हुई पौध संख्या से भूमि में फसल का अधिक सायेदार हो जायेगी जो कि बाद में उगने वाले खरपतवारों को पनपने नहीं देती है, क्योंकि फसल के वानस्पतिक आच्छादन से खरपतवारों के पौधों को पर्याप्त मात्रा में प्रकाश उपलब्ध नहीं हो पाता है । देर से बोयी जाने वाली फसलों में खरपतवारों के नियंत्रण की यह बहुत अच्छी विधि है । बीज बुवाई दर फसल एवं फसल किस्म पर निर्भर करती है। पंक्तियों की दूरी जितनी कम होगी उतनी ही फसल भूमि में सायेदार होगी, जिसके कारण सूर्य का प्रकाश भूमि पर नहीं पहुँचेगा और नए खरपतवारों को पर्याप्त मात्रा में प्रकाश नहीं मिलने के कारण वे पनप नहीं पाएंगे।

5. सजीव आच्छादन फसलें :ऐसी फसलें जिनका विकास तेजी से होता है एवं भूमि की सतह को सघनता से आच्छादित कर लेती हैं तथा खरपतवारों की वृद्धि को दबा देती हैं जिससे खरपतवारों को पनपने का मौका नहीं मिल पाता है, उन्हें सजीव आच्छादन फसलें कहते हैं तथा इस विधि को सजीव आच्छादन कहते हैं। जैसे– राई, बरसीम, रिजका, सोयाबीन, उर्द, गाजर, मूली, पालक आदि आच्छादन फसलों का उपयोग खरपतवारों के नियंत्रण के लिए किया जा सकता है । आच्छादन फसलों का अवशेष भी मृदा सतह को ढक लेता है, इससे भी खरपतवारों की संख्या कम हो जाती है। सजीव आच्छादन को फसल बुवाई या फसल स्थापित होने के पूर्व या बाद दोनों स्थितियों में लगाया जा सकता है। सजीव आच्छादन का ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए कि यह मुख्य फसल से प्रतियोगिता ना कर सके।

6. प्रतिस्पर्धी फसल उगाना :खरपतवारों से अधिक प्रतिस्पर्धा करने वाली फसलें उगाने से खरपतवारों को अच्छी तरह से नियंत्रित किया जा सकता है । प्रतिस्पर्धी फसल में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए :

- ✓ ऐसी फसल जिसका अंकुरण एवं वृद्धि तीव्रता से होती हो।
- ✓ यदि वह हरे चारे वाली फसल है तो वह प्रत्येक कटाई के बाद जल्दी से वृद्धि करने वाली हो। जैसे– बरसीम।
- ✓ यदि वह हरी पत्तेदार सब्जी फसल है तो वह प्रत्येक कटाई के बाद जल्दी से वृद्धि करने वाली हो। जैसे –पालक।
- ✓ कमजोर अथवा कम उपजाऊ भूमि में भी सफलतापूर्वक उग सकती हो तथा मौसम की प्रतिकूल दशाओं से अधिक प्रभावित न होती हो ।
- ✓ ऐसी फसल जिसकी जड़ें मृदा की ऊपरी तथा निचली दोनों परतों से पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता रखती हों ।

7. अन्तरवर्ती खेती :अन्तरवर्ती खेती में मुख्य फसल की दो कतारों के बीच में ऐसी फसल लगा देनी चाहिए जो कि खरपतवारों की वृद्धि को रोक देती है। अन्तरवर्ती फसलों के लिए फसल का चुनाव इस प्रकार करना चाहिए जिनसे खरपतवारों की रोकथाम की जा सके, किन्तु ये मुख्य फसल से पोषक तत्वों के लिए प्रतियोगिता न करें। खाद्यान्न फसलों के साथ दलहनी फसलों की अन्तरवर्ती खेती लाभदायक होती है। जैसे –मक्का या ज्वार के साथ सोयाबीन, उड़द या मूँगफली की अन्तरवर्ती खेती खरपतवारों को अंकुरण एवं उनके विकास को रोक देती है तथा मुख्य फसलों को भी प्रभावित नहीं करती है।

8. फसल सघनता :फसलों को इतनी सघनता से बोना चाहिए जिससे एक पोधे दूसरे पोधें तक की दूरी उपयुक्त हो एवं एक पोधा दूसरे पोधें से प्रतिस्पर्धा ना रखें जिससे फसल की बढ़वार और उपज अच्छी होनी चाहिए। फसल को सघनता से बोने पर खरपतवार को उगने के भूमि पर जगह नही रहेंगीं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

9. भूमिगत टपक सिंचाईः खासतौर से फल वृक्षों एवं सब्जी फसलों में भूमिगत टपक सिंचाई करने से सिंचाई जल का उपयोग केवल फसलों द्वारा ही किया जाता है। शेष क्षेत्र में जल की कमी के कारण खरपतवारों को पनपने के लिए जल की कमी हो जाती है और वे अपनी वृद्धि एवं विकास नहीं कर पाते हैं। इसके अलावा फसल पौधों के आस–पास उगे खरपतवारों को आसानी से उखाड़ कर नष्ट किया जा सकता है। इस प्रकार यह तकनीक खरपतवार नियंत्रण में सार्थक परिणाम देती है।

3. यांत्रिक व भोतिक विधियाँः इस विधि में खरपतवारों का नियंत्रण हाथ से, हस्तचालित यन्त्रों व जल आदि द्वारा किया जाता है जो कि निम्न प्रकार से हैं।

1. भूपरिष्करणः भूपरिष्करण या मिट्टी पलट जुताई विधि से खरपतवार के बीज पूरी जुताई की गहराई पर समान रूप से वितरित हो जाते हैं, जिससे ऊपरी सतह पर खरपतवारों का दबाव कम हो जाता है। जुताई खरपतवारों के नियंत्रण में निम्नानुसार योगदान देती है :

- ✓ जुताई खरपतवारों के बीजों के अंकुरण में सहायक होती है जिससे इनको यांत्रिक विधियों से आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।
- ✓ शुरूआत में जमीन से जुताई करके जमीन में दबे हुए खरपतवार के बीजों को निकालना और इसके बाद उन्हें अंकुरित होने देना और उसके बाद पुनःजुताई करके नष्ट कर देना।
- ✓ गर्मी की जुताई से बहुवर्षीय खरपतवार जड़ सहित भूमि की सतह पर आ जाते हैं, जो सूर्य की तेज रोशनी से सूखकर मर जाते हैं।
- ✓ जुताई करने से खरपतवार उखड़ जाते हैं या मिट्टी में गहराई पर दब कर नष्ट हो जाते हैं।
- ✓ खेत में जब फसल की बुवाई की जाती तो अंकुरण के समय खरपतवार नहीं उगते हैं। यह विधि एकवर्षीय तथा बहुवर्षीय खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए बहुत प्रभावी है।

2. खरपतवारों को हाथ से उखाड़ना :खरपतवारों की वृद्धि जब इतनी हो जाए कि इन्हें हाथ से पकड़ा जा सके तब इन्हें उखाड़ कर इनका उपयोग आच्छादन के रूप में किया जाना चाहिए। यह अवस्था फसल बुवाई के 20–25 दिनों बाद आती है । यह विधि छोटे क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होती है। यदि खरपतवार छूत की बीमारी वाला है तो उसे उखाड़ कर फसल क्षेत्र से दूर मिट्टी में गहराई में दबा दें। आमतौर पर सिंचित इलाकों में खरपतवार बहुत बड़ी समस्या पैदा करते हैं। खरपतवार से होने वाले नुकसान से बचने के लिए पहली सिंचाई के बाद हाथ से खरपतवार उखाड़ना बहुत उपयोगी रहता है।

3. हस्तचालित यंत्रो से निराई–गुड़ाई करना :खरपतवार निकासी का सबसे सही समय फसल की बुवाई या रोपाई के तीन सप्ताोह बाद है। फसल के प्रारम्भिक 25 से 40 दिनों तक खरपतवार नियंत्रण बहुत आवश्ययक होता है। आमतौर पर सिंचित इलाकों में खरपतवार बहुत बड़ी समस्या पैदा करते हैं। खरपतवार से होने वाले नुकसान से बचने के लिए फसल बुवाई के 20–25 दिनों बाद या पहली सिंचाई के बाद प्रथम निराई व आवश्यकता पड़ने पर 10–15 दिन बाद दूसरी निराई कर देनी चाहिए क्योंकि यह खरपतवारों का वृद्धि काल होता है। इस अवस्था में निराई करने से फसल की वृद्धि अच्छी हो जाती है और बाद में उगने वाले खरपतवारों को यह पनपने नहीं देती है। हस्तचालित यन्त्रों जैसे – खुरपी, फावड़ा, व कोनोवीडर का प्रयोग करके खरपतवारों का नियंत्रण किया जा सकता है। गहरी जड़ वाले खरपतवारों के ऊपरी भाग को बार–बार काटने से इनका प्रस्फुटन बंद हो जाता है और ये पूर्ण रूप से समाप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार एकवर्षीय खरपतवारों को उनमें बीज बनने या फूल आने से पहले निकाल देने से इन पर नियंत्रण पाया जा सकता है। इस विधि का प्रयोग करने के लिए फसलों की बुवाई पंक्तियों में की जानी चाहिए।

4. गर्मी की गहरी जुताईःगर्मी की गहरी जुताई करना चाहिए जिससे मिट्टी पलटने के कारण नीचे जमीन से नाशकजीव जैसे खरपतवार, कीट, फफूंद, निमेटोड आदि ऊपरी सतह पर आ जाते है और अधिक तापमान से सभी नाशकजीव नष्ट हो जाते है।

5. खरपतवारों को जलमग्न करना :पानी की पर्याप्त मात्रा की उपलब्धता में खरपतवारों को 3–4 सप्ताह तक पानी में डुबाकर रखा जाता है। इसके परिणाम स्वरूप खरपतवार पौधों को ऊर्जा प्राप्त करने के लिए प्रकाश एवं श्वसन के लिए ऑक्सीजन की कमी हो जाती है और ये शीघ्र नष्ट हो जाते हैं। बहुवर्षीय छोटे पौधे वाले खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए यह विधि अधिक लाभकारी होती है परन्तु इस विधि का उपयोग खाली भूमि में ही किया जा सकता है।

6. पलवारः पलवार के रूप में काली प्लास्टिक के चादरें या दफ्ती का उपयोग किया जा सकता है किन्तु ये मृदा में पोषक तत्वों को नहीं जोड़ते और न ही इसकी संरचना में सुधार करते हैं। जैविक पलवार बहुत उपयोगी है।

जैविक आच्छादन या जैविक पलवार :मृदा सतह के ऊपर जैविक आच्छादन का उपयोग करना अथवा मृदा सतह को ढकना खरपतवार के बीजों को अंकुरित होने में तथा वृद्धि करने में बाधा डालता है, क्योंकि यह प्रकाश संचार एवं वायु संचार को रोक देता है। जैविक आच्छादन के रूप में कम्पोस्ट खाद, भूसा, पुआल, सूखी घास, सूखी पत्तियां, फसल अवशेष इत्यादि का उपयोग किया जा सकता है। इनके द्वारा प्रभावी खरपतवार नियंत्रण होता है। मृदा में इसका जैव विच्छेदन आसानी से हो जाता है।

पलवार खरपतवार नियंत्रण के अतिरिक्त मृदा में निम्नलिखित प्रभाव डालता है :

- ✓ मृदा में वाष्पीकरण द्वारा होने वाले जल की हानि को कम करता है, जिससे मृदा में नमी बनी रहती है।
- ✓ खरपतवार की वृद्धि कम हो जाती है क्योंकि यह मृदा में पहुँचने वाली प्रकाश की मात्रा को रोकता है।
- ✓ तेज बारिश एवं हवा में मृदा क्षरण को रोकता है ।
- ✓ मृदा की सतह पर सूक्ष्म जीवों की संख्या में वृद्धि करता है।
- ✓ मृदा में पोषक तत्वों को जोड़ता है और मृदा संरचना में सुधार करता है।
- ✓ मृदा में कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

दूध दूहने की मशीनः एक तकनीकी दृष्टिकोण

अरविन्द कुमावत एवं अरूण प्रताप सिंह
दुग्ध विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय, एस.के.एन.यू., जोबनेर

परिचयः भारत जैसे कृषि प्रधान देश में पशुपालन और दुग्ध उत्पादन एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। परंपरागत रूप से हाथ से दूध दुहना समय–साध्य, श्रम–साध्य और कभी कभी अस्वच्छ प्रक्रिया होती है। आधुनिक तकनीकी विकास के कारण अब दूध दुहने की प्रक्रिया को यंत्रीकृत किया जा चुका है। इस प्रक्रिया में उपयोग की जाने वाली मशीन को दूध दुहने की मशीन कहा जाता है। यह मशीन पशु से स्वच्छ, शीघ्र और प्रभावी ढंग से दूध निकालने में सहायता करती है।

दूध दुहने की मशीन का कार्य सिद्धांतः दूध दुहने की मशीन मुख्यतः वैक्यूम सिद्धांत पर कार्य करती है। यह मशीन एक वैक्यूम पंप के माध्यम से वायुदाब को कम करती है, जिससे स्तनों से दूध स्वतः खिंचने लगता है। मशीन में उपयोग होने वाले टीट कप स्तनों पर एक विशेष लयबद्ध दबाव डालते हैं, जो प्राकृतिक दुहने की प्रक्रिया की नकल करती हैं।

प्रमुख घटक

(क) वैक्यूम पंपः यह मशीन का मुख्य भाग होता है, जो वायुदाब को कम करके स्तनों से दूध निकालने के लिए आवश्यक दबाव प्रदान करता है।

(ख) पल्सेटरः यह वैक्यूम और वायुमंडलीय दाब को लयबद्ध रूप से बदलता है ताकि टीट कपों में बार बार दबाव और विश्राम हो सके।

(ग) टीट कप क्लस्टरः इसमें चार टीट कप होते हैं, जिन्हें गाय या भैंस के स्तनों पर लगाया जाता है। इसके अंदर रबर लाइनर होता है, जो लचीलापन प्रदान करता है।

(घ) दूध पाइप और रिसीविंग जारः दूध निकलने के बाद पाइप के माध्यम से रिसीविंग जार में एकत्रित किया जाता है।

(ड़) वैक्यूम गेज और रेगुलेटरः यह वैक्यूम स्तर की निगरानी और नियंत्रण करते हैं ताकि अधिक दबाव से पशु को किसी प्रकार की हानि न हो।

01. मशीन का संचालन

- मशीन को स्वच्छ जल और सैनिटाइजर से धोकर साफ करें।
- वैक्यूम पंप चालू करें और वैक्यूम स्तर को 380–420 mmHg पर सेट करें।
- पशु के स्तनों को साफ करें और पहले कुछ धारें निकाल कर जाँच करें।
- टीट कपों को धीरे धीरे स्तनों पर लगाएं।
- दूध जब रुक जाए, तो कपों को धीरे धीरे हटा दें।
- मशीन को पुनः साफ करें।

02. यांत्रिक दुहाई के लाभ

- स्वच्छताः मशीन द्वारा दुहाई अधिक स्वच्छ होती है।
- समय की बचतः कम समय में अधिक पशुओं का दूध निकाला जा सकता है।
- श्रम की बचतः कम श्रमिकों की आवश्यकता होती है।
- दूध की गुणवत्ताः मशीन दुहाई में कम बैक्टीरिया होते हैं।
- उत्पादकता में वृद्धिः नियमितता के कारण दूध उत्पादन में वृद्धि होती है।

03. देखरेख और सफाई

- प्रत्येक दुहाई के बाद मशीन को गर्म पानी और डिटर्जेंट से साफ करना चाहिए।
- हफ्ते में एक बार मशीन के सभी पाइप, जार, पल्सेटर आदि की गहन सफाई अवश्य करें।
- वैक्यूम गेज और मोटर की समय समय पर सर्विसिंग होनी आवश्यक है।
- रबर लाइनर को हर 6 महीने में बदला जाना चाहिए।

04. सावधानियाँ

- मशीन का वैक्यूम प्रेशर अधिक न हो, अन्यथा पशु के स्तनों को क्षति हो सकती है।
- दुहाई से पहले स्तनों की साफ–सफाई सुनिश्चित करें।
- मशीन को पूरी तरह सैनिटाइज किए बिना उपयोग न करें।
- विद्युत आपूर्ति सुरक्षित और स्थिर होनी चाहिए।
- वैक्यूम स्तर कम होना पाइपलाइन में लीकेज या पंप की खराबी की जांच करें।
- दूध का प्रवाह धीमा होना टीट कप लाइनर घिस जाने पर उसे बदलें।
- असामान्य आवाज मोटर या पल्सेटर में गड़बड़ी हो सकती है, तुरंत सर्विसिंग कराएं।
- दूध में झाग या हवा आने पर पाइप कनेक्शन और सील की जांच करें।

05. दूध दुहने की मशीनों के प्रकार : वर्तमान समय में डेयरी फार्म के आकार के पशुओं की संख्या तथा तकनीकी आवश्यकताओं के अनुसार विभिन्न प्रकार की दूध दुहने की मशीनें उपयोग में लायी जाती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

(क) बकेट टाइप मिल्किंग मशीनः यह छोटे एवं मध्यम स्तर के पशुपालकों के लिए उपयुक्त होती है। इसमें दूध सीधे एक स्टेनलेस स्टील बकेट में एकत्रित होता है। इसकी लागत कम होती है तथा इसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से ले जाया जा सकता है।

(ख) पाइपलाइन मिल्किंग सिस्टमः इस प्रणाली में दूध पाइपलाइन के माध्यम से सीधे बल्क मिल्क कूलर या स्टोरेज टैंक में पहुंचता है। बड़े डेयरी फार्मों में यह अधिक उपयोगी है क्योंकि इससे श्रम एवं समय दोनों की बचत होती है।

(ग) पार्लर मिल्किंग सिस्टमः आधुनिक डेयरी फार्मों में मिल्किंग पार्लर प्रचलित है। इसमें कई पशुओं का दूध एक साथ निकाला जा सकता है, जिससे उत्पादन क्षमता बढ़ती है।

(घ) रोबोटिक मिल्किंग मशीनः यह पूरी तरह स्वचालित प्रणाली है जिसमें सेंसर और कंप्यूटर तकनीक का उपयोग किया जात है। पशु स्वयं मशीन के पास आकर दूध दुहवा सकता है, जिससे मानव श्रम की आवश्यकता बहुत कम हो जाती है।

06. दूध की गुणवत्ता पर प्रभावः यांत्रिक दुहाई का दूध की गुणवत्ता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।
- मशीन द्वारा दुहाई में बाहरी धूल, गंदगी और बैक्टीरिया का प्रवेश कम होता है।
- दुहाई की गति समान रहने से दूध में वसा प्रतिशत और ठोस पदार्थों की गुणवत्ता बेहतर रहती है।
- उचित वैक्यूम स्तर बनाए रखने से थनों पर कम दबाव पड़ता है, जिससे मास्टाइटिस जैसी बीमारियों की संभावना घटती है।
- स्टेनलेस स्टील उपकरणों का उपयोग दूध को रासायनिक प्रतिक्रिया से सुरक्षित रखता है।

07. ऊर्जा दक्षता और लागत विश्लेषणःदूध दुहने की मशीनों के चयन में ऊर्जा खपत और आर्थिक पहलुओं पर भी ध्यान देना आवश्यक है।
- कम ऊर्जा खपत वाले वैक्यूम पंप और मोटर उपयोग करने से बिजली खर्च कम होता है।
- स्वचालित प्रणाली प्रारंभ में महंगी होती है, लेकिन लंबे समय में श्रम लागत कम होने से लाभकारी सिद्ध होती है।
- नियमित रखरखाव से मशीन की कार्यक्षमता बनी रहती है और अनावश्यक खर्च से बचाव होता है।
- समूह आधारित डेयरी फार्मों में सामूहिक रूप से मशीन का उपयोग करके लागत को कम किया जा सकता है।

08. पशु कल्याण और स्वास्थ्य प्रबंधनः यांत्रिक दुहाई के दौरान पशुओं के स्वास्थ्य का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।
- दुहाई से पहले और बाद में थनों को कीटाणुनाशक घोल से साफ करना चाहिए।
- वैक्यूम दबाव और पल्सेशन रेट सही रखना चाहिए ताकि थनों को नुकसान न हो।
- बीमार पशुओं का अलग रखकर दुहाई करनी चाहिए ताकि संक्रमण न फैले।
- नियमित पशु चिकित्सा जांच से दूध उत्पादन और गुणवत्ता दोनों बेहतर रहती है।
- आधुनिक तकनीकी नवाचारःवर्तमान समय में दूध दुहने की मशीनों में कई आधुनिक तकनीकों का समावेश किया जा रहा हैः– सेंसर आधारित दूध प्रवाह मापन प्रणाली। ऑटोमैटिक क्लस्टर रिमूवल। कंप्यूटराइज्ड डेटा रिकॉर्डिंग। इंटरनेट ऑफ थिंग्स आधारित मॉनिटरिंग इन तकनीकों से फार्म प्रबंधन अधिक वैज्ञानिक और प्रभावी बनता है।

09. भारतीय डेयरी क्षेत्र में भविष्य की संभावनाएँः भारत में उद्योग तेजी से विकसित हो रहा है और यंत्रीकृत दुहाई प्रणालियों की मांग बढ़ रही है।
- सहकारी डेयरी संस्थाओं और सरकारी योजनाओं द्वारा आधुनिक उपकरणों को बढ़ावा दिया जा रहा है।
- छोटे किसानों के लिए कम लागत वाली पोर्टेबल मशीनें विकसित की जा रही है।
- स्मार्ट डेयरी फार्मिंग और डिजिटल मॉनिटरिंग भविष्य की दिशा तय कर रही है।
- इससे न केवल दूध उत्पादन बढ़ेगा बल्कि ग्रामीण रोजगार और किसानों की आय में भी वृद्धि होगी।

14. निष्कर्षः दूध दुहने की मशीनें आधुनिक दुग्ध उत्पादन प्रणाली का महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुकी हैं। यह न केवल उत्पादकता और गुणवत्ता बढ़ाती हैं, बल्कि पशुओं के स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उपयोगी हैं। भारत जैसे देश में जहाँ डेयरी उद्योग तेजी से बढ़ रहा है, वहाँ ऐसी यंत्रीकृत प्रणालियों को अपनाया जाना आवश्यक होता जा रहा है।

मृदा स्वास्थ्य और उसका प्रबंधन

आशीष कुमार झारोटिया, धर्मेन्द्र सिंह भाटी, रमाकान्त शर्मा एवं सीता राम वर्मा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

मृदा (मिट्टी) कृषि की आधारशिला है और खाद्य सुरक्षा की रीढ़ है। स्वस्थ मृदा केवल पौधों को उगाने का माध्यम नहीं है, बल्कि यह एक जीवित पारिस्थितिकी तंत्र है जो फसलों, पशुओं और मानव जीवन का सहारा है। मृदा स्वास्थ्य से आशय मिट्टी की उस क्षमता से है जिसके द्वारा वह पौधों, पशुओं और मनुष्यों को सतत् रूप से सहारा देते

हुए पर्यावरण की गुणवत्ता को बनाए रख सके। किसानों के लिए मृदा स्वास्थ्य का संरक्षण उच्च उत्पादन, कम लागत और दीर्घकालीन स्थिरता के लिए अत्यंत आवश्यक है।

मृदा स्वास्थ्य क्या है? मृदा स्वास्थ्य मिट्टी की कार्य करने की क्षमता है। एक स्वस्थ मृदाः

– पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करती है। उचित संरचना और वायुसंचार बनाए रखती है।, पर्याप्त नमी धारण करती है। लाभकारी सूक्ष्मजीवों को समर्थन देती है। कटाव और क्षरण का प्रतिरोध करती है।

मृदा स्वास्थ्य के प्रमुख संकेतक

1. भौतिक संकेतकः मृदा की बनावट और संरचना, थोक घनत्व, जल धारण क्षमता, मिट्टी का रंग और भुरभुरापन

2. रासायनिक संकेतकः मृदा pH विद्युत चालकता (EC)

– कार्बनिक कार्बन की मात्रा, प्रमुख एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता

3. जैविक संकेतकः

– सूक्ष्मजीवों की संख्या, केंचुओं की उपस्थिति, एंजाइम क्रियाशीलता, कार्बनिक पदार्थ के विघटन की दर

किसानों के लिए मृदा स्वास्थ्य का महत्व :

1. अधिक उत्पादनः स्वस्थ मिट्टी बेहतर जड़ विकास और पोषक तत्वों की उपलब्धता सुनिश्चित करती है।
2. उर्वरक लागत में कमीः कार्बनिक पदार्थ से समृद्ध मिट्टी में रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम होती है।
3. बेहतर जल प्रबंधनः अच्छी संरचना से जल का अवशोषण बढ़ता है और बहाव कम होता है।
4. जलवायु सहनशीलताः स्वस्थ मिट्टी कार्बन का संचयन करती है और सूखा जैसी परिस्थितियों में फसलों को सहारा देती है।
5. दीर्घकालीन स्थिरताः मृदा संरक्षण से भूमि की उत्पादकता आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रहती है।

मृदा क्षरण के प्रमुख कारणः रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक उपयोग, एक ही फसल की निरंतर खेती (एकल फसली प्रणाली), अधिक सिंचाई और खराब जल निकास, जल एवं वायु द्वारा कटाव, लवणीयता एवं क्षारीयता की समस्या, फसल अवशेषों को जलाना।

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन की प्रमुख विधियाँ

1. कार्बनिक पदार्थों का प्रयोगः गोबर की खाद, कम्पोस्ट और वर्मी कम्पोस्ट का उपयोग। हरी खाद जैसे ढैंचा और सनई (सनहेम्प) की खेती। फसल अवशेषों को जलाने के बजाय मिट्टी में मिलाना।

2. संतुलित उर्वरक प्रबंधनः उर्वरक प्रयोग से पूर्व मृदा परीक्षण करवाना। फसल की आवश्यकता के अनुसार पोषक तत्वों का प्रयोग। एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन अपनाना।

3. फसल चक्र और विविधीकरणः अनाज के साथ दलहनी फसलों का समावेश। आवरण फसलें (कवर क्रॉप) उगाना। अंतःफसली प्रणाली अपनाना।

4. संरक्षण कृषिः न्यूनतम या शून्य जुताई। मल्चिंग द्वारा नमी संरक्षण। समोच्च खेती और मेड़बंदी द्वारा कटाव रोकना।

5. उचित सिंचाई प्रबंधनः अधिक सिंचाई से बचाव। ड्रिप एवं स्प्रिंकलर प्रणाली का उपयोग। लवणीय और जलभराव क्षेत्रों में उचित जल निकास।

6. लवणीय एवं क्षारीय मृदा का प्रबंधनः क्षारीय मिट्टी में जिप्सम का प्रयोग। सहनशील किस्मों का चयन। अच्छी गुणवत्ता वाले पानी से लीचिंग।

मृदा परीक्षण की भूमिका नियमित मृदा परीक्षण से किसानःअपने खेत की पोषक स्थिति जान सकते हैं। अनावश्यक उर्वरक उपयोग से बच सकते हैं। संबंधी समस्याओं को सुधार सकते हैं। उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ा सकते हैं। किसानों को प्रत्येक 2 से 3 वर्ष में मृदा परीक्षण अवश्य करवाना चाहिए।

निष्कर्षः मृदा स्वास्थ्य ही किसान की वास्तविक संपत्ति है। यदि मिट्टी स्वस्थ है तो उत्पादन, आय और पर्यावरण तीनों सुरक्षित रहते हैं। वैज्ञानिक प्रबंधन विधियों को अपनाकर किसान अपनी भूमि की उर्वरता बढ़ा सकते हैं और सतत कृषि की दिशा में मजबूत कदम बढ़ा सकते हैं। स्वस्थ मृदा से ही स्वस्थ फसल, स्वस्थ परिवार और स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण संभव है।

मोबाइल तकनीक के माध्यम से कृषि सूचना प्रसार

विजय पाराशर, सौरव सिंगला, आई.एम. खान एवं भारती शौकीन
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

प्रस्तावनाः भारत एक कृषि प्रधान देश है जहाँ बड़ी आबादी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। कृषि उत्पादन, ग्रामीण अर्थव्यवस्था और खाद्य सुरक्षा को मजबूत बनाने में सही समय पर सही जानकारी अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। पारंपरिक समय में कृषि जानकारी मुख्यतः अनुभव, स्थानीय परंपराओं और कृषि विस्तार अधिकारियों पर आधारित थी, लेकिन सूचना एवं संचार तकनीक के विकास के साथ कृषि क्षेत्र में सूचना प्रसार का स्वरूप तेजी से बदल रहा है। मोबाइल तकनीक ने कृषि सूचना प्रसार में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। आज किसान मोबाइल फोन, इंटरनेट, मोबाइल ऐप, एसएमएस सेवाओं, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म और डिजिटल पोर्टल के माध्यम से मौसम, फसल प्रबंधन, बाजार भाव, सरकारी योजनाओं और वैज्ञानिक सलाह जैसी महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त कर रहे हैं। इससे कृषि उत्पादन क्षमता, निर्णय लेने की दक्षता और किसानों की आय में सकारात्मक प्रभाव देखा जा रहा है।

कृषि सूचना प्रसार की अवधारणाः कृषिसूचना प्रसार का अर्थ है किसानों तक कृषि से संबंधित वैज्ञानिक, तकनीकी, आर्थिक और प्रबंधकीय जानकारी पहुँचाना ताकि वे बेहतर कृषि निर्णय ले सकें। इसमें निम्न प्रकार की सूचनाएँ शामिल होती हैं।

- उन्नत बीज और फसल किस्में, मृदा स्वास्थ्य और पोषण प्रबंधन, सिंचाई तकनीक और जल संरक्षण, कीट एवं रोग नियंत्रण उपाय, मौसम पूर्वानुमान, बाजार मूल्य और विपणन रणनीतियाँ, सरकारी योजनाएँ और सब्सिडी, मोबाइल तकनीक इन सभी सूचनाओं को तेज, सुलभ और किफायती तरीके से किसानों तक पहुँचाने का प्रभावी माध्यम बन चुकी है।

भारत में मोबाइल तकनीक का विस्तार और कृषि पर प्रभाव: पिछले दो दशकों में भारत में मोबाइल उपयोगकर्ताओं की संख्या में तेजी से वृद्धि हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्मार्टफोन और इंटरनेट कनेक्टिविटी की उपलब्धता बढ़ने से कृषि सूचना प्रसार में नए अवसर पैदा हुए हैं।

किसानों के लिए मोबाइल तकनीक के प्रमुख प्रभाव:

1. **समय पर निर्णय लेने की क्षमता** –मौसम जानकारी और बाजार भाव मिलने से किसान बेहतर योजना बना सकते हैं।
2. **उत्पादन लागत में कमी** –वैज्ञानिक सलाह से उर्वरक, कीटनाशक और जल का उचित उपयोग संभव हुआ है।
3. **आय में वृद्धि** –बेहतर विपणन जानकारी से किसान उचित मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।
4. **ज्ञान का लोकतंत्रीकरण** – अब छोटे किसान भी वैज्ञानिक जानकारी तक पहुँच सकते हैं।

मोबाइल आधारित कृषि सूचना सेवाएँ: भारत में कई संस्थाएँ मोबाइल आधारित कृषि सूचना सेवाएँ प्रदान कर रही हैं। उदाहरण के रूप में mKisan Portal किसानों को एसएमएस और मोबाइल ऐप के माध्यम से मौसम जानकारी, फसल सलाह और सरकारी योजनाओं की जानकारी प्रदान करता है। इसी प्रकार, मोबाइल ऐप आधारित सेवाएँ किसानों को फसल रोग पहचान, उर्वरक सिफारिश, सिंचाई प्रबंधनऔर बाजार संपर्क जैसी सुविधाएँ उपलब्ध कराती हैं।

कृषि परामर्श के लिए कॉल सेवाए: किसानों को सीधे विशेषज्ञों से जोड़ने के लिए कॉल आधारित सेवाएँ भी विकसित की गई हैं। किसानों को टोल–फ्री नंबर के माध्यम से कृषि विशेषज्ञों से सलाह लेने की सुविधा प्रदान करता है। यह सेवा विशेष रूप से उन किसानों के लिए उपयोगी है जिनके पास इंटरनेट या स्मार्टफोन की सुविधा सीमित है। फोन कॉल के माध्यम से किसान अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त कर सकते हैं।

कृषि अनुसंधान संस्थानों की भूमिका: भारत में कृषि अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देने में Indian Council of Agricultural Research की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके तहत कृषि विश्वविद्यालय और अनुसंधान संस्थान मोबाइल प्लेटफॉर्म के माध्यम से नई तकनीक, उन्नत बीज, कीट नियंत्रण उपाय और कृषि प्रबंधन संबंधी जानकारी किसानों तक पहुँचा रहे हैं। इससे अनुसंधान प्रयोगशाला से खेत तक पहुँच रहा है और कृषि उत्पादकता में वृद्धि हो रही है।

वैश्विक दृष्टिकोण और अंतरराष्ट्रीय पहल: अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कृषि सूचना प्रसार में मोबाइल तकनीक का उपयोग तेजी से बढ़ रहा है। Food and Agriculture Organization डिजिटल प्लेटफॉर्म और मोबाइल आधारित सेवाओं के माध्यम से जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा और टिकाऊ कृषि से संबंधित जानकारी विश्वभर के किसानों तक पहुँचा रही है। यह वैश्विक सहयोग कृषि नवाचार, तकनीकी हस्तांतरण और ज्ञान साझा करने में सहायक है।

डिजिटल लाइब्रेरी और ज्ञान संसाधन: मोबाइल तकनीक ने डिजिटल पुस्तकालयों तक पहुँच को भी आसान बना दिया है। उदाहरण के लिए National Digital Library of India के माध्यम से कृषि सहित विभिन्न विषयों के लाखों डिजिटल संसाधन उपलब्ध हैं। इससे किसान, विद्यार्थी और शोधार्थी नवीनतम शोध, तकनीकी जानकारी और प्रशिक्षण सामग्री तक आसानी से पहुँच सकते हैं।

मोबाइल तकनीक के प्रमुख लाभ

1 त्वरित सूचना उपलब्धता:मौसम चेतावनी, बाजार भाव और कृषि सलाह तुरंत प्राप्त होती है।
2 लागत प्रभावशीलता :कम लागत में व्यापक जानकारी उपलब्ध होती है।
3 कृषि जोखिम प्रबंधन:मौसम और रोग पूर्वानुमान से नुकसान कम होता है।
4 बाजार संपर्क:किसान सीधे खरीदारों और मंडियों से जुड़ सकते हैं।
5 शिक्षा और प्रशिक्षण: वीडियो और ऑडियो सामग्री से किसानों का कौशल विकास होता है।

सोशल मीडिया और मोबाइल कृषि सूचना: मोबाइल आधारित सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे व्हाट्सऐप, यूट्यूब और फेसबुक ने कृषि जानकारी साझा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। किसान समूह बनाकर अनुभव साझा करते हैं, विशेषज्ञ सलाह प्राप्त करते हैं और नई तकनीकों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। यह अनौपचारिक ज्ञान नेटवर्क कृषि नवाचार के प्रसार में सहायक है।

कृषि विपणन में मोबाइल तकनीक

मोबाइल तकनीक ने कृषि विपणन प्रणाली को भी बदल दिया है। किसान अब:

- **ऑनलाइन मंडी भाव देख सकते हैं :** आज के डिजिटल युग में किसान घर बैठे या मोबाइल फोन से ही कृषि उत्पादों के मंडी भाव (Market Prices) आसानी से देख सकते हैं। इससे उन्हें फसल बेचने का सही समय, उचित मूल्य और बेहतर बाजार की जानकारी मिलती है।
- **डिजिटल भुगतान कर सकते हैं :** डिजिटल तकनीक के विकास से आज किसान और आम नागरिक नकद के बिना ऑनलाइन भुगतान (Digital Payment) आसानी से कर सकते हैं। इससे लेन–देन तेज, सुरक्षित और पारदर्शी बनता है। कृषि क्षेत्र में भी खाद–बीज खरीद, मजदूरी भुगतान, मंडी भुगतान और सरकारी सब्सिडी प्राप्त करने में डिजिटल भुगतान का उपयोग बढ़ रहा है।
- **ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म से जुड़ सकते हैं :**आज डिजिटल तकनीक के कारण किसान, कारीगर और छोटे उद्यमी ई–कॉमर्स प्लेटफॉर्म (Online Marketplaces) से जुड़कर अपने उत्पाद सीधे ग्राहकों तक पहुँचा सकते हैं। इससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है, बाजार का विस्तार होता है और आय बढ़ने की संभावना रहती है।
- **खरीदारों से सीधे संपर्क कर सकते हैं :** डिजिटल तकनीक और इंटरनेट के प्रसार से आज किसान और उत्पादक बिचौलियों के बिना सीधे खरीदारों से संपर्क स्थापित कर सकते हैं। इससे उत्पाद का बेहतर मूल्य मिलता है,

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पारदर्शिता बढ़ती है और बाजार का विस्तार होता है। इससे बिचौलियों की भूमिका कम हुई है और किसानों को बेहतर मूल्य प्राप्त हो रहा है।

कृषि शिक्षा और मोबाइल लर्निंग: मोबाइल आधारित ई–लर्निंग प्लेटफॉर्म किसानों और कृषि विद्यार्थियों के लिए महत्वपूर्ण संसाधन बन रहे हैं। इनसे ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि शिक्षा का विस्तार हुआ है।

चुनौतियाँ: मोबाइल तकनीक ने कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य और व्यापार सहित अनेक क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। किसानों को मौसम जानकारी, मंडी भाव, कृषि तकनीक और डिजिटल भुगतान जैसी सुविधाएँ मोबाइल के माध्यम से उपलब्ध हुई हैं। इसके बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में मोबाइल तकनीक के व्यापक उपयोग में कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं, जिन्हें समझना और समाधान करना आवश्यक है।

1 ग्रामीण इंटरनेट कनेक्टिविटी की कमी: ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट नेटवर्क की उपलब्धता और गुणवत्ता अभी भी शहरी क्षेत्रों की तुलना में कमजोर है। कई गाँवों में धीमा इंटरनेट, बार–बार नेटवर्क बाधा या सीमित ब्रॉडबैंड सुविधाएँ किसानों को डिजिटल सेवाओं का पूर्ण लाभ लेने से रोकती हैं। इससे ऑनलाइन प्रशिक्षण, ई–मार्केटिंग और डिजिटल सूचना सेवाओं का उपयोग प्रभावित होता है। बेहतर डिजिटल बुनियादी ढाँचा विकसित करना इस समस्या का प्रमुख समाधान है।

2. डिजिटल साक्षरता का अभाव: अनेक ग्रामीण उपयोगकर्ताओं को स्मार्टफोन, मोबाइल एप्लिकेशन, इंटरनेट ब्राउजिंग और डिजिटल भुगतान प्रणालियों का पर्याप्त ज्ञान नहीं होता। तकनीकी जानकारी की कमी के कारण वे उपलब्ध डिजिटल संसाधनों का प्रभावी उपयोग नहीं कर पाते। डिजिटल साक्षरता प्रशिक्षण कार्यक्रम, कृषि विस्तार सेवाएँ और स्थानीय स्तर पर तकनीकी मार्गदर्शन इस चुनौती को कम कर सकते हैं।

3 **स्थानीय भाषाओं में सामग्री की कमी**: बहुत–सी डिजिटल कृषि जानकारी अंग्रेजी या सीमित भाषाओं में उपलब्ध होती है, जिससे ग्रामीण उपयोगकर्ताओं के लिए उसे समझना कठिन हो जाता है। स्थानीय भाषाओं में कृषि सलाह, प्रशिक्षण वीडियो और मोबाइल ऐप विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। इससे तकनीक की पहुँच और उपयोगिता दोनों बढ़ सकती हैं।

4. **उपकरणों की लागत:** स्मार्टफोन, इंटरनेट डेटा पैक और डिजिटल उपकरणों की लागत कई किसानों के लिए अभी भी आर्थिक चुनौती है। सीमित आय वाले किसानों के लिए उच्च गुणवत्ता वाले उपकरण खरीदना कठिन हो सकता है। सस्ती तकनीक, सरकारी सहायता योजनाएँ और सामुदायिक डिजिटल संसाधन केंद्र इस समस्या के समाधान में सहायक हो सकते हैं।

5. **डेटा गोपनीयता और विश्वसनीयता के मुद्दे**: डिजिटल प्लेटफॉर्म पर व्यक्तिगत जानकारी, बैंकिंग डेटा और कृषि संबंधित जानकारी की सुरक्षा महत्वपूर्ण है। साइबर धोखाधड़ी, फर्जी सूचना और डेटा दुरुपयोग जैसी समस्याएँ उपयोगकर्ताओं के विश्वास को प्रभावित कर सकती हैं। सुरक्षित डिजिटल प्रणाली, जागरूकता कार्यक्रम और साइबर सुरक्षा प्रशिक्षण इस चुनौती को कम करने में सहायक हैं। इन चुनौतियों को दूर करने के लिए सरकारी नीतियाँ, प्रशिक्षण कार्यक्रम और तकनीकी सुधार आवश्यक हैं।

भविष्य की संभावनाएँ: मोबाइल तकनीक ने कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य और व्यापार सहित अनेक क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं। किसानों को मौसम जानकारी, मंडी भाव, कृषि तकनीक और डिजिटल भुगतान जैसी सुविधाएँ मोबाइल के माध्यम से उपलब्ध हुई हैं। इसके बावजूद ग्रामीण क्षेत्रों में मोबाइल तकनीक के व्यापक उपयोग में कुछ महत्वपूर्ण चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं, जिन्हें समझना और समाधान करना आवश्यक है।

• **कृत्रिम बुद्धिमत्ता आधारित कृषि सलाह :** मोबाइल तकनीक के साथ आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का समन्वय किसानों को अधिक सटीक कृषि सलाह प्रदान करेगा। AI आधारित मोबाइल ऐप फसल रोग पहचान, मौसम विश्लेषण, मिट्टी की गुणवत्ता और उत्पादन पूर्वानुमान जैसे कार्य कर सकते जैसी संस्थाएँ डिजिटल कृषि समाधान विकसित करने पर जोर दे रही हैं। इससे किसानों को वैज्ञानिक निर्णय लेने में सहायता मिलेगी और उत्पादन लागत कम हो सकती है।

• **ड्रोन डेटा और रिमोट सेंसिंग :** ड्रोन और सैटेलाइट आधारित रिमोट सेंसिंग तकनीक कृषि निगरानी में क्रांतिकारी बदलाव ला रही है। मोबाइल ऐप के माध्यम से किसान फसल स्वास्थ्य की निगरानी, कीट–रोग पहचान, सिंचाई आवश्यकताओं का आकलन कर सकते हैं। भारत में इस दिशा में ISRO की सैटेलाइट तकनीक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

• **स्मार्ट सिंचाई प्रबंधन :** भविष्य में मोबाइल तकनीक आधारित स्मार्ट सिंचाई सिस्टम अधिक प्रचलित होंगे। सेंसर और IoT तकनीक के माध्यम से मिट्टी की नमी का डेटा, पानी की जरूरत का अनुमान, स्वचालित सिंचाई नियंत्रण ,संभव होगा। इससे जल संरक्षण और कृषि उत्पादकता दोनों में सुधार होगा।

•**कृषि डेटा एनालिटिक्स :** मोबाइल तकनीक किसानों को डेटा–आधारित कृषि निर्णय लेने में सक्षम बनाएगी। डेटा एनालिटिक्स से उत्पादन पूर्वानुमान, बाजार मांग विश्लेषण, जोखिम प्रबंधन संभव होगा। इस क्षेत्र में प्टड जैसी कंपनियाँ कृषि डेटा प्लेटफॉर्म विकसित कर रही हैं।

• **डिजिटल कृषि बाजार :** मोबाइल तकनीक के माध्यम से किसान सीधे डिजिटल बाजार से जुड़कर अपनी उपज बेच सकेंगे। इससे पारदर्शिता बढ़ेगी और बेहतर मूल्य प्राप्त होगा। भारत में eNAM जैसे प्लेटफॉर्म इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। भविष्य में मोबाइल तकनीक कृषि क्षेत्र में नवाचार, दक्षता और लाभप्रदता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। ड्रोन, डेटा एनालिटिक्स, स्मार्ट सिंचाई और डिजिटल बाजार जैसी तकनीकें कृषि को अधिक टिकाऊ और आधुनिक बनाएंगी। इसके लिए डिजिटल साक्षरता, तकनीकी निवेश और नीति समर्थन आवश्यक होगा।

नीतिगत सुझाव

1. ग्रामीण डिजिटल अवसंरचना का विकास, किसानों के लिए डिजिटल प्रशिक्षण कार्यक्रम, स्थानीय भाषाओं में कृषि सामग्री, सार्वजनिक–निजी भागीदारी को बढ़ावा, अनुसंधान और विस्तार सेवाओं का एकीकरण

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

निष्कर्षः मोबाइल तकनीक कृषि सूचना प्रसार का अत्यंत प्रभावी माध्यम बन चुकी है। इससे किसानों को समय पर वैज्ञानिक जानकारी, बाजार संपर्क और प्रशिक्षण उपलब्ध हो रहा है। डिजिटल कृषि सेवाएँ किसानों को सशक्त बनाकर कृषि उत्पादन, आय और ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। भविष्य में मोबाइल तकनीक, डिजिटल नवाचार और ज्ञान प्रबंधन के सहयोग से कृषि क्षेत्र और अधिक प्रगतिशील, टिकाऊ और लाभकारी बनेगा।

रसोई के मसालों में छिपा सेहत का राज

बरखा शर्मा, रामधन घसवा, शिशराम जाखड एवं सर्वेश त्रिपाठी
कृषि विज्ञान केन्द्र जावरा, रतलाम

भारत को मसालों का देश कहा जाता है क्योकि भारत में विश्व के विभिन्न प्रकार के सर्वाधिक मात्रा में मसालों का उत्पादन किया जाता है। मसालों का महत्व केवल इनके स्वादिष्ट व सुगंधकारक होने के कारण ही नहीं बल्कि इनका आर्थिक, व्यवसायिक, औद्योगिक एवं औषधीय महत्व भी अधिक है । भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए भारतीय मसालों का महत्वपूर्ण योगदान है । भारतीय खाना सुगन्धित एवं स्वादिष्ट मसालों के लिए भी जाना जाता है । मसाले भारतीय व्यंजनों का एक अभिन्न अंग है । इनके बिना आप भारतीय भोजन की कल्पना भी नहीं कर सकते है । मसाले ही है, जो भारतीय भोजन को उनका अनूठा स्वाद प्रदान करते है । भारतीय व्यंजन अपने समृद्ध स्वाद, जीवंत रंगो और उत्तम सुगंध के लिए विश्व स्तर पर प्रसिद्ध है । भारतीय रसोई में भोजन बनाते वक्त कई तरह के मसालों का प्रयोग किया जाता है ।

मसालों की उपयोगिताः उद्यानिकी फसलों में मसालों का महत्त्वपूर्ण स्थान है जिनका उपयोग भोज्य पदार्थों को स्वादिष्ट एवं खुशबूदार बनाने में किया जाता है । मसाला शब्द का उपयोग पूर्ण उत्पाद या पिसे हुए उत्पाद दोनों के लिए किया जाता है ।

हमारे जीवन शैली में मसालों की उपयोगिता इस प्रकार से है :

1. भोज्य पदार्थों के रूप में उपयोगिताः मसालों में तीखापन एवं चरपरापन पाया जाता है जो विशेष प्रकार के "एल्केलाइड" पदार्थों द्वारा उत्पन्न होता है। एल्केलाइड अलग–अलग मसालों में अलग–अलग प्रकार के होते हैं, जैसे काली मिर्च में चरपराहट "पाइपेरिन" से तथा लाल मिर्च में "कैप्सेसीन" नामक एल्केलाइड के कारण होती है ।इन्हीं कारणों से मसालों का उपयोग भोज्य पदार्थों में सुगन्ध, जायका बढ़ाने एवं भोज्य पदार्थों को आकर्षक दिखाने में किया जाता है। मसालों में विद्यमान वाष्पशील तेल इन्हें सुगन्ध प्रदान करके भोजन को रुचिकर व मनभावक बनाते हैं । ये भोजन के सहज पाचन में सहायक होते हैं ।

2. खाद्य–सुरक्षा व उपयोगिताः विभिन्न शोध अध्ययनों में पाया गया कि मसालों की उचित मात्रा खाद्य् पदार्थो में जीवाणुओं की वृद्धि को रोककर इन्हें खराब होने से बचाते है। अतः खाद्य पदार्थों को जीवाणुओं द्वारा खराब होने से बचाने हेतु पारम्परिक रसायनों की अपेक्षा अधिक प्राकृतिक व टिकाऊ मसाला–परिरक्षण उपयोग करने का परामर्श दिया जाता है। खाद्य परिरक्षण में खाद्य पदार्थों में जीवाणु प्रतिरोधक मसालें तापमान के अनुसार उचित अनुपात में मिलाये जाते हैं। खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

3. भोज्य पदार्थों को प्राकृतिक रंग प्रदान करने मेंः सामान्यः मसालों का रंग आकर्षक होने के कारण ये भोज्य पदार्थों की ओर ध्यान आकर्षित करने का विशेष प्राकृतिक गुण रखते हैं। इनके इस प्राकृतिक रंग का उपयोग औषधियों व हर्बल चाय आदि में वृहद् स्तर पर किया जाता है।

4. औद्योगिक उपयोगः मसालों का उपयोग इसके विभिन्न स्वरूपों में किया जाता है, जिसमें पाउडर (पिसा मसाला), इनसे निकाले जाने वाला वाष्पशील तेल, औलियोरेजिन्स मसालों का सत्व औषधि निर्माण में, इत्र, सौन्दर्य–प्रसाधन, क्रीम, लोशन, साबुन, दन्तमंजन एवं अन्य उद्योगों में भी किया जाता है । इनमें पाए जाने वाले प्रति– ऑक्सीकारक, प्रतिरक्षक, प्रति–सूक्ष्मजैविक, प्रति जैविक एवं औषधीय जैसे गुण इनके औद्योगिक उपयोग को आधार प्रदान करते हैं।

मसालों के सेवन से लाभ

- मसाले कैलोरी की खपत तेज कर वजन कम करने में सहायक होते है ।
- ये मेटाबॉलिज्म को तेज करते है, जिससे भोजन का पाचन अच्छा होता है।
- छाती की जकड़न को कम करते है ।
- ये इम्यून तंत्र को बेहतर कर सर्दी – जुकाम से लड़ने में सहायता करते है।
- मसालों का सेवन पाचक एंजाइम को बढ़ाता है।
- सर्दियों में रक्त नलिकाए थोड़ी सिकुड़ जाती है, मसालों का सेवन इन्हे सामान्य करने में सहायता करता है ।
- मसालेदार भोजन मूड अच्छा करने वाले हार्मोन्स एंडोरफिन और सेरोटोनिन का स्तर बढ़ाता है।

मसालों का वर्गीकरणः मसालों को पत्ती, जड़, कंद, फल, प्रकंद, छाल, बीज, फली, गिरी, कली, पुष्प भाग, लेटेक्स, बेरी और एरिल के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। वर्गीकरण इस प्रकार दिया गया हैः

- बीजः जीरा, काला जीरा, मेथी, धनिया, सौंफ, अजवाइन, खसखस और सरसों
- बल्बः लहसुन, लीक और प्याज
- छालः दालचीनी और कैसिया
- फलः मिर्च, इलायची, ऑलस्पाइस और कोकम
- पत्तीः पुदीना, करी पत्ता, तेज पत्ता

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- प्रकंदः हल्दी, अदरक
- फलीः वेनिला और इमली
- गिरीः जायफल
- पुष्प भागः केसर, दिलकश, केपर और मार्जोरम
- कलीः लौंग और केपर
- लेटेक्सः हींग
- एरिलः गदा और अनारदाना
- बेरीः काली मिर्च, जुनिपर और ऑलस्पाइस

हमारे देश में सदियों से भोजन में मसालों का उपयोग किया जाता है। औषधीय गुणों से परिपूर्ण होने की वजह से हमारे शरीर को रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करके हमारे इम्यून सिस्टम को भी सुदृढ़ बनाते हैं। मसालों के सेवन से कई बीमारियां दूर होती है। मसालों में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन ए, विटामिन बी6, सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, आयरन और मैग्नीशियम जैसे कई तत्व पाए जाते हैं। जो स्वास्थ्य के लिहाज से काफी फायदेमंद साबित होते हैं।

महत्वपूर्ण मसालों के औषधीय गुणों को ध्यान में रखते हुए, इनका विस्तृत वर्णन इस प्रकार से है :

लौंग : लौंग में शरीर के लिए लाभदायक ईजिनोल ऑयल पाया जाता है। ये एंटीऑक्सीडेंट का पावर हाउस कहलाती है। लौंग का तेल एंटी ऑक्सीडेंट का सबसे अच्छा स्त्रोत है । लौंग जीवाणुरोधी, एंटी फंगल और एंटी सेप्टिक है। ये मिनरल्स, ओमेगा–3 फैटी एसिड, फाइबर तथा विटामिन का स्त्रोत है। इसका उपयोग दाँत के दर्द, उल्टी, पेट दर्द, बुखार तथा कफ जैसी बीमारियों में फायदेमंद होता है। लौंग में तनाव को कम करने का भी गुण होता है।

दालचीनी : दालचीनी लगभग हर भारतीय रसोई में आसानी से मिल जाती है।यह एक ऐसा मसाला है जिसका इस्तेमाल खाने का स्वाद बढ़ाने के लिए ही नहीं बल्कि एक औषधि की तरह भी किया जाता है। इसमें एंटीऑक्सीडेंट होते है जो की संक्रमण और बीमारियों के जोखिम को कम करने में मदद करते है । दालचीनी में शक्तिशाली जीवाणुरोधी, एंटी फंगल, एंटी इंफ्लेमेटरी और एंटी क्लॉटिंग गुण इसे एक मजबूत प्रतिरक्षा बूस्टर बनाते है।

मेथीदाना : मेथी आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति की एक प्रसिद्ध जड़ी बूटी है जो की प्राकृतिक एंटी ऑक्सीडेंट का कार्य करती है और प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करती है। इसमें प्रोटीन, फाइबर, कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन तथा विटामिन ए व सी बहूल मात्रा में पाया जाता है । शरीर में शर्करा की मात्रा को सामान्य रखने में भी यह लाभ दायक है। मेथीदाना का उपयोग मधुमेह रोगियों के लिए रामबाण औषधि का कार्य करता है।

जायफल : इसकी ऊपरी परत जावित्री कहलाती है। यह एक खुशबूदार बीज के रूप में होता है। इसमें आइसोयूजीनॉल नामक पदार्थ होता है, जो जीवाणुनाशक, कीटाणुनाशक व फफूंदनाशक होता है।जायफल जैसे भोजन का स्वाद बढ़ाता है वैसे ही कई बीमारियों के जोखिम को भी काम करता है। अपच, गैस, शरीर को अंदर से मजबूत बनाने और बॉडी को डिटॉक्सिफाइड करने के साथ अनिद्रा दूर करने और इम्युनिटी को बढ़ाने वाला होता है।

सौंफ : सौंफ का उपयोग भोजन बनाने में तो किया ही जाता है, इसे भोजन के बाद भोजन पचाने के लिए भी खाया जाता है। यह पोषक तत्वों से भरपूर होती है। इसमें कॉपर, पोटैशियम, कैल्शियम,जिंक, मैग्नीशियम, आयरन, सेलेनियम, मैगनीज और विटामिन सी अच्छी मात्रा में पाए जाते है। इसमें पाए जाने वाले फाइटोन्यूट्रिएंट साइनस, ब्रोंकाइटिस, छाती की जकड़न और खांसी में आराम पहुंचाते है। यह शरीर को डिटॉक्स करती है और हानिकारक तत्वों से शरीर को लड़ने में मदद करती है । यही कारण है की नियमित रूप से इसका सेवन करने वालो को पेट, त्वचा और स्तन कैंसर की आशंका कम होती है।

जीरा : जीरे का प्रयोग भारतीय भोजन के प्रत्येक व्यंजन में किया जाता है। जीरे की तासीर गर्म होती है, इसलिए ये वात से जुडी समस्याओ को दूर करने में सहायक होता है। जीरा आयरन व मैग्नीशियम का अच्छा स्त्रोत है। यह हमारे लिवर की कार्यक्षमता बढ़ाने के साथ साथ आंतो की कार्य क्षमता बढ़ाने में भी कारगर है। जिससे भोजन के पाचन में सहायता मिलती है। साथ ही प्रतिरक्षा में सुधार करने और त्वचा विकारो, अनिद्रा, श्वसन सम्बन्धी विकार, अस्थमा, शरीर में खून की कमी दूर करता है, लिवर को विषैले पदार्थो से मुक्त भी रखता है।

सरसों :यह सेलेनियम और मैग्नीशियम का अच्छा स्त्रोत है। इसमें ओमेगा –३ फैटी एसिड पाया जाता है। इसका सेवन रूमेटाइड आर्थराइटिस और मांसपेशियों के दर्द में आराम पहुंचाता है और अस्थमा के लक्षणों को नियंत्रित करता है। इसका उपयोग ह्रदय को स्वस्थ्य रखता है तथा कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रित रखता है।

लहसुन : लहसुन हमारे भोजन में प्राकृतिक एंटीबॉयोटिक की तरह काम करता है। प्रतिदिन लहसुन का सेवन करने से एलिसिन के एंटी ऑक्सीडेंट गुणों के कारन यह रक्तदाब, रक्त शर्करा और कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करता है।

धनिया : हरा धनिया हमारे खाने में सजावट और फ्लेवर के लिए इस्तेमाल होता है तथा पाउडर के रूप में पाचन क्रिया को तेज करने में सहायता प्रदान करता है । पेट से सम्बंधित समस्याओ को दूर करने में इसका इस्तेमाल किया जाता है । इसका सेवन रक्त में शुगर के स्तर को नियंत्रित रखता है। धनिया शरीर में वसा के अवशोषण को प्रभावित कर कोलेस्ट्रॉल को नियंत्रण में रखता है। यह हार्मोन्स के संतुलन के लिए भी बढ़िया है ।

तेजपत्ता : तेजपत्ता आपके खाने के स्वाद को ही नहीं बढ़ाता बल्कि आपकी सेहत को भी ठीक रखता है। तेजपत्ते में प्रोटीन, फाइबर, ओमेगा–3 फैटी एसिड, विटामिन ए और विटामिन सी पाया जाता है ।तेज पत्ता खाने से डिप्रेशन नहीं होता है ।तेज पत्ता डाइबिटीज में फायदेमंद होता है। खाने में तेज पत्ते के उपयोग से ग्लुकोज का स्तर ठीक रहता है और खराब कोलेस्ट्रॉल कम होता है। तेज पत्ते में कॉपर, पौटेशियम, कैल्शियम, मैगनीज, सेलेनियम और आयरन भी होता है जो स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद है।

कालीमिर्च : कालीमिर्च में आयरन, कैल्शियम, प्रोटीन, फास्फोरस, केरोटीन, थायमिन एवं राइबोफ्लेविन जैसे पोषक तत्व पाए जाते है। गुणों से परिपूर्ण होने के कारण इसे मसालों का राजा भी कहा जाता है। काली मिर्च में एंटी बैक्टीरियल

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

गुण होते है, जो आपको इन्फेक्शन से बचाने में मदद करते है । इसका सेवन सर्दी, कफ, पाचन, नेत्र ज्योति बढ़ाने, पेट के कीड़े मारने, बुखार आदि में लाभदायक सिद्ध होता है ।

स्टार एनिस (चक्र फूल) : स्टार एनिस में एन्थोनोल नाम का एक रसायन होता है जिसके कारण इसका स्वाद मुलेठी के जैसा लगता है। इसमें कैल्शियम, फॉस्फोरस, विटामिन ए, विटामिन सी के साथ कई तरह के गुणकारी तत्व पाए जाते है। स्टार ऐनिस शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। इसका उपयोग सर्दी, खांसी, पेट सम्बन्धी समस्या, जैसे एसिडिटी, गैस, कब्ज और अपच में बहुत लाभकारी है। स्टार ऐनिस के एंटीबैक्टीरियल गुणों के कारण अस्थमा, खांसी जैसी बीमारियों से बचाने में सहायक है।

जावित्री : जावित्री में ओमेगा–3 फैटी एसिड, फाइबर, फोलेट और राइबोफ्लेविन होता है जो शरीर को बहुत सारी समस्याओ से राहत दिलाने में मदद करता है। जावित्री में एस्ट्रिजेंट, कार्मिनेटिव और ऐफ्रोडिसीयाक गुण होता है जो शरीर को इन्फेक्शन से लड़ने में मदद करता है और शरीर से विषाक्त पदार्थो को भी निकालता है। जावित्री एक स्ट्रेस बूस्टर की तरह काम करती है। यह प्रभावी रूप से तनाव व चिंता को समाप्त करता है और आपको शांत रखने और शांतिपूर्ण महसूस कराने में मदद करती है।

हींग : हींग खाने को स्वादिष्ट और खुशबूदार बनाने के साथ ही स्वास्थ्य के लिए भी उपयोगी है। हींग में प्रोटीन, फाइबर, कार्बोहायड्रेट, कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन, नियासिन और कैरोटीन के अलावा हींग में मौजूद एंटीवायरल, एंटीबायोटिक, एंटीऑक्सीडेंट, एंटी इन्फ्लामेट्री गुण भी पाए जाते है। इसका सेवन पेट के अनेक विकारो, कफ, अस्थमा तथा दर्द निवारक के तौर पर सहायक होता है।

हल्दी : हल्दी दुनिया के प्राचीनतम मसालों में से एक है। भारत में शायद ही कोई ऐसी रसोई हो जहां इसका उपयोग न किया जाता हो । सामान्यतः हल्दी का प्रयोग मसाले के रूप में भोजन का स्वाद बढ़ाने व सुगंध देने के लिए किया जाता है परन्तु स्वास्थ्य के लिए हल्दी एक फायदेमंद औषधि है। हल्दी में विटामिन ए, बी तथा ओमेगा–3 व ओमेगा –6 फैटी एसिड भी पाया जाता है। हल्दी शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता में इजाफा करती है। हल्दी में पाया जाने वाला लिपोपॉलीसैक्राइड्स तत्व हमारे इम्यून सिस्टम को मजबूत बनाकर बीमारियों से हमारी रक्षा करता है। साथ ही इसमें एंटी फंगल, एंटी बेक्टेरियल और एंटी वायरल गुण भी विशेष रूप से पाए जाते है । इसके अलावा हल्दी में करक्यूमिन भी होता है, जो एक एंटी ऑक्सीडेंट की तरह कार्य करता है।

अजवाइन : अजवाइन में थाइमोल नामक रसायन पाया जाता है जो शरीर के लिए गुणकारी होता है। इसमें कैल्शियम अधिक मात्रा में पाया जाता है । यह एक जीवाणुनाशक व कृमिनाशक मसाला है। भूख बढ़ाने, अपच व पेट को कई अन्य विकारो से बचाने में सहायक होता है । अजवाइन के एंटी इंफ्लेमेटरी गुण के कारण यह गठिया के दर्द को कम करता है । अजवाइन के बीज फाइबर, खनिज, विटामिन और एंटी ऑक्सीडेंट से भरपूर होते है । यह शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को भी बढ़ाने में सहायक है।

बड़ी इलायची : बड़ी इलायची में एंटी ऑक्सीडेंट, एंटी अलसर, एंटी इंफ्लेमेटरी और एंटी माइक्रोबियल गुणों से समृद्ध होती है । बड़ी इलायची पोटेशियम, कैल्शियम और मेग्नेशियम जैसे खनिजों का एक अच्छा स्त्रोत है। बड़ी इलायची एक बेहतरीन डेटॉक्स का भी काम करती है। यह शरीर से विषैले तत्वों को बाहर निकाल कर शरीर को स्वस्थ बनाती है । बड़ी इलायची में विटामिन सी, नियासिन, राइबोफ्लेविन, थायमिन, विटामिन ए, सोडियम, पोटेसियम, कैल्शियम, आयरन, कॉपर, मेग्नेशियम और जिंक उपलब्ध रहते है।

सोंठ ‘ सोंठ में प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, नाइट्रोजन, एमिनो एसिड्स, स्टार्च, ग्लूकोज, सुक्रोस, फ्रुक्टोस, सुगन्धित तेल, ओलियोरेसिन, जिंजिवारिन, रेफिनिस, कैल्शियम विटामिन बी और सी प्रोटिथीलिट एन्जाइम्स और आयरन पाया जाता है जो स्वास्थ्य के लिए उत्तम माने जाते है । सोंठ में एंटी ऑक्सीडेंट और एंटी इन्फ्लामेट्री योगिक जैसे–बीटा कैरोटीन और करक्यूमिन आदि की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है। शुद्ध भारतीय मसालों की शक्ति के साथ, आपके पास जीवंत स्वाद, समृद्ध सुगंध और अनंत संभावनाओं की दुनिया को खोलने की कुंजी है। भारतीय मसाला आयुर्वेद में अपनी शुरुआत से एक लंबा सफर तय कर चुका है और अब इसे आधुनिक व्यंजनों में शामिल किया गया है। परिणामस्वरूप, अब यह दुनिया भर की स्वाद कलिकाओं को आकर्षित करता है। इसके समृद्ध सांस्कृतिक महत्व और इसके अद्वितीय स्वाद प्रोफाइल के कारण, यह संभवतः हमेशा भारत के व्यंजनों और बाकी दुनिया के व्यंजनों दोनों का एक अनिवार्य घटक रहेगा।

फसल संरक्षण में जैव–नियंत्रण कारकों एवं जैव–कीटनाशकों का महत्त्व

अख्तर हुसैन, एस.एल. शर्मा, सुमन चौधरी एवं देवा राम बाज्या
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

आधुनिक कृषि कीट प्रतिरोध, पर्यावरण प्रदूषण, खाद्य सुरक्षा तथा जैव विविधता में कमी जैसी अनेक गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। रासायनिक कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से अवशेष समस्या, कीटों में प्रतिरोध, पुनः प्रकोप तथा पारिस्थितिक असंतुलन उत्पन्न हो रहा है। जैव–नियंत्रण कारक एवं जैव–कीटनाशक फसल संरक्षण के लिए पर्यावरण–अनुकूल एवं टिकाऊ विकल्प प्रदान करते हैं। अनुमान है कि वर्ष 2050 तक बढ़ती जनसंख्या को भोजन उपलब्ध कराने के लिए कृषि उत्पादन में लगभग 70 प्रतिशत वृद्धि करनी होगी। हालाँकि, जलवायु परिवर्तन, मीठे जल की कमी, कृषि योग्य भूमि में कमी तथा विशेष रूप से कीट एवं रोगों की उपस्थिति के कारण खाद्य उत्पादन एक बड़ी चुनौती बन गया है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त पादप संरक्षण उपाय आवश्यक हैं। साथ ही, खाद्य सुरक्षा के प्रति बढ़ती चिंताएँ, जैविक कृषि की बढ़ती प्रवृत्ति, प्रतिरोधी कीट आबादी की उपस्थिति तथा रासायनिक कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग से जैव विविधता में होने वाला व्यवधान आधुनिक विज्ञान की प्रमुख चुनौतियाँ हैं,इसलिए अजैविक कारकों, कीटों और रोगजनकों के समाधान खोजना समय की आवश्यकता है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

जैव–कीटनाशकों का उपयोग करते हुए पर्यावरण–अनुकूल प्रबंधन पद्धति, कृत्रिम (सिंथेटिक) रसायनों का एक प्रभावी विकल्प है। जैव–कीटनाशकों में सूक्ष्मजीवी कीटनाशक, जैव–रासायनिक कीटनाशक तथा पादप–समाविष्ट संरक्षक शामिल होते हैं। इन्हें सिंथेटिक कीटनाशकों का सर्वोत्तम विकल्प माना जाता है क्योंकि ये अत्यधिक प्रभावी, लक्ष्य–विशिष्ट तथा पर्यावरणीय जोखिम को कम करने वाले होते हैं। इन विशेषताओं के कारण विश्वभर में कीट प्रबंधन कार्यक्रमों में रासायनिक कीटनाशकों के स्थान पर इनका उपयोग बढ़ा है। जैव–कीटनाशक पशुओं, पौधों तथा प्राकृतिक स्रोतों जैसे कवक, जीवाणु, शैवाल, विषाणु, निमेटोड और प्रोटोजोआ से प्राप्त होते हैं। जैव–कीटनाशकों के क्षेत्र में उन्नत अनुसंधान एवं विकास ने रासायनिक सिंथेटिक कीटनाशकों के अवशेषों से होने वाले पर्यावरण प्रदूषण को काफी हद तक कम किया है तथा कृषि के सतत विकास को बढ़ावा दिया है। जैव–कीटनाशकों के आगमन के बाद अनेक उत्पाद पंजीकृत और जारी किए गए हैं, जिनमें से कुछ ने कृषि बाजार में अग्रणी भूमिका निभाई है। आधुनिक कृषि लगभग पूरी तरह रासायनिक यौगिकों, अर्थात् कीटनाशकों, पर निर्भर हो चुकी है। इनके उपयोग से उत्पादन में वृद्धि हुई है तथा हानिकारक जीवों के सफल नियंत्रण द्वारा फसल संरक्षण रणनीतियाँ सरल हुई हैं। यदि कीटनाशकों का पूर्णतः प्रतिबंध लगा दिया जाए तो केवल एक वर्ष में ही रोग, कीट और खरपतवार विश्व खाद्य उत्पादन को 17–20 प्रतिशत तक कम कर सकते हैं।

फिर भी, दीर्घकालीन उपयोग ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि किसानों ने पारंपरिक पादप संरक्षण विधियों का उपयोग लगभग बंद कर दिया है और उनकी जगह कीटनाशकों को अपनाया है। जैव–कीटनाशकों के विकास ने कीट प्रबंधन में रासायनिक कीटनाशकों के स्थानापन्न के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। वर्तमान प्रगति उनके क्रिया–क्षेत्र का विस्तार करने, एकीकृत कीट प्रबंधन में उनकी भूमिका को सुदृढ़ करने तथा वनस्पति–आधारित उत्पादों, सेमीऔ–केमिकल्स और कृषि अपशिष्टों के बेहतर उपयोग पर केंद्रित है। अतः ऐसी सतत पादप संरक्षण रणनीतियाँ अत्यंत आवश्यक हैं जो मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना कीटों का प्रभावी नियंत्रण कर सकें। रासायनिक पादप संरक्षण उत्पादों के उपयोग का सबसे महत्वपूर्ण विकल्प जैव–कीटनाशक हैं, जो प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त कीटनाशी गुणों वाले यौगिक हैं।

जैव–कीटनाशकः संयुक्त राज्य पर्यावरण संरक्षण एजेंसी (यु.एस.इ.पी.ए) के अनुसार, जैव–कीटनाशक वे कीटनाशक हैं जो प्राकृतिक स्रोतों जैसे पशुओं, पौधों, जीवाणुओं तथा कुछ खनिजों से प्राप्त होते हैं। वैश्विक स्तर पर कुल फसल संरक्षण बाजार में जैव–कीटनाशकों की भागीदारी लगभग 5 प्रतिशत है, जबकि भारत में यह केवल लगभग 3 प्रतिशत है। अनुमान है कि वर्ष 2040 से 2050 के बीच जैव–कीटनाशकों की हिस्सेदारी सिंथेटिक कीटनाशकों के बराबर हो सकती है। मार्च 2024 तक भारत में 339 कीटनाशक उपयोग के लिए पंजीकृत हैं तथा तकनीकी कीटनाशकों का निर्माण देश में ही किया जा रहा है। इनमें से केवल लगभग 14 जैव–कीटनाशक केंद्रीय कीटनाशक बोर्ड एवं पंजीकरण समिति (सी.आई.बी.आर.सी.) में पंजीकृत हैं। भारत में कुल कीटनाशक बाजार में जैव–कीटनाशकों का उत्पादन लगभग 4.2 प्रतिशत है।

जैव–कीटनाशकों का महत्वः

लाभ	विशेषता / विवरण
लागत प्रभावशीलता	अपेक्षाकृत सस्ते
स्थायित्व एवं अवशेष प्रभाव	अधिकांशतः जैव–विघटनीय तथा स्वयं प्रसारित होने वाले
नॉकडाउन प्रभाव	प्रभाव अपेक्षाकृत विलंबित
संभाल एवं भंडारण	ठोस (टैल्क आधारित कैरियर) रूप में भारी; तरल फॉर्मुलेशन में उपयोग आसान
कीट पुनः प्रकोप	कम
प्रतिरोध की संभावना	कम विकसित होती है
लाभकारी जीवों पर प्रभाव	लाभकारी कीटों के लिए कम हानिकारक (आतिथि–विशिष्ट)
प्रतीक्षा अवधि	लगभग नगण्य
नियंत्रण की प्रकृति	निवारक एवं कीटनाशक दोनों प्रकार का प्रभाव
भंडारण अवधि	अपेक्षाकृत कम (भंडारण परिस्थितियों पर निर्भर)

जैव–कीटनाशकों के प्रकारः

सूक्ष्मजीवी कीटनाशक	जैव–रासायनिक कीटनाशक	मैक्रो–जैविक कीटनाशक
जीवाणु	पौधे	कीट
कवक	पशु	माइट्स
विषाणु	खनिज	निमेटोड
प्रोटोजोआ	कीट	–

सूक्ष्मजीवी कीटनाशकों में विशिष्ट प्रजातियों या विभिन्न जीवाणुओं, कवकों, विषाणुओं अथवा प्रोटोजोआ के मिश्रण का चयनित उपयोग किया जाता है। ये लाभकारी सूक्ष्मजीव विषाक्त पदार्थ (टॉक्सिन), विटामिन, एंजाइम तथा पादप हार्मोन उत्पन्न करते हैं, जो रोग उत्पन्न करने वाले जीवों, हानिकारक कीटों, निमेटोड तथा खरपतवारों के विरुद्ध प्रतिकूल (एंटागोनिस्टिक) प्रभाव डालते हैं।

इसके अतिरिक्त, ये लाभकारी सूक्ष्मजीव ऐसे जैव–सक्रिय तत्वों का उत्पादन करते हैं जो पौधों की प्रतिरक्षा प्रणाली को सुदृढ़ कर उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाते हैं। सूक्ष्मजीवी कीटनाशकों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है और ये कुल जैव–कीटनाशक उत्पादन एवं बिक्री का लगभग 30 प्रतिशत भाग रखते हैं।

नीम आधारितजैव–कीटनाशकः नीम आधारित उत्पाद नीम के वृक्ष से प्राप्त किए जाते हैं। नीम के प्रमुख सक्रिय तत्वों में अज़ादिरैक्टिन, मेलिएंट्रियोल, सालानिन, डीसैटाइल सालानिन, निम्बिन, डीसैटाइल निम्बिन तथा निम्बिडिन शामिल हैं। अज़ादिरैक्टिन, जो एक टेट्रानॉरट्राइटरपेनॉइड लिमोनॉयड है, नीम का सबसे प्रभावशाली सक्रिय यौगिक माना जाता है। इसकी मात्रा नीम के बीजों में (0.2–0.6प्रतिशत) अन्य भागों की अपेक्षा अधिक पाई जाती है। अज़ादिरैक्टिन अन्य समरूप

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

यौगिकों की तुलना में अधिक कीटनाशी प्रभाव दर्शाता है। यह कीटों पर प्रतिकर्षक, भोजन निरोधक, वृद्धि नियामक तथा अंडे देने से रोकने जैसे विविध प्रभाव डालता है। यह लगभग 550 कीट प्रजातियों पर प्रभावी है। नीम आधारित उत्पाद पराबैंगनी प्रकाश के प्रति संवेदनशील होते हैं और सूर्य प्रकाश में शीघ्र विघटित हो जाते हैं।

पाइरेथ्रमः पाइरेथ्रम भारत में उपयोग किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण वनस्पति कीटनाशक है, जो क्राईसेंथेमम पौधे के फूलों से प्राप्त होता है। इसकी उच्चतम मात्रा मुख्यतः फूलों में पाई जाती है। पाइरेथ्रम छह सक्रिय घटकों–पाइरेथ्रिन I, पाइरेथ्रिन II, साइनरिन I, साइनरिन II, जैस्मोलिन I तथा जैस्मोलिन II का मिश्रण है। पाइरेथ्रिन I, साइनरिन I तथा जैस्मोलिन I, क्राइसैंथेमिक अम्ल के एस्टर हैं, जबकि पाइरेथ्रिन II, साइनरिन II तथा जैस्मोलिन II, पाइरेथ्रिक अम्ल के एस्टर हैं। सांद्रता की दृष्टि से पाइरेथ्रिन प्रमुख सक्रिय तत्व होते हैं। यह सूर्य प्रकाश में शीघ्र विघटित हो जाता है। पाइरेथ्रिन की प्रभावशीलता बढ़ाने के लिए पाइपरोनिल ब्यूटॉक्साइड का सहक्रियाशील के रूप में उपयोग किया जाता है।

रोटेनोनः रोटेनोन एक व्यापक स्पेक्ट्रम वाला वनस्पति कीटनाशक है, जो उष्णकटिबंधीय दलहनी पौधों जैसेडेरिस पौधे तथा धमासा पौधे की जड़ों एवं तनों से प्राप्त होता है। रासायनिक रूप से यह आइसोफ्लेवोनॉयड है। शुद्ध रोटेनोन की स्तनधारियों के लिए तीव्र विषाक्तता, सिंथेटिक कीटनाशक के समान पाई गई है। इसे सूखी जड़ के चूर्ण के रूप में या छिड़काव द्वारा उपयोग किया जाता है। यह संपर्क एवं आहार विष के रूप में कार्य करता है तथा कोशिकीय श्वसन एंजाइमों को अवरुद्ध करता है। यह मछलियों के लिए अत्यंत विषैला होता है।

यूकेलिप्टस एसेंशियल ऑयलः यूकेलिप्टस एसेंशियल तेल विभिन्न फाइटोकेमिकल्स जैसे मोनोटरपीन, सेस्क्वीटरपीन, एरोमैटिक फिनॉल, ऑक्साइड, ईथर, अल्कोहल, एल्डिहाइड तथा कीटोन का जटिल मिश्रण है। इसके कीटनाशी गुणों के लिए 1,8–सिनिओल प्रमुख सक्रिय घटक है। विभिन्न रासायनिक घटक सहक्रियात्मक रूप से कार्य कर समग्र कीटनाशी प्रभाव उत्पन्न करते हैं। यूकेलिप्टस के आवश्यक तेल तथा पत्तियों के अर्क विभिन्न कीटों के विरुद्ध कीटनाशी एवं प्रतिकर्षक प्रभाव दर्शाते हैं। पत्ती चूर्ण ने छेदक कीटों के विरुद्ध भी प्रभावशीलता दिखाई है।

निकोटिनः निकोटिन तंबाकू पौधे से 2–8 प्रतिशत तक प्राप्त होता है। यह संपर्क विष के रूप में कार्य करता है। यह 40प्रतिशत निकोटिन सल्फेट के रूप में व्यावसायिक रूप से उपलब्ध है, जिसका भारत में मुख्यतः निर्यात हेतु निर्माण किया जाता है। यह थ्रिप्स, लीफ हॉपर, मिलीबग तथा लीफ माइनर जैसे कोमल शरीर वाले चूसक कीटों पर प्रभावी है।

सेबाडिलाः सेबाडिलाएक क्षारीय यौगिक है, जो उष्णकटिबंधीय लिली,सेबाडिला के बीजों में पाया जाता है। इसके मुख्य **अल्कलॉइड**–सेवाडीन एवं वर्ट्रिडीन–तंत्रिका विष के रूप में कार्य करते हैं। यह मुख्यतः संपर्क विष है और परागण करने वाले कीटों के लिए हानिकारक हो सकता है।

रायनियाः रायनिया एक अल्कलॉइड है, जो दक्षिण अमेरिकी (कैरेबियन) झाड़ीरायनिया के काष्ठीय तने को पीसकर प्राप्त किया जाता है। इसे 20–40 प्रतिशत धूल के रूप में सीमित मात्रा में जैविक सेब उत्पादकों द्वारा कोडलिंग मॉथ नियंत्रण हेतु उपयोग किया जाता है। यह थ्रिप्स एवं इल्लियों पर प्रभावी है। रायनिया धीमी गति से कार्य करने वाला आमाशयी विष है। यह त्वरित नॉकडाउन प्रभाव नहीं देता, परंतु सेवन के बाद कीटों को भोजन करना बंद कर देता है। गर्म मौसम में इसकी प्रभावशीलता अधिक होती है।

जैव–नियंत्रण कारकः जैव–नियंत्रण कारक पौधों को उनके प्राकृतिक शत्रुओं–जैसे परजीवी, परभक्षी आदि से बचाने में सहायता करते हैं। ये खरपतवार, निमेटोड, कीट एवं माइट्स जैसे हानिकारक जीवों के प्रकोप को नियंत्रित करते हैं। जैव–नियंत्रण एजेंट विशिष्ट रूप से हानिकारक जीवों पर प्रभाव डालते हैं तथा मिट्टी में उपस्थित लाभकारी जीवों को नष्ट नहीं करते है।

जैविक नियंत्रण के प्रकारः

जैविक नियंत्रण को मुख्यतः दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

1. उत्कृष्ठ जैव–नियंत्रणः

इस पद्धति में कीट के प्राकृतिक शत्रु को जैव–नियंत्रण एजेंट के रूप में उपयोग किया जाता है। इसमें आक्रामक (इनवेसिव) कीट या पौधों के प्राकृतिक परभक्षियों या परजीवियों को अपनाया जाता है। हालांकि, यदि इनका चयन सावधानीपूर्वक न किया जाए, तो कभी–कभी परिचित (प्रविष्ट) की गई प्रजातियाँ स्वयं गंभीर कीट बन सकती हैं।

2. संवर्धनात्मक या वृद्धिकरण जैव–नियंत्रणः

इस विधि में लक्ष्य कीटों को नष्ट करने के लिए बड़ी संख्या में प्राकृतिक शत्रुओं को कृत्रिम रूप से छोड़ा जाता है, जिससे उनकी जनसंख्या बढ़ाकर प्रभावी नियंत्रण प्राप्त किया जा सके।

जैव–नियंत्रण एजेंटों की सूचीः

कीट परभक्षीःजैसे–मकड़ियाँ, मक्खियाँ, लेडीबर्ड बीटल (गुबरेला), ततैया, भृंग (बीटल), ड्रैगनफ्लाई आदि। ये सीधे कीटों का भक्षण कर उनकी संख्या नियंत्रित करते हैं।

रोगजनक सूक्ष्मजीवःजैसे–विषाणु, जीवाणु, कवक आदि। ये कीटों में रोग उत्पन्न कर उन्हें नष्ट करते हैं और कीटों के लिए अत्यधिक रोगजनक होते हैं।

परजीवी कीट(पेरासीटोइडस):परजीवी कीट अपने अंडे पोषक (होस्ट) कीट के शरीर में देते हैं। विकसित होता हुआ लार्वा पोषक के शरीर को भोजन के रूप में उपयोग करता है और अंततः उसे मार देता है। परजीवी कीट जैव–नियंत्रण में व्यापक रूप से उपयोग किए जाते हैं।

लेडीबर्ड बीटलः साधारण भाषा में इसे लाल सुंडी भी कहते हैं। इसके प्रौढ़ का रंग लाल होता है जिस पर काले रंग के गोल निशान होते हैं। इस कीट के अंडे पीले चावल के दाने की तरह लंबे सिगार आकृति के होते हैं, मादा कीट 300 से 500 अंडे 5 से 10 समूह में पत्ती की ऊपरी सतह पर देती है। कीट के लार्वा गहरे काले भूरे रंग के हल्की धरी वाले होते हैं। कीट के प्रौढ़ एवं लार्वा दोनों ही कोमल शरीर वाले दुश्मन कीटों जैसे की हरा तेला, मोयला, थ्रिप्स, सफेद मक्खी आदि को खाते हैं तथा सुंडियों के अंडो को भी खाकर नष्ट कर देते हैं। प्रौढ़ एवं निम्फ दोनों लगभग 70 मोयला, 16 हरा तेला, तथा सुंडियों के 13 अंडे प्रतिदिन खाते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

क्राइसोपर्लाः ग्रीन लेस विंग भी कहते हैं। इसके प्रौढ़ के पंख पारदर्शी हरे रंग के होते हैं जिनकी आंखें गोल एवं सुनहरे रंग की होती है। प्रौढ़ कीट लगभग 300 से 500 अंडे साधारणतया पत्तियों, तना व शाखाओं के ऊपर स्थित रोम के ऊपर देती है। अंडे हल्के सफेद रंग के व अंडाकार होते हैं। अण्डों में से 4 से 5 दिन में लार्वा निकलते हैं जो हल्के भूरे रंग के होते हैं तथा कोमल शरीर वाले दुश्मन कीटों जैसे हरा तेला, सफेद मक्खी, मोयला, थ्रिप्स आदि को बड़े चाव से खाते हैं। साथ ही साथ सुंडियों के अंडों एवं प्रथम अवस्था की लटों को भी खाते हैं। क्राइसोपा कीट का एक लार्वा लगभग 40 मोयला,15 हरा तेला, सुंडियों के 20 अंडे एवं 6 सुंडियों को प्रतिदिन खाता है।

प्रेयिंग मैन्टिसः इस मित्र कीट के प्रौढ़ का रंग हरा, आंखें गोल मोटी, आगे की टांगे बड़ी एवं दांतेदार होती है। यह परभक्षी कीट एक जगह बैठे–बैठे अपनी गर्दन चारों ओर घुमा लेता है। प्रौढ़ कीट की एक विशेष प्रकार के जलरोधी आवरण में अपने अंडे देता है यह कीट के निम्फ भी प्रौढ़ जैसे ही होते हैं पर उनका रंग काला होता है। निम्फ कीट लगभग 1 वर्ष बाद प्रौढ़ अवस्था में बदल जाते हैं। निम्फ एवं प्रौढ़ दोनों ही कीटभक्षी होते हैं जो की विभिन्न प्रकार की लटों को खाते हैं।

ड्रैगनफ्लाईः ये परभक्षी के रूप में काम करते हैं क्योंकि वे मच्छरों और अन्य नुकसानदायक छोटे कीटों जैसे मधुमक्खियों, तितलियों और मक्खियों को खाते हैं। उनके लार्वा जलचर होते हैं। वे अपने शिकार को स्पाइकों से भरी हुई टांगों से कसकर पकडे रखती हैं। वे अपने शिकार को अपने फैलाये जा सकने वाले जबडों का प्रयोग करते हुए पकडती हैं। वयस्क ड्रेगन फलाई की जीवन अवधि केवल कुछ ही महीने है। इसका अधिकांश जीवन जल सतह के नीचे लार्वा की स्थिति में ही बीत जाता है। मादा ड्रेगन फलाई प्रायः पानी में तैरने वाले या जलमग्न पौधों पर या उसके आस–पास अंडे देती हैं। बडी ड्रेगन फलाई की लार्वा स्थिति पांच वर्षों तक चल सकती है।

डैम्सेलफ्लाईः ये जलीय वनस्पति और नहरों और तालाबों के नीचे पैदा होती हैं। वे जलीय कीटों और अन्य संधिपादों को खाती हैं। डैमसल फलाई वयस्क अपना शिकार पकडने के लिए अपनी टांगों को इस्तेमाल करती हैं जोकि बालों से ढकी होती हैं। वे अपने शिकार को अपनी टांगों में पकड लेता है और उसे चबाते हुए खा जाता है। वयस्क सामान्यतया पानी के नजदीक पाए जाते हैं। डैमसल फलाई के लंबे पतले शरीर होते हैं और वे प्रायः हरे, नीले, लाल, पीले, काले या भूरे चमकदार रंगों के होते हैं।

ग्राउंड बीटल/कैराबिड भृंगः यह कीट केटरपिलर हंटर भी कहलाता है। इस कीट का रंग लाल–काला, शरीर लंबा, आंखें काली एवं मुख हल्के खाकी रंग का होता है। इस कीट के ग्रब तथा वयस्क अपने काटने व चुभाने वाले मुखगों की सहायता से प्रतिदिन लगभग 8 से 10 विभिन्न प्रकार की लटों को मारकर खा जाता है।

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव : मृदा में जिंक उपलब्धता बढाने की जैविक तकनीक

त्रिलोक चन्द बागड़ी, राकेश सम्मौरिया, प्रतिभा सिंह एवं आर. सी. मीणा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

1. जिंक की स्थिति एवं कृषि में महत्व जिंक पौधों के लिए एक अत्यंत आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है, जिसकी कमी वर्तमान समय में वैश्विक कृषि के लिए एक गंभीर पोषण संबंधी चुनौती बन चुकी है भारत सहित विश्व की लगभग 40–50 प्रतिशत कृषि भूमि जिंक की कमी से प्रभावित पाई गई है राजस्थान में स्थिति अधिक गंभीर है, जहाँ लगभग 41. 7 प्रतिशत मृदाएँ जिंक की कमी से ग्रसित हैं इसका मुख्य कारण उच्च पीएच मान, चूना प्रधान प्रकृति, कम कार्बनिक पदार्थ तथा शुष्क जलवायु है (शुक्ला एवं सहलेखक, 2021). विशेषकर क्षारीय, कैल्सीयम युक्त तथा उच्च अम्ल–क्षार मान (पीएच मान) वाली मिट्टियों में इसकी उपलब्धता कम हो जाती है जिंक पौधों की प्रतिरोधक क्षमता बढाने में भी सहायक होता है तथा सूखा एवं रोग प्रतिरोध में योगदान देता है मानव पोषण की दृष्टि से भी जिंक की पर्याप्त मात्रा अनाज की गुणवत्ता सुधारने में महत्वपूर्ण है जिंक एक आवश्यक सूक्ष्म पोषक तत्व है, जो पौधों की वृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसकी प्रमुख भूमिकाएँ निम्नलिखित हैं–

- जिंक 300 से अधिक एंजाइमों को सक्रिय करता है। यह कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन तथा न्यूक्लिक अम्ल के चयापचय में भाग लेता है
- जिंक पौधों के वृद्धि हार्मोन ऑक्सिन अर्थात इंडोल एसीटिक अम्ल के निर्माण में सहायक होता है। इसकी कमी होने पर तनों के मध्य खंडों की लंबाई कम रह जाती है, जिसके कारण पौधे सामान्य रूप से विकसित नहीं हो पाते और बौने दिखाई देते हैं
- यह राइबोन्यूक्लिक अम्ल तथा डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक अम्ल के निर्माण एवं उनकी संरचनात्मक स्थिरता में सहभागिता करता है, जिसके परिणामस्वरूप कोशिकाओं का विभाजन तथा पौधों की वृद्धि–विकास की प्रक्रिया प्रभावित होती है
- हालांकि जिंक सीधे क्लोरोफिल का भाग नहीं है, लेकिन इसकी कमी से क्लोरोसिस (पत्तियों का पीला होना) होता है क्योंकि यह प्रकाश संश्लेषण से संबंधित एंजाइमों को प्रभावित करता है
- जिंक स्टार्च के निर्माण तथा शर्करा के रूपांतरण में सहायक है, जिससे दाने की गुणवत्ता बेहतर होती है
- यह कोशिका झिल्ली की संरचना को स्थिर बनाए रखने में मदद करता है और ऑक्सीडेटिव क्षति से सुरक्षा देता है
- जिंक की पर्याप्त मात्रा से पराग की जीवनीयता और बीज निर्माण बेहतर होता है

2. जिंक की कमी के लक्षण

- पौधों में लिटिल लीफ (छोटी पत्तियाँ) तथा रोसेट लक्षण दिखाई देते हैं
- ऑक्सिन के अपर्याप्त संश्लेषण के कारण इंटरनोड की लंबाई कम हो जाती है, जिससे पौधे बौने और झाडीदार बन जाते हैं

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- पत्तियों में पीलापन दिखाई देता है
- मक्का में नई निकलने वाली पत्तियाँ सफेद या पीली हो जाती हैं, जिसे "व्हाइट बड" कहा जाता है
- पत्तियाँ क्लोरोसिस (हरितलवक की कमी) तथा नेक्रोसिस (ऊतक मृत्यु) से ग्रसित होकर समय से पहले झड जाती हैं
- धान में जिंक की कमी से खैरा रोग होता है
- प्रायः उच्च पीएच अधिक फास्फोरस युक्त तथा हल्की बनावट वाली मिट्टियों में जिंक की कमी अधिक पाई जाती है

3. जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव का परिचय एवं आवश्यकता

परंपरागत रूप से जिंक की पूर्ति हेतु जिंक सल्फेट जैसे रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है, किंतु मिट्टी में डाला गया जिंक शीघ्र ही अघुलनशील यौगिकों में परिवर्तित होकर पौधों के लिए अनुपलब्ध हो जाता है इसी समस्या के समाधान के रूप में जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव एक प्रभावी जैविक विकल्प के रूप में उभरे हैं जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव ऐसे लाभकारी राइजोबैक्टीरिया हैं जो मृदा में उपस्थित अघुलनशील जिंक यौगिकों को पौधों के लिए उपलब्ध घुलनशील रूप (जिंक द्विसंयोजी धनायन) में परिवर्तित करते हैं सामान्यतः मृदा में जिंक की कुल मात्रा पर्याप्त होती है, किंतु उसका 90 प्रतिशत से अधिक भाग अघुलनशील रूप में बंधा रहता है, जैसे जिंक ऑक्साइड , जिंक फॉस्फेट, जिंक कार्बोनेट आदि। क्षारीय एवं कैल्शियम युक्त मृदाओं में यह समस्या और अधिक गंभीर होती है ऐसी परिस्थितियों में जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव जैव–उर्वरक के रूप में कार्य करते हुए जिंक की जैव उपलब्धता को बढाते हैं जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव का महत्व केवल पोषक तत्व उपलब्ध कराने तक सीमित नहीं है, बल्कि ये मृदा–वनस्पति–जीवाणु अंतःक्रिया को सक्रिय करते हैं ये राइजोस्पेयर क्षेत्र में सक्रिय होकर जड स्रावों के साथ पारस्परिक क्रिया करते हैं और पोषक तत्व घुलनशीलता को बढाते हैं इससे पौधों की जड वृद्धि, पोषक तत्व अवशोषण क्षमता तथा समग्र विकास में सुधार होता है यह तकनीक सतत कृषि प्रणाली को मजबूत आधार प्रदान करती है

4. जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीवों के प्रकार

जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव मुख्यतः जीवाणु (जैसे स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस, स्यूडोमोनास ताइवानेंसिस, क्लेब्सिएला प्रजाति, एसीनेटोबैक्टर कैल्कोएसेटिकस, बैसिलस सेरियस, बैसिलस मेगाटेरियम), कवक (जैसे पेनिसिलियम ल्यूटियम, एस्परजिलस नाइजर, एस्परजिलस ओराइजी, ट्राइकोडर्मा हार्जयिनम (रिफाई), एस्परजिलस टेरेयस, ब्यूवेरिया कैलेडोनिका) के रूप में पाए जाते हैं। ये सूक्ष्मजीव मृदा के जड क्षेत्र में सक्रिय होकर जिंक को घुलनशील बनाने का कार्य करते हैं विभिन्न प्रजातियाँ अलग–अलग मिट्टी की परिस्थितियों में अनुकूलन क्षमता रखती हैं इनका चयन मिट्टी की प्रकृति और फसल के अनुसार किया जाना चाहिए ताकि बेहतर परिणाम प्राप्त हो सकें

5. कार्यविधि (घुलनशील बनाने की प्रक्रिया)

- **कार्बनिक अम्ल उत्पादन**– जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव विभिन्न कार्बनिक अम्ल जैसे साइट्रिक अम्ल, ग्लूकोनिक अम्ल, लैक्टिक अम्ल, ऑक्सैलिक अम्ल आदि का स्राव करते हैं ये अम्ल मृदा के पीएच मान को स्थानीय स्तर पर कम कर देते हैं, जिससे अघुलनशील जिंक यौगिक विघटित होकर जिंक द्विसंयोजी धनायन के रूप में उपलब्ध हो जाते हैं अम्लीकरण जिंक घुलनशीलता की मुख्य प्रक्रिया है
- **चिलेशन**– कुछ जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव ऐसे कार्बनिक यौगिक उत्पन्न करते हैं जो धातु आयनों के साथ स्थिर घुलनशील संकुल बनाते हैं यह प्रक्रिया जिंक आयनों को पुनः अवक्षेपित होने से रोकती है और उन्हें पौधों द्वारा अवशोषण योग्य अवस्था में बनाए रखती है
- **साइडरोफोर उत्पादन**– साइडरोफोर मुख्यतः लौह तत्व की उपलब्धता के लिए जाने जाते हैं, किंतु ये जिंक सहित अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ भी संकुल बना सकते हैं। इससे राइजोस्पेयर क्षेत्र में सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढती है
- **प्रोटॉन उत्सर्जन एवं एंजाइम गतिविधि**– कुछ जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव प्रोटॉन (हाइड्रोजन धनायन) उत्सर्जन के माध्यम से मृदा अम्लीकरण करते हैं। साथ ही, वे विभिन्न एंजाइमों का उत्पादन कर पोषक तत्व चक्रण को सक्रिय करते हैं

क्रम संख्या	सूक्ष्मजीव वर्ग	सूक्ष्मजीव का नाम	अघुलनशील जिंक का रूप	घुलनशीलता का तंत्र	स्थान
1	कवक	पेनिसिलियम ल्यूटियम	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट,	ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन	स्कॉटलैंड, यूनाइटेड किंगडम
2	कवक	एस्परजिलस नाइजर	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट	साइट्रिक एवं ऑक्सैलिक अम्ल का उत्पादन	स्कॉटलैंड, यूनाइटेड किंगडम
3	कवक	ट्राइकोडर्मा हार्जयिानम (रिफाई)	धात्विक जिंक	जिंक का अवशोषण एवं ऑक्सीकरण घुलन प्रक्रिया में वृद्धि	इटली
4	कवक	ब्यूवेरिया कैलेडोनिका	जिंक फॉस्फेट	अम्लीकरण प्रक्रिया (एसिडोलाइसिस)	स्कॉटलैंड, यूनाइटेड किंगडम
5	कवक	एस्परजिलस टेरेयस	जिंक ऑक्साइड, जिंक कार्बोनेट, जिंक फॉस्फेट	पीएच में कमी द्वारा घुलनशीलता	तिरुपुर जिला, भारत
6	जीवाणु	स्यूडोमोनास फ्लोरेसेंस	जिंक फॉस्फेट	कार्बनिक अम्ल का उत्पादन	यूनाइटेड किंगडम

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

7	जीवाणु	एसीनेटोबैक्टर कैल्कोएसेटिकस	जिंक ऑक्साइड, जिंक कार्बोनेट	कार्बनिक अम्ल का उत्पादन	तमिलनाडु, भारत
8	जीवाणु	बैसिलस सेरियस	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट	कार्बनिक अम्ल का उत्पादन	केरल, भारत
9	जीवाणु	बैसिलस मेगाटेरियम	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट, जिंक कार्बोनेट	ग्लूकोनिक अम्ल का उत्पादन	केरल, भारत
10	जीवाणु	स्यूडोमोनास ताइवानेंसिस	जिंक ऑक्साइड, जिंक फॉस्फेट, जिंक कार्बोनेट	कीटो–डी–ग्लूटरेट, साइट्रिक, प्रोपियोनिक, ग्लूकोनिक एवं ऑक्सैलिक अम्ल का उत्पादन	ओडिशा, भारत

इस प्रकार जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव पर्यावरण–अनुकूल एवं लागत प्रभावी समाधान प्रदान करते हैं और रासायनिक जिंक उर्वरकों पर निर्भरता को कम करते हैं

6. **प्रयोग विधिः** जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीवों का उपयोग बीज उपचार, मृदा में प्रयोग, जड उपचार तथा अन्य जैव उर्वरकों के साथ संयुक्त रूप से किया जा सकता है।बीज उपचार में लगभग 5–10 मिलीलीटर जीवाणु संवर्धन प्रति किलोग्राम बीज प्रयोग किया जाता है

7. **फसल उत्पादकता पर प्रभावः** जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव के प्रयोग से फसलों की उपज, गुणवत्ता एवं पोषण स्तर में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है जिंक लगभग 300 से अधिक एंजाइमों की संरचना एवं सक्रियता में भाग लेता है यह प्रोटीन संश्लेषण, न्यूक्लिक अम्ल निर्माण, क्लोरोफिल संश्लेषण तथा वृद्धि हार्मोन (इंडोल एसीटिक अम्ल) निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है

- गेहूं एवं धान पर किए गए विभिन्न शोधों में यह पाया गया है कि जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव के प्रयोग से पौध ऊँचाई, दाना संख्या, दाना भार तथा कुल उपज में महत्वपूर्ण वृद्धि होती है
- मक्का में जिंक की पर्याप्त उपलब्धता से जड तंत्र का विकास सुदृढ होता है, जिससे पोषक तत्व एवं जल अवशोषण क्षमता बढती है
- चना, सोयाबीन, मूंगफली एवं सरसों जैसी फसलों में जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव के प्रयोग से प्रोटीन प्रतिशत, तेल प्रतिशत तथा सूक्ष्म पोषक तत्व सांद्रता में वृद्धि देखी गई है जिंक नोड्यूल निर्माण एवं नाइट्रोजन स्थिरीकरण में भी सहायक भूमिका निभाता है
- जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव आधारित तकनीकें अनाजों में जिंक सांद्रता बढाकर कुपोषण की समस्या को कम करने में सहायक हैं यह विशेष रूप से विकासशील देशों में महत्वपूर्ण है, जहाँ जिंक की कमी मानव स्वास्थ्य के लिए गंभीर समस्या है

8. **मृदा स्वास्थ्य पर प्रभावः** जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणों में सुधार करते हैं

- जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव राइजोस्पेयर में लाभकारी सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं सक्रियता को बढाते हैं, जिससे मृदा जैव विविधता समृद्ध होती है
- डिहाइड्रोजनेज, फॉस्फेटेज, यूरिएज एवं कैटालेज जैसे एंजाइमों की सक्रियता बढने से पोषक तत्व खनिजीकरण एवं अपघटन प्रक्रिया तीव्र होती है
- कुछ जीवाणु बहिर्कोशिकीय पदार्थ उत्पन्न करते हैं जो मृदा कणों को जोडकर स्थिर संरचना बनाते हैं। इससे जल धारण क्षमता एवं वायुसंचार में सुधार होता है
- जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव कार्बनिक पदार्थ अपघटन एवं ह्यूमस निर्माण में सहायक होते हैं, जिससे मृदा की दीर्घकालीन उर्वरता एवं स्थिरता बढती है

9. **भविष्य की उन्नत तकनीकेंः** जिंक घुलनशील सूक्ष्मजीव की कार्यक्षमता एवं स्थिरता बढाने के लिए आधुनिक जैव–प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जा रहा है

- **जीन आधारित अध्ययन**– उन्नत आणविक तकनीकों द्वारा उन जीनों की पहचान की जा रही है जो धातु घुलनशीलता में भूमिका निभाते हैं
- **जीन संपादन**– उच्च दक्षता वाले सूक्ष्मजीव विकसित करने हेतु जीन संपादन तकनीकों का उपयोग किया जा रहा है
- **नैनो आधारित सूत्रीकरण**– सूक्ष्मजीवों की स्थिरता एवं नियंत्रित क्रियाशीलता सुनिश्चित करने के लिए नैनो–प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जा रहा है
- **सटीक कृषि पद्धति**– आधुनिक सेंसर एवं डिजिटल तकनीकों द्वारा मृदा पोषक स्थिति का आकलन कर स्थान–विशिष्ट अनुप्रयोग संभव हो रहा है

10. **सीमाएँः** इन सूक्ष्मजीवों की सक्रियता मिट्टी के अम्ल–क्षार मान, तापमान, नमी तथा जैविक कार्बन की मात्रा पर निर्भर करती है। अत्यधिक क्षारीय या शुष्क परिस्थितियों में इनकी प्रभावशीलता घट सकती है भंडारण अवधि सीमित होती है तथा गुणवत्ता नियंत्रण की कमी भी एक चुनौती है

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

नैनो उर्वरकः कृषि के लिए एक वरदान

देवराज गुर्जर, महेंद्र मीना एवं ज्योति गुर्जर
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

परिचयः प्राचीन समय के मुकाबले वर्तमान समय में कृषि क्षेत्र समय के साथ अनेको बदलाव देखे जा सकते है इसी के साथ ही वर्तमान में कृषि की परिभाषा ही बदल जाती है लेकिन बढ़ती जनसंख्या के कारण, खाद्य प्रदार्थों की आवश्यकताएं एक चुनौती बन जाती है इनी चुनोतियो के साथ कृषि में आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उपयोग में वृद्धि हुई है फसलों उत्पादन के बढ़ाने के लिए कृषि अनेकों प्रकार के रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, कृत्रिम बीजो, एटीबायोटिक का अत्यधिक उपयोग एवं आनुवंशिकी रूप से संशोधित फसलों का उपयोग कर रहा है जो की पारिस्थितिक तंत्र में असंतुलन का कारण बनता है जिसका सीधा असार मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है। नैनो टेक्नोलॉजी विश्व स्तर पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी का तेजी से बढ़ता क्षेत्र है, और यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी के हर क्षेत्र पर प्रभाव प्राप्त कर रहा है। नैनो प्रदार्थों के भौतिक एवं रासायनिक गुणों की निरतर खोज किया जा रहा है जिनका उपयोग कृषि के साथ . साथ चिकित्सा जैव प्रौद्योगिकी, इलेक्ट्रॉनिक्स सामग्री विज्ञान और ऊर्जा क्षेत्र में भी किया जा रहा है।

नैनो तकनीकी एवं नैनो उर्वरक क्या है?

नैनोटेक्नोलॉजी एक ऐसी तकनीकी है जिसके माध्यम से परमाणुओं, अणुओं, या आणविक समूहों जोड़–तोड़ कर उनके आकार को 100 नैनोमीटर के पैमाने में लाया जाता हे नैनों तकनीक के बढ़ते विकास ने कृषि में विभिन प्रकार की संभवनाओ के मागों को खोल दिया। नैनो तकनीकी के माध्यम से पारंपरिक उर्वरको एवं पौधे के विभिन्न वानस्पतिक या प्रजनन भागों से विभिन विधियों से (भौतिक, यांत्रिक, रासायनिक और जैविक) नैनों उर्वरकों को सश्लेषित किया जाता है जो मिट्टी की उर्वरता में सुधार अरने, उर्वरकों की दक्षता में वृद्धि करने उर्वरको से होने वाले पर्यावरण प्रदूषण में कमी और कृषि के उत्पादन और उत्पादकता को बढ़ाने के लिए इस्तेमाल किए जाते है नैनों उर्वरक` का आकार से 100 नैनोमीटर होता है

–नैनो जिओलाइट, नैनों जस्ता उर्वरक/नैनो जिंक उर्वरक, जीरो वेलेंट नैनो आयरन, मैनी लोहा/ नैनो आयरन उर्वरक, नैनों बोरोन उर्वरक, कार्बन नैनोट्यूब

नैनों उर्वरको का कृषि क्षेत्र में उपयोग क्यों करें ?

वैज्ञानिक, तकनीकी क्रांतियाँ, वैश्विक औद्योगिक, आधुनिक के दौरान कृत्रिम रूप से कृत्रिमता बढ़ रही है आधुनिक कृत्रिम आधुनिक विज्ञान का आगमन और खेती, श्रम लागत की बचत के समय में प्रौद्योगिकी प्रणालियों की अनुमति, लंबी दूरी पर माल की जनशक्ति, तेजी से परिवहन और कृषि में पारम्परिक उर्वरको का उपयोग को अंधाधुंध बढ़ाने में सहयोग किया है तथा सामाजिक समूह और राष्ट्र को भोजन और सामान के लिए स्वतंत्र कर दिया है इस विश्वव्यापी व्यवहार से वैश्विक स्तर पर जबरदस्त लाभ हुआ तथा जिससे समाज में मानव जीवनकाल को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाया है। तथा साथ ही दूसरे पहलू की और कृत्रिम जलवायु परिवर्तन के माध्यम से कृत्रिम कृषि वैश्विक कृषि को भी प्रभावित किया, मानसून में परिवर्तन, ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, व्यावसायिक स्वास्थ्य जोखिम के कारण औसत तापमान, और हवा, पानी और मिट्टी में प्रदूषण हो गए इन सभी के साथ आज मृदा में अनेको पोषक तत्वों की कमी आ गयी है तथा फैसले अपनी गुणवत्ता खो रही है इन सभी समस्याओ के निवारण के लिए नैनो तकनिकी के माध्यम से नैनो उर्वरको का उपयोग कर कृषि में होने वाले अनावश्यक मृदा उर्वरता दोहन को काफी स्तर तक काम किया जा सकता है।

नैनो तकनीकी का कृषि क्षेत्र में उपयोगिताः– नैनो–रसायन, नैनोफर्टिलाइजर, नैनो–कीटनाशक या नैनो संयत्र संरक्षण उत्पाद एग्रोकेमिकल्स के संबंध में एक उभरते तकनीकी विकास का प्रतिनिधित्व करते हैं, उर्वरक, कीटनाशक का उपयोग जो कई लाभों को बढ़ा सकते हैं नैनो कणों का मुख्य गुण प्रभावकारिता को बढ़ाने, स्थायित्व को बनाये रखने और सक्रिय अवयवों की मात्रा में कमी, जो इसके इस्तेमाल के लिए उपयोगी सीध हुई है।

नैनो उत्पादों की एक विस्तृत विविधता को विस्तार करते हुए विभिन सहकारी कंपनिया बढ़ चढ़ कर भाग ले रही है हैं, जैसे की इफको जैसी सहकारी समितियों ने भी नैनो उत्पादों को बढ़ावा दिया है।

भारतीय किसान उर्वरक सहकारी सगठन द्वारा विभिन प्रकार का नैनो उर्वरको का उत्पादन कर यह बताया गया है की नैनो नाइट्रोजन जो की यूरिया की तुलना में एक अच्छा वैकल्पिक स्रोत है जिससे 50 प्रतिशत तक यूरिया की खपत को काम किया जा सकता है इसी के साथ नैनो जिंक और नैनो कॉपर का उत्पादन कर यह बताया गया की यह सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पूर्ति के साथ साथ विभिन्न व्याधियों के निवारण में सहायक है।

खाद्य और कृषि के क्षेत्र में नैनोटेक्नोलॉजी के कुछ प्रमुख अनुप्रयोगः–

क्षेत्र	अनुप्रयोग
स्वास्थ्य	पोषक तत्व वितरण
	खनिज और विटामिन फोर्टिफिकेशन
	रोग के लिए बायोसेंसर
	दवा वितरण
	जल शुद्धिकरण
कृषि	किरणों से सुरक्षा
	रोगनाशी
	पादप वृद्धि नियामक
	दूषित सेंसर
	पोषक तत्वों का लक्षित वितरण
	खनिज एवं विटामिन फोर्टिफिकेशन

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पोषण	भोजन में कोलेस्ट्रॉल नियंत्रण
	पोषक तत्वों की जैव उपलब्धता बढ़ाना
	सुरक्षित एवं संतुलित आहार विकास
प्रसंस्करण	खाद्य पैकेजिंग में नैनो सामग्री शेल्फ लाइफ बढ़ाना गुणवत्ता निगरानी सेंसर एंटीमाइक्रोबियल पैकेजिंग खाद्य सुरक्षा सुधार

नैनो उर्वरक और पारंपरिक उर्वरक में गुणात्मक अन्तरः–

क्र.सं.	नैनो उर्वरक	पारंपरिक उर्वरक
1. घुलनशीलता और स्थिरता	उच्च	कम
2. क्रियाशीलता	अधिक	कम
3. उपयोग दक्षता	अधिक	कम
4. मात्रा आवश्यकता	कम	अधिक
5. पर्यावरण प्रभाव	कम	अधिक

निष्कर्षः– वर्तमान की समीक्षा करते हुए हमने नैनो प्रौद्योगिकी का कृषि में उपयोग पर ध्यान केंद्रित किया है भारतीय कृषि प्रणालियों के साथ साथ वैश्विक जनसंख्या बढ़ोतरी और कृषि उत्पादन सामाजिक आवश्यकता का समर्थन करने के लिए पर्याप्त नहीं है विश्व स्तर पर कुपोषण, भूख सामाजिक अस्थिरता, और मृत्यु का उपयोग रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक, आनुवंशिक रूप से संशोधित जीव और आधुनिक विज्ञान और कृषि के लिए प्रौद्योगिकी कृषि उत्पादों का उत्पादन बढ़ाती है लेकिन पारिस्थितिक तंत्र के लिए बड़ा खतरा है जो विभिन्न प्रकार की बीमारियो के लिए जोखिम पैदा करती है, इसी के साथ नैनो तकनीकी का कृषि के क्षेत्र में सुचरु रूप से संचालन बहुत अहम विषय है इसी नेतृत्व में श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के वैज्ञानिक एवं शोध छात्र–छात्राएं नैनो तकनिकी का कृषि क्षेत्र में विस्तार करने हेतु प्रयासरत है।

खेती में कार्बन अवशोषणः मिट्टी की सेहत और किसानों की आय बढ़ाने का नया तरीका

अजय कुमार यादव एवं एस. एस. शर्मा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर (जयपुर)

प्रस्तावनाः आज पूरी दुनिया जलवायु परिवर्तन की चुनौती का सामना कर रही है। बढ़ता तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा और बाढ़ जैसी समस्याएँ खेती को सीधे प्रभावित कर रही हैं। ऐसे समय में कार्बन अवशोषण किसानों और पर्यावरण दोनों के लिए एक महत्वपूर्ण समाधान बनकर उभरा है। कार्बन अवशोषण वह प्रक्रिया है, जिसमें वातावरण में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड को पेड़–पौधों, फसलों, मिट्टी और जैविक पदार्थों के माध्यम से अवशोषित कर सुरक्षित रूप से जमा किया जाता है। यह न केवल जलवायु परिवर्तन को कम करने में सहायक है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता और किसानों की आय बढ़ाने में भी उपयोगी है। कार्बन अवशोषण केवल एक पर्यावरणीय उपाय नहीं है। यह भविष्य की टिकाऊ खेती की नींव है।

कार्बन अवशोषण क्या है? जब पेड़–पौधे प्रकाश संश्लेषण के दौरान हवा से कार्बन डाइऑक्साइड लेते हैं, तो वे उस कार्बन को अपने तने, पत्तियों, जड़ों और मिट्टी में संचित कर लेते हैं। यही प्रक्रिया कार्बन अवशोषण कहलाती है।

कार्बन दो मुख्य रूपों में जमा होता है। जैविक कार्बन, पेड़ों, फसलों और वनस्पतियों में। मृदा कार्बन, मिट्टी में जैविक पदार्थ के रूप में। खेती के माध्यम से कार्बन को लंबे समय तक मिट्टी में सुरक्षित रखा जा सकता है। इसे ही "कार्बन खेती" भी कहा जाता है।

कार्बन अवशोषण क्यों जरूरी है?

1. जलवायु परिवर्तन से बचाव– वातावरण में बढ़ती कार्बन डाइऑक्साइड पृथ्वी का तापमान बढ़ाती है। कार्बन अवशोषण इस अतिरिक्त गैस को कम करता है।

2. मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए–मिट्टी में जैविक कार्बन बढ़ने सेरू

- सूक्ष्मजीव सक्रिय होते हैं।
- पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ती है।
- पानी धारण क्षमता बेहतर होती है।

3. उत्पादन में वृद्धि–कार्बन से भरपूर मिट्टी में फसल मजबूत और रोग–प्रतिरोधी होती है, जिससे उत्पादन बढ़ता है।

4. अतिरिक्त आय का अवसर–आज कई देशों में कार्बन क्रेडिट की व्यवस्था है। किसान यदि कार्बन अवशोषण वाली तकनीक अपनाते हैं, तो उन्हें अतिरिक्त आर्थिक लाभ मिल सकता है। कार्बन क्रेडिट एक ऐसा प्रमाणपत्र है जो दर्शाता है कि किसी किसान, संस्था या कंपनी ने वातावरण से एक निश्चित मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड कम की है। यह ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को नियंत्रित करने और पर्यावरण को सुरक्षित रखने का एक आर्थिक तरीका है।

खेती में कार्बन अवशोषण बढ़ाने के तरीके–

1. अधिक से अधिक पेड़ लगाना

- खेत की मेड़ों पर पेड़ लगाने से
- अतिरिक्त आय
- छाया और नमी संरक्षण
- अधिक कार्बन अवशोषण

2. फसल अवशेषों को न जलाना–पराली जलाने से कार्बन वापस हवा में चला जाता है।

3. जैविक खाद और गोबर खाद का उपयोग–रासायनिक खाद की जगह जैविक खाद मिट्टी में कार्बन बढ़ाती है।

4. ढकाव फसल अपनाना–खाली खेत छोड़ने की बजाय दलहनी या हरी खाद वाली फसलें उगाएँ।

5. न्यूनतम जुताई–कम जुताई से मिट्टी में कार्बन सुरक्षित रहता है।

6. जल संरक्षण तकनीक–ड्रिप सिंचाई, मल्चिंग आदि से मिट्टी की नमी और कार्बन संरक्षित रहता है।

कार्बन अवशोषण को कैसे मापा जाता है? कार्बन अवशोषण यानी हवा में मौजूद कार्बन डाइऑक्साइड को पौधों और मिट्टी में सुरक्षित जमा करना। कार्बन अवशोषण को मापने से आपको पता चलता है कि आपके खेत ने पर्यावरण और फसल की उर्वरता के लिए कितना योगदान दिया। यह किसानों को कार्बन क्रेडिट पाने में मदद करता है। नियमित मापन और रिकॉर्ड रखने से फसल की पैदावार और मिट्टी की सेहत लगातार बेहतर होती है। "जितना आप मापेंगे, उतना आप सुधार पाएंगेय जितना सुधारेंगे, उतनी आपकी फसल और मिट्टी मजबूत होगी।" इसे मापने के कुछ सरल तरीके हैं।

1. **फसल और पेड़–पौधों के आधार पर मापनः** पेड़ और पौधों की ऊंचाई, तने और पत्तियों का मापन करके वैज्ञानिक अनुमान लगाया जाता है। पौधों की उम्र और प्रजाति के हिसाब से कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषण की मात्रा का हिसाब लगाया जाता है। एक पेड़ सालाना लगभग 10–20 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित कर सकता है।

2. मिट्टी के कार्बन मापन सेः मिट्टी में जमा कार्बन जैविक पदार्थ और ह्यूमस की मात्रा से पता चलता है। इसे सरल तरीके से मापने के लिएः

- खेत से मिट्टी के नमूने लिए जाते हैं।
- मिट्टी की ऊपरी परत (0–30 सेंटीमीटर) में कार्बन की मात्रा लैब में जांची जाती है।
- ज्यादा कार्बन = ज्यादा अवशोषण।

3. तकनीकी उपकरण और सॉफ्टवेयर –आज डिजिटल और सैटेलाइट तकनीक की मदद से खेत का कार्बन स्तर मापा जा सकता है। GPS और GIS आधारित तकनीक से पौधों की संख्या, फसल की प्रजाति और मिट्टी की गुणवत्ता का आंकड़ा लिया जाता है। इससे सटीक और तेज मापन संभव है।

4. सरल किसान तरीकाः छोटे स्तर पर किसान अनुमानित तरीका अपना सकते हैं, तरीका सरल और व्यावहारिक है।

- खेत में कितने पेड़ लगे हैं। कितनी फसल अवशेष मिट्टी में डाली गई।
- कितने हेक्टेयर में जैविक खाद डाली गई। इन आंकड़ों के आधार पर साधारण फार्मूला या तालिका से अनुमान लगाया जा सकता है।

निष्कर्षः जितना आप अपने खेत में कार्बन अवशोषण बढ़ाएंगे, उतना आपके लिए लाभ और पर्यावरण के लिए सुरक्षा बढ़ेगी। कार्बन अवशोषण केवल पर्यावरण बचाने का साधन नहीं, बल्कि किसानों के लिए एक सुनहरा अवसर है। यह मिट्टी की गुणवत्ता सुधारता है, फसल उत्पादन बढ़ाता है और भविष्य में अतिरिक्त आय का स्रोत बन सकता है। यदि किसान पारंपरिक खेती के साथ–साथ कार्बन अवशोषण की तकनीक अपनाएँ, तो वे पर्यावरण संरक्षण में योगदान देने के साथ–साथ अपनी आर्थिक स्थिति भी मजबूत कर सकते हैं। मिट्टी में जितना अधिक कार्बन होगा, फसल उतनी ही स्वस्थ, मजबूत और अधिक उत्पादन देने वाली होगी।

किसानों के उत्थान में सूचना स्रोतों की भूमिका

चरत लाल बैरवा एवं अशोक कुमार मीना
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर (जयपुर)

सूचना की रोशनी हाथ में, तकनीक का साथ है, अब हर खेत में सपनों की नई बात है !
डेटा बना ताकत, ज्ञान बना हथियार है, सशक्त किसान ही आत्मनिर्भर भारत की पहचान है!!

भारत की अर्थव्यवस्था की नींव कृषि है और किसान इस नींव के सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ हैं। बदलते जलवायु परिदृश्य, प्राकृतिक संसाधनों की कमी, बाजार प्रतिस्पर्धा और तकनीकी परिवर्तन के इस युग में किसान के लिए केवल परंपरागत ज्ञान पर्याप्त नहीं रह गया है। आज कृषि एक विज्ञान, व्यवसाय और प्रबंधन का समन्वित रूप बन चुकी है। ऐसे में किसान के विकास और उत्थान का सबसे बड़ा साधन है। सटीक, समयबद्ध और विश्वसनीय सूचना। सूचना स्रोत किसान को जागरूक, सक्षम और आत्मनिर्भर बनाते हैं, जिससे वह बदलती परिस्थितियों में भी सफल खेती कर सके।

सूचना स्रोत की संकल्पनाः सूचना स्रोत वे सभी माध्यम हैं जिनके द्वारा किसान खेती, पशुपालन, मत्स्यपालन, मौसम, बाजार, तकनीक, सरकारी योजनाओं और कृषि नवाचारों से जुड़ी जानकारी प्राप्त करता है। ये स्रोत पारंपरिक भी हो सकते हैं और आधुनिक भी। सही सूचना किसान को वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने में सहायता करती है तथा निर्णय लेने की क्षमता विकसित करती है।

सूचना का कृषि विकास में महत्वः सूचना कृषि उत्पादन का अदृश्य इनपुट है। जैसे बीज, पानी और खाद फसल के लिए आवश्यक हैं, वैसे ही ज्ञान और सूचना खेती की सफलता के लिए अनिवार्य हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

महत्व के प्रमुख आयाम

- उत्पादन वृद्धि–उन्नत बीज, आधुनिक सिंचाई और वैज्ञानिक तकनीक से पैदावार बढ़ती है। लागत में कमी–संतुलित उर्वरक और कीटनाशक उपयोग से खर्च घटता है। जोखिम नियंत्रण–मौसम चेतावनी और रोग पूर्वानुमान से नुकसान कम होता है। बाजार लाभ–सही समय पर बिक्री से बेहतर मूल्य मिलता है। सतत खेती–संसाधनों का संरक्षण करते हुए उत्पादन बढ़ाना संभव होता है।

पारंपरिक सूचना स्रोतों की भूमिका: ग्रामीण समाज में लंबे समय तक पारंपरिक स्रोत ही ज्ञान के प्रमुख माध्यम रहे हैं।

1. अनुभवी किसान: अनुभव आधारित ज्ञान पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानांतरित होता रहा है। स्थानीय जलवायु और मिट्टी के अनुसार सलाह देने में अनुभवी किसान महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

2. कृषि विस्तार सेवाएँ: सरकारी कृषि अधिकारी और विस्तार कार्यकर्ता किसानों को प्रशिक्षण, फसल सलाह और तकनीकी मार्गदर्शन प्रदान करते हैं।

3. रेडियो, दूरदर्शन और समाचार पत्र: कृषि कार्यक्रम किसानों तक नई तकनीक और मौसम जानकारी पहुँचाते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में ये अभी भी भरोसेमंद माध्यम हैं।

4. कृषि मेले और प्रदर्शनियाँ: यहाँ किसान नई मशीनरी, उन्नत किस्में और वैज्ञानिक विधियाँ सीखते हैं।

आधुनिक सूचना स्रोतों का महत्व

1. डिजिटल तकनीक और मोबाइल क्रांति: आज स्मार्टफोन किसानों के लिए चलता–फिरता ज्ञान केंद्र बन गया है। मोबाइल एप और वेबसाइट के माध्यम से किसान तुरंत जानकारी प्राप्त कर सकता हैं। नई कृषि तकनीकों और अनुसंधान से जुड़ी जानकारी भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आई.सी.ए.आर) जैसे संस्थान उपलब्ध कराते हैं।

2. सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म: डिजिटल नेटवर्किंग ने किसानों को वैश्विक समुदाय से जोड़ दिया है।
वाट्सएप समूहों में अनुभव साझा करना। यू ट्यूब वीडियो से प्रशिक्षण प्राप्त करना
इससे ज्ञान का लोकतंत्रीकरण हुआ है और किसान स्वयं सीखने वाला बन गया है।

3. सरकारी सूचना तंत्र: कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय द्वारा अनेक पोर्टल, मोबाइल सेवाएँ और हेल्पलाइन संचालित की जाती हैं, जो किसानों को मौसम, बीमा, अनुदान और तकनीकी सलाह उपलब्ध कराती हैं।

4. अंतरराष्ट्रीय सूचना स्रोत: वैश्विक स्तर पर एफ.ए.ओ जैसी संस्थाएँ कृषि अनुसंधान, प्रशिक्षण सामग्री और तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराकर किसानों को आधुनिक खेती की ओर प्रेरित करती हैं।

किसानों के उत्थान में पुस्तकालयों की विशेष भूमिका पुस्तकालय ज्ञान के ऐसे केंद्र हैं जहाँ जानकारी संगठित, प्रमाणिक और स्थायी रूप में उपलब्ध रहती है। कृषि क्षेत्र में पुस्तकालयों की भूमिका बहुआयामी है।

(1) वैज्ञानिक ज्ञान का भंडार: कृषि विज्ञान, मृदा विज्ञान, कीट विज्ञान, पशुपालन, जैविक खेती, कृषि अर्थशास्त्र और कृषि इंजीनियरिंग से संबंधित पुस्तकें व पत्रिकाएँ पुस्तकालयों में उपलब्ध होती हैं। ये सामग्री किसानों को शोध आधारित ज्ञान प्रदान करती है।

(2) विश्वसनीय जानकारी: इंटरनेट पर कई बार गलत जानकारी भी मिल सकती है, लेकिन पुस्तकालयों में उपलब्ध सामग्री प्रामाणिक और विशेषज्ञों द्वारा प्रमाणित होती है।

(3) ग्रामीण पुस्तकालयों की उपयोगिता: ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित पुस्तकालय किसानों के लिए स्थानीय ज्ञान केंद्र बन सकते हैं। यहाँ उन्हें स्थानीय भाषा में कृषि साहित्य, सरकारी योजनाओं की पुस्तिकाएँ और प्रशिक्षण सामग्री मिलती है।

(4) प्रशिक्षण और संवाद मंच: कई पुस्तकालयों में विशेषज्ञ व्याख्यान, किसान गोष्ठी और कार्यशालाएँ आयोजित की जाती हैं, जिससे किसानों को सीधे वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों से संवाद का अवसर मिलता है।

(5) डिजिटल पुस्तकालय और ई–ज्ञान: आज ई–लाइब्रेरी किसानों को घर बैठे जानकारी उपलब्ध कराती है। डिजिटल पुस्तकालयों में वीडियो, ई–बुक, शोध पत्र और कृषि डेटाबेस उपलब्ध होते हैं, जिससे दूर–दराज के किसान भी आधुनिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

सूचना स्रोतों से किसानों को होने वाले सामाजिक व आर्थिक लाभ

सामाजिक लाभ: जागरूकता और शिक्षा में वृद्धि, वैज्ञानिक सोच का विकास,सामूहिक निर्णय क्षमता,नवाचार की प्रवृत्ति

आर्थिक लाभ: आय में वृद्धि, उत्पादन लागत में कमी, बाजार प्रतिस्पर्धा में बढ़त, कृषि व्यवसाय का विस्तार

प्रमुख चुनौतियाँ: हालाँकि सूचना स्रोतों का महत्व अत्यधिक है, फिर भी कुछ समस्याएँ मौजूद हैं ग्रामीण क्षेत्रों में इंटरनेट और पुस्तकालयों की कमी, डिजिटल साक्षरता का अभाव, गलत जानकारी का प्रसार, संसाधनों की कमी

समाधान और भविष्य की दिशा :प्रत्येक ग्राम पंचायत में कृषि ज्ञान केंद्र स्थापित किए जाएँ। पुस्तकालयों को डिजिटल संसाधनों से जोड़ा जाए। किसानों के लिए मोबाइल आधारित प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाएँ। कृषि विश्वविद्यालयों और पुस्तकालयों का नेटवर्क विकसित किया जाए। स्थानीय भाषा में अधिक सामग्री उपलब्ध कराई जाए

निष्कर्ष: सूचना स्रोत आधुनिक कृषि की रीढ़ हैं और पुस्तकालय इस ज्ञान प्रणाली का सबसे विश्वसनीय आधार हैं। जब किसान को समय पर सही जानकारी मिलती है तो वह वैज्ञानिक खेती अपनाकर उत्पादन, आय और जीवन स्तर में सुधार कर सकता है। इसलिए किसानों के समग्र उत्थान के लिए आवश्यक है कि सूचना तंत्र को सुदृढ़ बनाया जाए और पुस्तकालयों को ग्रामीण विकास के केंद्र के रूप में विकसित किया जाए।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

एकीकृत कृषि प्रणाली मॉड्यूल .अपशिष्ट पुनः उपयोग द्वारा आय संवर्धन

हरि सिंह
महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय उदयपुर

एकीकृत कृषि प्रणाली (IFS) कृषि की एक समन्वित एवं सतत पद्धति है, जिसमें फसल उत्पादन, पशुपालन, मत्स्य पालन, बागवानी, कुक्कुट पालन आदि को एकीकृत रूप से संचालित किया जाता है। इस प्रणाली का मुख्य सिद्धांत है "एक इकाई का अपशिष्ट, दूसरी इकाई का संसाधन।" MPUAT- Udaipur- Rajasthan द्वारा विकसित IFS मॉडलों के अनुसार, अपशिष्ट पुनः उपयोग के माध्यम से किसानों की आय में 2–4 गुना तक वृद्धि संभव है। यह लेख तालिकाओं एवं व्याख्या सहित IFS की संरचना, आय विश्लेषण तथा अपशिष्ट पुनर्चक्रण की उपयोगिता प्रस्तुत करता है। भारत में अधिकांश किसान छोटे एवं सीमांत वर्ग के हैं, जिनके पास भूमि एवं संसाधन सीमित होते हैं। पारंपरिक खेती में केवल फसल उत्पादन पर निर्भरता होने से आय अस्थिर रहती है। इसके विपरीत, IFS प्रणाली बहु–उद्यम आधारित है, जिससे आय के अनेक स्रोत विकसित होते हैं तथा जोखिम कम होता है।

एकीकृत कृषि प्रणाली मॉड्यूल की संरचना (1 हेक्टेयर मॉडल)

तालिका 1रू एकीकृत कृषि प्रणाली की संरचना

क्रमांक	घटक	क्षेत्र/संख्या	उद्देश्य
1	फसल उत्पादन	0.60 हैक्टयर	खाद्यान्न एवं नकदी फसल
2	बागवानी	0.20 हैक्टयर	फल एवं सब्जी उत्पादन
3	चारा उत्पादन	0.10 हैक्टयर	पशुओं के लिए हरा चारा
4	मत्स्य तालाब	0.10 हैक्टयर	मछली उत्पादन
5	दुधारू पशु	2 से 3 हैक्टयर	दूध एवं गोबर
6	कुक्कुट पालन	50 से 100	अंडा एवं मांस उत्पादन

तालिका 1 दर्शाती है कि 1 हेक्टेयर भूमि को विभिन्न घटकों में विभाजित कर अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। फसल उत्पादन मुख्य आय स्रोत है, जबकि पशुपालन, मत्स्य एवं कुक्कुट पालन सहायक आय स्रोत प्रदान करते हैं। चारा उत्पादन पशुओं के लिए आहार सुनिश्चित करता है, जिससे बाहरी लागत घटती है।

तालिका 2 अपशिष्ट पुनर्चक्रण का प्रवाह

अपशिष्ट स्रोत	पुनः उपयोग	आर्थिक लाभ
पशु गोबर	वर्मी–कम्पोस्ट / बायोगैस	खाद बिक्री एवं गैस बचत
फसल अवशेष	पशु चारा	दुग्ध उत्पादन में वृद्धि
मुर्गी बीट	मत्स्य तालाब में खाद	मछली उत्पादन में वृद्धि
बायोगैस स्लरी	खेतों में जैव उर्वरक	रासायनिक खाद की बचत
तालाब का पानी	सिंचाई	पोषक तत्वों से भरपूर जल

तालिका 2 से स्पष्ट है कि IFS में कोई भी अपशिष्ट बेकार नहीं जाता। पशुओं से प्राप्त गोबर वर्मी–कम्पोस्ट एवं बायोगैस उत्पादन में उपयोग होता है। फसल अवशेष पशुओं के चारे के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इस प्रकार, इनपुट लागत घटती है और उत्पादन बढ़ता है।

आय विश्लेषण

तालिका 3 पारंपरिक खेती बनाम एकीकृत कृषि प्रणाली आय तुलना

घटक	पारंपरिक खेती	IFS मॉडल
फसल आय	70000	70000
दुग्ध उत्पादन	–	90000
मत्स्य पालन	–	60000
कुक्कुट पालन	–	35000
वर्मी–कम्पोस्ट	–	40000
कुल शुद्ध आय	**60000 से 80000**	**250000 से 300000**

तालिका 3 दर्शाती है कि पारंपरिक खेती में केवल फसल से सीमित आय प्राप्त होती है। जबकि एकीकृत कृषि प्रणाली मॉडल में बहु–उद्यमों के कारण आय के स्रोत बढ़ जाते हैं। कुल आय लगभग 3 से 4 गुना तक बढ़ सकती है।

वर्मी–कम्पोस्ट उत्पादन का विवरण

तालिका 4 : वर्मी–कम्पोस्ट से आय

विवरण	मात्रा
2 पशुओं से गोबर	20से 25 किग्रा/दिन
वार्षिक गोबर उपलब्धता	7 से 8 टन
वर्मी–कम्पोस्ट उत्पादन	6 से 7 टन
बाजार मूल्य	₹6 से 8/किग्रा
संभावित आय	₹40,000 से ₹50,000

दो पशुओं से प्राप्त गोबर को संसाधित कर 6–7 टन वर्मी–कम्पोस्ट तैयार किया जा सकता है। बाजार में इसकी अच्छी मांग है, जिससे अतिरिक्त आय प्राप्त होती है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पर्यावरणीय एवं सामाजिक लाभ

- ✓ रासायनिक उर्वरकों की निर्भरता में कमी, मिट्टी की उर्वरता मे 15 से 20 प्रतिशत सुधार, वर्षभर रोजगार सृजन, कृषि जोखिम में कमी, सतत कृषि विकास को बढ़ावा

निष्कर्ष: एकीकृत कृषि प्रणाली अपशिष्ट पुनः उपयोग के माध्यम से आय बढ़ाने का प्रभावी मॉडल है। यह प्रणाली छोटे एवं सीमांत किसानों के लिए विशेष रूप से उपयोगी है, क्योंकि यह सीमित संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित करती है। एकीकृत कृषि प्रणाली न केवल आय को 2 से 4 गुना तक बढ़ाती है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण एवं सतत विकास को भी प्रोत्साहित करती है। यदि इसे वैज्ञानिक मार्गदर्शन के साथ अपनाया जाए, तो यह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

राजस्थान प्रदेश बजट 2026–27 : कृषि समृद्धि और हरित विकास की ओर बढ़ता कदम

प्रेम सिंह शेखावत,[1] नगेन्द्र खंगारोत[2] एवं धर्मेन्द्र सिंह लाखरान[1]
[1]श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर (जयपुर)
[2]कृषि अर्थशास्त्री, वाग्धारा, जयपुर

राजस्थान सरकार द्वारा प्रस्तुत वर्ष 2026–27 का बजट राज्य की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के साथ–साथ कृषि, पशुपालन, ग्रामीण विकास और पर्यावरणीय संतुलन को नई दिशा देने वाला बजट है। यह बजट "आत्मनिर्भर विकसित राजस्थान–2047 की दीर्घकालिक परिकल्पना पर आधारित है, जिसमें कृषि को विकास का प्रमुख आधार माना गया है। राज्य का कुल बजट आकार लगभग 6.10 लाख करोड़ रुपये निर्धारित किया गया है। वर्ष 2026–27 में राजस्व प्राप्तियां लगभग 3.25.25 लाख करोड़ रुपये तथा राजस्व व्यय 3.50 लाख करोड़ रुपये अनुमानित है। राजस्व घाटा लगभग 24 हजार करोड़ रुपये तथा राजकोषीय घाटा 79 हजार करोड़ रुपये (जीएसडीपी का 3.69%) रहने का अनुमान है। राज्य का सकल घरेलू उत्पाद बढ़कर लगभग 21.52 लाख करोड़ रुपये होने की संभावना है, जो आर्थिक विकास की सकारात्मक दिशा को दर्शाता है। राज्य सरकार ने वर्ष 2026–27 में कृषि क्षेत्र के लिए 69.423 करोड़ रुपये का कृषि बजट निर्धारित किया है। इसके अतिरिक्त अन्य विभागों तथा स्वायत्तशासी संस्थाओं द्वारा कृषि एवं संबद्ध क्षेत्रों पर 49985 करोड़ रुपये व्यय किए जाने का प्रावधान है। इस प्रकार कृषि क्षेत्र पर कुल मिलाकर लगभग 119408 करोड़ रुपये का व्यय प्रस्तावित है, जो राज्य की कृषि प्राथमिकता को स्पष्ट रूप से दर्शाता है।

राजस्थान बजट 2026–27 में प्रमुख प्रावधान:

- ○ इस बजट में सिंचाई और कृषि अवसंरचना के विकास पर विशेष बल दिया गया है। प्रदेश में सिंचाई से संबंधित विभिन्न कार्यों पर 11 हजार करोड़ रुपये से अधिक का व्यय प्रस्तावित है। कृषि क्षेत्र में ऊर्जा सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु आगामी वर्ष में 50 हजार सोलर पंप संयंत्रों की स्थापना की जाएगी। इससे किसानों की सिंचाई लागत कम होगी तथा स्वच्छ ऊर्जा के उपयोग को बढ़ावा मिलेगा।
- ○ कृषि उत्पादन में दक्षता बढ़ाने के लिए कृषि यंत्रों पर 160 करोड़ रुपये का अनुदान प्रदान किया जाएगा, जिससे लगभग 50 हजार किसान लाभान्वित होंगे। साथ ही प्रदेश में 500 कस्टम हायरिंग सेंटर स्थापित किए जाएंगे, जिससे छोटे किसानों को आधुनिक कृषि उपकरण आसानी से उपलब्ध हो सकेंगे। कृषि को डिजिटल और वैज्ञानिक आधार देने के लिए कृषि स्टैक पीएमयू का गठन किया जाएगा, जो किसानों को डेटा आधारित परामर्श, सटीक इनपुट प्रबंधन, फसल योजना एवं बाजार जानकारी उपलब्ध कराएगा।
- ○ "मुख्यमंत्री बीज स्वावलंबन योजना" के अंतर्गत 90 प्रतिशत अनुदान पर 70 हजार क्विंटल बीज वितरण का लक्ष्य रखा गया है। इसके अलावा 5 हजार किसानों को नेपियर घास का निःशुल्क वितरण किया जाएगा। संरक्षित खेती को बढ़ावा देने हेतु ग्रीनहाउस, पॉलीहाउस, शेडनेट एवं प्लास्टिक मल्च जैसी तकनीकों के लिए 200 करोड़ रुपये का अनुदान प्रदान किया जाएगा, जिससे लगभग 4 हजार किसान लाभान्वित होंगे।
- ○ किसानों को आर्थिक सहायता प्रदान करने के लिए ब्याज मुक्त अल्पकालीन फसल ऋण योजना के तहत 35 लाख किसानों को 25 हजार करोड़ रुपये के ऋण दिए जाएंगे। दीर्घकालीन कृषि एवं गैर–कृषि क्षेत्रों के लिए भी ब्याज अनुदान की व्यवस्था की गई है।
- ○ ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुपालन की महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए इस क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण प्रावधान किए गए हैं। 200 ग्राम पंचायतों में पशु चिकित्सा उपकेंद्र स्थापित किए जाएंगे तथा पशु चिकित्सालयों का उन्नयन किया जाएगा। "मुख्यमंत्री दुग्ध उत्पादक संबल योजना" के अंतर्गत 700 करोड़ रुपये का अनुदान प्रदान किया जाएगा, जिससे लगभग 5 लाख पशुपालक लाभान्वित होंगे। ग्रामीण क्षेत्रों में 1000 नए दूध संग्रह केंद्र स्थापित किए जाएंगे तथा अलवर में उच्च क्षमता का दुग्ध प्रसंस्करण संयंत्र स्थापित किया जाएगा।
- ○ राज्य सरकार ने हरित विकास को बजट का प्रमुख स्तंभ बनाया है। "मिशन हरियालो राजस्थान" के तहत आगामी वर्ष में 10 करोड़ पौधारोपण किया जाएगा। किसानों को कार्बन क्रेडिट उपलब्ध कराने हेतु राज्य में पहली बार कार्बन क्रेडिट पायलट परियोजना प्रारंभ की जाएगी। यह पहल जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को कम करने तथा पर्यावरणीय सततता को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण सिद्ध होगी।
- ○ इस बजट में प्रस्तावित योजनाएं कृषि विश्वविद्यालयों के लिए नई संभावनाएं लेकर आई हैं। अनुसंधान, नवाचार, तकनीकी प्रशिक्षण एवं विस्तार सेवाओं के माध्यम से कृषि विश्वविद्यालय इन योजनाओं के सफल क्रियान्वयन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। विशेष रूप से प्राकृतिक खेती, संरक्षित खेती, डिजिटल कृषि और जलवायु अनुकूल तकनीकों के विकास में उनकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होगी। कृषि विश्वविद्यालय, अनुसंधान संस्थान एवं प्रशिक्षण केंद्र इस राशि के माध्यम से नवीन तकनीकों के विकास, जलवायु अनुकूल खेती, उन्नत बीज

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

अनुसंधान, डिजिटल कृषि तथा किसान प्रशिक्षण कार्यक्रमों को गति प्रदान कर सकेंगे। इससे कृषि में नवाचार, उत्पादकता वृद्धि और किसानों की आय संवर्धन को बल मिलेगा।

- कुल कृषि बजट में से 1813 करोड़ रुपये कृषि शिक्षा, अनुसंधान एवं कौशल विकास के लिए निर्धारित किए गए हैं। यह प्रावधान दर्शाता है कि राज्य सरकार कृषि को केवल उत्पादन तक सीमित न रखते हुए ज्ञान आधारित एवं तकनीकी दृष्टि से सशक्त बनाने के लिए प्रतिबद्ध है।
- राज्य के प्रमुख कृषि शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थानों में से एक श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर को इस बजट में प्राकृतिक खेती उत्कृष्टता केंद्र किया गया है।
- कृषि बजट से विश्वविद्यालय को 95.10 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है, जबकि अन्य विभागों एवं स्वायत्तशासी संस्थाओं द्वारा अतिरिक्त 36.42 करोड़ रुपये प्रदान किए जाएंगे। इस प्रकार विश्वविद्यालय को कुल मिलाकर लगभग 131.52 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता प्राप्त होगी।

राजस्थान बजट 2026–27 कृषि क्षेत्र के समग्र विकास की स्पष्ट दिशा प्रस्तुत करता है। यह बजट उत्पादन वृद्धि, किसान आय संवर्धन, तकनीकी नवाचार, पशुपालन विकास और पर्यावरणीय संतुलन को समान महत्व देता है। यदि इन योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए, तो यह बजट राज्य को कृषि समृद्धि एवं सतत विकास की दिशा में नई ऊंचाइयों तक पहुंचाने में सक्षम सिद्ध होगा।

जलवायु परिवर्तन के परिप्रेक्ष्य में टिकाऊ कृषि और खाद्य सुरक्षाः रणनीतियाँ एवं प्रबंधन"

भीम पारीक, श्वेता गुप्ता, सीमा शर्मा एवं रामनिवास चौधरी
राजस्थान कृषि अनुसन्धान संस्थान, दुर्गापुरा, जयपुर

अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन पैनल के अनुसार, जलवायु परिवर्तन उन जलवायु चर में बदलाव को कहते हैं जो लंबे समय तक स्थायी रहते हैं। ऐसे परिवर्तन मानवजनित और प्राकृतिक दोनों कारणों से हो सकते हैं। कृषि क्षेत्र जलवायु परिवर्तन के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभावों के कारण अनेक समस्याओं का सामना कर रहा है, जिससे कृषि उत्पादकता प्रभावित हो रही है और वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर चिंता बढ़ रही है। हालाँकि भारत ने हरित क्रांति के माध्यम से खाद्यान्न उत्पादन में 'आत्मनिर्भरता' प्राप्त कर ली थी। लेकिन इसके साथ कई पर्यावरणीय चुनौतियाँ भी सामने आईं, जैसे मिट्टी की उर्वरता में कमी, जलभराव, भूजल और सतही जल का प्रदूषण, कीट एवं रोगों की तीव्रता में वृद्धि। साथ ही सामाजिक–आर्थिक समस्याएँ भी बढ़ीं, जैसे कृषि निवेश की लागत में वृद्धि और क्षेत्रीय असमानता ।

इन सभी समस्याओं के अतिरिक्त, जलवायु परिवर्तन ने भारतीय कृषि, विशेषकर खाद्य सुरक्षा, के लिए एक नई और गंभीर चुनौती उत्पन्न कर दी है। भारत को जलवायु परिवर्तन के प्रति अत्यधिक संवेदनशील देशों में से एक माना गया है। वर्तमान अध्ययनों में तापमान वृद्धि, बार–बार आने वाली लू, सूखा, अत्यधिक वर्षा की घटनाएँ और तीव्र चक्रवाती गतिविधियों में वृद्धि दर्ज की गई है

जलवायु परिवर्तनों ने कृषि उपज क्षेत्र को कई प्रकार से प्रभावित किया है। फसल हानि से किसान संकट, महंगाई और व्यापक आर्थिक दुष्परिणाम उत्पन्न होते हैं। वर्तमान में अत्यधिक मौसमीय घटनाओं के कारण होने वाली वार्षिक औसत फसल हानि से भारत के GDP का लगभग 0.25 प्रतिशत नुकसान हो रहा है। इतेरास (2009) के अनुसार, अल्पकाल (2010 से 2039) में जलवायु परिवर्तन से उपज में 4.5 से 9 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है, जबकि दीर्घकाल (2070 से 2099) में बिना अनुकूलन के उपज में कम से कम 25 प्रतिशत तक की भारी गिरावट संभव है। तापमान में निरंतर वृद्धि के कारण फसलों की जल मांग भी बढ़ेगी और अधिक सिंचाई की आवश्यकता होगी। किंतु पहले से ही अत्यधिक दोहन के कारण भूजल स्तर में भारी गिरावट आई है।

इसलिए बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुरूप कृषि को ढालना और फसल उत्पादन को स्थिर बनाए रखना अत्यंत आवश्यक हो गया है।

जलवायु परिवर्तन का फसल उत्पादन पर प्रभाव

जलवायु परिवर्तन से तापमान, वर्षा और अन्य मौसम चर प्रभावित होते हैं, जो फसल उत्पादन पर सीधा असर डालते हैं।

- वैश्विक तापमान में वृद्धि और वर्षा पैटर्न में बदलाव से फसल की उपज और गुणवत्ता प्रभावित होती है।
- तापमान और वर्षा में धीरे–धीरे बदलाव, साथ ही चरम मौसम की घटनाएँ (जैसे सूखा, बाढ़, हीटवेव) कृषि को अस्थिर कर सकती हैं।
- तापमान वृद्धि आमतौर पर फसल उपज को कम करती है। उच्च अक्षांश वाले देशों में कभी–कभी यह लाभकारी हो सकती है, लेकिन अधिकांश कृषि क्षेत्र पहले से ही उच्च तापमान की सीमा पर हैं।
- कीट और रोगों का दबाव बढ़ सकता है, जो फसल के लिए हानिकारक होता है।
- आर्थिक अध्ययन बताते हैं कि 2.5 से अधिक तापमान वृद्धि से वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में 1 से 5 प्रतिशत तक की कमी हो सकती है।

फसल उत्पादन में अनुकूलन रणनीतियाँ

जलवायु परिवर्तन का प्रभाव स्पष्ट है, इसलिए अनुकूलन रणनीतियाँ जरूरी हैं।

अनुकूलन रणनीति में शामिल हैं –

- प्रथाओं और तकनीकों में परिवर्तन
- फसल प्रणाली में विविधता ।
- योजना, निवेश और अनुसंधान में नवाचार ।
- कृषक क्षमता निर्माण (जानकारी, कौशल और समर्थन) ताकि वे बदलते हालात के अनुसार अपने प्रथाओं को अनुकूलित कर सकें।

फसल विविधीकरण:

फसल विविधीकरण से तात्पर्य नई फसलों या फसल प्रणालियों से कृषि उत्पादन को जोड़ने से है, जिसमें एक विशेष कृषि क्षेत्र पर कृषि उत्पादन की पूरक मूल्यवर्द्धित फसलों के विपणन से लाभ प्राप्त किया जाता है। फसल प्रणाली फसलों, उनके अनुक्रम और प्रबंधन तकनीकों को संदर्भित करती है जिसका उपयोग किसी विशेष कृषि क्षेत्र में वर्षों से किया जाता रहा है।

भारत में प्रमुख फसल प्रणाली इस प्रकार है– क्रमिक फसल, एकल फसली व्यवस्था , अंतर फसली , रिले क्रॉपिंग, मिश्रित अंतर फसली ।

फसल विविधीकरण के लिए प्रमुख रणनीतियों में शामिल हैं:

- फसल चक्रः किसान एक ही भूमि पर एक नियोजित क्रम में फसलें उगाते हैं। इससे कीट और रोग चक्र को तोड़ने में मदद मिलती है और पोषक तत्वों की मांग में बदलाव करके मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार होता है।
- अंतरफसलः एक ही खेत में विभिन्न फसलों को एक साथ बोने से भूमि का उपयोग अधिकतम हो सकता है, संसाधन दक्षता में सुधार हो सकता है, तथा कीटों की संवेदनशीलता कम हो सकती है।
- आवरण फसलें: ऑफ–सीजन के दौरान क्लोवर या राई जैसी आवरण फसलें लगाने से मृदा क्षरण को रोका जा सकता है, खरपतवारों को दबाया जा सकता है, तथा मृदा की उर्वरता को बढ़ाया जा सकता है।
- बहु–कृषिः एक साथ कई फसलें उगाने से, प्रायः पूरक विकास पैटर्न या पोषण संबंधी आवश्यकताओं के साथ, समग्र उपज में वृद्धि हो सकती है और जोखिम कम हो सकता है।
- कृषि वानिकीः एक ही भूमि पर पेड़, झाड़ियाँ और फसलें उगाने से कई लाभ मिलते हैं, जिनमें आय के स्रोतों में विविधता और पर्यावरणीय स्थिरता में सुधार शामिल है।
- फसल किस्म का चयनः किसान एक ही फसल प्रजाति की विभिन्न किस्मों का चयन कर सकते हैं जो विभिन्न परिस्थितियों या बाजार की मांग के अनुकूल हों।
- जैविक खेती पद्धतियाँः जैविक खेती अक्सर विविध फसल चक्रों, आवरण फसलों और कम रासायनिक इनपुट के उपयोग के माध्यम से फसल विविधीकरण को प्रोत्साहित करती है।
- बाजार विश्लेषणः बाजार की मांग के आधार पर फसलों में विविधता लाने से किसानों को विशिष्ट बाजारों तक पहुंचने और मुनाफा बढ़ाने में मदद मिल सकती है।
- जलवायु–लचीली फसलें: बदलती जलवायु परिस्थितियों के अनुकूल फसल किस्मों का चयन करने से जोखिम कम हो सकता है और लचीलापन बढ़ सकता है।
- मूल्य–संवर्धित उत्पादः फसलों को जैम या जूस जैसे मूल्य–संवर्धित उत्पादों में संसाधित करने से किसानों के लिए आय के स्रोतों में विविधता आ सकती है।

फसल चक्रीकरण:

फसल चक्र कृषि की वह वैज्ञानिक पद्धति है जिसमें किसी निश्चित भूमि पर विभिन्न प्रकार की फसलों को एक निश्चित क्रम और समय–सारणी के अनुसार बारी–बारी से उगाया जाता है। इसका उद्देश्य भूमि की उर्वरता को बनाए रखना, कीटों और रोगों के प्रकोप को कम करना, खरपतवारों का प्रबंधन करना और कृषि उत्पादन को स्थिर व टिकाऊ बनाना है।

- मृदा उर्वरता में वृद्धि और रखरखाव : यह मिट्टी में पोषक तत्वों के संतुलन को बनाए रखता है। फलीदार फसलें नाइट्रोजन जोड़ती हैं, जबकि अन्य फसलें विभिन्न पोषक तत्वों का उपयोग करती हैं, जिससे मिट्टी की कमी नहीं होती। जैविक पदार्थ का स्तर बढ़ता है, जो मिट्टी की संरचना, जल–धारण क्षमता और सूक्ष्मजीव गतिविधि को बेहतर बनाता है।
- कीटों और रोगों का प्रभावी नियंत्रण : यह सबसे महत्वपूर्ण लाभों में से एक है। एक ही फसल को बार–बार उगाने से उस फसल के विशिष्ट कीटों और रोगजनकों को पनपने का मौका मिलता है। फसल चक्र उनके जीवन चक्र को बाधित करता है, जिससे उनकी आबादी कम होती है और रासायनिक कीटनाशकों पर निर्भरता घटती है।

- खरपतवारों का प्रबंधन : विभिन्न फसलों के साथ अलग–अलग खरपतवारों का सामना करना पड़ता है। फसल चक्र से विशिष्ट खरपतवारों की संख्या में कमी आती है, क्योंकि उन्हें लगातार अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं मिलतीं।
- मिट्टी के कटाव में कमी : विभिन्न फसलों की जड़ प्रणालियाँ मिट्टी को बेहतर ढंग से बांधे रखती हैं। कवर फसलें या हरी खाद वाली फसलें मिट्टी को हवा और पानी के कटाव से बचाती हैं, खासकर जब खेत खाली होता है।
- संसाधनों का कुशल उपयोग : विभिन्न फसलें मिट्टी की विभिन्न गहराइयों से पोषक तत्वों और पानी का उपयोग करती हैं, जिससे उपलब्ध संसाधनों का अधिक कुशल उपयोग होता है। यह रासायनिक उर्वरकों और पानी की आवश्यकता को कम करके इनपुट लागत को कम करने में मदद करता है।

जलवायु–सहनशील फसल किस्मों का उपयोग

- जलवायु–प्रत्यास्थी फसल किस्मों की खेती करना : ऐसी फसलों की खेती जो तापमान एवं वर्षा परिवर्तन, कीटों, बीमारियों और लवणता के प्रति अधिक प्रतिरोधी हों, किसानों को फसल उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन के प्रतिकूल प्रभावों से निपटने में मदद कर सकती हैं।
- उदाहरण के लिये, उप–सहारा अफ्रीका में सूखा–सहिष्णु मक्के की किस्मों को विकसित और प्रसारित किया गया है, जिससे लाखों छोटे किसानों को लाभ प्राप्त हुआ है।
- जलवायु परिवर्तन के संदर्भ में मिट्टी प्रबंधन और जल प्रबंधन
- कृषि उत्पादन का आधार मृदा और जल हैं। यदि इन दोनों संसाधनों का संरक्षण एवं वैज्ञानिक प्रबंधन न किया जाए, तो खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संतुलन और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर गंभीर प्रभाव पड़ सकता है। जलवायु परिवर्तन के वर्तमान परिप्रेक्ष्य में मृदा संरक्षण एवं जल प्रबंधन और भी अधिक महत्वपूर्ण हो गए हैं।

मृदा संरक्षण की प्रमुख विधियाँ

- समोच्च जुताई : ढलान वाले क्षेत्रों में भूमि की ढलान के समानांतर जुताई की जाती है, जिससे पानी का बहाव कम होता है।
- टेरेस खेती : पर्वतीय क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा खेत बनाकर कटाव रोका जाता है।
- पट्टीदार खेती : फसलों को पट्टियों में उगाकर मिट्टी को स्थिर रखा जाता है।
- फसल चक्र : विभिन्न फसलों को क्रमवार उगाने से मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है।
- आवरण फसल : खाली भूमि पर हरी फसल उगाकर मिट्टी को कटाव से बचाया जाता है।
- कृषि वानिकी : पेड़ों और फसलों का संयुक्त उत्पादन मृदा संरक्षण में सहायक है।
- जैविक खाद का उपयोगः गोबर खाद, कम्पोस्ट और हरी खाद से मिट्टी में जैविक पदार्थ बढ़ते हैं।

जल प्रबंधन

जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा पैटर्न बदलने और तापमान में चरम वृद्धि से मीठे पानी की उपलब्धता घट रही है जबकि जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण पानी की मांग बढ़ रही है। सुदृढ़ और कुशल जल प्रबंधन इन चुनौतियों का सामना करने के लिए आवश्यक है।

मुख्य उपाय और तकनीकें

- पारंपरिक जल संचयन प्रणालियों को पुनर्जीवित करनाः पारंपरिक जल प्रणालियों, जैसे कि बावड़ियों, टैंकों और जोहड़ों का पुनर्भरण, विशेष रूप से शुष्क और अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में स्थायी जल उपलब्धता सुनिश्चित करता है।
- बारिश के पानी का संचयनः वर्षा के पानी को संरक्षित कर फसलों में उपयोग किया जाता है। यह जल संकट और जलवायु असमानताओं का मुकाबला करने में मदद करता है।
- ड्रिप और सूक्ष्म सिंचाई को बढ़ावा देनाः ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणालियों को अपनाने से कृषि में जल उपयोग दक्षता 70 प्रतिशत तक बढ़ सकती है, जिससे जल की बर्बादी कम होगी और जल संरक्षण होगा।
- सिंचाई का अनुकूलन : फसल की वृद्धि चरण और मौसम के अनुसार समय और मात्रा का निर्धारण। जिससे पानी का अपव्यय कम होता है और फसल की वृद्धि सुरक्षित रहती है।
- फसल विविधीकरण को प्रोत्साहित करनाः किसानों को धान और गन्ना जैसी अधिक जल खपत वाली फसलों के स्थान पर कदन्न, दलहन एवं तिलहन की खेती करने के लिये प्रोत्साहित करने से कृषि में जल की मांग कम हो सकती है तथा उत्पादकता में सुधार हो सकता है।
- डिजिटल जल प्रबंधन का विस्तारः सेंसर, सैटेलाइट इमेजरी जैसी डिजिटल तकनीकें जल निगरानी को बेहतर बना सकती हैं, सिंचाई दक्षता में सुधार ला सकती हैं और रिसाव को कम कर सकती हैं। इन साधनों के माध्यम से ससमय निर्णय लेने से पारदर्शिता और जवाबदेही बढ़ती है।
- संरक्षण जुताई और नो–टिल खेती

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- संरक्षण जुताई और इसका उन्नत रूप नो–टिल खेती मिट्टी प्रबंधन की ऐसी तकनीकें हैं जो पारंपरिक जुताई की तुलना में मिट्टी में कम हस्तक्षेप करती हैं।
- नियमित जुताई से मिट्टी में जैविक पदार्थ का अपघटन तेज होता है और मिट्टी की जैविक सामग्री कम होती है।
- नो–टिल खेती कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को 48 से 67 प्रतिशत तक कम कर सकती है। यदि इसमें फसल अवशेष का उपयोग किया जाए तो यह उत्सर्जन लगभग 80 प्रतिशत तक कम हो सकता है। ये अभ्यास मृदा के कटाव को कम कर सकते हैं, जलधारण क्षमता में सुधार कर सकते हैं, कार्बन पृथक्करण को बढ़ा सकते हैं और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम कर सकते हैं।
- संरक्षण जुताई में मिट्टी जोतने की संख्या और गहराई को कम किया जाता है।
- बिना जुताई वाली खेती में फसल सीधे बिना जुताई वाली मिट्टी में बोई जाती है।
- संरक्षण जुताई पारंपरिक जुताई की तुलना में मिट्टी के जीव–जंतु को कम नुकसान पहुंचाती है और मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ाती है। मिट्टी की संरचना और जीव विविधता बेहतर रहती है।
- नो–टिल खेती से मिट्टी में जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ती है क्योंकि खेत में पौधों के अवशेष अधिक रहते हैं।

कृषि में तकनीकी नवाचार

जलवायु परिवर्तन और इसके प्रभाव जैसे कि लंबी सूखापन की अवधि, गंभीर तूफान, मौसम में बदलाव और औसत तापमान में वृद्धि, वैश्विक कृषि के लिए चुनौतियाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। ऐसी परिस्थितियों में अनुकूलन किसानों और संबंधित हितधारकों को इन चुनौतियों का सामना करने में मदद कर सकता है।

मुख्य तकनीकी नवाचार

- सटीक कृषि : जीपीएस, जीआईएस और ड्रोन तकनीक का उपयोग करके फसल की निगरानी और संसाधनों का सही उपयोग। पानी, उर्वरक और कीटनाशकों की खपत कम होती है। इससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन घटता है।
- सेंसर आधारित निगरानी : मिट्टी और मौसम की वास्तविक स्थिति पर निगरानी। समय पर सिंचाई और पोषण सुनिश्चित होता है। उत्पादन में वृद्धि और संसाधनों की बचत होती है।
- ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई : पानी सीधे जड़ तक पहुँचता है, बर्बादी कम होती है। सूखा और जलवायु असमानताओं के प्रभाव को कम करता है।
- सूखा–सहनशील और जल–कुशल फसलें : कम पानी में भी अच्छी पैदावार। सिंचाई पर निर्भरता घटती है और जलवायु प्रभाव से सुरक्षा मिलती है।
- जैविक और कम उत्सर्जन वाले कृषि उपकरण : पारंपरिक ट्रैक्टर और उपकरणों की जगह ऊर्जा–कुशल और इलेक्ट्रिक मशीनरी। कार्बन उत्सर्जन घटता है और पर्यावरण संरक्षण में मदद मिलती है।
- स्मार्ट फार्मिंग और डेटा एनालिटिक्स : फसल की वृद्धि, रोग और कीट प्रबंधन के लिए डेटा–आधारित निर्णय। समय और संसाधनों की बचत, साथ ही पर्यावरणीय प्रभाव कम।

प्रिसिशन कृषि तकनीक का उपयोग

सटीक कृषि तकनीक डेटा–आधारित उपकरणों और तकनीकों का उपयोग करके खेती में संसाधनों का कुशल और सटीक उपयोग सुनिश्चित करती है। यह जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने में मदद कर सकती है।

मुख्य उपाय और लाभः

- संसाधनों का कुशल उपयोग : मिट्टी और फसल की वास्तविक जरूरतों के अनुसार पानी, उर्वरक और कीटनाशक का प्रयोग। अनावश्यक रसायनों के उपयोग से पर्यावरण प्रदूषण और ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कम होता है।
- सटीक सिंचाई : ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई तकनीकें केवल आवश्यक मात्रा में पानी देती हैं। सूखे और जल संकट के प्रभाव को कम करती हैं।
- फसल स्वास्थ्य और रोग प्रबंधन : ड्रोन और सेंसर्स द्वारा फसल की निगरानी। समय पर कीट और रोग नियंत्रण, जिससे नुकसान कम और उत्पादन स्थिर रहता है।
- उत्पादन में स्थिरता :मौसम और जलवायु परिवर्तनों के अनुसार त्वरित प्रबंधन। कम संसाधन में बेहतर और स्थिर पैदावार।
- कार्बन उत्सर्जन में कमी : मशीनरी और संसाधनों के अनुकूल उपयोग से कृषि से जुड़े कार्बन फुटप्रिंट को कम किया जा सकता है।
- जलवायु–सहनशील कृषि के लिए नीति और शासन ढांचा
- नीति निर्माण : सरकार और संस्थाओं द्वारा जलवायु–सहनशील कृषि को बढ़ावा देने वाली नीतियाँ। फसल विविधता, जल प्रबंधन, सतत कृषि और टेक्नोलॉजी अपनाने के लिए मार्गदर्शन।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- शासन और कार्यान्वयन : कृषि विभाग, जल संसाधन विभाग और मौसम विज्ञान विभाग का समन्वय। किसानों के लिए प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता और संसाधनों की उपलब्धता।
- सहयोग और नेटवर्किंग : किसान संघ, सरकारी एजेंसियाँ और शोध संस्थानों के बीच ज्ञान और तकनीक साझा करना। कृषि जोखिम प्रबंधन, बीमा योजनाएँ और मौसम–आधारित चेतावनी तंत्र लागू करना। तकनीक विकास, प्रशिक्षण और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण में सहायता करना।
- जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करना : टिकाऊ कृषि पद्धतियों को बढ़ावा देना। फसल की उपज स्थिर रखना और पर्यावरणीय प्रभाव (जैसे कार्बन उत्सर्जन, जल और मिट्टी प्रदूषण) कम करना।

उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन कृषि एवं खाद्य सुरक्षा के लिए एक गंभीर चुनौती के रूप में उभर रहा है। बढ़ता तापमान, अनियमित वर्षा, सूखा एवं बाढ़ जैसी प्राकृतिक घटनाएँ फसल उत्पादन को प्रभावित कर रही हैं, जिससे खाद्यान्न की उपलब्धता और स्थिरता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अंतर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन पैनल ने भी संकेत दिया है कि भविष्य में चरम मौसमी परिस्थितियों की आवृत्ति बढ़ सकती है, जो कृषि जोखिम को और बढ़ाएगी।

उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए टिकाऊ कृषि पद्धतियों को अपनाना अनिवार्य है। खाद्य एवं कृषि संगठन द्वारा प्रतिपादित खाद्य सुरक्षा के स्तंभ उपलब्धता, पहुँच, उपयोग एवं स्थिरताकृतभी सुदृढ़ हो सकते हैं जब जलवायु–स्मार्ट तकनीक, फसल विविधीकरण, मृदा संरक्षण और जल प्रबंधन जैसी रणनीतियों को प्रभावी रूप से लागू किया जाए।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक नवाचार, सुदृढ़ नीतियाँ और किसानों की सक्रिय सहभागिता ही जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों के बीच दीर्घकालिक खाद्य सुरक्षा का आधार बन सकती हैं।

सफलता की कहानियाँ / किसानों के नवाचार

हर दिन एक पेड़ का संकल्प और 2 गायों से 450 गिर गायों तक का प्रेरक सफर

संकलनकर्ता: बलवीर सिंह बधाला, सन्तोष देवी सामोता, अरूण प्रताप सिंह एवं सुरेश कुमार महला
(प्रसार शिक्षा विभाग, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर)

किसान का नाम : श्री सुरेंद्र अवाना
पता : ग्राम–भैराना, पोस्ट– बिचून, तहसील– दूदू, जिला–जयपुर
मोबाइल नंबर : 9462229999

भैराना गांव के प्रगतिशील किसान श्री सुरेंद्र अवाना ने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि लक्ष्य स्पष्ट हो, मेहनत सच्ची हो और सोच नवाचार से भरी हो, तो पारंपरिक खेती और दुग्ध उत्पादन को भी एक सफल उद्योग में बदला जा सकता है। इनके फार्म पर हो रहे नवाचारों को देखने और सीखने के लिए प्रतिदिन लगभग 30 से 40 किसान एवं युवा भ्रमण हेतु आते हैं। यह फार्म न केवल आधुनिक कृषि एवं पशुपालन का उत्कृष्ट उदाहरण है, बल्कि रोजगार सृजन का भी एक सशक्त केंद्र बन चुका है। यहां प्रत्यक्ष रूप से 50 से 60 लोगों को रोजगार प्राप्त हुआ है, जबकि अप्रत्यक्ष रूप से लगभग 500 किसानों और युवाओं के लिए आजीविका के अवसर विकसित हुए हैं।इनके द्वारा कंपाउंडर के माध्यम से सीमन लगाना, उच्च गुणवत्ता वाले चारा बीज एवं पौधों की बिक्री, बत्तख एवं मछली के सीड उपलब्ध कराना, खाद एवं कोयले का विक्रय जैसे विविध कार्यों से ग्रामीणों को आय के नए साधन प्राप्त हुए हैं।

कृषि और पशुपालन के साथ–साथ इन्होंने अपने फार्म पर एग्रो–टूरिज्म का भी सफल विकास किया है। आगंतुकों के लिए ऊंट गाड़ी सवारी, घोड़े की सवारी, बोटिंग जैसी आकर्षक सुविधाएं उपलब्ध हैं। विशेष अवसरों पर राजस्थानी लोकगीत एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों की भी व्यवस्था की जाती है। नई कृषि तकनीकों और पशुपालन संबंधी जानकारी के साथ ठेठ राजस्थानी संस्कृति एवं मनोरंजन का अनूठा संगम आगंतुकों के हृदय में उत्साह और प्रेरणा का संचार करता है। यह अनुभव उन्हें आधुनिक एवं नवाचार आधारित कृषि और पशुपालन अपनाने के लिए प्रेरित करता है।

दो गायों से 450 गिर गायों तक का सफर :

शिक्षा के दौरान प्रेरणा लेकर वर्ष 2016 में उन्होंने मात्र दो गायों के साथ दुग्ध उत्पादन और कृषि कार्य की शुरुआत की। अपनी दूरदर्शिता और आधुनिक सोच के बल पर उन्होंने इसे आगे बढ़ाते हुए **"रूद्रशिवम डेयरी एवं एग्री रिसर्च प्राइवेट लिमिटेड"** की स्थापना की। आज उनके डेयरी फार्म में **450 गिर गायें,** 125 अविशान भेड़, 150 सिरोही बकरियां एवं 18 बीकानेरी ऊंट है।

वे गिर गाय के दूध, दही, छाछ,घी और अन्य उत्पादों की प्रोसेसिंग कर जयपुर शहर में उचित मूल्य पर आपूर्ति कर रहे हैं। बाजार में गिर गाय का दूध लगभग ₹100 प्रति लीटर तथा गिर गाय का घी ₹2200 प्रति लीटर तक बिक रहा है, जिससे उन्हें उत्कृष्ट आय प्राप्त हो रही है।

वर्षा जल संग्रहण से आत्मनिर्भरता :अपने क्षेत्र में जल की कमी को देखते हुए अवाना जी ने प्रधानमंत्री कृषि सिंचाई योजना के तहत 6 फार्म पॉन्ड बनवाए, जिनमें कुल 4.65 लाख लीटर वर्षा जल संग्रहित किया जाता है। इस जल से 21 हेक्टेयर भूमि पर वे ड्रिप और स्प्रिंकलर सिंचाई प्रणाली का उपयोग कर जल का कुशल प्रबंधन कर रहे हैं। अतिरिक्त आय के लिए फार्म पॉन्ड में 5000 मछलियां (राहू और कतला) तथा बतख पालन भी किया जा रहा है, जिससे बहुआयामी आय का स्रोत विकसित हुआ है।

बहुवर्षीय हरा चारा उत्पादन :

अपने पशुओं को पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने हेतु वे 25 प्रकार के बहुवर्षीय जैविक चारे का उत्पादन कर रहे हैं,जिनमें प्रमुख हैं सेहजना, एलोवेरा, रिजका, नेपियर घास, शहतूत, अरडू, नीम, गिन्नी घास, ऑस्ट्रेलियन केन, सुबबुल,हैजलूसन आदि।उन्होंने राजस्थान और हरियाणा के लगभग 1500 किसानों को नेपियर घास, CO-05, सुबबुल और हैजलूसन चारे के बीज निःशुल्क उपलब्ध करवाकर सहयोग और प्रेरणा की अनूठी मिसाल पेश की है।

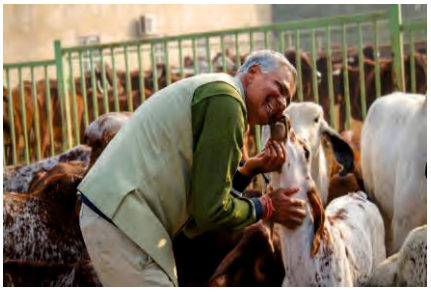

सॉर्टेड सीमन से नस्ल सुधार :

नवीनतम तकनीक अपनाते हुए उन्होंने अपने डेयरी फार्म में सेक्स सॉर्टेड सीमन का उपयोग कर नस्ल सुधार पर विशेष ध्यान दिया। इस तकनीक से अब तक लगभग 450 उन्नत नस्ल की बछड़ियों का जन्म हुआ है।वे किसानों को उचित दर पर सेक्स सॉर्टेड सीमन उपलब्ध करवा रहे हैं, जिससे दुधारू पशुओं की संख्या बढ़ी है, आवारा पशुओं की समस्या कम हुई

है और दुग्ध उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। इससे किसानों की आय में कई गुना बढ़ोतरी दर्ज की गई है। राजस्थान के प्रथम किसान के रूप में इन्होंने '**गोपाल रत्न पुरस्कार**' प्राप्त कर इतिहास रच दिया। इस सम्मान के साथ इन्हें **5 लाख रुपये की नगद राशि** भी प्रदान की गई। डेयरी फार्म में स्वदेशी नस्ल की गायों के संरक्षण, संवर्धन और उत्कृष्ट प्रबंधन के क्षेत्र में किए गए उल्लेखनीय कार्यों के लिए यह प्रतिष्ठित पुरस्कार इन्हें प्रदान किया गया।

वेस्ट से बेस्टः जैविक खाद और कोयला निर्माण :

अवाना जी ने पशुओं के गोबर और मूत्र पर अनुसंधान कर एक विशेष जैविक खाद विकसित की है, जो वर्मी कम्पोस्ट से चार गुना अधिक लाभकारी मानी जाती है।इस खाद के उपयोग से उन्होंने अपनी फसलों और बागवानी को पूर्णतः जैविक रूप दिया है। डेयरी और कृषि अपशिष्ट को जलाने के बजाय उससे कोयला बनाकर अतिरिक्त आय अर्जित कर रहे हैं।गोबर से जैविक खाद, कीटनाशक, धूपबत्ती और अन्य उत्पाद बनाकर वे स्वावलंबन और पर्यावरण संरक्षण की मिसाल बन चुके हैं।

"हर दिन एक पेड़" का संकल्प :

सुरेंद्र जी अवाना को लोग "पेड़ वाले गुरुजी" के नाम से भी जानते हैं। उन्होंने प्रतिदिन एक पेड़ लगाने का संकल्प लिया और अब तक 1,65,000 पेड़ लगाकर पर्यावरण संरक्षण में ऐतिहासिक योगदान दिया है।उनकी यह पहल न केवल हरियाली बढ़ा रही है, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए एक सुरक्षित और स्वच्छ वातावरण का उपहार भी है।

प्रेरणा का स्रोत :

श्री सुरेंद्र अवाना की कहानी यह दर्शाती है कि यदि किसान आधुनिक तकनीक, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और पर्यावरण संरक्षण को साथ लेकर चलें, तो खेती और डेयरी व्यवसाय को बहुआयामी, लाभकारी और आत्मनिर्भर मॉडल में बदला जा सकता है।उनकी मेहनत, समर्पण और नवाचार की भावना वास्तव में प्रेरणादायक है।

पॉलीहाउस, स्ट्रॉबेरी एवं पशुपालन से समृद्धि की ओर बढते कदम

संकलनकर्ताः सुरेश कुमार महला, अर्जुन खर्रा, मोहित रोहलन एवं मुध यादव
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

किसान का नाम : श्री गंगाराम सेपट
गांव : कालख, जोबनेर (जयपुर)
फोन नं : 9887782381

जयपुर, राजस्थान के छोटे से गांव–कालख के प्रगतिशील किसान श्री गंगाराम सेपट आज देशभर के किसानों के लिए प्रेरणा का स्रोत बन चुके हैं। लगभग 4 हेक्टेयर कृषि भूमि के स्वामी श्री गंगाराम जी ने पारंपरिक खेती से आगे बढ़कर संरक्षित खेती (पॉलीहाउस) और आधुनिक तकनीकों को अपनाकर अपनी अलग पहचान बनाई है।

नई सोच से नई शुरुआत

जब उन्हें यह जानकारी मिली कि कम पानी और सीमित भूमि में पॉलीहाउस के माध्यम से अधिक उत्पादन लेकर बेहतर मुनाफा कमाया जा सकता है, तो उन्होंने इस दिशा में कदम बढ़ाने का निश्चय किया।

वर्ष 2017 में उन्होंने तीन दिवसीय प्रशिक्षण लेकर पॉलीहाउस तकनीक का गहन अध्ययन किया। इसके बाद कृषि विभाग में 4000 वर्गमीटर क्षेत्र में पॉलीहाउस निर्माण के लिए आवेदन किया। पहली सफलता के बाद उन्होंने सरकारी अनुदान पर दो और पॉलीहाउस बनवाए।

वर्षा जल संचयन और सौर ऊर्जा का अनूठा प्रयोग

श्री गंगाराम जी ने 50 प्रतिशत सरकारी अनुदान पर पॉलीहाउस के साथ एक फार्म पोंड भी बनवाया, जिसमें पॉलीहाउस की छत पर गिरने वाला वर्षा जल एकत्रित किया जाता है। इस जल का उपयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। साथ ही, उन्होंने सरकारी अनुदान पर सौर ऊर्जा संयंत्र भी स्थापित किया। परिणामस्वरूप उनके पॉलीहाउसों में खीरे की लहलहाती फसल और पोंड में तैरती मछलियां उनकी बहुआयामी खेती का उदाहरण बन गईं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

आधुनिक खेती में निरंतर नवाचार

वर्तमान में वे खीरा और टमाटर की ग्राफ्टिंग तकनीक पर कार्य कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त वे मशरूम उत्पादन से अतिरिक्त आय अर्जित कर रहे हैं। खुले खेत में स्ट्रॉबेरी, लेट्यूस, सेलेरी, ब्रोकली और पार्सले जैसी विदेशी सब्जियों की खेती कर रहे हैं।

जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए उन्होंने पशुपालन को भी अपनाया। गोबर से जैविक खाद और वर्मी कम्पोस्ट तैयार कर मिट्टी की उर्वरता बढ़ाई तथा रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम की। आज वे पूर्णतः जैविक उत्पादन लेने में सफल हैं।

बूंद–बूंद सिंचाई से अधिक उत्पादन

उन्होंने ड्रिप (बूंद–बूंद) सिंचाई पद्धति अपनाई, जिससे 30 से 60 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है और उत्पादन में 20 से 50 प्रतिशत तक वृद्धि देखी गई है। फर्टिगेशन तकनीक के माध्यम से पौधों की जड़ों तक संतुलित मात्रा में पोषक तत्व पहुंचाए जाते हैं, जिससे फसल की गुणवत्ता और पैदावार दोनों में सुधार हुआ है।

पशुपालन से अतिरिक्त आय

श्री गंगाराम सेपट के पास कुल 28 पशु हैं, जिनमें 6 गिर नस्ल की गाय, 5 मुर्रा भैंस, 10 गुर्जरी नस्ल की बकरियां और 8 बछड़े–बछड़ियां शामिल हैं। वे पशुओं को संतुलित आहार देते हैं और प्रतिदिन लगभग 65 लीटर दूध का विक्रय करते हैं। डेयरी से उन्हें प्रतिवर्ष लगभग 11.50 लाख रुपये की आय होती है।

आय में उल्लेखनीय वृद्धि

नई तकनीकों कृषि पॉलीहाउस में खीरा उत्पादन, वर्षा जल संचयन, ड्रिप सिंचाई से सब्जी उत्पादन, वर्मी कम्पोस्ट निर्माण, 18 एचपी सौर ऊर्जा संयंत्र और पशुपालन कृषि के माध्यम से उन्होंने सालाना लगभग 33.70 लाख रुपये की आय अर्जित कर यह सिद्ध कर दिया कि आधुनिक तकनीक और दृढ़ संकल्प से खेती को लाभकारी व्यवसाय बनाया जा सकता है।

सारणी : 1. नई तकनीक के इस्तेमाल से पॉलीहाऊस, खुले खेत में सब्जी उत्पादन व पशुपालन से आय का विवरणः

क्र.सं.	फसल उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन (क्विंटल)	कुल (आमदनी लाख)
1	तीन पॉलीहाऊस में खीरा, शिमला मिर्च और टमाटर (2 सीजन साल में)	0.4 हैक्टयर प्रत्येक	45––60 टन/ सीजन / पॉलीहाऊस से	21.00 लाख
2	खुले खेत मे सब्जियॉः स्ट्राबेरी, लेटयूस, सेलेरी, ब्रोकली	0.8 हैक्टयर	4–5 टन/ सीजन	1.20 लाख
3	पशुपालन	15 दूधारू पशूओं	65 लीटर प्रतिदिन दूग्ध बिक्री से	11.50 लाख

सम्मान और पहचान

उनकी सफलता और नवाचारों को देखते हुए आसपास के किसान, वैज्ञानिक और कृषि अधिकारी उनके खेत का भ्रमण करने आते हैं। विभिन्न समाचार पत्रों और न्यूज चैनलों में उनकी सफलता की कहानियां प्रकाशित हो चुकी हैं।

रोजाना खेतों में होने वाले प्रक्षेत्र भ्रमण, प्रदर्शनों और व्हाट्सएप आउटरीच के माध्यम से श्री सेपट ने पूरे राजस्थान में एकीकृत और संरक्षित कृषि पद्धतियों को अपनाने के लिए प्रेरित किया है।

उन्हें वर्ष 2018–19 में पंचायत समिति स्तर पर नवाचार के लिए प्रथम पुरस्कार, 2020 में जैविक खेती में उत्कृष्ट कार्य हेतु सम्मान, 2021 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का नवोन्मेषी पुरस्कार, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद द्वारा पंडित दीनदयाल उपाध्याय अंत्योदय कृषि पुरस्कार तथा 9 मार्च 2022 को आईएआरएआरडी का फेलो अवार्ड प्रदान किया गया।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

तालाब निर्माण से किसान परिवार हुआ खुशहाल

संकलनकर्ताः सुपर्ण सिंह शेखावत, रामप्रताप एवं रेणु गुप्ता
कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटपूतली
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

नामः श्री मोहन सिंह
पिता का नामः श्री मकतूल सिंह
पताः राजनोता , तहसील – पावटा , जयपुर
मो. नं. : 9460186160

तकनीकीः–

वर्श 2017–18 में कृषि विज्ञान केन्द्र के संपर्क में आने के बाद श्री मोहन सिंह शेखावत ने अपने फार्म हाउस पर कृषि विज्ञान केन्द्र से प्रशिक्षण से सीखी तकनीकी अपनाकर फसल उत्पादन व सब्जी को फार्म पोण्ड बनाकर बूँद–बूँद सिंचाई विधि से कर रहे है।

कृषि विज्ञान केन्द्र का योगदानः–

केन्द्र द्वारा जिले में फसल उत्पादन व सब्जी उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। जिससे किसान व सब्जियों की खेती कर अच्छा मुनाफा कमा रहे है।

मूल गतिविधि :–

श्री मोहन सिंह शेखावत, भारतीय सेना में सेवानिवृत हवलदार थे, श्री मोहन सिंह शेखावत को खेती–बाड़ी में बड़ी रूचि थी, लेकिन पानी की कमी व नई तकनीकी की जानकारी के अभाव के कारण सफलता नही मिल रही थी, वर्ष 2017–18 में कृषि विज्ञान केन्द्र के संपर्क में आने पर आशा की किरण जगी उन्होने तालाब के पानी को उपयोग करके 3.18 है. खेत से फसल व सब्जी उत्पादन से अपने फार्म से प्रतिवर्ष 924540 रूपये की शुद्व आय प्राप्त करी।

क्र.सं.	फसल	इकाई (है./नं.)	उत्पादन (क्विं.)	सकल आय (लाख में)	सकल लागत (लाख में	शुद्ध आय (लाख में)	लाभ लागत अनुपात
1	बाजरा	0.8	42.0	56700	19450	37250	2.91
2	ग्वार	0.5	6.5	26000	7850	18150	3.31
3	मूंग	0.6	5.8	40600	9350	31250	4.34
4	अरहर	0.4	7.0	31500	5600	25900	5.62
5	तिल	0.4	2.30	17250	5500	11750	3.13
6	तरबूज	1.6	525	630500	203650	426850	3.09
7	खरबूजा	1.2	200	500890	127500	373390	3.92
कुल योग			**7886.60**	**1303440**	**378900**	**924540**	**3.44**

अन्य किसानों पर सफलता का असरः–

केन्द से प्रशिक्षण प्राप्त कर 100 से अधिक किसानों व युवाओं ने फल व सब्जी उत्पादन को उद्यम के रूप में अपनाकर औसत 1.5–5.0 लाख रूपयें सकल आय प्रतिवर्ष अर्जित कर रहे है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

समन्वित कृषि प्रणालीः सतत आय की कुंजी

संकलनकर्ताः रामप्रताप, सुपर्ण सिंह शेखावत एवं रेणु गुप्ता
कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटपूतली
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

नामः श्री महेश कुमार रावत
पिता का नामः श्री देवकरण रावत
पताः पनियाला , **तहसील** – कोटपूतली
मो. नं. : 9929184899

तकनीकीः–

वर्ष 2018–19 में श्री महेश कुमार रावत, कृषि विज्ञान केन्द्र के संपर्क में आने के बाद केन्द्र पर भ्रमण किया तथा विभिन्न प्रशिक्षणों में भाग लिया तथा केन्द्र से प्रशिक्षण में सीखी तकनीकः समन्वित कृषि प्रणाली, समन्वित कीट प्रंबधन, वैज्ञानिक डेयरी प्रंबधन एवं पशुपालन, वैज्ञानिक फसल उत्पादन तकनीक अपना रहे है।

कृषि विज्ञान केन्द्र का योगदानः–

कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा चलाये जाने वाले प्रशिक्षणों एवं केन्द्र पर भ्रमण करने पर वैज्ञानिक फसल उत्पादन तकनीक, वैज्ञानिक डेयरी प्रंबधन एवं पशुपालन अपनाकर अपनी आमदनी बढ़ा रहा है तथा आसपास के किसानों को प्रोत्साहित करते है।

मूल गतिविधि :–

श्री महेश कुमार रावत समन्वित कृषि प्रणाली, फसल उत्पादन, सब्जी उत्पादन एवं पशुपालन कर अपने फार्म से प्रतिवर्ष 9,59,280 की शुद्ध आय प्राप्त कर रहे है।

क्र.सं.	फसल	इकाई (है./नं.)	उत्पादन (क्विं.)	सकल आय (लाख में)	सकल लागत (लाख में	शुद्ध आय (लाख में)	लाभ लागत अनुपात
1	बाजरा	2.50	22.2	47300	22000	25300	2.15
2	ग्वार	3.13	20.0	100000	20000	80000	5.0
3	सरसों	2.50	20.8	96720	19200	77520	5.04
4	गेंहूँ	1.25	21.6	42660	13400	29260	3.18
5	चना	1.25	14.0	71400	10400	61000	6.87
6	प्याज	1.25	79.8	70000	41000	29000	1.71
7	भैंस	4	11524.0	691200	174000	517200	3.97
8	गाय	2	6000.0	240000	100000	140000	2.40
कुल योग			11702.4	1359280	400000	959280	3.39

अन्य किसानों पर सफलता का असरः–

सीमित संसाधनों में भी वैज्ञानिक तकनीक, उन्नत किस्म , एकीकृत कृषि प्रणाली एवं पशुपालन अपनाकर किसान अपनी आय को कई गुना बढ़ा सकता है अन्य किसानों नें भी एकीकृत कृषि प्रणाली अपनाना प्रारंभ किया तथा वैज्ञानिक खेती के प्रति जागरुकता बढ़ी।

जल संरक्षण और उन्नत तकनीक से बदली किस्मतः 60 वर्षीय किसान हरवीर सिंह की सफलता की कहानी

संकलनकर्ताः नवाब सिंह, प्रियंका जोशी, ममता कुमारी तंवर एवं गोविन्द
कृषि विज्ञान केन्द्र, भरतपुर
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

राजस्थान के डीग जिले के गंगारसोली गाँव के 60 वर्षीय किसान श्री हरवीर सिंह एक अनुभवी कृषक हैं। वर्षों से वे अपने खेतों में खरीफ मौसम में बाजरा और ज्वार तथा रबी में गेहूं और सरसों की खेती करते आ रहे थे। खेती उनका मुख्य व्यवसाय था, किंतु निरंतर मेहनत के बावजूद उन्हें अपेक्षित उत्पादन और लाभ प्राप्त नहीं हो रहा था। उनकी फसलों की उत्पादकता संभावित उपज से काफी कम थी। भूमिगत जल में अधिक लवणता, गुणवत्तापूर्ण सिंचाई जल की कमी, उन्नत किस्मों का अभाव तथा वैज्ञानिक खेती पद्धतियों का सीमित उपयोग – ये सभी कारण उनकी आय को प्रभावित कर रहे थे। पारंपरिक तरीकों से खेती करने के कारण लागत अधिक और लाभ कम रह जाता था। स्थिति में परिवर्तन तब आया जब उनका संपर्क कृषि विज्ञान केन्द्र, कुम्हेर, भरतपुर से हुआ। कृषि वैज्ञानिकों ने उनके खेत का निरीक्षण किया और मृदा परीक्षण कराने की सलाह दी। मृदा परीक्षण रिपोर्ट के आधार पर संतुलित उर्वरक प्रयोग की सिफारिश की गई। इससे उन्हें पहली बार यह समझ आया कि बिना परीक्षण के उर्वरकों का उपयोग करना लाभकारी नहीं है।

प्रदर्शित तकनीकें और नवाचार

कृषि विज्ञान केंद्र के मार्गदर्शन में श्री हरवीर सिंह ने अपने खेत पर कई उन्नत तकनीकों को अपनाया।

1. **ट्यूबवेल रिचार्ज तकनीक** – वर्षा जल संचयन के माध्यम से भू–जल स्तर एवं गुणवत्ता में सुधार किया गया। इससे जल की लवणता में कमी आई और सिंचाई की उपलब्धता बेहतर हुई।
2. **ढैंचा की हरी खाद** – ढैंचा फसल को मिट्टी में मिलाकर मृदा की उर्वरता और जैविक कार्बन में वृद्धि की गई। इससे मिट्टी की संरचना सुधरी और उत्पादन क्षमता बढ़ी।
3. **वर्मी–कम्पोस्ट का उपयोग** – जैविक खाद के प्रयोग से लागत में कमी आई और मृदा स्वास्थ्य बेहतर हुआ।
4. **उन्नत सरसों किस्म** DRMR 1165–40 का चयन – यह किस्म रेपसीड एवं सरसों अनुसंधान निदेशालय द्वारा विकसित की गई है। इसकी विशेषताएँ हैं।
    - अंकुरण अवस्था में गर्मी सहनशील
    - नमी तनाव सहनशील
    - 133–151 दिनों में पकने वाली
    - वर्षा आधारित परिस्थितियों के लिए उपयुक्त

उन्होंने लाइन बुवाई पद्धति अपनाई तथा उर्वरकों का वैज्ञानिक तरीके से प्रयोग किया। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा एसएसपी और एमओपी की पूरी मात्रा आधार के रूप में दी गई, जबकि शेष नाइट्रोजन पहली सिंचाई के बाद दी गई। बीजोपचार और गंधक युक्त उर्वरकों का उपयोग भी किया गया।

परिणाम और प्रभाव

रबी मौसम 2024–25 में श्री हरवीर सिंह ने 3 हेक्टेयर क्षेत्र में सरसों की उन्नत किस्म DRMR 1165–40 की खेती की।

शुद्ध लाभः ₹67,104 प्रति हेक्टेयर

लाभ–लागत अनुपात लाभ लागत अनुपात रू 2.52

उन्नत तकनीकों के कारण उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। ट्यूबवेल रिचार्ज तकनीक से भू–जल की लवणता कम हुई और सिंचाई जल की उपलब्धता बेहतर हुई। ढैंचा की हरी खाद और वर्मी–कम्पोस्ट से मिट्टी की गुणवत्ता में सुधार आया। आज डीग और भरतपुर जिलों में 100 हेक्टेयर से अधिक क्षेत्र में यह सरसों किस्म फैल चुकी है। कई किसान बीजोपचार और संतुलित उर्वरक प्रबंधन को अपनाने लगे हैं।

जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूल खेतीः सरसों की उन्नत किस्म DRMR 1165–40 ऊष्मा एवं नमी तनाव सहनशील है, जिससे अनिश्चित जलवायु परिस्थितियों में भी स्थिर उत्पादन संभव हुआ। कम पानी की आवश्यकता और कम लागत में अधिक लाभ ने खेती को अधिक सुरक्षित और लाभकारी बनाया।

प्रेरणा का स्रोतः 60 वर्ष की आयु में भी श्री हरवीर सिंह ने यह सिद्ध किया कि सीखने और बदलाव की कोई उम्र नहीं होती। उन्होंने वैज्ञानिक तकनीकों को अपनाकर अपनी आय में वृद्धि की और अन्य किसानों के लिए उदाहरण प्रस्तुत किया।

उनकी सफलता यह संदेश देती है कि यदि किसान मृदा परीक्षण, उन्नत किस्मों, जल संरक्षण और एकीकृत फसल प्रबंधन तकनीकों को अपनाएँ, तो कम संसाधनों में भी अधिक उत्पादन और बेहतर लाभ संभव है।

श्री हरवीर सिंह की कहानी डीग जिले के किसानों के लिए प्रेरणा का स्रोत है और यह दर्शाती है कि वैज्ञानिक खेती ही स्थायी और लाभकारी भविष्य का मार्ग है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

फार्म से मार्केट तकः एक महिला कृषि नवप्रवर्तक की प्रेरणादायक सफलता की कहानी

संकलनकर्ताः प्रियंका जोशी, नवाब सिंह, ममता कुमारी तंवर एवं सीमा यादव
कृषि विज्ञान केन्द्र, भरतपुर
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

राजस्थान के डीग जिले के सबोरा गाँव की 38 वर्षीय श्रीमती पुष्पा देवी एक साधारण किसान परिवार से संबंध रखती हैं। आठवीं कक्षा तक शिक्षित पुष्पा देवी का जीवन प्रारंभ में अन्य ग्रामीण महिलाओं की तरह सीमित संसाधनों, कम आय और सामाजिक चुनौतियों से घिरा हुआ था। परिवार के पास थोड़ी कृषि भूमि थी, जिस पर पारंपरिक तरीके से खेती की जाती थी। उत्पादन तो होता था, लेकिन बाजार तक सीधी पहुँच न होने के कारण उपज को बिचौलियों के माध्यम से बेचना पड़ता था। मेहनत अधिक और लाभ कम–यही उनकी आर्थिक स्थिति का यथार्थ था। परिवार की वार्षिक आय लगभग ₹90,000 थी, जो बच्चों की पढ़ाई, स्वास्थ्य और दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त नहीं थी। सीमित संसाधनों और सामाजिक प्रतिबंधों के कारण महिलाओं की निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी भी कम थी। किन्तु पुष्पा देवी ने इन परिस्थितियों को अपनी नियति मानने के बजाय बदलाव की दिशा में कदम बढ़ाने का निश्चय किया। उन्होंने समझ लिया कि यदि खेती को केवल उत्पादन तक सीमित न रखकर "उत्पादन से प्रसंस्करण और विपणन" तक जोड़ा जाए, तो आय और सम्मान दोनों में वृद्धि संभव है।

इसी सोच के साथ उन्होंने कृषि विज्ञान केन्द्र, कुम्हेर, भरतपुर से संपर्क किया और विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लिया। यहाँ उन्हें उन्नत सब्जी उत्पादन तकनीक, बकरी पालन, मधुमक्खी पालन, वर्मी–कम्पोस्ट निर्माण, बेर बागवानी तथा फसल प्रबंधन से संबंधित व्यावहारिक जानकारी प्राप्त हुई। साथ ही उन्होंने रिकॉर्ड कीपिंग, लागत–लाभ विश्लेषण और डिजिटल माध्यम से विपणन की मूलभूत जानकारी भी सीखी।

प्रशिक्षण से प्राप्त ज्ञान ने उनके दृष्टिकोण को व्यापक बनाया। उन्होंने पारंपरिक रासायनिक खेती से हटकर जैविक और प्राकृतिक खेती को अपनाया। खेतों में वर्मी–कम्पोस्ट का उपयोग शुरू किया, जिससे मिट्टी की उर्वरता में सुधार हुआ और लागत में कमी आई। फसल विविधीकरण अपनाते हुए उन्होंने अनाज के साथ–साथ मौसमी सब्जियाँ और फल उत्पादन शुरू किया। बकरी पालन और मधुमक्खी पालन से अतिरिक्त आय के स्रोत विकसित किए, जिससे वर्षभर आय का प्रवाह बना रहा। पुष्पा देवी ने यह महसूस किया कि कच्चा माल बेचने से लाभ सीमित रहता है। अतः उन्होंने घर पर ही कृषि उत्पादों का प्रसंस्करण और मूल्य संवर्धन प्रारंभ किया। उन्होंने अचार, पापड़, मसाले, आटा मिश्रण तथा बाजरा, ज्वार जैसे मोटे अनाज आधारित पौष्टिक उत्पाद तैयार किए।

उन्होंने गांव की महिलाओं को प्रेरित कर एक स्वयं सहायता समूह का गठन किया। सामूहिक बचत, श्रम विभाजन और सामूहिक उत्पादन के माध्यम से कार्य को संगठित रूप दिया गया। इस पहल से 8–10 ग्रामीण महिलाओं को नियमित रोजगार प्राप्त हुआ। समूह के माध्यम से उत्पादों की गुणवत्ता, पैकेजिंग और विपणन में एकरूपता आई।

विपणन के क्षेत्र में भी पुष्पा देवी ने नवाचार अपनाया। उन्होंने साप्ताहिक हाट में सीधे बिक्री शुरू की, व्हाट्सएप समूहों के माध्यम से ऑर्डर लेना प्रारंभ किया तथा स्थानीय दुकानदारों से संपर्क स्थापित किया। इससे बिचौलियों पर निर्भरता कम हुई और लाभ का बड़ा हिस्सा सीधे उनके पास आने लगा। बेहतर भंडारण और ग्रेडिंग तकनीकों को अपनाकर उन्होंने फसल उपरांत हानि को भी कम किया।

इन सभी प्रयासों का सकारात्मक परिणाम सामने आया। उनकी वार्षिक आय ₹90,000 से बढ़कर ₹1,80,000 हो गई। परिवार की आर्थिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ। बच्चों को बेहतर शिक्षा के अवसर मिले, घर में पोषण स्तर बेहतर हुआ और जीवन स्तर ऊँचा उठा। गांव में मिलेट आधारित पौष्टिक खाद्य उत्पादों की उपलब्धता बढ़ी, जिससे स्थानीय समुदाय को भी लाभ मिला। आज श्रीमती पुष्पा देवी केवल एक सफल कृषक ही नहीं, बल्कि ग्रामीण महिला सशक्तिकरण की प्रतीक बन चुकी हैं। वे गांव की अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणा स्रोत हैं और विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों में अपने अनुभव साझा करती हैं। उनका आत्मविश्वास और नेतृत्व क्षमता निरंतर बढ़ी है। पुष्पा देवी की यह यात्रा "फार्म से मार्केट" तक की एक सशक्त मिसाल है। यह कहानी बताती है कि यदि सही मार्गदर्शन, प्रशिक्षण और आत्मविश्वास मिले तो सीमित संसाधनों के बावजूद भी उल्लेखनीय आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन संभव है। कृषि में नवाचार, मूल्य संवर्धन और सामूहिक प्रयास न केवल आय बढ़ाते हैं, बल्कि सम्मान, आत्मनिर्भरता और सतत विकास का मार्ग भी प्रशस्त करते हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

जैविक खेती : उच्च गुणवत्ता अधिक आय

संकलनकर्ताः सुनिता चौधरी एवं अक्षय चितौड़ा
कृषि विज्ञान केन्द्र, दौसा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

नामः श्री श्याम सुन्दर शर्मा
पिता का नामः श्री रेवड़मल शर्मा
पताः खटवा, तहसील लालसोट जिला दौसा (राजस्थान)
मोबाईल नं. : 9413971770

तकनीकीः जैविक खेती कृषि की एक उत्पादन प्रबंधन प्रणाली है जिसमें बाहरी रासायनिक आदानों को छोड़कर केवल जैविक प्रणाली एवं यांत्रिक तरीकों जैसे फसल चक्र, जैविक अवशिष्ट, पशु खाद आदि द्वारा उत्पादन लिया जाता है। यह प्रणाली जैव विविधता, फसल संरक्षण, जैविक चक्र, कृषि पारिस्थितिकी तंत्र एवं स्वास्थ्य को बढ़ावा देती है।

कृषि विज्ञान केंद्र का योगदान–

श्री शर्मा ने वर्ष 2018 से केंद्र द्वारा आयोजित प्रशिक्षणों, प्रदर्शनों एवं प्रसार गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लिया। उन्होंने 2019 में एलआइसी की नौकरी छोड़कर कृषि विज्ञान केन्द्र के तकनीकी सहयोग एवं कृषि विभाग के वित्तीय सहयोग से जैविक खेती की शुरूआत की।

मूल गतिविधियां–

श्री श्याम सुन्दर शर्मा के पास कूल 5 हेक्टेयर जमीन है। जिसमें उन्होंने जैविक विधि द्वारा उत्पादन लेना शुरू किया। उन्होने अपने खेत में वर्मी कम्पोस्ट, जैविक काढ़ा, अजोला, फसल अवषेश कम्पोस्ट आदि इकाईयों की स्थापना की। वर्तमान में गेंहूं, सरसों, मूंगफली एवं सब्जीयों के जैविक उत्पादन और वर्मी कम्पोस्ट द्वारा लगभग 30 लाख रूपये की सकल आय प्रति वर्ष अर्जित कर रहें है एवं अपने उत्पाद की मार्केटिंग हरित ऑर्गेनिक फार्म खटवा के नाम से व वेबसाईट के माध्यम से कर रहे हैं। श्री शर्मा को राजस्थान राज्य बीज एवं जैविक प्रमाणीकरण संस्था, राजस्थान सरकार द्वारा जैविक खेती का पंजीकरण प्रमाण पत्र प्राप्त है।

वर्ष 2023–24 में औसत उत्पादन आय और लाभ लागत अनुपात–

फसल/गतिविधि	इकाई (है.)	उत्पादन (क्वि.)	सकल आय (रू. लाख में)	सकल लागत (रू. लाख में)	शुद्व आय (रू. लाख में)	लाभ लागत अनुपात
जैविक गेहूं	2.5	100	6.80	3.90	2.90	1.74
जैविक सरसों	0.5	12	1.0	0.30	0.70	3.33
जैविक मूंगफली	0.25	5	0.31	0.11	0.20	2.82
जैविक सब्जियाँ	6.5	–	19.40	7.0	12.40	2.77
वर्मी कम्पोस्ट व केचुएं	8 बेड	–	3.0	1.50	1.50	2.0

अन्य किसानों पर सफलता का असर –

केन्द्र से प्रशिक्षण प्राप्त कर एवं श्री शर्मा से प्रेरणा लेकर जिलें के लगभग 20 किसान गेंहूं, चना, सरसों एवं सब्जियों की जैविक खेती कर अच्छी आय प्राप्त कर रहें हैं।

पुरस्कार–

श्री श्याम सुन्दर शर्मा को जैविक खेती के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा वर्श 2023 में इनोवेटिव फार्मर पुरस्कार, राजस्थान सरकार द्वारा वर्श 2023 में राज्य स्तरीय एक लाख रूपये का पुरस्कार एवं आत्मा योजना अर्न्तगत वर्ष 2020–21 में जिला स्तरीय प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त जिला कलक्टर द्वारा वर्ष 2025 में स्वतंत्रता दिवस पर प्रशस्ति पत्र प्राप्त हुआ है तथा गणतंत्र दिवस 2026 पर राष्ट्रपति द्वारा विशेष कार्यक्रम में आमंत्रित किया गया था।

फल प्रसंस्करणः एक रोजगारोन्मुखी व्यवसाय

संकलनकर्ताः अक्षय चितौड़ा एवं सुनिता चौधरी
कृषि विज्ञान केन्द्र, दौसा
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

नामः श्री बच्चू लाल मीना
पिता का नामः श्री कोरी लाल मीना
पताः सिकराय, जिला दौसा (राजस्थान)
मोबाईल नं. : 8949353035

तकनीकी–

खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों को सुरक्षित रखने एवं उसे खराब होने से बचाने के लिए खाद्य प्रसंस्करण वर्तमान समय की राष्ट्रीय मांग है।

कृषि विज्ञान केन्द्र का योगदान :

श्री बच्चू लाल मीना ने राजकीय सेवा से सेवा निवृत होने के बाद कृषि में विशेष रूचि होने के कारण प्रसंस्करण (जैम, जैली, अचार, जूस, स्कवेश आदि) पर कृषि विज्ञान केन्द्र एवं काजरी जोधपुर से प्रशिक्षण प्राप्त किया एवं अपना व्यवसाय शुरू किया।

मूल गतिविधि–

श्री मीना ने कृषि विज्ञान केन्द्र से तकनीकी मार्गदर्शन लेकर वर्ष 2015–16 में एक छोटी फल प्रसंस्करण इकाई की स्थापना की। वर्तमान में वह नीबूं, करोंदा, आंवला, आम आदि का प्रसंस्करण कर रहे है और औसतन 100 से 150 क्विंटल प्रसंस्कृत उत्पादों को स्थानीय बाजार में बेच कर लगभग 7 लाख की वार्षिक आय प्राप्त कर रहे हैं।

वर्ष 2023–24 में औसत उत्पादन आय और लाभ लागत अनुपात–

फसल/गतिविधि	इकाई	उत्पादन (क्वि.)	सकल आय (रू. लाख में)	सकल लागत (रू. लाख में)	शुद्व आय (रू. लाख में)	लाभ लागत अनुपात
प्रसंस्करत उत्पाद	–	150	7.0	1.0	6.0	7.0

पुरस्कार–

श्री मीना को फल प्रसंस्करण क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य हेतू वर्ष 2018 में आत्मा द्वारा ब्लाक स्तरीय पुरस्कार तथा जिला कलक्टर द्वारा वर्ष 2024 में स्वतंत्रता दिवस पर प्रशस्ति पत्र प्राप्त हुआ है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

बकरी पालन से बदली तकदीर के प्रेरकः

संकलनकर्ताः आर.के. दूलड़, बी. एल. आसीवाल[2] वं अरूण प्रताप सिंह.[3]
[1]भरतिया कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहपुर–सीकर
[2]प्रसार शिक्षा निदेशालय, [3]डेयरी विज्ञान एवं प्रोधौगिकी महाविद्यालय, जोबनेर
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

कृषक का नामः श्री सुरेन्द्र सुण्डा, उम्रः 41, गांवः कूदन, जिलाः सीकर,
मोबाइल नम्बरः 9784057757, शिक्षाः 12 वीं पास, जमीनः 4.0 हैक्टयर,
पुर्व में आमदनीः 2.5 से 3.0 लाख, वर्तमान आमदनीः 4.0 से 4.5 लाख वार्षिक

वर्ष सीकर जिले की पंचायत समिति धोद के अंतर्गत ग्राम कूदन के युवा प्रगतिशील कृषक श्री सुरेन्द्र सुण्डा ने यह सिद्ध कर दिया कि यदि परंपरागत खेती के साथ वैज्ञानिक तरीके अपनाए जाएं तो ग्रामीण युवा भी आत्मनिर्भर बन सकते हैं। 4.0 हेक्टेयर कृषि भूमि के स्वामी श्री सुण्डा ने कृषि के साथ–साथ बकरी पालन को अपनाकर अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि की और क्षेत्र में नई पहचान बनाई।

वैज्ञानिक मार्गदर्शन से मिली नई दिशा :भरतिया कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहपुर द्वारा पिछले 15 वर्षों से गांव कूदन में वभिन्न फसलों के प्रथम पंक्ति प्रदर्शन, प्रशिक्षण कार्यक्रम तथा प्रसार गतिविधियाँ आयोजित की गई। श्री सुण्डा इन सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेते रहे। कृषि, पशुपालन, जैविक खेती तथा चारा उत्पादन की नवीनतम तकनीकों से प्रेरित होकर उन्होंने उन्नत पशुपालन की ओर कदम बढ़ाया।

शुरुआत छोटी, सोच बड़ी : वर्ष 2015 में केन्द्र के वैज्ञानिकों की सलाह पर श्री सुण्डा ने अजमेर से सिरोही नस्ल की 3 गर्भित बकरियाँ ₹30,000 में खरीदकर व्यवसाय की शुरुआत की।

उक्त प्रशिक्षणों में कृषि, पशुपालन व जैविक खेती तथा फसल व चारा उत्पादन की नवीनतम तकनीकियों की प्रेरणा सें **सुण्डा** ने उन्नत कृषि व पशुपालन में ज्यादा रूचि दिखाई तथा बकरी पालन को व्यवसायिक स्तर पर अपनाया। प्रारम्भ में केन्द्र के वैज्ञानिकों की सलाह से वर्ष 2015 में सिरोही नस्ल की 3 गर्भित बकरियॉ अजमेर से **30,000/–** रूपयें में खरीदकर व्यावसाय की शुरूआत की, जिनसे प्रथम ब्यांत पर 5 बच्चे हुए। 6–7 महिनें बाद पुनः इन 3 गर्भित बकरियों से 6 बच्चे हुए। 15 महिने बाद बकरा ईद पर 6 बकरों की बिक्री से वर्ष 2016 में **60,000/–**रूपयें की अच्छी आमदनी हुई। इस प्रारम्भिक सफलता ने उनका उत्साह बढ़ाया और उन्होंने वर्ष 2016–17 में बीटल नस्ल की 3 बकरियाँ खरीदकर व्यवसाय का विस्तार किया।

सारणीः प्रथम वर्ष में रू. 30000/–सिरोही नस्ल की 3 बकरियों की खरीद से शुरूआत व वर्तमान व्यवसाय की स्थितिः

बकरी की नस्ल	विवरण	बकरियों की संख्या	ब्यानें के बाद बच्चों की (वर्ष में 2 बार)	बकरियों की खरीद व्यय	पालन व्यय	कुल वार्षिक व्यय	बेचे गये बकरों तथा बकरियों की संख्या	औसतन कुल आय	औसतन शुद्व आय
सिरोही	2015–16	03	10	30000	46,800	76,800	05	60,000	–
सिरोही + बीटल	2016–17	07 + 03	26	30000	1,42,000	1,72,000	15	2,70,000	98,000
सिरोही + बीटल	2017–18	16 + 07	45	–	2,30,800	2,30,800	30 बकरे + 04 बकरियॉ	5,78,000	3,47,200
	2018 से 2025 तक	20 + 06	–	–		3.0से 4.0 लाख	20 से 25	4.0 लाख	3.5 लाख
	वर्तमान 2025–26	25 + 08	–	–		4.0 लाख	20 से 25	4.0 लाख	3.00 लाख

वर्तमान में सुण्डा के पास **25** सिरोही + 11 बीटल नस्ल की बकरियां व बकरे है। तथा इनकी प्रेरणा से पडोस के 5 गांवों में 10 युवा कृषक उन्नत बकरीपालन कर रहे है। **बकरी पालन से वर्तमान शुद्व वार्षिक आय** = 3.0 से 3.50 लाख **रूपये** सालाना कमा रहे है। इस प्रकार श्री सुण्डा ने कृषि के साथ–साथ बकरीपालन को एक अतिरिक्त आय का साधन बनाया। वर्तमान में सिरोही **+ बीटल** नस्ल के बकरों की बकरा ईद पर बिक्री से अच्छी आमदनी प्राप्त कर रहे है। सुण्डा कहते है कि केन्द्र के वैज्ञानिको की सलाह व तकनीक मार्गदर्शन से मेरी आर्थिक स्थिति में सुधार के साथ ही मुझे क्षैत्र में विशेष सामाजिक पहचान मिली जो मेरे लिए गर्व की बात है ।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

मुर्गी पालन से आर्थिक समृद्धि की ओर

संकलनकर्ता: सुभाष यादव, पूनम एव हँसराम माली
कृषि विज्ञान केंद्र, नौगाँवा, (अलवर-1)
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

राजेन्द्र कुमार, गांवः दोलतपुरा, जिला– अलवर, भारत में कृषि क्षेत्र की गतिशील प्रकृति युवा शक्ति की सक्रिय भागीदारी की मांग करती है। उचित अवसर मिलने पर उनकी रचनात्मकता और ऊर्जा वर्तमान कृषि परिदृश्य को महत्वपूर्ण रूप से सुधार सकती है। युवा वर्ग कृषि क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं जिससे खाद्य सुरक्षा, पोषण की पूर्ति और आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित की जा सकती है। कृषि को आधुनिक और विविधीकृत करना इन मांगों को पूरा करने के लिए आवश्यक है। कई युवा किसान उन्नत क्षेत्रों में कदम रख रहे हैं। युवाओं की लचीलापन और अनुकूलन क्षमता उन्हें कृषि में चुनौतियों और जोखिमों का सामना करने के लिए बेहतर रूप से सक्षम बनाती है। कृषि में युवाओं को आकर्षित करना और बनाए रखना कृषि क्षेत्र की स्थिरता और विकास के लिए महत्वपूर्ण है। जनसंख्या वृद्धि होने और युवाओं में कृषि में रुचि कम होने के कारण यह अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है कि ऐसी रणनीतियाँ और अवसर विकसित किए जाएं जो युवा पीढ़ी को आकर्षित करें। युवा किसी भी देश के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और कृषि के भविष्य के लिए एक आधार और आशा के रूप में उनका योगदान होता है। उनकी ऊर्जा, नवाचार दृष्टिकोण और उत्साह उन्हें आधुनिक कृषि तकनीकों को अपनाने और लागू करने में सक्षम बनाते है।

ARYA परियोजना: कृषि विकास में युवाओं की महत्वपूर्ण भूमिका को ध्यान में रखते हुए, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने युवाओ को कृषि की और आकर्षित करना और बनाये रखना **(आर्या)** कार्यक्रम की शुरुआत की है। यह 35 वर्ष से कम आयु के ग्रामीण युवाओं को कृषि और संबंधित उद्यमों के लिए सतत आजीविका प्राप्त करने के लिए प्रेरित करने पर केंद्रित है। कृषि के वर्तमान परिदृश्य को बदलने में युवाओं की भूमिका हमेशा महत्वपूर्ण रही है। 18 से 35 वर्ष आयु वर्ग के युवाओं को ARYA कार्यक्रम में शामिल किया गया है।

प्रशिक्षु की पृष्ठभूमि: श्री राजेंद्र कुमार दौलतपुर ब्लॉक, अलवर जिले के +2 पास युवा किसान हैं जिनके पास 3 एकड़ ज़मीन है। वे पारंपरिक फसलें जैसे गेहूं, जौ और सरसों उगाते थे। उनके क्षेत्र में पानी की कमी के कारण खेत से आय बहुत कम थी। वे सीमित आय में अपनी पारिवारिक जरूरतों को पूरा करने में कठिनाइयों का सामना करते थे। वह प्रशिक्षण से पहले एक साल से ब्रोइलर मुर्गी पालन कर रहे थे लेकिन उन्हें चूजों की मृत्यु दर और वजन कम होने जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था, क्योंकि उन्हें वैज्ञानिक तरीकों जैसे ब्रीडिंग, टीकाकरण और फ़ीड प्रबंधन के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं थी। इसलिए वे अपने खुद के बनाए हुए मुर्गी पालन इकाई से ज्यादा लाभ प्राप्त नहीं कर पा रहे थे।

KVK हस्तक्षेप ; KVK, नवगांव अलवर ने 2020-21 में मुर्गी पालन पर उद्यमिता स्थापित करने के लिए कुल 20 युवा उम्मीदवारों की पहचान की। श्री राजेंद्र कुमार ने 2020 में ARYA परियोजना के तहत KVK, नवगांव, अलवर I में वैज्ञानिक मुर्गी पालन पर प्रशिक्षण लिया। श्री राजेंद्र कुमार ने प्रशिक्षण से पहले ही अपनी मुर्गी पालन इकाई स्थापित कर ली थी। उस समय मुर्गी पालन के प्रबंधन के बारे में ज्ञान की कमी के कारण चूजों की मृत्यु दर अधिक थी और चूजे कम वजन के थे, जिससे बाजार मूल्य भी कम प्राप्त होता था।

प्रशिक्षण का प्रभाव: प्रशिक्षण के बाद उन्होंने चूजों का सही तरीके से प्रबंधन किया तथा आवश्यक्ता पड़ने पर kvk के वैज्ञानिको से मार्गदर्शन प्राप्त किया। विभिन्न पहलुओं के बारे में जानकारी प्राप्त करने के बाद चूजों की मृत्यु दर कम हो गई और चूजे बाजार योग्य वजन तक पहुँचने लगे। जब भी आवश्यक हुआ चूजों के स्वास्थ्य प्रबंधन के लिए समय समय पर मार्गदर्शन प्राप्त करते रहे।

प्रारंभिक वर्षों में चूजों को वाणिज्यिक मुर्गी दाना खिलाते थे बाद में मुर्गीपालन में लागत कम करने के लिए स्वयं से तैयार दाना भी खिलाने लगे क्योकि मुर्गीपालन में मुर्गियों को दिया जाने वाला दाना ही सबसे महंगा होता है जिससे लागत को कम किया जा सके। समय के साथ उन्होंने इकाई का आकार बढ़ाया और अब वे प्रति बैच औसतन 4500 से 5000 मुर्गी पालन कर रहे हैं और प्रति वर्ष 7 बैच उत्पादन कर रहे हैं। उन्हें समय समय समय पर kvk नवगांव के पशु विज्ञान वैज्ञानिकों से सभी वैज्ञानिक और तकनीकी मार्गदर्शन मिल रहा है। वर्तमान में उन्होंने शेड में आधुनिक जल आपूर्ति प्रणाली स्थापित की है जिससे चूजों को 24 घंटे पानी मिलता है और वे अपनी आवश्यकता अनुसार इसका उपयोग कर सकते हैं। उन्होंने गर्मी के मौसम में तापमान को नियंत्रित करने के लिए एक नया पैड कूलिंग सिस्टम भी स्थापित किया है,जिससे गर्मी के दिनों में चूजे अच्छे से जीवित रहते हैं। अपने इकाई के संचालन को सुचारू रूप से चलाने के लिए उन्होंने "सुमन कमल प्राइवेट लिमिटेड" नामक एक कंपनी के साथ समझौता किया है, जिससे वे चूजों को 35 रुपये प्रति चूजे के हिसाब से खरीदते हैं और मुर्गी फ़ीड भी प्राप्त करते हैं। वे चूजों को पांच से छह सप्ताह बाद जब वे 2 से 2.5 किलो वजन के होते हैं तो कंपनी को बाजार दर पर बेच देते हैं।

श्री राजेंद्र कुमार मुर्गी पालन से प्रति वर्ष 5 से 6 लाख रुपये की आयअर्जित कर रहे हैं। वह मुर्गी पालन से अच्छी आय प्राप्त कर रहे हैं और अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर रहे हैं। वह ग्रामीण युवाओं को कृषि में नवाचार अपनाने के लिए प्रेरित भी करते हैं।

निष्कर्ष: यह सफलता की कहानी उन लोगों के लिए प्रेरणा का स्रोत है जो कृषि के क्षेत्र में नवाचार अपनाना चाहते है। यह दर्शाता है कि सही दृष्टिकोण, प्रतिबद्धता और प्रयास से एक साधारण विचार को लाभकारी और सतत व्यवसाय में बदल सकते हैं। मुर्गी पालन का भविष्य अनंत संभावनाओं से भरा हुआ है और यह सफलता की कहानी भविष्य में आने वाली कई और सफलता की कहानियों की शुरुआत है।.

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

स्वरोजगार ने बदली ग्रामीण महिला की किस्मत

संकलनकर्ता: हँसराम माली ,सुभाष यादव एव पूनम
कृषि विज्ञान केंद्र, नौगाँवा, (अलवर-1)
श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर

श्रीमति वंदना ग्राम धोलापलाश, तहसील मालाखेड़ा जिला अलवर की निवासी है भारत में ग्रामीण महिलाएं खाद्य संरक्षण, पैकेजिंग और ब्रांडिंग जैसी गतिविधियों के माध्यम से कृषि उत्पादों के प्रसंस्करण और मूल्यवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं| उच्च मूल्य वाले उत्पाद बनाकर और बाजार पहुंच बढ़ाकर, विशेष रूप से डेयरी, बागवानी और हस्तशिल्प जैसे क्षेत्रों में ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती हैं, जिससे उनकी आजीविका में सुधार होता है और वे आर्थिक रूप से सशक्त होती हैं। भारत विश्व में सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है| परंतु फलों और सब्जियों का प्रसंस्करण, वैल्यू एडिशन विकसित देशों में की तुलना में बहुत कम है| प्रसंस्करण मूल्यवर्धन सहित में जीडीपी, ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन और उद्यमियों के लिए व्यवसाय के अवसरों में योगदान करने की जबरदस्त क्षमता है।

परिस्थिति विश्लेषण : श्रीमति वंदना एवं उनका परिवार पूर्णरूप से कृषि कार्य से जुड़ा हुआ है इनका सम्पूर्ण परिवार कृषि कार्य से प्राप्त आमदनी पर ही निर्भर था। चूंकि श्रीमति वंदना एक शिक्षित महिला है अतः उन्होने कृषि के अलावा कृषि से संबन्धित अन्य कार्यों द्वारा परिवार की आमदनी बढ़ाने की ठानी, इस सन्दर्भ में उन्होने कृषि विज्ञान केन्द्र अलवर-1 के वैज्ञानिको से सम्पर्क कर कृषि कार्य के अतिरिक्त आय अर्जन हेतू अन्य व्यवसाय करने की जानकारी हासिल की।

कृषि विज्ञान केंद्र के वैज्ञानिको के द्वारा उन्हें भारतीय कृषि अनुसन्धान द्वारा प्रायोजित आर्या परियोजना के बारे में बताया गया जिसका उदेशय ग्रामीण युवाओ को कृषि की और आकर्षित करना व स्वरोजगार की और अग्रसर करना है| जिसमे **आर्या योजना** अंतर्गत उन्होने फल सब्जी प्रस्संकरण एवं मूल्य संर्वधन मे गहन व्यावहारिक एवं प्रयोगात्मक प्रशिक्षण कृषि विज्ञानं केंद्र अलवर पर प्राप्त किया। वह स्वयं भी कृषि और बागवानी उत्पादों के मूल्य संवर्धन और प्रस्संकरण में रुचि रखती थी। इसके अलावा उन्होने कृषि शोध पत्र पत्रिकाओं के माध्यम से अपने ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि की।

तकनिकी हस्तक्षेप : कृषि विज्ञान केन्द्र अलवर-1 द्वारा श्रीमति वंदना को फल सब्जी प्रस्संकरण एवं मूल्य संर्वधन की विभिन्न वैज्ञानिक तकनिकीयों पर प्रशिक्षित किया। प्रशिक्षण के दौरान विभिन्न तरह के अचार, मुरब्बा, चटनी आदि का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया गया जिससे फल सब्जी प्रस्संकरण के सभी पहलुओं के बारे मे विस्तृत जानकारी प्राप्त की। प्रशिक्षण पूरा होने के बाद, उन्होंने वैज्ञानिक गृह विज्ञान के माध्यम से एवं कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिको के तकनिकी पर्यवेक्षण एवं मार्गदर्शन में श्रीमति वंदना नें वर्ष 2021 से फलों एवं सब्जियों को अचार एवं मुरब्बे के रूप में प्रस्संकृत करना शुरू किया। वह गुणवत्ता में सुधार, उत्पादों के मानकीकरण और अन्य उत्पादों की तैयारी के लिए अक्सर केवीके का दौरा करती थीं। केवीके वैज्ञानिक नियमित रूप से प्रस्संकरण इकाई का भ्रमण करते थे

सफलता का विवरण :कृषि विज्ञान केन्द्र अलवर 1 द्वारा प्रस्संकरण एवं मूल्य संर्वधन की तकनिकीयों में ज्ञान एवं दक्षता हासिल करने के बाद और उपभोक्ताओं से अच्छी प्रतिक्रिया मिलने के बाद उन्होंने तहसील स्थानों और जिले में विभिन्न दुकानों को आपूर्ति करना शुरू कर दिया। श्रीमति वंदना वर्तमान में विभिन्न फल एवं सब्जियों जैसे आवंला, नींबू, लाल एवं हरी मिर्च, हल्दी, केरी, लहसुवा, टीट, लहसुन, कमरख आदि फल एवं सब्जियों 120 क्विंटल अचार बना रही है और बिक्री कर लगभग 5.5 – 6.5 लाख रूपये का शुद्ध मुनाफा प्रतिवर्ष प्राप्त कर रही है। श्रीमति वंदना ने अपने मूल्य वर्धित उत्पादों की बिक्री के लिए वदंना ग्रामोद्योग के नाम से संस्था पंजीयन करवाकर "वदंना अचार एवं मुरब्बा" के नाम से तैयार उत्पादों की बिक्री कर रही है।

सफलता का असर : श्रीमति वंदना आज एक सशक्त महिला उद्यमी के रूप में जानी पहचानी जाती है वे अब एक महिला कृषक के साथ साथ महिला उद्यमी है एवं क्षेत्र की अन्य महिलाओं के लिए प्रेरणास्त्रोत एवं परामर्शदाता है।

क्षेत्र में योगदान : श्रीमति वंदना के अथक प्रयासो एवं कठिन परिश्रम के परिणामस्वरूप अपने तैयार उत्पादों की स्थानिय क्षेत्र एवं जिले के अतिरिक्त जयपुर एवं दिल्ली शहर में भी बिक्री कर रही है। श्रीमति वंदना एक महिला उद्यमी के रूप में कार्य करने के कारण कई महिला किसानों के लिए प्रेरणास्त्रोत एवं विकास के पथ का एक आदर्श उदाहरण है|

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पीएचडी छात्र ने आजमाया वर्मीकम्पोस्ट में हाथ

संकलनकर्ताः सोनू जैन[1], सन्तोष देवी सामोता[1], रेखा बधाला[2] एवं मनोज कुमार शर्मा[1]
[1]श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर
[2]कृषि महाविद्यालय बीकानेर

रामलाल मारोठिया (पीएच.डी. कृषि, एयू– जोधपुर)
गांव– बस्सी–झाझड़ा, पोस्ट–बोबास (जोबनेर) जिला – जयपुर, राजस्थान – 303338
एस. आर. ऑर्गेनिक वर्मीकम्पोस्ट फार्म बोबास
संपर्कः 7300286909, 8740089587

जयपुर जिले के रहने वाले कृषि छात्र रामलाल मारोठिया ने कोरोना काल की चुनौती को अवसर में बदला। जैविक खेती के प्रति रुचि और पर्यावरण के लिए जागरूकता ने उन्हें वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन की दिशा में प्रेरित किया। सिर्फ 2 वर्मी बेड से शुरू हुआ यह सफर, आज 400 बेड तक पहुंच चुका है और रामलाल इससे सालाना 7–8 लाख रुपए का शुद्ध मुनाफा कमा रहे हैं।

किसानों की मेहनत को प्रोत्साहन मिले तो आर्थिकी को रफ्तार पकड़ते ज्यादा समय नहीं लगता है । कृषि छात्र रामलाल मारोठिया को ही देखिए । कोरोना संक्रमण के बाद जैविक कृषि और खेती के शौक से वर्मी कंपोस्ट का व्यावसायिक उत्पादन शुरू किया । चार साल के भीतर ही वर्मी कंपोस्ट उत्पादन से सालाना 7–8 लाख रुपए का शुद्ध मुनाफा कमा रहे हैं । गौरतलब है कि राम ने दो बेड से वर्मी कंपोस्ट का उत्पादन शुरू किया था । निरंतर मेहनत से राम का कारवां 400 वर्मी बेड तक पहुंच चुका है । कृषि छात्र राम का कहना है कि कोई भी किसान या कृषि छात्र वर्मी कंपोस्ट का उत्पादन करके घर बैठे अच्छी आजीविका प्राप्त कर सकते हैं

राम राजस्थान के जयपुर जिले में जोबनेर तहसील के एक छोटे से गांव बस्सी – झाझड़ा के निवासी हैं । इन्होंने 2021 में श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर से स्नातक किया है और 2023 में श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर से स्नातकोत्तर पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग से किया है । वर्तमान में ये कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर में पीएचडी के विद्यार्थी हैं ।

खेती में सालाना आय का अनुमान लगाना किसानों के लिए काफी कठिन है, कोई पंडित खेती से मुनाफे की बात नहीं बता सकता । प्राकृतिक जोखिमों के साथ–साथ कीट रोग और फसल के भाव अरमान को जमीन पर ला देते हैं । आधुनिक कृषि तकनीक और किसान की अथक मेहनत के बावजूद भी किसान राम भरोसे ही रहता है लेकिन खेती से जुड़े सहायक व्यवसाय को अपनाकर युवा किसान और महिलाएं अपनी आर्थिकी तरक्की का पूर्वानुमान जरूर बता सकते हैं । चार साल के भीतर यह साबित करके दिखाया है वर्मी कंपोस्ट उत्पादक रामलाल मारोठिया ने । राम ने वर्मी खाद का सफर दो बेड से शुरू किया था । हौसलों को समय के साथ परवाज मिली तो वर्तमान में 400 बेड में वर्मी कंपोस्ट का उत्पादन राम के फार्म हाउस पर हो रहा है । रोजगार की तलाश में भटक रहे युवाओं के लिए वर्मी खाद का उत्पादन सोने पर सुहागा साबित हो सकता है । राम ने बताया कि परिवार के पास 8 बीघा भूमि है और परंपरागत फसलों का उत्पादन इसके ऊपर होता है । उन्होंने बताया कि कोरोना संक्रमण से पूर्व वर्मी कंपोस्ट से मेरा कोई जुडाव नहीं था । लेकिन संक्रमण काल के दौरान बात जब इम्यूनिटी पावर और जैविक खेती की होने लगी तो मैंने भी वर्मी कंपोस्ट और और जैविक खेती से सब्जियां उगा कर अपना सफर शुरू किया बाद में यह कार्य व्यवसाय के रूप में बदल गया । उन्होंने बताया कि कोरोना संक्रमण के दौरान महाविद्यालय का का काम छोड़ कर घर बैठना पडा ।

उन्होंने बताया कि लॉकडाउन में मैं स्नातक का छात्र था जिसमें रेडी प्रोग्राम में मुझे अच्छी–अच्छी यूनिट देखने का और प्रगतिशील किसानों से मिलने का मौका मिला । उन्होंने बताया कि मैं खुद एक किसान परिवार से हूं और खेती से लगाव था । रेडी प्रोग्राम से प्रेरित होकर उन्होंने अपने कृषि फार्म पर कोई कृषि व्यवसाय शुरू करने का सोचा तथा इसके इसके लिए उन्हें वर्मी कंपोस्ट का व्यवसाय सबसे सस्ता और सही लगा जिससे जैविक खेती को भी बढ़ावा मिल सके, उन्होंने जुलाई 2021 में दो बेड लगाकर अपना काम शुरू किया धीरे धीरे 2 से 10, 10 से 40 और 40 से 400 बेड हो गए ।

वर्मी कंपोस्ट के साथ–साथ राम अपने फार्म पर जैविक सब्जियां उगाते हैं और उन्होंने 5 एचपी का सोलर पंप सेट लगा रखा है और एक फार्म पॉन्ड बनवा रखा है जिससे सब्जियों कि सिंचाई करते हैं.

उन्होंने बताया कि इस कार्य में उनको बहुत सी कठिनाई भी आई जैसे एक पढ़ा–लिखा छात्र होने के बाद भी गोबर का काम शुरू किया , जब गोबर से नाता जोड़ा तो जानकर परिवार वाले, रिश्तेदार और आस–पड़ोस वालों ने काफी मजाक बनाया । लोग कहते थे आपको गोबर में काम करते हुए छिन्न नहीं आती लेकिन अब मजाक उड़ाने वाले गोबर से आय देख कर चुप हो गए हैं । उन्होंने बताया वर्मीकम्पोस्ट उत्पादन के लिए गोबर की आवश्यकता होती है लेकिन घर पर पांच पशु हैं, जरूरत के अनुसार गोबर की खरीद आसपास की गौशालाओं से करते हैं । इसके अलावा 1 बीघा भूमि पर वर्मी बेड स्थापित किए गए । इतने खर्चे के बाद सालाना 7–8 लाख रुपए का मुनाफा मिलना मेरे लिए हौसला बढ़ाने वाला है । जिन किसानों के पास स्वयं की भूमि और पशुधन है वह व्यवसाय में लाभ अधिक पा सकते हैं ।

कृषि छात्रों और किसानों को प्रशिक्षणः राम अपने फार्म पर किसानों को मुफ्त में प्रशिक्षण देते हैं साथ ही विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों से आये हुए कृषि छात्रों को प्रशिक्षण व प्रमाण पत्र देते हैं। राम अब तक करीब 100 से ज्यादा किसानों और कृषि छात्रों को वर्मी कंपोस्ट की सफल यूनिट लगाने में सहायता कर चुके हैं।

चार लोगों को रोजगारः

चार साल पहले शौकिया तौर पर कृषि छात्र राम द्वारा शुरू किए गए वर्मी कंपोस्ट उत्पादन में अब चार लोगों को रोजगार से जोड़ दिया है । राम के साथ–साथ चार व्यक्ति इस व्यवसाय से अपनी आजीविका चला रहे हैं । गौरतलब है कि राम फार्म पर तैयार वर्मीकम्पोस्ट खाद को एस. आर. ऑर्गेनिक वर्मी कंपोस्ट के नाम से बिक्री कर रहे हैं । उन्होंने बताया कि खाद तैयार होने के बाद शुरुआत में बिक्री की दिक्कत आई लेकिन अब मेरे पास किसानों के पहले से आर्डर रहते हैं ।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

मुर्गी पालन एवं समन्वित कृषि प्रणाली से मासिक आय 15 लाख रूपये

संकलनकर्ताः रेखा बधाला[1], अर्जुन खर्रा[2], सुरेश कुमार महला[2] एवं कविता लाखरान[2]
[1]कृषि महाविद्यालय, बीकानेर
[2]श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि महाविद्यालय, जोबनेर

किसान का नाम : श्री हनुमान सिंह राजपूत पता : जयसिंहपुरा, तहसील–फुलेरा, जिला–जयपुर मोबाइल नबर : 9079189008	

जयपुर, राजस्थान के छोटे से गांव जयसिंहपुरा के प्रगतिशील किसान श्री हनुमान सिंह राजपूत आज क्षेत्र के किसानों के लिए प्रेरणा स्रोत बन चुके हैं। उन्होंने सीमित संसाधनों को अवसर में बदलते हुए आधुनिक तकनीक, सरकारी योजनाओं और जैविक खेती को अपनाकर अपनी आय में उल्लेखनीय वृद्धि की है।

मुर्गी पालन से नई पहचान

4 हेक्टेयर कृषि भूमि के स्वामी श्री हनुमान सिंह राजपूत ने वर्ष 2016–17 में मुर्गी पालन व्यवसाय की शुरुआत की। वर्तमान में 22,000 वर्ग फीट क्षेत्र में उनके दो आधुनिक मुर्गी पालन फार्म हैं एक फार्म में अंडे देने वाली मुर्गियां तथा दूसरे में चूजों का पालन करते हैं। उनके फार्म में स्काई लार्क नस्ल की लगभग 13,000 मुर्गियां हैं, जो प्रतिदिन 11,000 से 12,000 अंडों का उत्पादन करती हैं। इससे उन्हें प्रतिदिन ₹7,000 से ₹8,000 तक की आय प्राप्त होती है। अंडों का उचित मूल्य प्राप्त करने के लिए उन्होंने कोल्ड स्टोरेज की सुविधा भी विकसित की है, जहां अंडों को 2–3 महीनों तक सुरक्षित रखकर बाजार में बेहतर भाव मिलने पर बेचा जाता है। इससे उनकी आय में निरंतर वृद्धि हो रही है।

नस्ल	कुल मुर्गियां	अण्डा उत्पादन	प्रतिदिन अण्डा उत्पादन (आय)	मासिक आय
स्काई लार्क	13,000	11,000–12,000	40000.00	1200000.00

जैविक खेती की मिसालः श्री हनुमान सिंह राजपूत अपने खेतों में पशुओं के मल–मूत्र और मुर्गियों के बीट का उपयोग कर जैविक खेती को बढ़ावा दे रहे हैं। इससे भूमि की उर्वरता बनी रहती है और उत्पादन की गुणवत्ता भी बेहतर होती है।

वर्षा जल संचयन से बदली तस्वीर : वर्ष 2018–19 में कृषि विभाग की अनुदान सहायता से प्रधानमंत्री सिंचाई योजना के अंतर्गत उन्होंने अपने खेत में 70 x70 मीटर आकार की एक विशाल तलाई (खेत तालाब) का निर्माण करवाया, जिसकी स्वीकृत राशि ₹ 9,80,000 थी। इसके साथ ही 80 x 80 फीट आकार के दो नए फार्म पॉन्ड भी बनाए गए, जिन पर लगभग ₹ 2,00,000 की अनुदान राशि स्वीकृत हुई।इस तलाई में संग्रहित वर्षा जल का उपयोग वे फील्ड क्रॉप्स, बागवानी, औषधीय पादप तथा जायद की सब्जियों की सिंचाई में कर रहे हैं। इससे न केवल पानी की उपलब्धता सुनिश्चित हुई बल्कि फसल उत्पादन में भी स्थिरता आई।

विविध कृषि प्रणाली से बढ़ी आय : श्री हनुमान सिंह राजपूत विविध कृषि प्रणाली अपनाकर अपने खेतों में मुख्यतः गेहूं, शुगर फ्री गेहूं, जौ, चना, सरसों आदि फसलों की खेती कर रहे हैं।बागवानी के अंतर्गत उन्होंने नींबू का बाग विकसित किया है, जिसमें मुख्य फसल (नींबू) के साथ अंतरवर्तीय फसल के रूप में प्याज और आलू की खेती कर अतिरिक्त आय प्राप्त कर रहे हैं। इससे संसाधनों का बेहतर उपयोग और आय का संतुलन बना रहता है।अपने 5 बीघा क्षेत्र में वे औषधीय पादप जैसे इसबगोल आदि की खेती भी कर रहे हैं, जिससे उन्हें बाजार में अच्छा लाभ मिल रहा है।

क्र.स.	फसल	क्षेत्र बीघा	उत्पादन (क्वि.)	कुल आय	कुल व्यय	शुद्ध आय
1	प्याज	2	170	170000.00	35000.00	135000.00
2	गेंहू	4	40	120000.00	30000.00	90000.00
3	जौ	2	30	66000.00	15000.00	51000.00

संरक्षित खेती से आधुनिकता की ओर :

संरक्षित कृषि तकनीक अपनाते हुए उन्होंने लगभग 16,000 वर्ग फीट क्षेत्र में चार पॉलीहाउस स्थापित किए हैं। इन पॉलीहाउस में वे खीरे की उच्च गुणवत्ता वाली फसल का उत्पादन कर रहे हैं, जिससे उन्हें वर्षभर नियमित आय प्राप्त होती है।

प्रेरणा का स्रोत श्री हनुमान सिंह राजपूत की सफलता यह दर्शाती है कि यदि किसान आधुनिक तकनीक, सरकारी योजनाओं और विविध कृषि प्रणाली को अपनाएं तो सीमित संसाधनों में भी अधिक आय अर्जित की जा सकती है। उनका प्रयास न केवल आत्मनिर्भरता की मिसाल है, बल्कि अन्य किसानों के लिए भी मार्गदर्शक सिद्ध हो रहा है।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

पपीता की खेती से पोषण एवं आर्थिक सुरक्षा

संकलनकर्ताः जितेन्द्र कुमार
कृषि विज्ञान केन्द्र, धौलपुर
श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, जयपुर

किसान का नाम	श्री लक्ष्मीकांत तिवारी
गांव	गढीतडावली
जिला	धौलपुर
मोबाईल न	9783831001

धौलपुर जिले के राजा खेडा तहसील के गॉव गडी तडावली के युवा किसान लक्ष्मीकांत तिवारी आज वहां के लोगों के लिए एक मिसाल बन चुका है. यह युवा किसान कृषि विज्ञान केन्द्र, धौलपुर की सहायता से पपीता की खेती कर लाखों में कमाई कर रहा है. उनका कहना है कि पपीता की खेती सामान्य फसलों से ज्यादा मुनाफा देती है.
आइए जानते हैं इस युवा किसान की सफलता की कहानी.

किसान का परिचय

श्री लक्ष्मीकांत तिवारी, गॉव गडी तडावली तहसील राजा खेडा जिला धौलपुर, राजस्थान के मध्यमवर्गीय किसान है। इनकी शिक्षा स्नातक तक है तथा इनके पास स्वयं की 5 हैक्टेयर खेती योग्य भूमि है। प्राईवेट नौकरी में कम वेतन मिलने के कारण गॉव वापस आकर अपने पिता के साथ मिलकर खेती करने लगे। इनके पास खेती योग्य पर्याप्त भूमि और जल की सुविधा होते हुए भी खेती की नवीन तकनीकियों की जानकारी न होने के कारण अधिक आर्थिक लाभ नहीं कमा पा रहे थे। पारम्परिक तरीके से गेहूं, सरसों, बाजरा,, मूंग, और चना फसलों की खेती करते थे।

कृषि विज्ञान केन्द्र का योगदान

वर्ष 2020 में श्री लक्ष्मीकांत तिवारी ने कृषि विज्ञान केन्द्र, धौलपुर के संस्थागत प्रशिक्षण में भाग लेकर कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिकों से संपर्क किया। उन्होंने कृषि विज्ञान केन्द्र के वैज्ञानिकों द्वारा फसलों, सब्जियों, प्रसंस्करण और मूल्य सवंर्धन, पशुपालन, समन्वित कीट प्रबंधन एवं मुर्गीपालन पर आयोजित विभिन्न संस्थागत एवं गैर–संस्थागत प्रशिक्षण कार्य{मों और किसान संगोष्ठियों, प्रक्षेत्र दिवस, प्रक्षेत्र भ्रमण, किसान मेलों और पशु उपचार शिविरों में भाग लिया। कृषि विज्ञान केन्द्र के मार्गदर्शन में उन्होंने फसलों और सब्जियों की उन्नत किस्मों से खेती आरंभ की तथा उन्होंने अपने खेत पर वर्मी–कम्पोस्ट, अजोला इकाई, सौर ऊर्जा और ड्रिप की स्थापना के साथ ही ग्वार, मूंग, चना, मिर्ची, भिण्डी आदि पर प्रथम पंक्ति प्रदर्शन भी आयोजित किये। कृषक लाक्ष्मीकांत कृषि विज्ञान केन्द्र के नियमित संपर्क में रहने लगा तथा समन्वित कृषि तकनीकों की जानकारी प्राप्त कर अपनाना प्रारंभ किया।
वर्ष 2024 में कृषि विज्ञान केन्द्र, धौलपुर द्वारा आयोजित संस्थागत प्रशिक्षण पपीता की वैज्ञानिक खेती में श्रीलक्ष्मीकांत तिवारी ने भाग लिया। जिसमें केंद्र द्वारा पपीते की खेती अपनाकर अधिक आर्थिक मुनाफा कैसे ले सकते हैं इसके बारे में किसानों को तकनीकी ज्ञान प्रदान किया गया जिससे प्रेरित होकर उन्होंने पपीते की खेती करने का मन बनाया और केंद्र के वैज्ञानिकों को पपीते की अधिक उपज देने वाली किस्मों की पौध उपलब्ध करवाने के लिए कहा। किसानों की मांग को ध्यान में रखते हुए केंद्र ने पपीते की किस्म रेड लेडी 786 की पौध तैयार करवाई।

तकनीकीः

केंद्र के कृषि वैज्ञानिकों द्वारा उनके खेत पर पपीते की खेती के लिए पहले रेखांकन कर उनके खेत में गड्ढा तैयार करवाए गए जिनका आकार 60x60x60 सेमी रखा गया जिसके अंतर्गत पौधे से पौधे की दूरी 2 मीटर रखी। किसान द्वारा कृषि विज्ञानं केंद्र से पपीते की पौध एक एकड़ के लिए 1000 पौधे 20 रुपये की दर से खरीदें जिसमें 20000 हजार रूपये का खर्च आया।

- फसल विविधिकरणः पपीता किस्म–रेड लेडी–786
- समन्वित खेती प्रणाली पर प्रशिक्षण कार्यक्रम
- मृदा परीक्षण आधारित समन्वित पोाषक तत्व प्रबंधन
- वर्मीकम्पोस्ट एवं वेस्ट डिकम्पोजर का प्रयोग

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

- बूँद–बूँद सिंचाई पद्धति
- फसल सुरक्षा–जैविकविधियॉ

आर्थिकविश्लेषण:

उत्पादन/एकड.	उत्पादनलागत/एकड.	सकल आय /एकड.	शुद्ध आय /एकड.	लाभ : लागतअनुपात
540 क्विंटल	1.50 लाख	9.72 लाख	8.22 लाख	6.48

अन्य किसानों पर प्रभाव

श्री लक्ष्मीकांत तिवारी की सफलता को देखकर आस–पास के गाँवों में किसान भी उनसे लाभकारी कृषि प्रणालियों और खेती की नवीनतम तकनीकों की जानकारी के लिए उनसे संपर्क कर रहे है। लक्ष्मीकांत तिवारी पारंपरिक खेती से हटकर वैज्ञानिक तरीके से पपीते की खेती करके जिले में सफलता की एक नई मिसाल बन गए हैं। उन्हें पपीते की खेती से न सिर्फ आर्थिक मजबूती मिली, बल्कि उन्होंने क्षेत्र के बाकी किसानों को आमदनी की नई राह भी दिखाई है। मुनाफा न मिलने की मुश्किल से गुजर रहे सरसों, गेहूं की खेती करने वाले कई किसान उनको देखकर आज पपीते की खेती में भविष्य तलाश रहे हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

गुलाब एवं आंवला प्रसंस्करण से सफल महिला उद्यमी : सुनीता माली

संकलनकर्त्ता : धर्मेन्द्र सिंह भाटी[1], रमाकान्त शर्मा[2], दिनेश कच्छावा[1] एवं आशीष झारोटिया[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र[1] एवं कृषि अनुसंधान उप केन्द्र[2], अजमेर

नाम : सुनीता माली पत्नी श्री नन्द राम माली
पता : गॉव– देवनगर वाया– पुष्कर, अजमेर
शिक्षा : 8 वीं पास
आयु : 39 वर्ष (दिनांक 16.04.1986)
फोन न. : 9413042657
प्रशिक्षण : फल (आंवला, जामुन) एवं फूल (गुलाब) का प्रसंस्करण, भंडारण एवं विपणन

पति द्वारा खेतों में उत्पादित आंवला, जामुन एवं गुलाब के अच्छा बाजार मूल्य ना मिलने पर सुनिता माली ने उनका प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन कर विक्रय करने का बीड़ा उठाया।
इसी कड़ी में कृषि विज्ञान केन्द्र अजमेर के वरिष्ठ वैज्ञानिक उवं अध्यक्ष से संपर्क कर आंवला, गुलाब के परिरक्षण, प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन विषय पर प्रशिक्षण एवं सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त कर आंवला, जामुन एवं गुलाब के विभिन्न उत्पादों में महारत हासिल की।

तकनिकी हस्तक्षेप : कृषि विज्ञान केन्द्र अजमेर द्वारा प्रशिक्षण व तकनिकी सहयोग के साथ ही एफ.पी.ओ. गठन हेतु प्रेरित करने पर पुष्कर ग्रामीण कृषि युवा एवं एम्पलोयमेंट किसान उत्पादक कम्पनी नामक एफ.पी.ओ. का गठन किया। इस हेतु नाबार्ड का भी तकनिकी एवं वितिय सहयोग रहा।

सफलता का विवरण : क्षेत्र के आंवला, जामुन एवं गुलाब उत्पादक किसान परिवारों को आर्थिक मजबुती प्रदान करने हेतु एफ.पी.ओ. में निदेशक की अग्रणी भूमिका में 510 कृषकों को एफ.पी.ओ के सदस्य बनाकर उनके उत्पाद क्रय कर उनका मूल्य संवर्धन कर विपणन कर इन सदस्यों को बोनस प्रदान करवाया। एफ.पी.ओ. गठन कर कम लागत में आदान व्यवस्था की जिससे सदस्यों की उत्पादन लागत कम हुई।

कृषि विज्ञान केन्द्र अजमेर द्वारा सभी सदस्यों को प्रशिक्षण के माध्यम से आंवला एवं गुलाब की उन्नत उत्पादन हेतु तकनिकी जानकारी प्रदान करवायी। वर्ष 2021–22 में पुष्कर ग्रामीण कृषि युवा एवं एम्पलोयमेंट किसान उत्पादक कम्पनी का करोबार कुल रु 10849905.00 रहा।

आमदनी :

क्र.सं.	गति विधि	कुल लागत (रु)	कुल आमदनी (रु)	शुद्ध लाभ (रु)
1.	गुलकन्द बनाना	2842780	3235930	393150
2.	गुलाब जल	1641532	1805338	163806
3.	आंवला मुरब्बा, केन्डी, पाउडर	2436000	2542960	106960
4.	शरबत (गुलाब, आंवला, जामुन)	3060540	3136842	76302
5.	जामुन शेंड	110546	128835	18289
योग		**10091398**	**10849905**	**758507**

सफलता का असर : श्रीमती सुनिता माली के प्रयास से गुलाब एवं आंवला उत्पादक

किसानों को औसतन रु 15.00 प्रति किलोग्राम का भाव अधिक मिला। पुष्कर ग्रमीण कृषि युवा एवं एम्पलोयमेंट किसान उत्पादक कम्पनी समुह के 510 सदस्यों की आमदनी में इजाफा हुआ व परोक्ष रुप से 8 गांव के लगभग 2000 आंवला एवं गुलाब उत्पादक किसानों को अपने उत्पादों का मूल्य अच्छा मिला। सुनिता माली के श्रेयकर कार्यों को पहचान देते हुए दयानन्द महाविद्यालय, अजमेर द्वारा महिला दिवस पर महिला गौरव सम्मान एवं प्रतिष्ठित होंडा कम्पनी द्वारा कृषि क्षेत्र में कृषि उद्यमी सम्मान से नवाजा गया।

क्षैत्र में योगदान : क्षेत्र की पहचान आंवला, गुलाब के विभिन्न उत्पादों जैसे सादा गुलकंद, शहद गुलकंद, चटपटा गुलकंद, केसर गुलकंद, पान गुलकंद, गुलाब जल, गुलाब शरबत, गुलाब चिप्स, गुलाब चाय, आंवला मुरब्बा, आंवला कैंडी, आंवला जूस, जामुन चिप्स, केसर शरबत, खसखस शरबत इत्यादि को एफ.पी.ओ. के माध्यम से प्रसिद्धि मिली। इसी कड़ी में नाबार्ड एवं कृषि विज्ञान केन्द्र अजमेर के सहयोग से समुह एवं समुह के उत्पादों को व्यापक स्तर पर पहचान दिलाने हेतु कृषि विज्ञान केन्द्र अजमेर पर विक्रय केन्द्र स्थापित किया गया।

उद्यानिकी फसलों में नवाचारों से सँवरा रूपचन्द का जीवन

संकलनकर्त्ता : रमाकान्त शर्मा[2], धर्मेन्द्र सिंह भाटी[1], दिनेश कच्छावा[1] एवं सीताराम वर्मा[1]
कृषि विज्ञान केन्द्र[1] एवं कृषि अनुसंधान उप केन्द्र[2], अजमेर

नाम : **रूपचन्द कहार**
पिता का नाम : लालाराम कहार
पता : ग्राम – नदी द्वितीय, ग्राम पंचायत – डूमाडा, अजमेर (राज.)
शैक्षणिक योग्यता : दसवीं
मोबाइल नं. : 8290292536
भूमि : 6.4 हैक्टेयर
तकनीकी :–

अजमेर में उर्स मेला एवं पुष्कर मेले को मद्देनजर रखते हुये प्रगतिशील कृषक रूपचन्द कहार बाजार मांग के अनुसार फूलों की रोपाई कर अतिरिक्त आय प्राप्त कर रहे हैं। आँवले के बगीचे में फूलगोभी, प्याज, धनिया पत्ती अंतराशस्य के रूप में लेकर अतिरिक्त आय प्राप्त कर रहे हैं। अगेती गोभी, सब्जियों एवं फूलों की खेती में बूँद–बूँद सिंचाई का उपयोग, लो टनल/प्लास्टिक मल्च/शेडनेट का उपयोग, फेरामोन ट्रेप के उपयोग के साथ सब्जियों एवं फूलों की नर्सरी तैयार कर पौध बेचान कर प्रति वर्ष लगभग 40 लाख रूपये शुद्ध आय प्राप्त कर रहे हैं।

कृषि फार्म का आर्थिक विश्लेषण

(क) फसलें (प्रति हेक्टेयर)

रबी	क्षेत्र	किस्म	उत्पादन	सकल आय	कुल लागत	शुद्ध आय	लागत–लाभ अनुपात
1. गेंहू	1.0 हैक्ट.	राज 3765	55.0	126500	52450	74050	2.41
2. स्वीट कॉर्न	0.03 हैक्ट.	सुगर–75	घरेलू उपयोग हेतु				

(ख) बागवानी फसलें (प्रति हैक्ट.)

प्रमुख फल वृक्ष	क्षेत्र हैक्टेयर	उत्पादन	सकल आय	कुल लागत	शुद्ध आय	लागत–लाभ अनुपात
1.आंवला उत्पादन के साथ सब्जियाँ/फूल अंतराशस्य के रूप में	2.0 हैक्ट.	135.0 क्वि.	202500	46572	155748	4.33
सब्जी/फूल/मसाला फसलें	0.5 हैक्ट.		325000	62750	262750	5.17
					418498	
अ. खरीफ						
1. प्याज	0.6 हैक्ट.	132	198000	72275	125725	4.02
2. हरा धनिया	0.3 हैक्ट.	22.0	88000	17625	70375	4.99
3.फूल गुलदाउदी	0.3 हैक्ट.	80.8	969600	90500	879100	10.71
					1075200	
ब. रबी						
1. पत्ता गोभी	0.4 हैक्ट.	82.0	98400	24600	73800	4.00
2. फूल बिजली गेंदी	1.0 हैक्ट.	125.0	375000	62600	312400	5.99
3. नवरंगा/हजारा	2.0 हैक्ट.	428.0	1284000	139200	1144800	9.22
4. रिजका	0.3 हैक्ट.	123.50	37050	12810	24240	2.89
5. अंतराशस्य (बिजली गेंदी+हरा धनिया (1:5)	0.2 हैक्ट.	3.47+9.44	48170	19416	28754	2.48
					1583994	
स. जायद						

1. करेला	0.2 हैक्ट.	14.60	29200	11450	17750	2.55
2. फूलगोभी	1.0 हैक्ट.	218.0	545000	111300	433700	4.90
3. भिंडी	0.20 हैक्ट.	31.0	46500	12549	33951	3.70
4. मिर्ची	0.6 हैक्ट.	43.2	86400	35250	51150	2.45
					536551	
कुल योग = 1+अ+ब+स					**3614243**	

(ग) उन्नत किस्मों की पौध

उन्नत किस्मों की पौध (नर्सरी)	**क्षेत्र हैक्टेयर**	**सकल आय**	**कुल लागत**	**शुद्ध आय**	**लागत–लाभ अनुपात**
गुलदाउदी, कलकत्ती, शिमला गुलदाउदी, ऑरेंज गेंदी, जाफरी, बिजली आदि हजारा एवं फूलगोभी, टमाटर, मिर्च की उन्नत किस्मों की पौध	0.5 हैक्ट.	700000	250000	450000	2.80
(क) + (ख) + (ग) 74050 + 3614243 + 450000				**4138293**	

कृषि विज्ञान केंद्र का योगदानः–

कृषि विज्ञान केंद्र पर प्रशिक्षण प्राप्त करने के साथ ही प्रत्येक कृषि विकास कार्यक्रमों में भागीदारी एवं कृषि वैज्ञानिकों के मार्गदर्शन में उद्यानिकी फसलों में नवीन तकनिकी का समावेश कर अपनी आय में इजाफा कर रहे हैं।

मुख्य गतिविधियॉः–

अगेती गोभी, बाजार मांग के अनुसार फूलों की खेती, ग्रेडिंग, पैकेजिंग एवं विपणन, अंतराशस्य फसलों का समावेश, फूलों एवं सब्जियों की पौध तैयार कर अतिरिक्त आय प्राप्त कर रहे हैं।

अन्य किसानों पर सफलता का असरः–

क्षेत्र के अन्य कृषकों को उन्नत कृषि, उद्यानिकी के अंतर्गत फूलों एवं अगेती गोभी उत्पादन हेतु प्रेरित कर रहे हैं। परिणाम स्वरुप नदी द्वितीय गांव फूलों की वादी कश्मीर के रूप में नजर आता है।

देसी कार्यक्रम, 21 दिवसीय विंटर स्कूल के प्रतिभागियों, जोबनेर कृषि विश्वविद्यालय के विभिन्न कृषि विज्ञान केंद्रों के वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं विषय विशेषज्ञों को फार्म पर अवलोकन करवाया गया। इसके अतिरिक्त दूरदर्शन एवं पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से प्रकाशन एवं चर्चा कर नवाचारों हेतु अन्य कृषकों को प्रेरित कर रहे हैं।

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

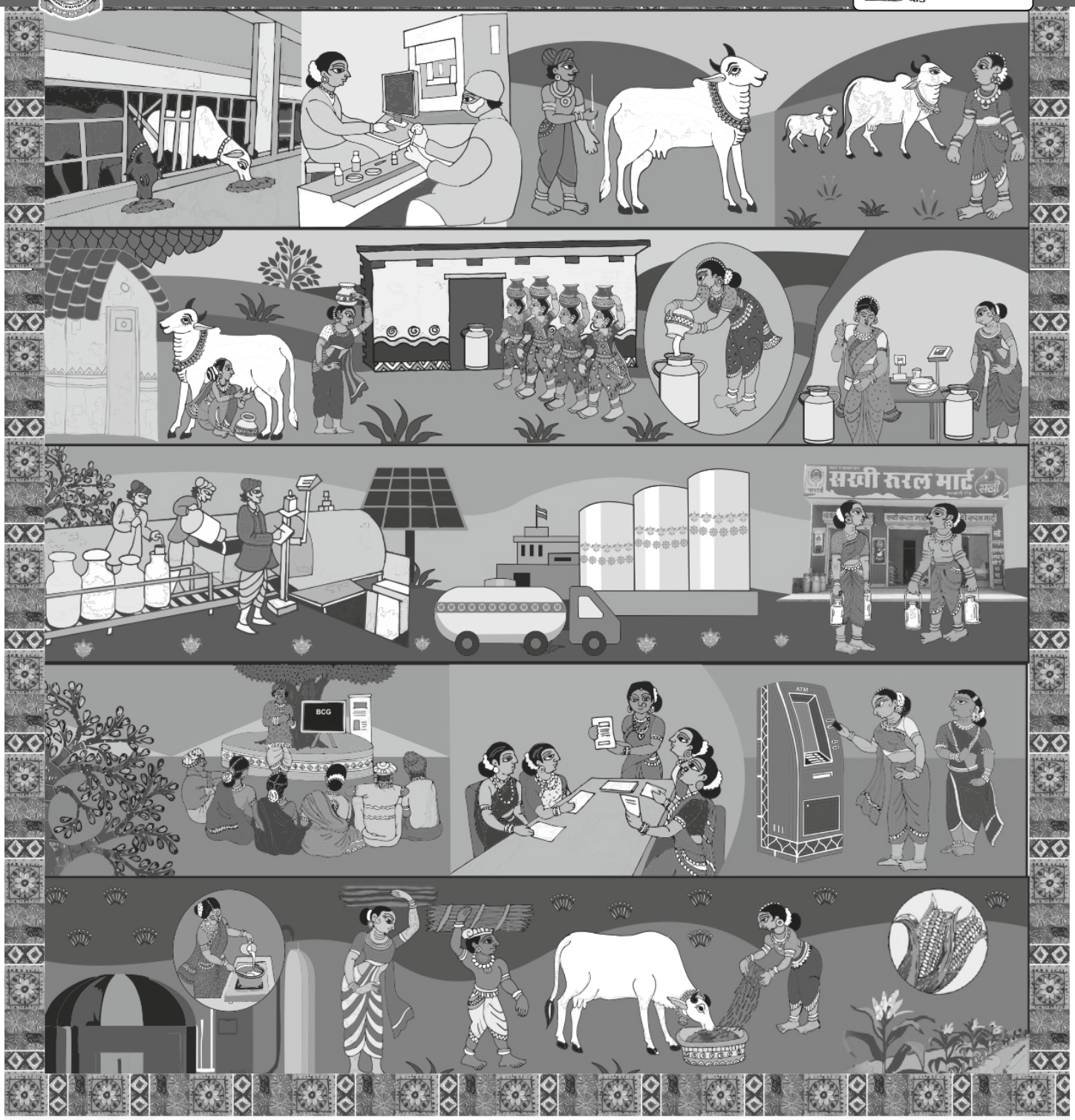

NDDB DAIRY SERVICES

Transforming the
Rural landscape of India

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

Impact in Action, Purpose in Motion

NDDB Dairy Services (NDS), a not-for-profit, wholly owned subsidiary of the National Dairy Development Board, serves as the delivery arm of NDDB's field level initiatives. With a strong focus on building a sustainable, inclusive, and farmer-owned dairy ecosystem, NDS works closely with small and marginal farmers particularly women to strengthen livelihoods and enhance rural prosperity.

At the heart of NDS's work lies a deep commitment to improving animal productivity, strengthening farmer institutions, and bringing structure to the unorganised dairy sector. Through targeted interventions in breed improvement, productivity enhancement, and institutional development, NDS enables farmers to unlock higher milk yields, stable incomes, and long term resilience.

Advancing Genetic Improvement and Productivity

Sustained farmer incomes begin with healthier animals and stronger genetics. Productivity enhancement remains one of the most powerful pillars of NDS's work, combining time-tested practices with advanced reproductive technologies. From large-scale artificial insemination services to cutting-edge interventions such as In Vitro Fertilisation (IVF) and Embryo Transfer (ET), NDS is reshaping India's genetic improvement landscape.

By owning and managing state of art semen stations across the country, NDS plays a critical role by meeting over 40% of the country's total semen demand by producing and distributing close to 50 million doses. A vast network of trained AI technicians enables last mile delivery of breeding services across thousands of villages, ensuring that scientific breeding support reaches farmers where it matters most.

A landmark advancement in this journey has been the introduction of GauSort, an affordable and indigenous gender sorted semen technology developed by NDDB with the support from the Department of Animal Husbandry and Dairying (DAHD). Hon'ble Prime Minister formally unveiled the technology and NDS commenced its commercial production in January 2025.

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

Conserving Indigenous Breeds, Enhancing Yields

Hon'ble President of India Inaugurated Animal Induction Programme in Mayurbhanj, Odisha

Through 24 Rashtriya Gokul Mission (RGM) projects spread across multiple states, NDS actively works to conserve and develop India's indigenous bovine breeds while simultaneously improving milk productivity in regions where yields have traditionally been low. Further strengthening advanced reproductive interventions, NDS collaborated with milk unions and federations and successfully performed close to 6,000 IVF-ET procedures under the Accelerated Breed Improvement Programme, marking a significant leap forward in accelerating genetic progress nationwide.

A significant step in strengthening regional dairy ecosystem has been the launch of the Animal Induction Programme by the Hon'ble President of India in the Mayurbhanj district of Odisha. Designed to address challenges such as low per animal productivity and limited per capita milk availability, the programme lays the foundation for improving milk production across the state. Through targeted interventions and the planned establishment of Milk Producer Organisations, this initiative aims to build a robust, farmer owned dairy ecosystem in Odisha, enhancing livelihoods and long term sectoral viability.

Beneficiary Farmer with a Gir Cow in Odisha

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

Building Strong Farmer Owned Institutions

Institution building is central to NDS's approach. By promoting and strengthening Milk Producer Organisations (MPOs), NDS brings dairy farmers into the mainstream economy. These farmer owned institutions provide assured market access, fair pricing, and direct payments, strengthening trust and financial inclusion at the grassroots.

Women's leadership is a defining feature of this model. Nearly 77% of Milk Producer Organisation members are women, many of whom guide their institutions as board members and chairpersons driving not only economic advancement but also deep social transformation within their communities. Through focused capacity building and enterprise led opportunities, NDS has nurtured over 1,50,000 ***Lakhpati Didis,*** enabling women farmers to achieve sustainable and diversified incomes.

The impact of these efforts has gained global recognition. Asha Mahila MPO was honoured with the IDF 2024 'Innovation in Sustainable Processing Award' at the World Dairy Summit in Paris, underscoring the transformative potential of women led, farmer owned institutions. Across some of India's most challenging geographies, these organisations continue to convert adversity into opportunity through collective strength, professional management, and institutional ownership.

Asha MPO receiving IDF Dairy Innovation Award 2024

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

For NDS, milk is not merely a commodity but a catalyst to empower dairy farmers across the nation.
We believe that true economic empowerment and transformation is possible only by uplifting the hardest working demography of our nation – our farmers.

Presence of MPOs

Envisioning a prosperous future for dairy farmers especially women

NDS is focussed on underserved and non-traditional dairy regions to create structured market access where it is needed most by formalising the unorganised sector to drive entrepreneurship, curb rural migration and ensure equitable farmer income directly contributing to NDDB's vision of doubling farmer's income. Towards this objective, milk procurement, chilling and marketing activities have been setup across 12 states through 25 MPOs of which 18 MPOs are wholly owned by women dairy farmers.

The MPOs set up by NDS, have procured an average of over 60 lakh litres of milk per day from 13.5 lakh dairy farmers.

1 PAAYAS, Jaipur, Rajasthan	2 Maahi, Rajkot, Gujarat	3 Shreeja, Tirupati, Andhra Pradesh	4 Baami, Patiala, Punjab	5 Saahaj, Agra, Uttar Pradesh	6 Mothari, Bihar	7 Sakhi, Alwar, Rajasthan	8 Asha, Udaipur, Rajasthan
9 Ruhaanii, Sirsa, Haryana	10 Shwetdhara, Ayodhya, Uttar Pradesh	11 Indujaa, Yavatmal, Maharashtra	12 Kaushikee, Saharsa, Bihar	13 Maalav, Rajgarh, Madhya Pradesh	14 Muktara, Sagar, Madhya Pradesh	15 Balinee, Jhansi, Uttar Pradesh	16 UJALAA, Kota, Rajasthan
17 Kashee, Varanasi, Uttar Pradesh	18 Meerut, Uttar Pradesh	19 Saamarthya, Rae Bareli, Uttar Pradesh	20 Gorakhpur, Uttar Pradesh	21 SRIJAKEE, Bareilly, Uttar Pradesh	22 Dudhshree, Hooghly, West Bengal	23 Nagpur, Maharashtra	24 Asmitaa, Manendragarh, Chhattisgarh
24 VANAMRITA, Mayurbhanj, Odissa							

Women led development

18 out of 25 are women owned MPOs

10 lakh women dairy farmers

1,39, 995 Lakhpati Didis in FY 24-25

212 women producer Directors on the Board out of **251 producer Directors**

22 out of 25 Chairpersons are women

Members

Board of Directors

Sahayikas

Field Functionaries

Dairy farmer member of Sakhi MPO in an interaction with Hon'ble Prime Minister

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

Empowering dairy farmers **Transforming Livelihoods and Optimising Livestock Productivity**

Increasing the productivity of livestock is fundamental to the long-term sustainability of the dairy ecosystem. Our multi layered approach to helping dairy farmers achieve greater livestock productivity covers all aspects ranging from health, nutrition, artificial insemination, embryo transfers and providing milch animals.

Footprint of our Productivity Enhancement Services

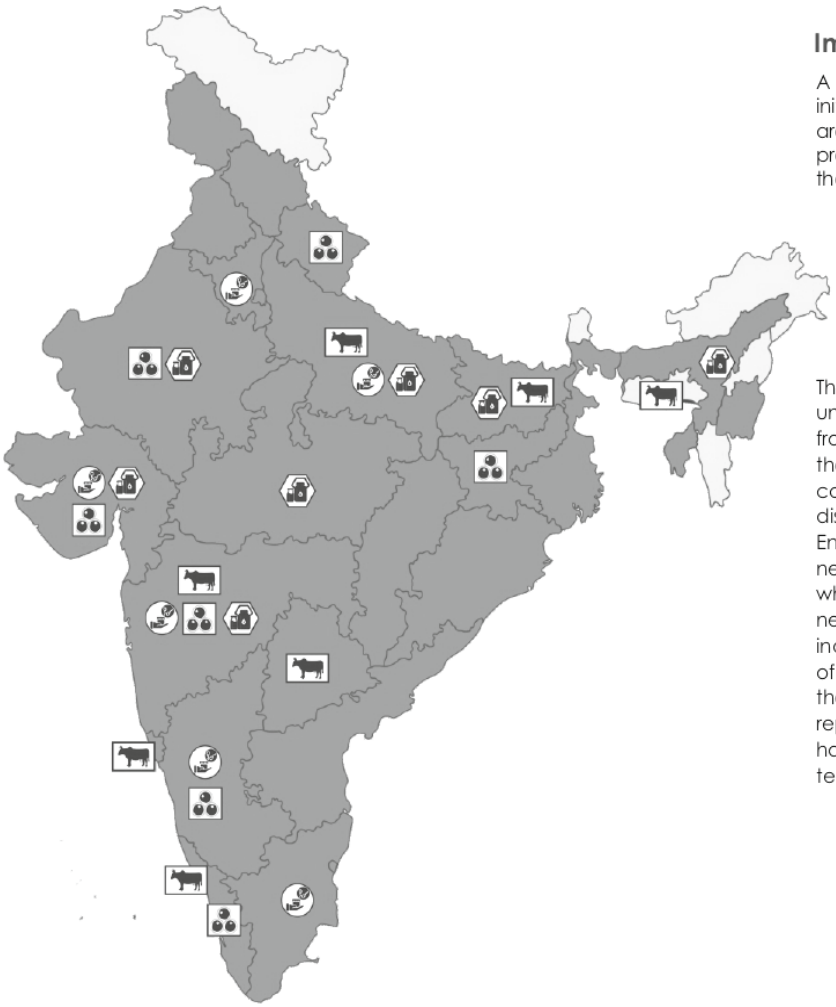

Improving Productivity of milch animals

A holistic approach to productivity enhancement initiatives customized to the region where projects are implemented have helped to improve the productivity of the dairy animals and improve the income of the dairy farmers.

The four state of the art NDS semen stations, under the SAG brand, supply close to 550 lakh frozen semen doses of high genetic merit across the country covering 1,64,547 villages, thereby contributing to around 40% of the Semen doses distributed in the country. Various Productivity Enhancement Projects tailored to meet the needs of the region are also taken up by NDS which include establishment of AI delivery networks, induction of High Genetic Merit indigenous breeds of cattle and buffaloes, supply of fodder, setting up Ln2 grids etc, Considering the need to introduce and promote advanced reproductive technologies in the country, NDS has also started implementation of IVF-ET technology at the farmers doorstep.

Distribution network of 'SAG' branded FSDs

Embryo Transfer (ET) activities

SAG Live

Semen stations

Productivity enhancement services at the MPOs

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

Agri Value Chain Solutions

Diversified income basket

Venturing into agri commodities through the same institutional network to create multiple income streams to dairy farmers, there by enhancing households resilience against sector specific volatility and seasonal fluctuations. This ensures fair pricing, value addition and improves overall profitability for dairy farmers.

Sustainability

Towards Dairy net Zero

As the discourse around climate change increases, the focus is now on producing milk responsibly by addressing the current needs such that it does not jeopardise the future ecosystem. Our genetic improvement programmes prioritise selection and propagation of animals with superior traits for milk production thereby leading to increased productivity and decreased greenhouse gas emissions per kg of milk.

In line with NDDB's vision of creating wealth from waste, initiatives are being adopted on war footing basis to educate and support the farmers in adopting non-conventional energy solutions for their daily needs, thereby cutting down the dependence on traditional energy sources and contributing to lowering of greenhouse gas emissions.

We are also advancing eco-friendly dairy logistics by progressively electrifying our fleet at the MPOs, reinforcing our commitment to sustainability across the value chain.

Anchored in a clear vision and purposeful action, NDS is shaping pathways for inclusive growth by placing small and marginal farmers especially women at the centre of India's dairy transformation. As the sector evolves, NDS will continue to set higher benchmarks through innovation, collaboration, and farmer ownership building a resilient, sustainable, and future-ready dairy ecosystem by strengthening the cooperative movement in the country.

NDDB House, Safdarjung Enclave
New Delhi 110029,INDIA

Phone: (011) 49883000/49883088
www.nddbdairyservices.com
email: info@nddbdairyservices.com

प्रकाशन क्रमांक : SKNAU/2026/165

Key Highlights of *"Rangeelo" Kisan Mela* – 2026
(27 February 2026)
Day–1

- Sri Karan Narendra Agriculture University, Jobner organized the grand inauguration of the two-day "Rangeelo Kisan Mela – Kisano Ke Sang, Grameen Samriddhi Ke Rang". The programme was held in collaboration with the National Dairy Development Board, Anand (Gujarat), and NDDB Dairy Services, Delhi.
- The *mela* featured exhibitions on animal husbandry, horticulture, agricultural technologies, farm machinery, and innovative farming practices. A vibrant showcase of Rajasthani culture added a special charm and festive spirit to the event.
- A massive gathering of farmers participated enthusiastically and showed keen interest in the agricultural and dairy exhibitions.
- The *mela* was inaugurated by Shri Jawahar Singh Bedam, Hon'ble Minister of State (Animal Husbandry, Dairy & Fisheries) Govt. of Rajasthan. He emphasized modern dairy production technologies, improved breeds, balanced animal nutrition, and scientific management to enhance income of the farmers and livestock keepers.
- Prof. (Dr.) Pushpendra Singh Chauhan, Vice Chancellor of SKNAU, Jobner highlighted the university's achievements, key provisions of the agricultural budget 2026, the emerging role of Artificial Intelligence (AI) in agriculture, and the empowerment of rural women through the *"Namo Drone Didi Yojana."*
- Dr. Meenesh Shah, Chairman of the National Dairy Development Board, appreciated progress made in dairy education, research, and innovation. He emphasized strength of the cooperative movement and elaborated the historic contribution of Operation Flood in making India self-reliant in milk production.
- The guests were welcomed by Dr. C. P. Devanand, Managing Director, NDDB Dairy Services, Delhi. Ms. Shruti Bhardwaj, (IAS) Managing Director from Rajasthan Cooperative Dairy Federation *(Saras)* shared information about *Saras* products and schemes of the federation.
- Farmers from Gujarat, Madhya Pradesh, Haryana, and other states actively participated in the event. Advanced cattle breeds developed through embryo transfer technology were showcased, including *Gir, Rathi, Sahiwal, Haryana, Kankrej, Holstein Friesian, and Jersey.*
- A total of 105 agricultural exhibitions were organized, displaying advanced agricultural machinery modern farm technologies and livestock management tools.
- An open interaction session between farmers and scientists from SKNAU, Jobner and NDDB was conducted, providing practical solutions to queries related to farming and animal husbandry.
- Meritorious students of Class 10 and 12 in the board examination—Kalpana Choudhary, Tanisha Kanwar, Abhishek Dhakad, Manish Gurjar, Kamlesh, and Bharti Saini—were honoured with the NDS Merit Award during the inaugural ceremony.
- Traditional Rajasthani Folk dances, music, and cultural performances added a vibrant and festive atmosphere to the *mela.*
- Dr. R. N. Sharma, Director of Extension Education SKNAU, Jobner stated that the *mela* served as a dynamic platform integrating knowledge, innovation, culture, and dialogue, contributing significantly toward rural prosperity.

Key Highlights of *"Rangeelo" Kisan Mela* – 2026
(28 February 2026)
Day–2

The two-days *"Rangeelo Kisan Mela – Kisano Ke Sang, Grameen Samriddhi Ke Rang"* concluded successfully at the campus of Sri Karan Narendra Agriculture University, Jobner. The mega event was organized in collaboration with National Dairy Development Board, Anand (Gujarat), and NDDB Dairy Services, Delhi. Farmers from across Rajasthan and several other states participated enthusiastically in the event. A total of 31,103 farmers and Livestock keepers attended the two-days *mela.*

On the concluding occasion, Vice-Chancellor, SKNAU, Jobner Prof. Dr. Pushpendra Singh Chauhan congratulated the entire organizing team for the successful conduct of the mela. He stated that such events establish direct interaction between the university and farmers, ensuring rapid dissemination of advanced technologies to the grassroots level. He expressed confidence that the innovations and technologies displayed at the mela would significantly enhance farmers' income.

Dr. Meenesh Shah, Chairman of the National Dairy Development Board, appreciated the research and outcomes in the field of dairy development in India highlighting the significant progress made in the sector. He described *"Rangeelo–26 Kisan Mela"* as a highly successful first joint initiative with the SKNAU, Jobner and expressed hope that such collaborations would provide new direction to the dairy sector in Rajasthan.

Huge Turnout at the Agricultural Exhibition

The exhibition related to animal husbandry and agriculture exhibition witnessed an overwhelming response from farmers. Advanced crop varieties, modern farm machinery, and innovative agricultural technologies improved livestock breeds, modern dairy technologies were showcased. Scientists provided detailed guidance on modern farming practices, quality seed production, balanced nutrient management, integrated pest management as well as dairy development.

Shri Om Prakash Puniya, Chairman of Jaipur dairy stated that animal husbandry and dairy farming have significantly transformed farmers' livelihoods. He emphasized that the adoption of scientific practices, improved breeds, balanced nutrition, and modern dairy management, has led to substantial improvements in milk production and quality thereby strengthening the rural economy of Rajasthan.

Milk Production Competition – Winners Honored

On the second day, outstanding livestock owners were honored with cash prizes and awards in the Milk Production Competition. Winners securing first, second, and third positions in different breed categories received attractive cash rewards, inspiring other dairy farmers.

Results along with cash prize of milking competitions

S. No	Breed	Rank	OwnerName	Total Milk (Kg/day)	Prize (Rs.)
1.	Cross Breed (Cattle)	I	Gagan Singh S/o Om Prakash Gurjar	49.10	251000/-
	Cross Breed	II	Om Prakash	22.52	151000/-
	Cross Breed	III	Bhawani Om Prakash	22.40	111000/-
2.	GIR (Cattle)	I	Mukesh Kumar Choudhary	26.88	251000/-
	GIR	II	Ganpat Singh Skekhawat	26.14	151000/-
	GIR	III	Avinash Singh Shekhawat	20.08	111000/-
3.	Holstein Friesian (Cattle)	I	Kamla	64.44	251000/-
	Holstein Friesian	II	Sunita W/o Rammehar	61.34	151000/-
	Holstein Friesian	III	Dushyant Dhanda S/o Sukhbir	58.94	111000/-
4.	Jersy (Cattle)	I	Naresh Kumar S/o Churia Ram	36.22	251000/-
	Jersy	II	Geeta Devi	26.68	151000/-
	Jersy	III	Mangiram	25.02	111000/-
5.	Murrah (Buffalo)	I	Basant S/o Ramphal	22.50	251000/-
	Murrah	II	Amandeep	20.76	151000/-
	Murrah	III	Yashveer S/o Kalam Singh	20.30	111000/-
6.	Rathi (Cattle)	I	Subhash Chandra	17.36	251000/-
	Rathi	II	Ashok	16.50	151000/-
	Rathi	III	Bhagwana Ram	15.94	111000/-
7.	Sahiwal (Cattle)	I	Randeep Choudhary	22.36	251000/-
	Sahiwal	II	Naresh Kumar	19.18	151000/-
	Sahiwal	III	Radheshyam Jat	18.96	111000/-
8.	Tharparkar (Cattle)	I	Balveer Karesiya	13.30	251000/-
	Tharparkar	II	Harshit Jhuriya	12.88	151000/-
	Tharparkar	III	Udaipal Dhaderwal	09.50	111000/-

During the valedictory ceremony, the winning livestock owners were felicitated on stage. Their achievements reflected how scientific management and modern dairy technologies can set new benchmarks in milk production. The mela proved that with the innovation, dedication, and technical support, immense opportunities exist in agriculture and animal husbandry sector.

At the end of the program, Dr. R. N. Sharma, Director of Extension Education SKNAU, Jobner congratulated the organizers, scientists of SKNAU, Jobner as well as NDDB, staff of SKNAU and collaborating institutions for the successful event. He especially appreciated the support of the National Dairy Development Board and described the mela as a commendable and impactful initiative in the interest of farmers.

Glimpses of "Rangeelo"

Kisan Mela - 2026

गृह राज्यमंत्री श्री जवाहर सिंह बेढम ''रंगीलो'' किसान मेले का उद्घाटन करते हुए

गृह राज्यमंत्री श्री जवाहर सिंह बेढम किसान मेले किसानों का सम्बोधन करते हुए

कुलगुरू प्रो. (डॉ.) पी.एस. चौहान एवं डॉ. आर.एन. शर्मा किसानों को सम्मानित करते हुए

गृह राज्यमंत्री श्री जवाहर सिंह बेढम गोवंश के बछड़े से मेले का आगाज करते हुए

दो दिवसीय किसान मेले मे प्रगतिशील किसान मेले का आनन्द लेते हुए

कुलगुरू प्रो. (डॉ.) पी.एस. चौहान व NDDB के चैयरमैन डॉ. मीनेश शाह द्वारा कृषि वि.वि. जोबनेर की प्रदर्शनी का अवलोकन करते हुए।

Glimpses of "Rangeelo"

Kisan Mela - 2026

दुग्ध पालन के किसानों को प्रोत्साहन राशि देकर सम्मानित किया गया

कुलगुरू प्रो. (डॉ.) पी.एस. चौहान किसानों को सम्बोधित करते हुए

मेले में पशुपालकों द्वारा भव्य ऊँट प्रदर्शनी

सांकृतिक गतिविधियों की झलक

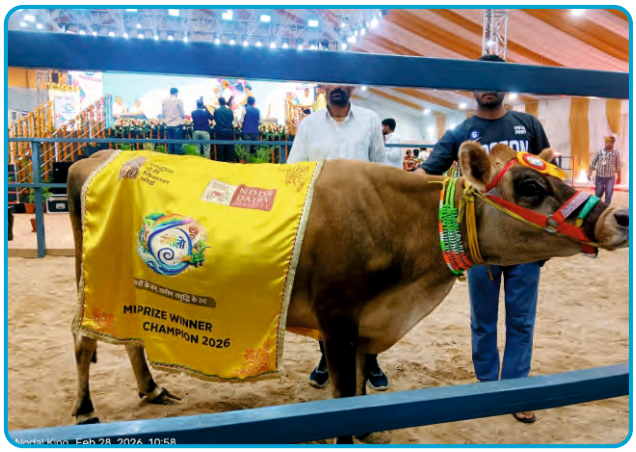

विजेता किसान गाय की नस्ल का प्रदर्शन करते हुए

किसान मेले में घोड़ी नृत्य प्रदर्शन

Press Highlights

"Rangeelo"

Kisan Mela - 2026

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड

NDDB DAIRY SERVICES

रंगीलो :जोबनेर में शुरू हुआ भव्य डेयरी एवं पशुपालन महोत्सव

बजट दोगुना होने से दुग्ध किसानों को नई तकनीकों तक पहुंच प्राप्त करने में मदद मिलेगी: जवाहर सिंह बेढम

सच कहूँ मँच वहाँ | epaper.sachkahoon.com 28 Feb 2026 - Page 4

श्रीगंगानगर | सच कहूँ | SACH KAHOON | WWW.SACHKAHOON.COM

गृह राज्य मंत्री जवाहर सिंह बेढ़म ने किया मेले का उद्घाटन, 14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

'रंगीलो' किसान मेले में किसानों का उमड़ा सैलाब

खुला संवाद, विद्यार्थी सम्मानित

रंगीलो किसान मेले में किसानों का उमड़ा जनसैलाब, 14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

'रंगीलो' किसान मेले में किसानों का उमड़ा जनसैलाब, -14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

'रंगीलो' किसान मेले में किसानों का उमड़ा जनसैलाब,-14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

प्रातःकाल

Jaipur Edition | 2026-02-28 | Page-5
pratahkal.epapers.in

मेले में किसानों का उमड़ा जनसैलाब, 14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

जयपुर (कासं)। श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) तथा एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज, दिल्ली व श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर द्वारा दो दिवसीय 'रंगीलो' किसान मेला–किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का भव्य शुभारंभ हुआ। मेले में पशुपालन, उद्यान विज्ञान, कृषि तकनीक, कृषि मशीनरी एवं नवाचारों की आकर्षक प्रदर्शनी लगाई गई।

कृषि मेले में राजस्थानी संस्कृति की झलक भी दिखाई दी, जिसने आयोजन को विशेष रंग प्रदान किया। किसान मेले में किसानों का जनसैलाब उमड़ पड़ा। किसानों ने खेती-बाड़ी से संबंधित प्रदर्शनी में गहरी रुचि दिखाई। मेले का उद्घाटन गृह राज्य मंत्री (गोपालन, पशुपालन एवं डेयरी तथा मत्स्य विभाग) जवाहर सिंह बेढ़म ने किया। उन्होंने आधुनिक दुग्ध उत्पादन तकनीकों, उन्नत नस्लों, संतुलित पशु आहार एवं वैज्ञानिक प्रबंधन अपनाकर आय बढ़ाने पर बल दिया तथा मेले के उद्देश्य एवं महत्त्व पर प्रकाश डाला।

कुलगुरु प्रोफेसर डॉ. पुष्पेंद्र सिंह चौहान ने विश्वविद्यालय के गौरवशाली इतिहास और वर्ष 2026 के बजट में घोषित कृषि योजनाओं की जानकारी दी। उन्होंने कृषि में कृत्रिम बुद्धिमत्ता (ए.आई.) के बढ़ते उपयोग तथा 'नमो ड्रोन दीदी योजना' के माध्यम से महिलाओं को ड्रोन संचालन का प्रशिक्षण देकर सशक्त बनाने की पहल पर प्रकाश डाला।

कार्यक्रम में डॉ. मीनेश शाह (चेयरमैन, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड) ने डेयरी क्षेत्र में शिक्षा, अनुसंधान एवं नवाचारों की सराहना की तथा सहकारिता के महत्त्व को रेखांकित करते हुए ऑपरेशन फ्लड की भूमिका बताई, जिसने देश को दुग्ध उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया। श्रुति भारद्वाज, राजस्थान सहकारी डेयरी फेडरेशन (सरस) ने सरस से संबंधित उत्पादों और योजनाओं के बारे में जानकारी दी। कार्यक्रम में अतिथियों का स्वागत डॉ. सी.पी. देवानंद, प्रबंधन निदेशक, NDDB डेयरी सर्विसेज, दिल्ली ने किया। मेले में गुजरात, मध्यप्रदेश, हरियाणा आदि राज्यों से आए किसानों ने सक्रिय भागीदारी की। भ्रूण प्रत्यारोपण तकनीक से विकसित उन्नत नस्लों का प्रदर्शन किया गया। विशेष रूप से गिर, राठी, साहीवाल, हरियाणा, कांकरेज, होल्सटीन फ्रीजियन एवं जर्सी नस्लों की प्रदर्शनी आकर्षण का केंद्र रही। विजेताओं की घोषणा मेले के समापन अवसर पर 28 फरवरी को की जाएगी।

दैनिक नवज्योति | Anchal - 28 Feb 2026 - Page 10

रंगीलो किसान मेला में उमड़ा जनसैलाब 14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

'रंगीलो' किसान मेले में उमड़ा जनसैलाब, 14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

"रंगीलो किसान मेला- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग" का भव्य समापन

दो दिवसीय किसान मेले में 31,103 किसानों ने लिया भाग

जोबनेर : दुग्ध प्रतियोगिता के विजेताओं पर धनवर्षा

रंगीलो किसान मेले का समापन

पत्रिका | पत्रिका न्यूज नेटवर्क | patrika.com

जोबनेर. श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय के परिसर में आयोजित दो दिवसीय "रंगीलो किसान मेला-किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग" का शनिवार को हर्षोल्लास के साथ समापन हुआ। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद और एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज दिल्ली के सहयोग से आयोजित इस मेले ने सफलता के नए कीर्तिमान स्थापित किए। समापन समारोह में विश्वविद्यालय के कुलगुरु प्रोफेसर डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान और एनडीडीबी के चेयरमैन डॉ. मीनेश शाह ने शिरकत की। मेले के दौरान आयोजित कृषि प्रदर्शनी मुख्य आकर्षण का केंद्र रही, जिसमें रिकॉर्ड 31,103 किसानों ने भाग लिया। प्रदर्शनी में उन्नत किस्म की फसलों, आधुनिक कृषि यंत्रों और नवीन तकनीकों का जीवंत प्रदर्शन किया गया। कुलगुरु डॉ. चौहान ने कहा कि ऐसे मेलों से वैज्ञानिक अनुसंधान सीधे खेतों तक पहुँचते हैं, जिससे किसानों की आय में वृद्धि सुनिश्चित होती है। डॉ. मीनेश शाह ने विश्वविद्यालय के साथ इस प्रथम संयुक्त प्रयास को डेयरी क्षेत्र के लिए एक नई दिशा बताया।

दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता: हरियाणा और अजमेर के पशुपालकों का दबदबा : मेले के दूसरे दिन आयोजित दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता में पशुपालकों को लाखों रुपये की पुरस्कार राशि से नवाजा गया। सर्वाधिक दुग्ध उत्पादन श्रेणी में हरियाणा के हिसार और करनाल सहित राजस्थान के अजमेर के पशुपालकों ने बाजी मारी। जिसमें होल्सटीन फ्रिजियन नस्ल में हरियाणा के हिसार जिले का दबदबा रहा, जिसमें प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले पवन कुमार को 2,51,000 रुपये, द्वितीय स्थान पर सुनीता को 1,51,000 रुपये और तृतीय स्थान पर दुष्यंत को 1,00,000 रुपये का पुरस्कार मिला। साहीवाल नस्ल में करनाल के रणदीप चौधरी 2.51 लाख रुपये के साथ प्रथम रहे जबकि द्वितीय पुरस्कार नरेश कुमार और तृतीय पुरस्कार राधेश्याम जाट को मिला। गिर नस्ल की श्रेणी में अजमेर के पशुपालकों ने शानदार प्रदर्शन किया, जिसमें मुकेश चौधरी प्रथम, गणपत सिंह शेखावत द्वितीय और अविनाश सिंह शेखावत तृतीय स्थान पर रहे। कार्यक्रम के अंत में प्रसार शिक्षा विभाग के डॉ. आर.एन. शर्मा ने सभी सहयोगी संस्थाओं और वैज्ञानिकों का आभार जताया। उन्होंने विशेष रूप से एनडीडीबी के सहयोग की सराहना करते हुए कहा कि इस मेले ने न केवल पशुपालकों का उत्साह बढ़ाया है, बल्कि डेयरी क्षेत्र में वैज्ञानिक प्रबंधन के प्रति जागरूकता भी पैदा की है।

Press Highlights
"Rangeelo"
Kisan Mela - 2026

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड

NDDB DAIRY SERVICES

रंगीलों किसान मेले में किसानों का जनसैलाब,14,506 किसानों का पंजीकरण

ई-न्यूज भारत

जोबनेर /जयपुर (सुरेश भदाला) श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद तथा NDDB डेयरी सर्विसेज के संयुक्त तत्वावधान में दो दिवसीय 'रंगीलों किसान मेला - किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का आयोजन हुआ। मेले में 14,506 किसानों ने पंजीकरण कराया। मेले में पशुपालन, उद्यान विज्ञान, कृषि तकनीक, कृषि मशीनरी और नवाचारों की 105 प्रदर्शनी लगाई गईं। राजस्थानी संस्कृति की झलक ने आयोजन को उत्सव का रूप दिया। गुजरात, मध्यप्रदेश और हरियाणा सहित विभिन्न राज्यों से आए किसानों ने सक्रिय भागीदारी की। कार्यक्रम का उद्घाटन गृह राज्य मंत्री (गोपालन, पशुपालन एवं डेयरी तथा मत्स्य विभाग) जवाहर सिंह बेढ़म ने किया। उन्होंने आधुनिक दुग्ध उत्पादन तकनीकों, उन्नत नस्लों और वैज्ञानिक पशुपालन प्रबंधन से आय बढ़ाने पर जोर दिया। कुलगुरु प्रो. डॉ. पुष्पेंद्र सिंह चौहान ने विश्वविद्यालय की उपलब्धियों और वर्ष 2026 के बजट में घोषित कृषि योजनाओं की जानकारी दी। उन्होंने कृषि में एआई के उपयोग और 'नमो ड्रोन दीदी योजना' के माध्यम से महिलाओं को ड्रोन संचालन प्रशिक्षण देने की पहल का उल्लेख किया। एनडीडीबी के चेयरमैन डॉ. मीनेश शाह ने डेयरी क्षेत्र में सहकारिता मॉडल और ऑपरेशन फ्लड की भूमिका पर प्रकाश डाला। कार्यक्रम में अतिथियों का स्वागत डॉ. सी. पी. देवानंद, प्रबंधन निदेशक, एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज ने किया। राजस्थान सहकारी डेयरी फेडरेशन (सरस) की प्रतिनिधि श्रुति भारद्वाज ने सरस की योजनाओं और उत्पादों की जानकारी दी। मेले में भ्रूण प्रत्यारोपण तकनीक से विकसित गिर, राठी, साहीवाल, हरियाणा, कांकरेज, होल्सटीन फ्रीजियन और जर्सी नस्लों की प्रदर्शनी आकर्षण का केंद्र रही। विजेताओं को कुल 60 लाख रुपये तक के पुरस्कार दिए जाएंगे, जिनकी घोषणा अगले दिन की जाएगी। किसानों और वैज्ञानिकों के बीच खुला संवाद सत्र भी आयोजित हुआ, जिसमें खेती और पशुपालन से जुड़े सवालों पर विस्तार से चर्चा हुई। इसके अलावा 10वीं और 12वीं बोर्ड परीक्षाओं में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों को एनडीएस मेरिट अवॉर्ड से सम्मानित किया गया। डॉ. आर. एन. शर्मा, निदेशक प्रसार, ने बताया कि यह मेला ज्ञान, नवाचार और संवाद का प्रभावी मंच बनकर ग्रामीण समृद्धि की दिशा में महत्वपूर्ण पहल साबित हुआ।

रघुवंशी रक्षक पत्रिका | दूदू व जयपुर, शनिवार 28 फरवरी, 2026 | 4

रंगीलों किसान मेला में किसानों का उमड़ा जनसैलाब
14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

दैनिक भास्कर | जयपुर जिला चौमू 28-02-2026

राज्य मंत्री बेढ़म बोले- आधुनिक डेयरी व एआई तकनीक से बढ़ेगी किसानों की आय

रंगीलो किसान मेले में देश भर की ग्रामीण समृद्धि हाईटेक डेयरी व उन्नत नस्लें आकर्षण का केंद्र बनीं

श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय,जोबनेर में 'रंगीलों किसान मेला' का शुभारंभ

ई-न्यूज भारत

जोबनेर /जयपुर (सुरेश भदाला) श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड (एनडीडीबी) के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय 'रंगीलों किसान मेला' का भव्य उद्घाटन हुआ। मेले का शुभारंभ गृह राज्य मंत्री (गोपालन, पशुपालन एवं डेयरी तथा मत्स्य विभाग) जवाहर सिंह बेढ़म ने किया। इस अवसर पर उन्होंने उपस्थित किसानों को होली की शुभकामनाएं दी और मेले के उद्देश्य पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि आधुनिक दुग्ध उत्पादन तकनीकों को अपनाकर किसान अपनी आय बढ़ा सकते हैं। वैज्ञानिक पद्धतियों, उन्नत नस्लों, संतुलित पशु आहार और बेहतर पोषण प्रबंधन को उन्होंने डेयरी विकास की आधारशिला बताया। विश्वविद्यालय के कुलगुरु प्रो. डॉ. पुष्पेंद्र सिंह चौहान ने विश्वविद्यालय के इतिहास और उपलब्धियों की जानकारी दी। उन्होंने वर्ष 2026 के बजट में घोषित कृषि योजनाओं पर चर्चा करते हुए खेती में कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बढ़ते उपयोग को महत्वपूर्ण बताया। उन्होंने 'नमो ड्रोन दीदी योजना' का उल्लेख करते हुए कहा कि इसके तहत महिलाओं को ड्रोन संचालन का प्रशिक्षण देकर कृषि कार्यों में सशक्त बनाया जा रहा है। राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के अध्यक्ष मिनेश शाह ने डेयरी क्षेत्र में अनुसंधान और नवाचार की भूमिका पर जोर दिया। उन्होंने किसानों को सहकारी संस्थाओं से जुड़ने के लिए प्रेरित किया और ऑपरेशन फ्लड का उल्लेख करते हुए बताया कि इस अभियान ने देश को दुग्ध उत्पादन में आत्मनिर्भर बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कार्यक्रम में राजस्थान सहकारी डेयरी फेडरेशन लिमिटेड, जयपुर की प्रबंध निदेशक श्रुति भारद्वाज और आयोजक सचिव डॉ. आर.एन. शर्मा सहित कई अधिकारी मौजूद रहे। मेले में गुजरात, मध्यप्रदेश, हरियाणा सहित विभिन्न राज्यों से आए किसानों ने भाग लिया। कृषि और डेयरी से जुड़ी आधुनिक तकनीकों, उपकरणों और नवाचारों की प्रदर्शनी आकर्षण का केंद्र रही। गृह राज्य मंत्री बेढ़म ने मेले का अवलोकन किया और प्रदर्शनी स्टॉलों पर किसानों से संवाद भी किया।

UNIवार्ता
UNITED NEWS OF INDIA

Saturday, Feb 28 2026 | Time 21:05 Hrs(IST)

Menu ☰ | Type your keyword | लॉगिन

राज्य »

राजस्थान

Posted at: Feb 28 2026 5:29PM

रंगीलों किसान मेला 'किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का भव्य समापन

जयपुर, 28 फरवरी (वार्ता) राजस्थान के जोबनेर स्थित श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) और डेयरी सर्विसेज, दिल्ली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय 'रंगीलों किसान मेला – किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का भव्य समापन किया गया। मेले में विभिन्न राज्यों से आये दो दिवसीय किसान मेले में 31 हजार 103 किसानों ने शिरकत की।

समापन अवसर पर कुलगुरु प्रोफेसर डॉ पुष्पेन्द्र सिंह चौहान ने कहा कि ऐसे आयोजनों से विश्वविद्यालय और किसानों के बीच सीधा संवाद स्थापित होता है और नयी तकनीकों का लाभ स्थानीय किसानों तक शीघ्रता से पहुंचता है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि मेले में प्रदर्शित उन्नत तकनीकों और नवाचारों का सीधा लाभ क्षेत्र के किसानों को मिलेगा और उनकी आय में वृद्धि होगी।

हमारा समाचार | आर.एन.आई.नं. RAJHIN/2012/45657 | राजधानी समाचार

दो दिवसीय किसान मेले में 31,103 किसानों ने लिया भाग

'रंगीलों किसान मेला - किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का भव्य समापन

रघुवंशी रक्षक पत्रिका | दूदू व जयपुर, रविवार 1 मार्च, 2026 | 3

रंगीलों किसान मेला: किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग का भव्य समापन
दो दिवसीय किसान मेले में 31,103 किसानों ने लिया भाग

जोबनेर विवि में "रंगीलो किसान मेला—किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग" का समापन

न्यूज सर्विस/ नवज्योति, जोबनेर। श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड आनंद (गुजरात) एवं एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज, दिल्ली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय "रंगीलो किसान मेला – किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग" का भव्य समापन हुआ। मेले में प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों से आए किसानों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। कुलगुरु प्रो. डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान ने आयोजन टीम को बधाई दी और कहा कि इस प्रकार के कार्यक्रम विश्वविद्यालय और किसानों के बीच सीधा संवाद स्थापित करते हैं तथा नई तकनीकों का लाभ किसानों तक शीघ्र पहुंचता है। डॉ. मीनेश शाह ने डेयरी क्षेत्र में शिक्षा, अनुसंधान और नवाचारों की सराहना करते हुए कहा कि "रंगीलो–26 किसान मेला" का प्रथम संयुक्त प्रयास अत्यंत सफल रहा और भविष्य में इससे डेयरी क्षेत्र को नई दिशा मिलेगी। मेले में किसानों के लिए विभिन्न फसलों की उन्नत किस्में, आधुनिक कृषि यंत्र और नवीन तकनीकों का प्रदर्शन किया गया। वैज्ञानिकों ने किसानों को आधुनिक खेती, गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन, संतुलित पोषण प्रबंधन और एकीकृत कीट प्रबंधन की जानकारी दी। मेला में दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता का आयोजन भी किया गया। होल्सटीन फ्रिजियन नस्ल में प्रथम पुरस्कार पवन कुमार (हिसार, हरियाणा) – 64.44 किग्रा को 2,51,000 रुपये, द्वितीय सुनीता (हिसार) – 61.34 किग्रा को 1,51,000 और तृतीय दुष्यंत (हिसार) – 58.92 किग्रा को 1,00,000 रुपये मिला। साहीवाल नस्ल में प्रथम – रणदीप चौधरी (करनाल) – 22.36 किग्रा, द्वितीय – नरेश कुमार – 19.18 किग्रा और तृतीय – राधेश्याम जाट – 18.96 किग्रा। गिर नस्ल में प्रथम – मुकेश चौधरी – 26.78 किग्रा, द्वितीय – गणपत सिंह शेखावत – 20.14 किग्रा और तृतीय – अविनाश सिंह शेखावत – 20.08 किग्रा। क्रॉस ब्रीड में प्रथम – गगन सिंह – 49.10 किग्रा, द्वितीय – ओम प्रकाश – 22.52 किग्रा और तृतीय – भवानी – 22.40 किग्रा। जर्सी नस्ल में प्रथम – नरेश कुमार – 36.22 किग्रा, द्वितीय – गीता देवी – 26.68 किग्रा और तृतीय – मगि राम – 25.02 किग्रा। भैंस (मुर्रा) में प्रथम – बसंत – 22.5 किग्रा, द्वितीय – अमनदीप – 20.76 किग्रा और तृतीय – यशवीर – 20.34 किग्रा। समापन समारोह में विजेताओं को मंच पर सम्मानित किया गया। मेले में 31,103 किसानों ने भाग लिया। डॉ. आर.एन. शर्मा ने सफल आयोजन के लिए सभी आयोजकों, वैज्ञानिकों और सहयोगी संस्थाओं को बधाई दी और एनडीडीबी के सहयोग की सराहना की। इस मेला ने वैज्ञानिक तकनीकों और समर्पण के माध्यम से पशुपालन और कृषि क्षेत्र में अपार संभावनाओं का प्रदर्शन किया।

Press Highlights
"Rangeelo"
Kisan Mela - 2026

राष्ट्रीय डेरी विकास बोर्ड

NDDB DAIRY SERVICES

'रंगीलो किसान मेला : किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का समापन

जयपुर, 28 फरवरी (ब्यूरो) : श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद तथा एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज, दिलली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय 'रंगीलों किसान मेला- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का समापन हुआ। मेले में प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों से आए किसानों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

इस अवसर कुलगुरु प्रो. डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान ने किसान मेले के सफल आयोजन के लिए पूरी आयोजन टीम को बधाई दी। कार्यक्रम में डॉ. मीनेश शाह चेयरमैन, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड ने डेयरी क्षेत्र में शिक्षा, अनुसंधान एवं नवाचारों की सराहना की। विवि में आयोजित कृषि प्रदर्शनी में किसानों की भारी भीड़ देखने को मिली। प्रदर्शनी में विभिन्न फसलों की उन्नत किस्मों, आधुनिक कृषि यंत्रों तथा नवीन कृषि तकनीक का प्रदर्शन किया गया।

रंगीलों किसान मेला - किसानों के संग ग्रामीण समृद्धि के रंग का भव्य समापन

दो दिवसीय किसान मेले में 31,103 किसानों ने लिया भाग

दैनिक न्यूज वन टाईम्स

जयपुर। श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) तथा NDDB डेयरी सर्विसेज, दिल्ली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय रंगीलों किसान मेला - किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग का भव्य समापन किया गया। मेले में प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों से आए किसानों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। समापन अवसर पर कुलगुरु प्रोफेसर डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान ने किसान मेले के सफल आयोजन के लिए पूरी आयोजन टीम को बधाई दी। उन्होंने कहा कि ऐसे आयोजनों से विश्वविद्यालय और किसानों के बीच सीधा संवाद स्थापित होता है तथा नई तकनीकों का लाभ स्थानीय किसानों तक शीघ्रता से पहुँचता है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि मेले में प्रदर्शित उन्नत तकनीकों और नवाचारों का सीधा लाभ क्षेत्र के किसानों को मिलेगा और उनकी आय में वृद्धि होगी। कार्यक्रम में डॉ. मीनेश शाह (चेयरमैन, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड) ने डेयरी क्षेत्र में शिक्षा, अनुसंधान एवं नवाचारों की सराहना करते हुए कहा कि श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के साथ मिलकर रंगीलो-26 किसान मेला का यह प्रथम संयुक्त प्रयास अत्यंत सफल रहा और भविष्य में ऐसे आयोजनों से डेयरी क्षेत्र को नई दिशा मिलेगी। विश्वविद्यालय में आयोजित कृषि प्रदर्शनी में किसानों की भारी भीड़ देखने को मिली। प्रदर्शनी में विभिन्न फसलों की उन्नत किस्मों, आधुनिक कृषि यंत्रों तथा नवीन कृषि तकनीकों का प्रदर्शन किया गया।

जयपुर रविवार, 01 मार्च 2026 ई-न्यूज

रंगीलों किसान मेला' का भव्य समापन, 31,103 किसानों ने लिया भाग

'रंगीलों' में हरियाणा के पशुपालकों ने जीते लाखों रुपये के पुरस्कार

विजेताओं को सम्मानित करते हुए।

- गिर नस्ल में राजस्थान व भैंस की मुर्रा नस्ल में पंजाब रहा प्रथम

सच कहूँ/गुरजंट धालीवाल

जयपुर। श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) तथा एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज, दिल्ली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय 'रंगीलों' किसान मेला- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग का समापन हो गया। समापन अवसर पर कुलगुरु प्रोफेसर डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान व एनडीडीबी के चैयरमैन डॉ. मीनेश शाह ने दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले पशुपालकों को पुरस्कार एवं करीब 60 लाख रुपए की सम्मान राशि प्रदान की गई। विभिन्न नस्लों में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतिभागियों को आकर्षक नकद पुरस्कार दिए गए। इनमें गाय की होल्सटीन फ्रिजियन नस्ल श्रेणी में हरियाणा के हिसार के पशुपालकों का दबदबा रहा। इसके तीनों पुरस्कार हिसार के पशुपालकों ने जीते। इनमें प्रथम पुरस्कार-पवन कुमार (हिसार)- 2 लाख 51 हजार द्वितीय पुरस्कार- सुनीता (हिसार, हरियाणा), 1 लाख 51 हजार तृतीय पुरस्कार-दुष्यंत (हिसार)- 1 लाख रुपये का ईनाम जीता। वहीं, साहीवाल नस्ल में प्रथम पुरस्कार रणदीप चौधरी (करनाल) - 2 लाख 51 हजार द्वितीय पुरस्कार -नरेश कुमार (करनाल) 1 लाख 51 हजार

रंगीलों किसान मेला - किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग का भव्य समापन

दो दिवसीय किसान मेले में 31,103 किसानों ने लिया भाग

कंट्री विजन/ जयपुर

श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड, आनंद (गुजरात) तथा हछछक्र डेयरी सर्विसेज, दिल्ली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय ÷रंगीलों किसान मेला ङ्क किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग÷ का भव्य समापन किया गया। मेले में प्रदेश सहित विभिन्न राज्यों से आए किसानों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। समापन अवसर पर कुलगुरु प्रोफेसर डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान ने किसान मेले के सफल आयोजन के लिए पूरी आयोजन टीम को बधाई दी। उन्होंने कहा कि ऐसे आयोजनों से विश्वविद्यालय और किसानों के बीच सीधा संवाद स्थापित होता है तथा नई तकनीकों का लाभ स्थानीय किसानों तक शीघ्रता से पहुँचता है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि मेले में प्रदर्शित उन्नत तकनीकों और नवाचारों का सीधा लाभ क्षेत्र के किसानों को मिलेगा और उनकी आय में वृद्धि होगी। कार्यक्रम में डॉ. मीनेश शाह (चेयरमैन, राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड) ने डेयरी क्षेत्र में शिक्षा, अनुसंधान एवं नवाचारों की सराहना करते हुए कहा कि श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के साथ मिलकर ÷रंगीलोङ्क26 किसान मेला÷ का यह प्रथम संयुक्त प्रयास अत्यंत सफल रहा और भविष्य में ऐसे आयोजनों से डेयरी क्षेत्र को नई दिशा मिलेगी। विश्वविद्यालय में आयोजित कृषि प्रदर्शनी में किसानों की भारी भीड़ देखने को मिली। प्रदर्शनी में विभिन्न फसलों की उन्नत किस्मों, आधुनिक कृषि यंत्रों तथा नवीन कृषि तकनीकों का प्रदर्शन किया गया। वैज्ञानिकों ने किसानों को आधुनिक खेती, गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन, संतुलित पोषण प्रबंधन तथा एकीकृत कीट प्रबंधन की विस्तृत जानकारी प्रदान की।

दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता के विजेताओं को किया गया सम्मानित

मेले के दूसरे दिन आयोजित दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले पशुपालकों को पुरस्कार एवं सम्मान राशि प्रदान कर सम्मानित किया गया। विभिन्न नस्लों में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतिभागियों को आकर्षक नकद पुरस्कार दिए गए। जिससे अन्य पशुपालक किसानों को भी प्रेरणा मिलेगी

दैनिक कामयाब कलम

प्रदेश-हलचल

रंगीलोः राजस्थान के जोबनेर में शुरू हुआ भव्य डेयरी एवं पशुपालन महोत्सव

बजट दोगुना होने से दुग्ध किसानों को नई तकनीकों तक पहुँच प्राप्त करने में मदद मिलेगी : जवाहर सिंह बेडम

भीषण गर्मी में पशु-पक्षियों के लिए

लिवर, एचपीबी सर्जन्स की अंतरराष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस 'आईएचपीबीए-2026' शुरू

14506 किसानों का हुआ पंजीकरण

रंगीलों किसान मेला में किसानों का उमड़ा जनसैलाब

जोबनेर, कालवाड़, बिचून, माधोराजपुरा, नरैना

14 हजार से अधिक किसानों ने कराया पंजीकरण

जोबनेर में हुआ 'रंगीलो किसान मेले' का आगाज

जोबनेर. किसान मेले में शिरकत करने पहुंचे मंत्री व अधिकारी।

जोबनेर. श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड आणंद, एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज दिल्ली और श्री कर्ण नरेन्द्र विश्वविद्यालय जोबनेर के संयुक्त तत्वावधान में दो दिवसीय ''रंगीलो किसान मेला- किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग'' का उद्घाटन हुआ। मेले के पहले ही दिन 14,506 किसानों ने पंजीकरण कराकर सक्रिय भागीदारी दर्ज कराई।

कार्यक्रम का विधिवत उद्घाटन मुख्य अतिथि गृह राज्य, गोपालन, पशुपालन एवं डेयरी मंत्री जवाहर सिंह बेढ़म ने किया। उन्होंने आधुनिक दुग्ध उत्पादन तकनीकों, संतुलित पशु आहार और वैज्ञानिक प्रबंधन के जरिए किसानों की आय बढ़ाने पर जोर दिया। इस अवसर पर विश्वविद्यालय के कुलगुरु प्रो. डॉ. पुष्पेंद्र सिंह चौहान ने वर्ष 2026 के बजट की कृषि योजनाओं का जिक्र करते हुए खेती में आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और 'नमो ड्रोन दीदी योजना' के महत्व पर प्रकाश डाला। मेले में लगाई गई 105 प्रदर्शनियों में कृषि मशीनरी, उन्नत तकनीक और पशुपालन के नवाचार आकर्षण का केंद्र रहे। विशेष रूप से भ्रूण प्रत्यारोपण तकनीक से विकसित गिर, राठी, साहीवाल और होल्सटीन फ्रीजियन जैसी उन्नत नस्लों के पशुओं ने किसानों को काफी प्रभावित किया। एनडीडीबी के चेयरमैन डॉ. मीनेश शाह ने 'ऑपरेशन फ्लड' की सफलता और डेयरी क्षेत्र में सहकारिता के महत्व को रेखांकित किया, वहीं राजस्थान डेयरी फेडरेशन की श्रुति भारद्वाज ने विभाग की योजनाओं की जानकारी दी। मेले के दौरान आयोजित किसान-वैज्ञानिक संवाद में विशेषज्ञों ने किसानों की खेती और पशुपालन से जुड़ी जिज्ञासाओं का समाधान किया। साथ ही शैक्षणिक क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थी कल्पना चौधरी, तनीषा कंवर, अभिषेक धाकड़, मनीष गुर्जर, कमलेश एवं भारती सैनी को एनडीएस मेरिट अवॉर्ड से सम्मानित किया गया।

सांस्कृतिक छटा और पुरस्कार

राजस्थानी लोकनृत्यों और पारंपरिक गीतों ने पूरे आयोजन को एक उत्सव का रूप दे दिया। गुजरात, हरियाणा और मध्य प्रदेश जैसे राज्यों से आए किसानों ने भी इस मेले में उत्साहपूर्वक भाग लिया। निदेशक प्रसार डॉ. आर. एन. शर्मा ने बताया कि शनिवार को मेले के समापन पर विभिन्न श्रेणियों में विजेताओं की घोषणा की जाएगी, जिसके तहत कुल 60 लाख रुपये तक के पुरस्कार वितरित किए जाएंगे। इस अवसर पर एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज के प्रबंध निदेशक डॉ. सी. पी. देवानंद सहित विभिन्न दुग्ध संघों के पदाधिकारी और विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक उपस्थित रहे।

रंगीलो किसान मेलाः 'किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग' का समापन, पशुपालक सम्मानित

ब्यूरो/नवज्योति, जयपुर। श्री कर्ण नरेंद्र कृषि विश्वविद्यालय के परिसर में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड आनंद गुजरात तथा एनडीडीबी डेयरी सर्विसेज दिल्ली के सहयोग से आयोजित दो दिवसीय रंगीलों किसान मेला किसानों के संग, ग्रामीण समृद्धि के रंग का समापन किया गया। मेले में प्रदेश सहित विभिन्न राज्योंसे आए किसानोंने उत्साहपूर्वक भाग लिया।

कुलगुरु प्रोफेसर डॉ. पुष्पेन्द्र सिंह चौहान ने कहा ऐसे आयोजनों से विश्वविद्यालय और किसानों के बीच सीधा संवाद स्थापित होता है। कार्यक्रम में राष्ट्रीय डेयरी विकास बोर्ड के चेयरमैन डॉ. मीनेश शाह ने डेयरी क्षेत्र में शिक्षा, अनुसंधान एवं नवाचारों की सराहना की।

विजेताओं को किया गया सम्मानित

मेले के दूसरे दिन आयोजित दुग्ध उत्पादन प्रतियोगिता में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले पशुपालकों को पुरस्कार एवं सम्मान राशि प्रदान कर सम्मानित किया गया। विभिन्न नस्लों में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले प्रतिभागियों को आकर्षक नकद पुरस्कार दिए गए। जिससे अन्य पशुपालक किसानों को भी प्रेरणा मिलेगी।

होल्सटीन फ्रिजियन नस्ल

इस श्रेणी में हरियाणा के हिसार जिले के पशुपालकों का दबदबा रहा। प्रथम पुरस्कार पवन कुमार हिसार हरियाणा 64.44 किग्रा 2.51 लाख रुपए

द्वितीय पुरस्कार सुनीता हिसार हरियाणा 61.34 किग्रा 1.51 लाख रुपए

तृतीय पुरस्कार दुष्यंत हिसार हरियाणा 58.92 किग्रा 1.11 लाख रुपए

साहीवाल नस्ल

- प्रथम पुरस्कार रणदीप चौधरी करनाल 22.36 किग्रा 2.57 लाख रुपए
- द्वितीय पुरस्कार नरेश कुमार करनाल को 19.18 किग्रा 1.51 लाख रुपए
- तृतीय पुरस्कार राधेश्याम जाट 18.96 किग्रा 1,11 लाख रुपए

गिर नस्ल

इस श्रेणी में अजमेर के पशुपालको ने शानदार प्रदर्शन किया।

- प्रथम पुरस्कार मुकेश चौधरी 26.78 किग्रा, 2.51 लाख रुपए
- द्वितीय पुरस्कार गणपत सिंह शेखावत अजमेर 20.14 किग्रा, 1.51 लाख रुपए
- तृतीय पुरस्कार अविनाश सिंह शेखावत अजमेर 20.08 किग्रा, 1.11 लाख रुपए

क्रॉस ब्रीड

- प्रथम पुरस्कार गगन सिंह 49.10 किग्रा 2.51 लाख रुपए
- द्वितीय पुरस्कार ओम प्रकाश अजमेर 22.02 किग्रा 1.51 लाख
- तृतीय पुरस्कार भवानी अजमेर 22.40 किग्रा 1,11 लाख रुपए

जर्सी नस्ल

- प्रथम पुरस्कार नरेश कुमार करनाल हरियाणा 36.22 किग्रा 2.51 लाख रुपए
- द्वितीय पुरस्कार गीता देवी झुंझुनूं 26.68 किग्रा 2.51 लाख रुपए

भैंस मुर्रा नस्ल

- प्रथम पुरस्कार बसंत 22.50 किग्रा 2.51 लाख रुपए
- द्वितीय पुरस्कार अमनदीप 20.76 किग्रा 1.51 लाख रुपए
- तृतीय पुरस्कार यशवीर 20.34 किग्रा 1.11 लाख रुपए

Press Highlights

"Rangeelo"

Kisan Mela - 2026

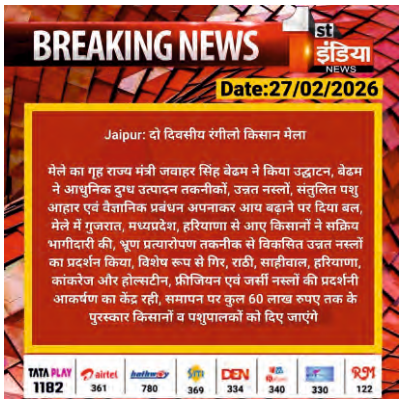

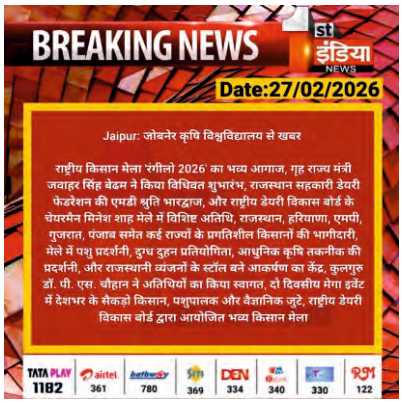

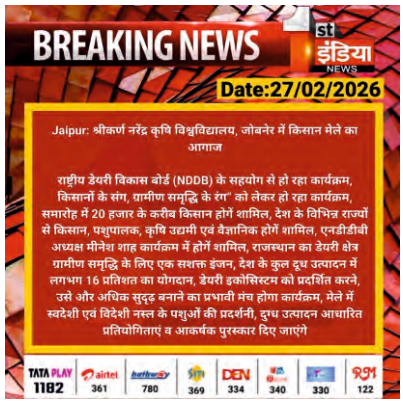

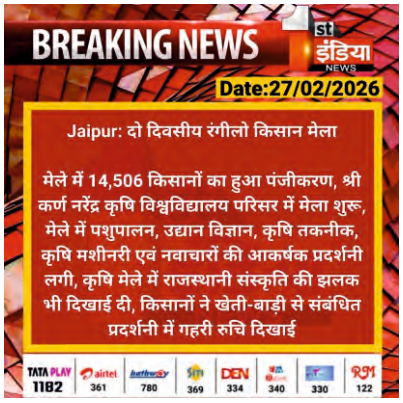

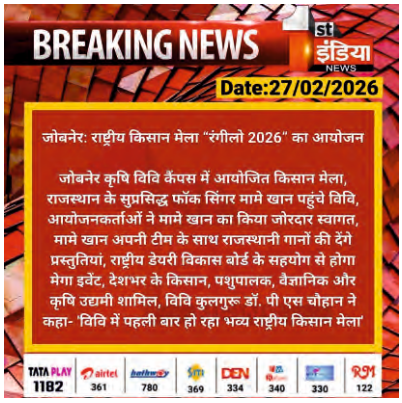

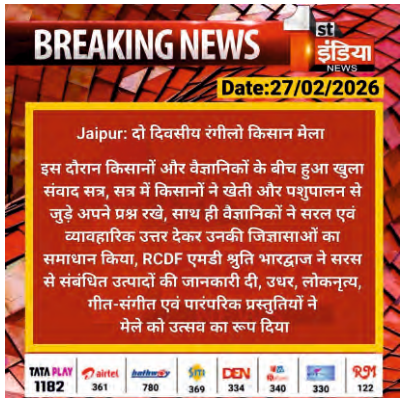

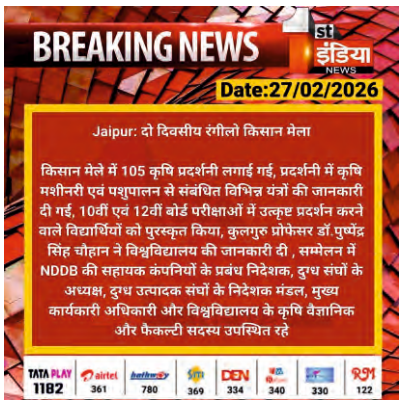

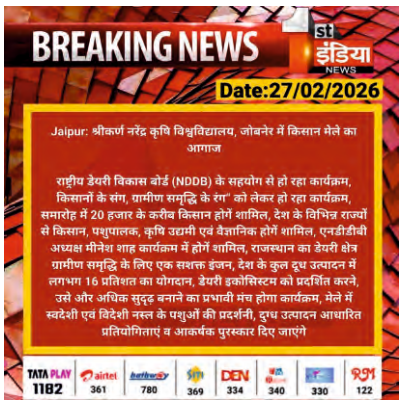

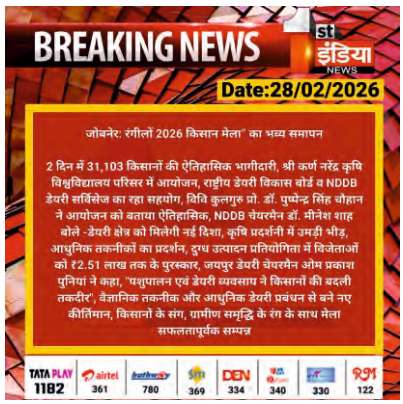

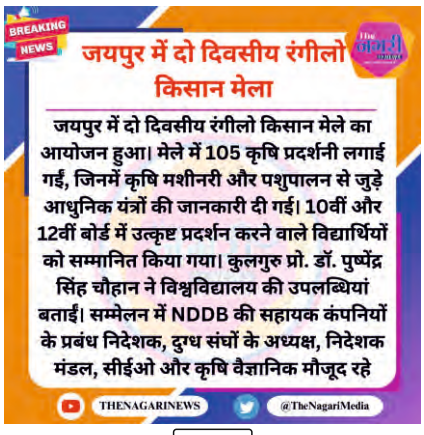

किसान मेले में किसानों द्वारा प्राप्त फीडबैक

प्रश्न 1. कृषक वैज्ञानिक संगोष्ठी एवं तकनीकी प्रदर्शन के दौरान विश्वविद्यालय वैज्ञानिकों द्वारा दी गई जानकारी को आप अपनी कृषि आमदनी में बढ़ोत्तरी के संदर्भ में किस प्रकार देखते हैं?

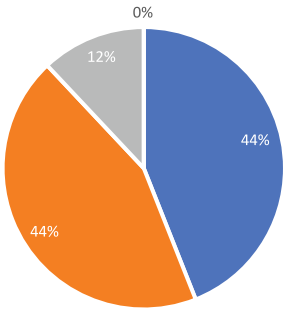

प्रश्न 2. किसान मेले के दौरान आयोजित कृषि प्रदर्शनी का अवलोकन कर उसे ग्रहण करने के सन्दर्भ में आपकी क्या राय है ?

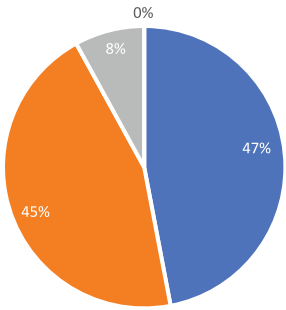

प्रश्न 3. किसान मेले में निम्नलिखित में से कौन सा मुख्य आकर्षण का केन्द्र रहा ?

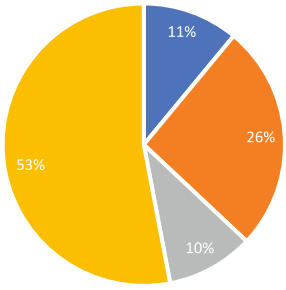

प्रश्न 4. किसान मेले में पेयजल व्यवस्था के बारे में आपकी प्रतिक्रिया क्या है ?

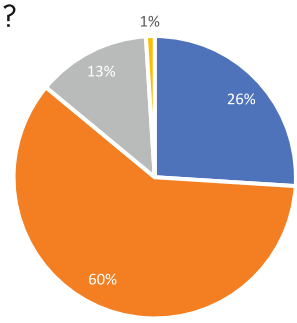

प्रश्न 5. किसान संवाद सत्र (सफल किसानों के अनुभव एवं सफलता की कहानियाँ) आपको कितना प्रेरणादायक लगा?

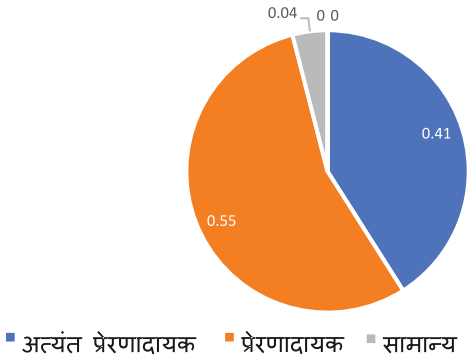

प्रश्न 6. राजस्थान की लोक संस्कृति, हस्तशिल्प एवं पारंपरिक व्यंजनों के आयोजन के बारे में आपकी प्रतिक्रिया क्या है?

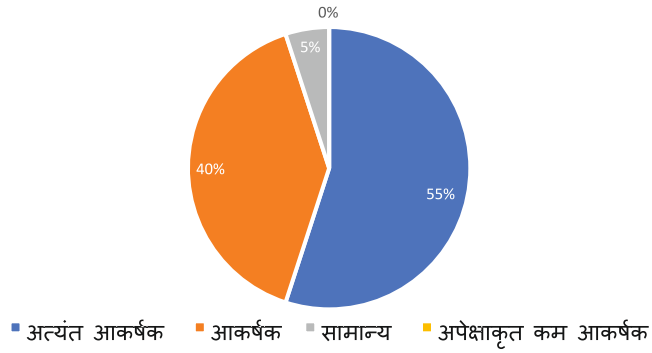

प्रश्न 7. पशु मेला पुरस्कार प्रतियोगिता (दुध उत्पादन आधारित श्रेणियाँ) की पारदर्शिता एंव व्यवस्था के बारे में आपकी राय :

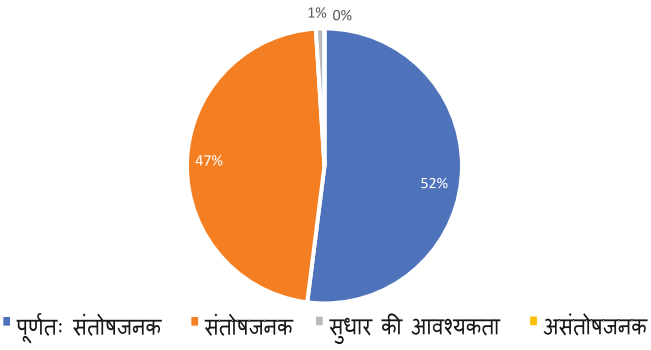

प्रश्न 8. क्या आप भविष्य में पशु प्रतियोगिता में भाग लेना चाहेंगे?

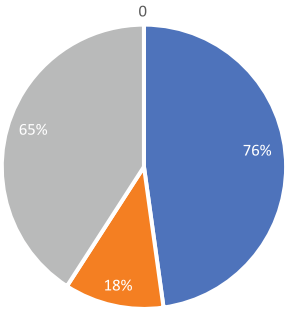

किसान मेले में किसानों द्वारा प्राप्त फीडबैक

प्रश्न 9. ऑनलाईन रजिस्ट्रेशन प्रक्रिया (www.rangeelo.co.in) आपके लिए कितनी सरल रही ?

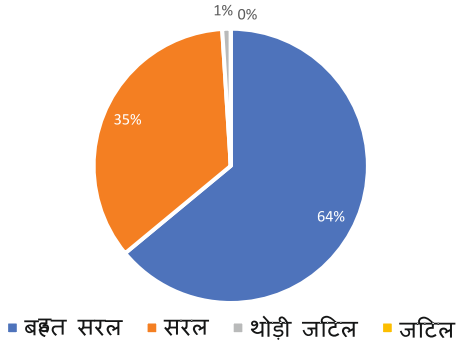

प्रश्न 10. पशु चयन की प्रथम एवं अन्तिम चरण प्रक्रिया (घर पर जांच एवं जयपुर में अन्तिम प्रतियोगिता) को आप कितना पारदर्शी मानते हैं ?

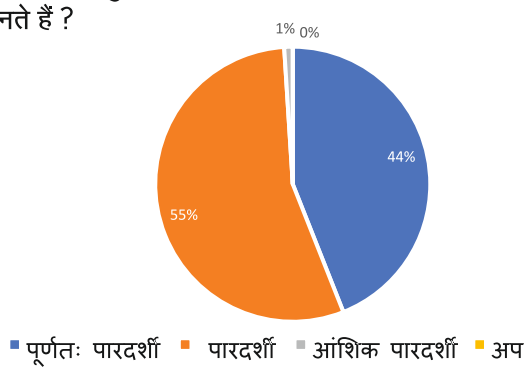

प्रश्न 11. विशेष प्रदर्शनी (ऊंट, भेड़, बकरी, IVF-ET बछिया आदि) को आप ग्रामीण आजीविका के दृष्टिकोण से कितना महत्वपूर्ण मानते हैं ?

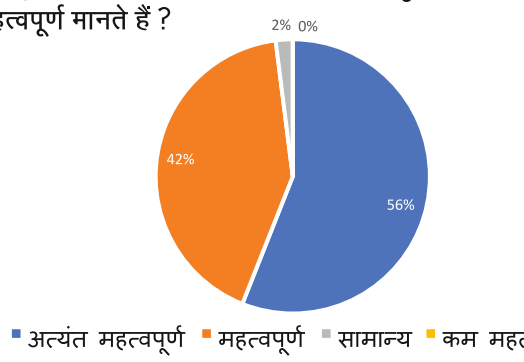

प्रश्न 12. भविष्य में किसान मेले की अवधि के संबंध में आपकी प्राथमिकता क्या होगी ?

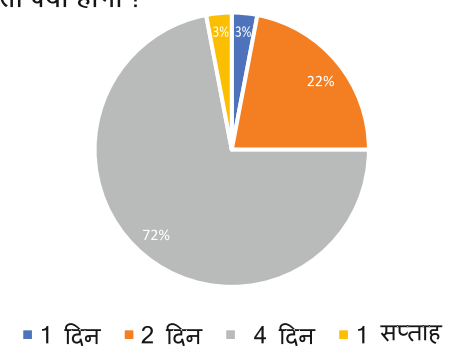

प्रश्न 13. भव्य पशु मेला एवं उच्च आनुवंशिक योग्यता वाले स्वदेशी पशुओं के प्रदर्शन को आप किस प्रकार आंकते हैं?

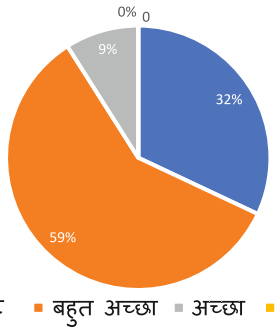

प्रश्न 14. नवाचार एवं आधुनिक कृषि मशीनरी, पशु पोषण एवं स्वास्थ्य प्रबंधन तकनीकों के लाइव प्रदर्शन से आपको कितनी व्यावहारिक जानकारी प्राप्त हुई?

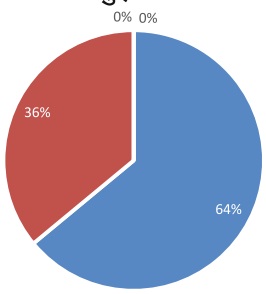

प्रश्न 15. पशु पोषण एवं स्वास्थ्य प्रबंधन तकनीकों के बारे में आपको कितनी जानकारी प्राप्त हुई?

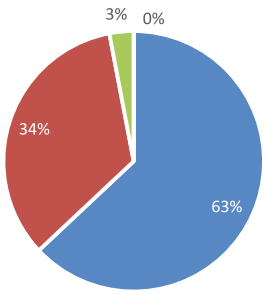

प्रश्न 16. यह किसान मेला किस संस्था द्वारा आयोजित किया गया?

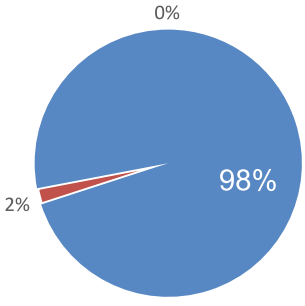

कृषि स्मारिका 2026

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय

जोबनेर, जयपुर-राजस्थान